स्वातंत्र्योत्तर कथा-लेखिकाएँ

स्वातंत्र्योत्तर कथा-लेखिकाएँ

आगरा विश्वविद्यालय द्वारा स्वीकृत शोध-प्रबन्ध का उत्तरार्द्ध

उर्मिला गुप्ता
एम० ए०, पी-एच० डी०

राधाकृष्ण प्रकाशन

मूल्य
सोलह रुपये

प्रकाशक
ओम् प्रकाश
राधाकृष्ण प्रकाशन
२ अंसारी रोड, दरियागंज, दिल्ली-६

मुद्रक
हिन्दी प्रिंटिंग प्रेस, क्वीस रोड, दिल्ली-६

विषयानुक्रम

विषय-प्रवेश

प्रथम प्रकरण : स्वातंत्र्योत्तर युग की मुख्य कहानी-लेखिकाएँ

द्वितीय प्रकरण : स्वातंत्र्योत्तर युग की अन्य कहानी-लेखिकाएँ

तृतीय प्रकरण : स्वातंत्र्योत्तर युग की मुख्य उपन्यास-लेखिकाएँ

०

विषय-प्रवेश

प्रस्तुत ग्रन्थ मेरे शोध-प्रबन्ध 'हिन्दी-कथा-साहित्य के विकास में महिलाओं का योग' का उत्तरार्द्ध है। इसकी रचना जनवरी १९६० से मई १९६४ की अवधि में बलवन्त राजपूत कॉलेज, आगरा के हिन्दी-विभाग के प्राध्यापक डॉ० राजेश्वरप्रसाद चतुर्वेदी के निरीक्षण में हुई थी। प्रबन्ध के प्रस्तुत खण्ड में स्वातंत्र्योत्तर युग के कथा-साहित्य के विकास में महिलाओं के योगदान का मूल्यांकन किया गया है। इस सन्दर्भ में मैंने कथा-साहित्य का अर्थ कहानी और उपन्यास से लिया है और संस्मरणों तथा रेखाचित्रों की समीक्षा कहानियों के अन्तर्गत ही की है।

नारी-साहित्य की सार्थकता

कथा-साहित्य के विकास में नारियों के योग का मूल्यांकन सामान्यतः एकांगी प्रतीत हो सकता है, किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि इससे कथा-साहित्य के सर्वांगीण अनुशीलन में सुकरता रहेगी। वस्तुतः पुरुषों की रचनाएँ साहित्य-जगत् में जिस रूप में प्रतिष्ठित हो चुकी है, उसकी तुलना में नारी-विरचित कथा-साहित्य की उपेक्षा ही हुई है। यह उल्लेखनीय है कि प्रकृति ने पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों को विशेष भाव-प्रवण एवं संवेदनशील बनाया है। जहाँ पुरुषों के लिए बुद्धिपरक विचारधारा सहज गुण है, वहाँ नारियों के मन में श्रद्धा, विश्वास, सहानुभूति आदि कोमल भाव अधिक रहते हैं। यही कारण है कि महिलाओं के साहित्य में हृदय को स्पर्श करने की क्षमता अथवा मार्मिकता का विशेष समावेश रहता है। यह सत्य है कि पुरुषों-जैसी विविधतामयी रचनात्मक प्रतिभा अथवा बहुमुखी व्यक्तित्व का वैसा सगठित विकास नारी-समुदाय में नहीं मिलता, किन्तु केवल इसी आधार पर नारी-साहित्य की उपेक्षा नहीं की जा सकती। यद्यपि हिन्दी-कथा-साहित्य के विषय में अनेक समीक्षात्मक ग्रन्थ तथा शोध-प्रबन्ध सुलभ हैं, किन्तु प्रायः उनमें लेखिकाओं के कथा-साहित्य की समीक्षा नहीं की गई। स्पष्ट है कि महिलाओं के कथा-साहित्य के विषय में अब तक की आलोचना-सामग्री अपर्याप्त है और इसे एक स्थान पर एकत्र कर लेने पर भी स्वतन्त्र शोध की आवश्यकता बनी रहती है।

आलोचना-जगत् में हिन्दी-लेखिकाओं के विषय में कतिपय भ्रान्तिपूर्ण विचार भी प्रचलित हैं; जैसे कि कभी-कभी यह मत व्यक्त किया जाता है कि महिलाएँ कथा-क्षेत्र की अपेक्षा काव्य-क्षेत्र में अधिक सफल हुई है। प्रस्तुत प्रबन्ध के अनुशीलन से इस

कथन की निस्सारता स्वतः सिद्ध हो जाएगी। नारी की रचनात्मक प्रतिभा पर दूसरा प्रश्नचिह्न यह कहकर लगाया जाता है कि वह प्रायः मौलिक साहित्य का सृजन नहीं करती। इस प्रकार के कथन नारी के प्रति न्याय नहीं करते, क्योंकि केवल भाव-साम्य के आधार पर अनुकरण का आरोप उचित नहीं है। वस्तुतः युगविशेष के लेखकों में भावों की समता दुर्लभ न होकर स्वाभाविक ही मानी जाएगी। मौलिक प्रतिभा से शून्य दो-चार लेखिकाओं की रचनाओं को ध्यान में रखकर सामान्य धारणाएँ बना लेना अन्याय है; और फिर अनेक पुरुष लेखक भी पूर्ववर्ती रचनाओं के भावों का अनुकरण करते पाये गए हैं। निश्चय ही आलोचना में इस प्रकार के पूर्वाग्रहों को स्थान नहीं दिया जाना चाहिए। तथापि नारी-जागरण के वर्तमान युग में यह स्वाभाविक ही होगा कि नारी की कार्य-क्षमता के परिणामों की पुरुष की कार्य-प्रणाली से तुलनात्मक समीक्षा की जाए। यद्यपि नारी और पुरुष की बौद्धिक क्षमताओं में अन्तर नहीं है, तथापि सामाजिक विषमताओं एवं कतिपय स्वभावगत विशेषताओं के कारण उनमें रुचि-भेद का होना स्वाभाविक है। घटना अथवा वस्तुविशेष के सम्बन्ध में उनकी प्रतिक्रियाओं में भी अन्तर रहता है। श्रद्धा, सहानुभूति, सौजन्य, करुणा आदि जो गुण स्त्री-चरित्र में सहज सुलभ हैं उनकी अभिव्यक्ति में वे पुरुषों से अधिक सफल रहती हैं। तर्क दिया जा सकता है कि समाज, राजनीति, विज्ञान आदि से सम्बद्ध कर्म-क्षेत्रों में पुरुष नारी की अपेक्षा अधिक जागरूक रहता है, अतः कथा-साहित्य में वैविध्य की दृष्टि से उसे अधिक सफलता मिलती है, किन्तु यह परिस्थितियों का एकांगी विवरण है। नारी इन क्षेत्रों से सर्वथा अपरिचित नहीं है। जिन उच्च शिक्षा-प्राप्त नारियों को पुरुषों की भाँति सामाजिक स्वतन्त्रता प्राप्त रही है, वे विविधविषयक आख्यानों की रचना में पुरुषों से पीछे नहीं रहतीं। तथापि यह स्पष्ट है कि अधिकांश नारियों को विविध क्षेत्रों में कार्यानुभूति का अवसर प्राप्त नहीं होता। उनका विकास-क्षेत्र पारिवारिक जीवन है; और तत्सम्बद्ध समस्याओं के चित्रण में उन्हें जो सफलता प्राप्त हो सकती है, वह पुरुषों द्वारा रचित कथा-साहित्य में दुर्लभ होगी। मातृ हृदय, शिशु-क्रीड़ा, सौतिया डाह आदि विषयों पर स्त्रियाँ जितने अधिकार से लिख सकती हैं, पुरुष उतनी मर्मज्ञता का परिचय नहीं दे सकते। गार्हस्थिक विषयों के अतिरिक्त सांस्कृतिक एवं पौराणिक आख्यानों के लेखन में भी नारी को अपेक्षाकृत अधिक गौरव प्राप्त हो सकता है। भाव-पक्ष ही नहीं, कला-पक्ष में भी नारी की अपनी पृथक् विशेषताएँ सुलक्षित होती हैं। सामान्यतः वह पुरुष की अपेक्षा विशेष वाक्-पटु होती है। यही कारण है कि महिलाओं के कथा-साहित्य में संवादों की मार्मिक योजना और मुहावरों के सजीव प्रयोग को सहज ही देखा जा सकता है।

हिन्दी-साहित्य का तुलनात्मक दृष्टि से अध्ययन करने पर हम देखते हैं कि प्रतिभा की दृष्टि से समान होने पर भी स्त्रियाँ साहित्य-क्षेत्र में पुरुषों से पीछे रही हैं। इसके अनेक कारण हैं—शिक्षा की अपर्याप्तता, अध्ययन की सीमाएँ, कार्य-क्षेत्र में स्वतन्त्रता के अभाव, पारिवारिक उत्तरदायित्वों, समाज और परिवार के विरोध एवं [illegible]

प्रोत्साहन के अभाव के कारण स्त्रियाँ साहित्य-रचना में उतनी कृतकार्य नही हो सकी। यों तो भारत में पुरुष भी पूर्णतः साक्षर नहीं हैं, किन्तु नारी जाति शिक्षा से और भी अधिक वंचित रही है। विद्या के अभाव में प्रतिभा होने पर भी साहित्य के भण्डार में श्रीवृद्धि नही हो सकती। वस्तुतः शिक्षा का अभाव हेतु है, और अध्ययन की कमी उसका परिणाम। यद्यपि केवल अध्ययन से साहित्य-रचना सम्भव नहीं है, किन्तु इसमें सन्देह नही कि ज्ञान-धारा को व्यापकता प्रदान करने और विचारों को प्रौढ़ बनाने में ग्रन्थानुशीलन का विशेष योग रहता है। अध्ययन से अनुप्राणित रचना में भावना एव कला का उच्च स्तर निखरकर कृति को गौरवान्वित कर देता है। अशिक्षित नारियाँ निरक्षरता के कारण इस ओर प्रवृत्त नही हो पाती और शिक्षित स्त्रियाँ भी गृहस्थी मे लिप्त रहने के कारण प्रायः अध्ययन की सुविधाओं से वंचित रहती है। संकोच, गृहस्थी के भार और पर्दा-प्रथा के कारण नारी को पुरुष की भाँति लोक-दर्शन के लिए व्यापक अवसर प्राप्त नहीं हो पाते। फलतः लेखिकाओं की रचनाओं में जीवन की विविधता का उपयुक्त प्रतिफलन नहीं हो पाता। नारी का संसार प्रायः उसके परिवार तक ही सीमित रहता है। प्रतिभा के उन्मेष के लिए अपेक्षित समाज-दर्शन के अभाव में उसके समक्ष वैयक्तिक और पारिवारिक समस्याओं का ऐसा जाल रहता है कि वह अपनी रचनाओं में प्रायः उन्हीं की अभिव्यक्ति कर पाती है। जीवन-दर्शन के अभाव में अन्य लेखको की कृतियों के अध्ययन से प्राप्त प्रेरणा के बल पर साहित्य-रचना का प्रयास अनुकरणमूलक होने के कारण प्रशंसनीय नही होगा। अतः यह आवश्यक है कि रचनात्मक प्रतिभा से सम्पन्न नारियाँ जन-जीवन के सम्पर्क में आने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहें।

नारी का मातृत्व तथा आर्थिक विषमताएँ भी उसकी प्रणयन-क्षमता में दो प्रबल बाधाएँ हैं। शिशु-पालन में व्यस्त रहकर वह प्रायः अपनी भावनाओं को रचनाबद्ध करने का अवसर नही पाती। आर्थिक विषमताएँ भी कुछ कम बाधक नहीं है। अधिकांश परिवारों में पुरुष की आय गृह-सचालन के लिए अपर्याप्त रहती है, अतः स्त्री कम आय में निर्वाह करने के उपायो की खोज करने में ही अपनी प्रतिभा का व्यय कर देती है। आर्थिक समस्याओ से मुक्ति पाने के लिए कतिपय परिवारों में स्त्रियाँ आजीविका की खोज कर लेती हैं। इससे उनका लोक-ज्ञान तो बढ़ता है, किन्तु कार्यभार और समयाभाव के कारण साहित्य-सेवा उनके लिए पर्याप्त कठिन रहती है। उपर्युक्त बाधाओ का यत्किंचित् निवारण होने पर भी कभी-कभी प्रतिकूल सामाजिक धारणाओं अथवा व्यक्तिविशेष की हठधर्मिता के कारण नारी को लेखन की स्वतंत्रता प्राप्त नही हो पाती। उदाहरणस्वरूप पितृगृह में साहित्य के प्रति अनुराग रखनेवाली नारियाँ अनेक अवसरो पर पतिगृह में साहित्य-सृजन की सुविधा और अपेक्षित प्रोत्साहन नहीं पाती। ससुराल की रीति-नीतियों के कारण उन्हें अपनी रुचि पर नियंत्रण रखना पड़ता है। इसके विपरीत ऐसे उदाहरणों की भी खोज की जा सकती है जब किसी युवती को पतिगृह में लेखन के लिए अधिक उपयुक्त वातावरण मिला हो अथवा इस ओर उसकी प्रवृत्ति वहीं हुई हो। तथापि यह

निश्चित है कि सामाजिक विरोध नारी की रचना-प्रतिभा को कुंठित करने में सहायक रहा है।

इन बाधाओं का परिहार करके साहित्य-रचना में भाग लेनेवाली महिलाओं को भी प्रायः वांछित प्रोत्साहन नहीं मिल पाता। कुछ पुरुषों को यह विश्वास ही नहीं होता कि स्त्री कभी लिख सकती हैं। किन्तु, उन पुरुषों की मनोवृत्ति के विषय में क्या कहा जाए जो हीन ग्रंथियों से युक्त होने के कारण नारी के काल्पनिक नाम से साहित्य-रचना करते हैं। हमारा संकेत श्री दयाशंकर मिश्र की ओर है, जिन्होंने 'सीप के मोती' शीर्षक उपन्यास में यह स्वीकार किया है कि अनीता चट्टोपाध्याय के नाम से लिखे गये उपन्यास (मरीचिका, समिधा, पाथेय, बुझते दीप आदि) वस्तुतः उन्हीं की रचनाएँ हैं। अन्त में यह उल्लेखनीय है कि ये तथ्य चित्र का पूर्व-पक्ष प्रस्तुत करते हैं; उत्तर-पक्ष यह है कि इनमें से अधिकांश बाधाएँ शिक्षा के प्रसार से शनैः शनैः दूर हो रही हैं। देश के स्वतन्त्र होने पर महिलाओं को समाज के विविध क्षेत्रों में कार्य करने का अवसर मिला है। प्रतिभा, अभ्यास तथा लगन से वे बहुत-कुछ कर सकती हैं; और कर भी रही हैं।

समकालीन परिस्थितियाँ

प्रस्तुत ग्रन्थ में भारत के स्वाधीनताकालीन परिवेश में लिखित महिला-कथा-साहित्य की समीक्षा की गई है। अतः यह उचित होगा कि यहाँ स्वतन्त्र भारत के बहुमुखी विकास पर दृष्टिपात कर लिया जाये। स्वतन्त्रता-उपलब्धि के उपरान्त भारत निरन्तर उन्नति की ओर अग्रसर रहा है। यहाँ इस अवधि में देश की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों की संक्षेप में चर्चा की जायेगी। १५ अगस्त, सन् १९४७ को स्वतन्त्रता की घोषणा के पश्चात् आरम्भ में भारत की स्थिति आन्तरिक रूप से किंचित् विशृंखलित रही। भारत जाति के आधार पर दो भागों में विभक्त हो गया, जिसके परिणामस्वरूप पाकिस्तान से हिन्दू यहाँ पर आने लगे और यहाँ से मुसलमान पाकिस्तान जाने लगे। इस स्थान-परिवर्तन में इतने लोगों की अकारण हत्या, लूट आदि की गई कि उसके स्मरण से सिहरन-सी होती है। देश के विभाजन के फलस्वरूप शासकों को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा। इन समस्याओं में शरणार्थियों को बसाने की समस्या सर्वप्रमुख थी। २६ जनवरी, सन् १९५० को भारत का संविधान बना और भारत वास्तविक अर्थों में सर्वोच्च सत्तायुक्त स्वतन्त्र देश कहलाने का अधिकारी हुआ। सरदार वल्लभभाई पटेल ने भारत की समस्त बिखरी हुई रियासतों को संगठित करके एक सुघड़ भारत की नींव डाली। इसी समय पंचवर्षीय योजनाओं की भी व्यवस्था की गई जिनके माध्यम से देश के अभावों को एक-एक करके दूर करने का प्रयत्न किया गया। इन पंचवर्षीय योजनाओं में बेकारी को दूर करने के लिए कृषि, विद्युत् शक्ति, उद्योग-धन्धों आदि के विकास को प्राथमिकता दी गई।

भारतीय जनता का कांग्रेस-शासन के प्रति अगाध विश्वास रहा है। प्रजातांत्रिक राज्य की स्थापना के कारण जनता को राजनीति में भाग लेने का पूरा अधिकार दिया गया। श्री जवाहरलाल नेहरू के समन्वयवादी या तटस्थ दृष्टिकोण तथा उदारमना राजेन्द्रप्रसाद जी के अथक परिश्रम से देश की राजनीतिक परिस्थिति शनैः शनैः सुधरती गई और भारत ने शीघ्र ही विश्व के अन्य महान् देशों के मध्य अपना स्थान बना लिया। नेहरू जी ने रूस, अमेरिका आदि सभी देशों के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रखे और विरोध के अवसरों पर यथासम्भव समझौते का मार्ग अपनाया। किन्तु, भारत अभी स्वतन्त्रता का सुख भोग भी नहीं पाया था कि देश पर चीन ने आक्रमण कर दिया। यद्यपि इस आक्रमण का प्रतिरोध यथाशक्ति किया गया, तथापि पंडित नेहरू की समझौते की नीति से अधिकांश जनता क्षुब्ध हो उठी। देश की जनता में अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए सामूहिक उत्तेजना एवं उत्साह की प्रथम बार अभिव्यक्ति हुई। अभी तक चीनी आक्रमण की यह समस्या सुलझ नहीं सकी है। कश्मीर-समस्या भी इन दिनों अधिक उग्र रूप धारण कर चुकी है। भारतवासी कश्मीर को भारत का ही अंग मानते है, परन्तु पाकिस्तान अपनी कूटनीति से निरन्तर कश्मीर की सीमा पर आक्रमण करने के अवसर की ताक मे रहता है। इन आन्तरिक बाधाओं के रहते हुए भी भारत ने विश्व-राजनीति में समय-समय पर महत्त्वपूर्ण योग दिया है।

स्वतन्त्रता-प्राप्ति के प्रारम्भिक वर्षो मे भारत की सामाजिक अवस्था अत्यन्त शोचनीय थी। पाकिस्तान से आए हुए अनेक व्यक्ति बेघर हो गए थे; चारों ओर लूट-खसोट, हत्या और हाहाकर मच गया था। परन्तु धीरे-धीरे इस परिस्थिति में सुधार हुआ और प्रजातांत्रिक शासन-प्रणाली होने के कारण यह स्थिति सुधरती गई। भारतीय संविधान में समाज के प्रत्येक व्यक्ति को समान अधिकार दिये गए। वर्ण-व्यवस्था की रूढ़ियों को समाप्त करके पिछड़ी हुई जातियों तथा अछूत वर्ग की दशा को सुधारने के लिए भरसक प्रयत्न किया गया। नारी की स्थिति पुरुष के समान ही गौरवशाली हो गई। इन्दिरा गांधी, विजयलक्ष्मी पंडित, राजकुमारी अमृतकौर आदि अनेक स्त्रियों ने उच्च पद पर आसीन होकर नारी जाति को सम्मानित किया। प्राचीन रूढ़ियाँ पूर्णतया टूट गई, समाज में शिक्षा का गौरव बढ़ा और निम्न पेशों (जूते बनाना, कपड़ा तैयार करना आदि) को उच्च वर्ग द्वारा अपना लिए जाने से इनके प्रति घृणा की भावना भी दूर हो गई। इस प्रकार पूँजीपति, मध्यम वर्ग और निम्न वर्ग एक-दूसरे के निकट आते गए। वस्तुतः स्वतन्त्रता के बाद जनता को अपने सामाजिक स्तर को ऊँचा उठाने के लिए पर्याप्त अवकाश मिला है।

अंग्रेजों ने भारत की आर्थिक अवस्था को बहुत गिरा दिया था। वे भारत से कच्चा माल ले जाकर उसे अपने देश के कारखानों में अनेक रूपों में ढालकर पुनः भारत में ही दुगने दाम में बेचते थे। इससे भारतीय उद्योग-धन्धों को भारी हानि पहुँची थी। इसलिए देश के स्वतन्त्र होने पर प्रथम पंचवर्षीय योजना में सर्वप्रथम

कृषि और औद्योगिक विकास की ओर मुख्य ध्यान दिया गया। अब तक तीन पंचवर्षीय योजनाएँ बन चुकी हैं, जिनके फलस्वरूप उद्योग-धन्धे आश्चर्यजनक प्रगति कर चुके है। पहले तो मशीनों के अतिरिक्त इंजीनियर भी विदेशों से बुलाए जाते थे, परन्तु अब उद्योग-शिक्षण के अनेक विद्यालयों के खुल जाने के कारण भारत के इंजीनियर ही इस्पात और लोहे द्वारा अनेक मशीनों का निर्माण करने में समर्थ हो गए है। सरकार पूर्ण शक्ति से इस दिशा में संलग्न है, उसने अनेक व्यक्तियों को विदेशो मे अपने ही व्यय से भेजकर तकनीकी शिक्षा भी दिलवाई है। इसके लिए सरकार ने विदेशों से ऋण भी लिया है। कृषि की दशा को सुधारने के लिए अनेक बाँध बनाये गए हैं। इनमें भाखड़ा नंगल बाँध उल्लेखनीय है।

श्रमिकों तथा किसानों की दशा को सुधारने की ओर वर्तमान भारतीय शासन ने पर्याप्त ध्यान दिया है। अब सरकार उसी व्यक्ति को भूमि देती है जो स्वयं खेती करता है। जमीदारी प्रथा समाप्त कर दी गई है और उत्पादन में वृद्धि हो रही है। श्रमिको के कार्य के घण्टे भी नियत कर दिये गए हैं और वे अपने अधिकारों के प्रति सजग हैं। सरकार ने पूँजीपतियों की आय पर भारी कर लगाकर आर्थिक सन्तुलन स्थापित करने की ओर भी ध्यान दिया है। निम्न वर्ग की आर्थिक दशा अथक परिश्रम से किसी सीमा तक सुधर गई है। केवल मध्यम वर्ग ही ऐसा है जिस पर एक ओर सरकार के भारी करों का दबाव है, तो दूसरी ओर निरन्तर बढ़ती हुई महँगाई भी उसे विवश किए है। किन्तु, समग्र रूप से भारत की आर्थिक स्थिति पहले से बहुत अधिक उन्नत है। प्रतिवर्ष बजट के द्वारा इस दिशा में सन्तुलन स्थापित कर दिया जाता है और धन की कमी को करो के द्वारा पूरा करने का प्रयत्न किया जा रहा है।

विज्ञान की उन्नति के साथ ही भारतीय संस्कृति भी आधुनिक रंग मे रंगती जा रही है। जनता अब केवल आध्यात्मिकता को महत्त्व न देकर यथार्थवादी दृष्टिकोण को भी उपयोगी मानने लगी है। इस युग मे बौद्धिकता अपने चरमोत्कर्ष पर है। प्राचीन संस्कृति का भी बौद्धिक दृष्टिकोण से विश्लेषण किया जा रहा है। पश्चिम के मनोवैज्ञानिक फ्रायड का भी भारतीय संस्कृति पर पर्याप्त प्रभाव पड़ा है। वस्तुतः आवागमन के उत्तम साधनों के कारण किसी भी देश की संस्कृति दूसरे प्रभावों से अछूती नहीं रहती। इसीलिए भारतीय संस्कृति अनेक संस्कृतियों को अपने मे समेटती हुई निरन्तर मानव-कल्याण की ओर बढ़ रही है। इस काल में व्यक्ति के माध्यम से ही चिन्तन किया जा रहा है। इस प्रकार सांस्कृतिक दृष्टि से इस युग में विभिन्न संस्कृतियों का अपूर्व सम्मिलन दृष्टिगत होता है।

प्रस्तुत प्रबन्ध के विषय में

प्रस्तुत ग्रन्थ में वर्तमान कथा-लेखिकाओं की प्रतिभा का कालक्रमानुसार विवेचन किया गया है, अर्थात् उनके योगदान का प्रवृत्तिमूलक अनुसंधान न करके कृतियों के

रचना-काल को ही प्राथमिकता दी गई है। कुछ रचनाओं पर सन्-संवत् का उल्लेख न होने से लेखिकाओं के ऐतिहासिक क्रम-निर्धारण की समस्या प्रारम्भ में बड़ी विकट प्रतीत होती थी। कुछ लेखिकाओं के पुल्लिग-सूचक नाम अथवा लेखकों के स्त्रीलिंग सूचक नाम भी जटिलता को बढ़ाने में सहायक हुए। इसी प्रकार एक ही नाम की दो लेखिकाओं द्वारा प्रायः समानान्तर रूप में रचना करने पर यह जानने में कठिनाई रही कि वे एक ही हैं अथवा दो भिन्न व्यक्तित्व हैं। इन सबसे बड़ी समस्या पुरुष-लेखकों द्वारा स्त्री के छद्म नाम से रचना करने की सम्भावना ने उत्पन्न की। छान-बीन, अनुमान, परामर्श आदि के आधार पर इन समस्याओं का यथोचित समाधान करने की चेष्टा की गई है।

प्रस्तुत: प्रबन्ध मे लेखिकाओ की मौलिक रचनाओं की ही समीक्षा की गई है, अनुवादों की नही। कारण यह है कि अनूदित रचनाओं में लेखिकाओं के भावों अथवा विचारो का मूल्यांकन संभव नही होता। प्रबन्ध की रचना में सबसे अधिक कठिनाई सामग्री-सचयन की थी। लेखिकाओं की रचनाएँ इतने स्फुट रूप में प्रकाशित होती रही हैं कि किन्हीं एक-दो स्थानों पर उनके सुलभ होने का प्रश्न ही नहीं उठता था। प्रबन्धगत सामग्री की खोज मैंने मुख्य रूप से निम्नलिखित पुस्तकालयों मे की थी—

दिल्ली :

मारवाड़ी पुस्तकालय, दिल्ली पब्लिक लाइब्रेरी, सनातन धर्म कॉलेज, रामजस कॉलेज, लेडी श्रीराम कॉलेज, देशबन्धु कॉलेज आदि के पुस्तकालय, दिल्ली विश्वविद्यालय का पुस्तकालय।

आगरा :

नागरीप्रचारिणी सभा, चिरंजीलाल पुस्तकालय।

इलाहाबाद :

सम्मेलन संग्रहालय, भारती भवन पुस्तकालय।

वाराणसी :

नागरीप्रचारिणी सभा का आर्यभाषा पुस्तकालय।

कलकत्ता :

नेशनल लाइब्रेरी, बड़ा बाजार पुस्तकालय, हनुमान पुस्तकालय, मारवाड़ी पुस्तकालय, सूरज जालान पुस्तकालय।

मैं इन पुस्तकालयों के प्रबन्धाधिकारियों की आभारी हूँ, जिनके सहयोग के बिना सामग्री का व्यवस्थित संकलन प्रायः असंभव ही रहता।

हिन्दी-विभाग,
मॉडर्न कॉलेज फ़ॉर विमेन,
डिफ़ेंस कॉलोनी, नई दिल्ली।

—उर्मिला गुप्ता

प्रथम प्रकरण

स्वातंत्र्योत्तर काल की प्रमुख कथा-लेखिकाएँ

श्रीमती सत्यवती मल्लिक

श्रीमती सत्यवती मल्लिक ने अनेक चरित्रप्रधान लघु कथाओं का प्रणयन किया है, जिनमें से अधिकांश रेखाचित्र के गुणों से युक्त हैं। अब तक उनके चार कहानी-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं, जो क्रमशः इस प्रकार है—दो फूल, वैशाख की रात, दिन रात, नारी हृदय की साध। इनमें क्रमशः उन्नीस, इक्कीस, इक्कीस तथा उन्नीस कहानियाँ संगृहीत हैं। इस प्रकार कुल कहानियों की संख्या अस्सी होनी चाहिए, किन्तु वास्तविकता यह है कि जो आख्यायिकाएँ किसी एक संग्रह में विद्यमान है, उनमें से अनेक अन्य संकलनों में भी स्थान पाती रही हैं, फलतः उनकी कहानियों की संख्या केवल इकतालीस है, जिनके शीर्षक अधोलिखित है—माली की लड़की, नीलम, कब्रिस्तान में, हसन, जीवन-संध्या, भाई-बहिन, साथी, दो फूल, बेकारी में, उऋण, दिन रात, कैदी, मुक्ति, इनकी जात, वंशी और चिट्ठी, नारी हृदय की साध, सिद्धवाँ, सगाई के दिन, एक सन्ध्या, बुत, नूरी, यात्रा में, सन्नाटा, प्रेमा, वे क्षण, पर जो चला जाता, वसन्त है या पतझड़, वैशाख की रात, डायरी से, श्यामा, उलझन, स्मृति, सुभाना, झंकार, आँसू, उत्तेजना, दृष्टि, अन्धड़, शाह-चाना, एक झलक, गुड्स ट्रेन।

पूर्वोक्त कहानी-संग्रहों के अतिरिक्त सत्यवती जी द्वारा सम्पादित कृति 'अमिट रेखाएँ' में भी उनके तीन रेखाचित्र (जून देदी, कैदी, नूरी) संकलित हैं। इनमें से यहाँ 'जून देदी' शीर्षक रेखाचित्र की ही आलोचना की जाएगी, क्योंकि अन्य दो रेखाचित्र तो पूर्वोक्त संकलनों में स्थान पा ही चुके हैं।

कथानक

आलोच्य लेखिका की यह सहज प्रवृत्ति है कि वे एक पात्र के चारों ओर घट-नाओं का ताना-बाना बुनकर कथानक की सृष्टि करती हैं। इसी कारण उनकी रचनाएँ कहानियों की अपेक्षा रेखाचित्र की सीमा में अधिक आती हैं। वस्तुतः इन्हें रेखाचित्रा-त्मक कहानियाँ कहना अधिक उपयुक्त होगा। उनकी कहानियों में घटनाएँ अत्यल्प हैं, कतिपय गल्पों में तो जीवन के अत्यन्त लघु क्षणों को कथानक का रूप दे दिया गया है—

एक सन्ध्या, नूरी, वे क्षण, यात्रा में, बेकारी में तथा वंशी और चिट्ठी शीर्षक कहानियाँ इस प्रसंग में उल्लेखनीय हैं। उदाहरणार्थ 'एक सन्ध्या' शीर्षक कहानी में कथानक केवल इतना है कि एक स्त्री को बाजार में चीजें खरीदते समय एक करुण पुकार सुनाई दी। ज्ञात हुआ कि एक निर्धन श्रमिक बाला ताँगे के नीचे दब गई। अभिजात वंश के गौरव पर कहीं आँच न आ जाए, इस भय से उस स्त्री ने चाहकर भी उस बाला को हृदय से न लगाया और वह चीखती लंगड़ाती हुई उठकर चली गई।

सत्यवती जी की प्रतिनिधि कहानियाँ वे हैं, जिनमें उन्होंने समाज के उपेक्षित, दीन-हीन, मूक पात्रों (कुली, सेवक, घोड़ेवाला, हरिजन आदि) की सरल निष्कपटता एवं दुर्भाग्यजन्य व्यथा को मुखर अभिव्यक्ति प्रदान की है। माली की लड़की, नूरी, प्रेमा, पर जो चला जाता, एक सन्ध्या, हसन, श्यामा, सुभाना, इनकी जात, शाहबाना, बेकारी में, कैदी आदि कहानियाँ इस दृष्टि से पठनीय हैं। उदाहरणार्थ 'प्रेमा' शीर्षक कहानी में हरिजन-बाला प्रेमा के अल्हड़ तथा रोचक व्यक्तित्व की सजीव झाँकी प्रस्तुत की गई है। जातीय रीति के अनुसार अल्पायु में ही विवाह हो जाने के फलस्वरूप वैधव्य के भार से बोझिल उस हँसमुख, किन्तु अन्तर में वेदनामयी, बाला का यह रेखाचित्र अत्यन्त मार्मिक एवं करुण बन पड़ा है। उक्त कहानियों में लेखिका ने जहाँ पीड़ित पात्रों के प्रति संवेदना एवं सहानुभूति का प्रकाशन किया है, वहाँ अभिजातवर्गीय पात्रों के प्रति व्यंग्यपूर्ण दृष्टि-कोण का परिचय भी दिया है। उदाहरणार्थ 'माली की लड़की' शीर्षक कहानी का कथानक द्रष्टव्य है—"देवकुमार का परिवार गर्मियों में पहाड़ पर गया तो वहाँ उनके नन्हे पुत्र विजय का परिचय माली की नन्ही लड़की मुक्ता से हुआ। विजय ने उसे लूडो, कैरम, ताश आदि सिखाकर उसके नन्हे हृदय को जीत लिया। जब देवकुमार पहाड़ से लौट आए तो मुक्ता के हृदय को गहरी ठेस पहुँची। विजय-जैसे साथी को पाकर उसने अपने चरवाहे साथियों को दुत्कार दिया था, किन्तु अब वह निराश्रिता रह गई। उधर घर लौटने पर जब विजय की बुआ उसे चिढ़ाने के लिए उसके सामने 'माली की लड़की' की चर्चा करती तो वह मुँह फुला लेता, क्योंकि उसके लिए तो यह अपमान था।" इस प्रकार बाल-मनोविज्ञान की सहायता से लेखिका ने सामाजिक भेदभाव का मार्मिक चित्रांकन किया है।

कतिपय कहानियों में लेखिका ने बाल-मनोविज्ञान का अत्यन्त सूक्ष्म एवं सहज चित्रण किया है। 'माली की लड़की' के अतिरिक्त भाई बहिन, साथी, दो फूल, इनकी जात तथा प्रेमा शीर्षक कहानियाँ इसकी प्रमाण हैं। इनमें 'भाई बहिन' कहानी अत्यन्त रोचक एवं मनोवैज्ञानिक बन पड़ी है। इसका कथानक इस प्रकार है—"निर्मला और कमल बहिन भाई थे। निर्मला बड़ी थी, वह सदैव कमल को चिढ़ाती-रुलाती रहती थी। माता की डाँट-फटकार का इन पर कोई प्रभाव न पड़ता था। एक दिन जुलूस में कमल को खो गया समझकर निर्मला व्याकुल हो उठी, बहुत रोई और उसके लौटने पर प्रेमाश्रु प्रवाहित करने लगी। सावित्री अपनी पुत्री के मन में छिपी इस स्नेहमयी बहिन का परि-

चय पाकर मुग्ध हो उठी।" सत्यवती जी की यह कहानी अत्यन्त प्रसिद्ध हुई है और अब तक अनेक प्रतिनिधि कहानी-संकलनों में स्थान पा चुकी है। इसकी सफलता का मुख्य कारण यह है कि इसका कथानक कल्पित न होकर सत्य की मार्मिकता लिये है। इस विषय मे श्रीमती सत्यवती मल्लिक के लेख 'मैं कहानी क्यों और कैसे लिखती हूँ' से यह उद्धरण द्रष्टव्य है—"दो फूल कहानी सब कल्पना है केवल एक भाव को प्रस्फुटित करने के लिए। किन्तु 'भाई बहिन' में एक लड़की के आँसुओं ने मुझे इतना प्रभावित किया मानो बार-बार कोई अन्दर से कह बैठा—इन्हे समेट लो। यह छोड़ने की चीज़ नही है।"[1]

सत्यवती जी ने आँसू, दृष्टि, अंधड़, एक झलक, दिन रात, नारी हृदय की साध आदि अनेक कहानियों में नारी-हृदय की सरलता, भावुकता, मातृत्व की कसक एवं परिस्थिति-जनित व्यथा के मर्मस्पर्शी चित्र अंकित किए है। उदाहरणार्थ 'बुत' एक विधुर जमीदार के घर बैठी हुई बुतनुमा नारी का रेखाचित्र है। पति की मृत्यु के बाद उसके छोटे भाई से उसका विवाह हुआ था, उसकी भी मृत्यु पर उसके चचेरे भाई से; किन्तु किसी निरर्थक संदेहवश वहाँ से जो निकाली गई तो मैकेवालो ने भी न रखा और उसे एक विधुर ज़मींदार के घर उसके तथा उसकी मौसी के कठोर नियन्त्रण में जीवन काटने को विवश होना पड़ा। इसी प्रकार 'दृष्टि' में एक ऐसी नववधू का करुण चित्र है जो सुन्दर न होने के कारण पति को प्रसन्न न कर पाई, फलतः पति अविनाश ने उसके खर्चे का प्रबन्ध करके दूसरा विवाह कर लिया और उससे उत्पन्न पुत्री को पालन-पोषण के लिए एक मित्र के घर भेज दिया। अनगढ़ प्रकृति की उस देहाती वधू के मन मे सदैव के लिए मातृत्व की कसक व्याप्त हो गई और उसकी दृष्टि मे मार्मिक करुणा ने घेरा डाल लिया। 'माली की लड़की', 'भाई बहिन', 'साथी', 'बसन्त है या पतझड़' शीर्षक अनेक कहानियों में लेखिका ने गार्हस्थ्य जीवन की मधुर झाँकियाँ प्रस्तुत की हैं। 'सिद्धवां' कहानी में धार्मिक कथानक का अंकन हुआ है, 'गुड्स ट्रेन' में हास्यरसपूर्ण घटनाओं की आयोजना की गई है और 'जूनी देदी' में जूनी देदी अर्थात् चाँद माँ की सहृदयता का चित्रण हुआ है, जिसने काश्मीर-यात्रा में थकी लेखिका तथा उसके सहयात्रियों की आहार, आश्रय आदि देकर सेवा की।

उपर्युक्त विशेषताओं के अतिरिक्त सत्यवती जी की कहानियो के अन्य उल्लेखनीय गुण इस प्रकार है—(अ) वे प्रायः आत्मकथन की शैली में लिखित है, (आ) उनमें अनुभूतिजन्य गाम्भीर्य का समावेश हुआ है, (इ) उनमें करुण रस की मार्मिकता प्रायः व्याप्त रही है, (ई) कथात्मक अंशों की अपेक्षा उनमें विचारात्मक तथा भावात्मक अंशों का प्राबल्य है। उद्दिष्ट पात्रों के वार्त्तालाप, हाव-भाव, मनोभाव, अतीतकालीन जीवन-घटनाओं, आत्मचिन्तन आदि साधनों से प्रत्येक कथानक का विकास हुआ है। हम

---

१. कहानी, अक्तूबर १६४१, पृष्ठ १०६

श्री व्यथित हृदय के इस कथन से सहमत नहीं हैं कि उनकी अधिकांश कहानियों में जीवन के सामीप्य की अपेक्षा भावुकता की प्रबलता है—"सत्यवती जी की कहानियों में भावुकता का अंश अधिक है, किन्तु किसी-किसी कहानी में जीवन का अधिक सामीप्य भी है।"[1] वस्तुतः उनकी कहानियो मे इन दोनो गुणों का समन्वय हुआ है।

चरित्र-चित्रण

सत्यवती जी की समग्र कहानियाँ चरित्रप्रधान है। प्रायः प्रत्येक कहानी में उन्होंने एक पात्र को लक्ष्य मे रखा है और उसके जीवन की कुछ मार्मिक घटनाओं तथा उसके चरित्र की स्थूल एवं सूक्ष्म प्रवृत्तियों को ही कथानक का आकार प्रदान किया है। समाज के पीड़ित एवं उपेक्षित पात्रो के लिए लेखिका ने अपने हृदय की समस्त करुणा एवं सवेदना उँडेल दी है। 'एक सन्ध्या' मे मज़दूर कन्या, 'प्रेमा' में हरिजन-बालिका प्रेमा, 'इनकी जाति' में बिहारी तथा गोपाल नामक दो पहाड़ी सेवक, 'पर जो चला जाता' में हबीबा नामक पहाडी घोड़ेवाला, 'बेकारी मे' की जल्लो मेहतरानी, 'कैदी' में कैदी, 'सुभाना' मे घरेलू सेवक सुभाना, 'दिन रात' मे गोआ-निवासिनी निर्धन युवती आदि पात्र इसी प्रकार के हैं। लेखिका ने एक ओर इनके अन्तर की व्यथा एवं मनोवेदना का मार्मिक चित्रण किया है तो दूसरी ओर इनकी सहनशीलता, स्नेह, सेवापरायणता, विश्वास आदि गुणों का भी सहज प्रकाशन किया है। अभिजातवर्गीय पात्र अपने स्वार्थ के लिए निम्नवर्गीय पात्रों से सम्पर्क रखते है, किन्तु उन्हें अपनाकर अपना गौरव क्षीण करना उन्हें सह्य नहीं : उनकी-सी अल्हड़ता एवं निश्चिन्तता भी तो अभिजात वर्ग में नही। इस प्रकार सत्यवती जी ने उक्त दोनों वर्गो का तुलनात्मक मूल्यांकन करते हुए पीड़ित वर्ग के प्रति सहानुभूतिपूर्ण एवं अभिजात वर्ग के प्रति व्यंग्यपूर्ण दृष्टिकोण का परिचय दिया है।

सत्यवती जी की अधिकांश नायिकाएँ समाज द्वारा उपेक्षिता एवं परिस्थितियों द्वारा प्रताड़िता हैं। उदाहरणार्थ 'आँसू' की मातृपितृहीना शोभा किसी प्रकार उपेक्षिता-सी पलकर बड़ी हुई, तो विवाह के बाद भरसक प्रेम करने पर भी पति ने उसका त्याग कर दिया। 'दृष्टि' की नायिका सौन्दर्यहीना होने के कारण पति को रिझा न पाई, तो पति ने उससे उत्पन्न पुत्री को एक मित्र के घर भेज दिया और स्वयं दूसरा विवाह कर लिया। 'अंधड़' में एक दुःखी यूनानी युवती की करुण जीवन-गाथा एवं सजग कर्मठ व्यक्तित्व का चित्रण है। इसी प्रकार 'एक झलक' में, एक पीड़िता वृद्धा का जीवन-चित्र है, जिसने अनादर पाकर भी पति को स्नेह ही दिया। धन के प्रति उसकी वितृष्णा आदि भावों से उसके निस्पृह एवं वीतराग चरित्र की मार्मिक अभिव्यक्ति हुई है। 'अंधड़' की गाथा तथा 'जीवन सन्ध्या' की गंगा भी ऐसी ही व्यथापूरित पात्राएँ है। 'धुत' की नायिका में भारतीय नारी की समस्त विवशता, करुणा और स्नेहिल भावना मानो साकार

---

१. कमला, जनवरी १९४१, पृष्ठ ३३३

हो उठी है। 'वैशाख की रात' में पद्मा के विचित्र आचरण, हाव-भाव एवं मनोभावों का स्थिति-सापेक्ष मनोवैज्ञानिक अंकन हुआ है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि सत्यवती जी ने नायिकाप्रधान कहानियों में पीड़िता पात्राओं को केन्द्रविन्दु के रूप मे चुना है। इनके अतिरिक्त उन्होंने नायकप्रधान कहानियों की भी रचना की है और उनमें भी प्रायः सुख-सुविधाओं से वंचित अभागे पात्रों के चतुर्दिक् ही कथानकों का ताना-वाना वुना है। हवीवा, शाहवाना, सुभाना, कैदी, गोपाल, विहारी आदि पूर्वोक्त पात्रों के अतिरिक्त 'हसन' में हसन, 'उत्तेजना' में नरपति, 'हुकार' में चित्रकार, 'मुक्ति' में महेन्द्र और 'सगाई के दिन' में विद्याधर नामक पात्र भी इसी श्रेणी के हैं। वाल-मनोविज्ञान के चित्रण मे लेखिका विशेष सफल रही है। 'दो फूल' मे कमला, केशी, भापी आदि वालको की वालोचित जिज्ञासा एवं चंचल मनोवृत्तियों में तथा 'भाई वहिन' एवं 'माली की लड़की' में वालोचित स्नेह के विविध प्रसंगों मे वाल-मनोविज्ञान के विविधरूपी सहज चित्र अंकित किए गए है। लेखिका की एक अन्य विशेषता यह है कि उन्होंने पात्रों के आकार-प्रकार, हाव-भाव, वेशभूषा आदि को लेकर अनेक सजीव चित्र अंकित किए हैं। उदाहरणार्थ 'प्रेमा' कहानी से यह अवतरण देखिए—

"ये दोनों वहने कितनी अधिक फुर्तीली खुशमिजाज और भली दिखनेवाली थीं। वड़ी वहन की आँख तेज वुद्धिमत्ता की झलक लिये हुए है, नोकीली नाक, खिला हुआ चेहरा, यौवन के उभार को प्रकट करता था। लाल लहँगा, घुली ओढ़नी, साफ-सुथरा काम। किन्तु छोटी यही प्रेमा जव-तव विखरे रूखे केश, मैली ओढ़नी में ढका साँवला चेहरा, छोटी नाक, सकुचाये नेत्रों के साथ मेरी आँखों के सामने से गुजर जाती। दोनों वहनें एकसाथ खाना खाती, एकसाथ झाड़ू लिये सफाई करने आती और काम-धाम छोड़ वहीं पिछवाड़े सड़क पर धूल में बैठ कंकरो से खेल रही होती।"[१]

इसी प्रकार 'अंधड़' शीर्षक कहानी के प्रारम्भ में नायिका माया के व्यक्तित्व एवं पहनावे का चित्रात्मक उल्लेख हुआ है।[२] वस्तुतः श्रीमती महादेवी वर्मा की भाँति सत्यवती जी ने भी अपने पात्रो के अन्तर्वाह्य व्यक्तित्व का सूक्ष्म विश्लेषण किया है। कतिपय पात्र, जो मात्र आत्मचिन्तन की शैली में ही चित्रित किए गए हैं, उक्त कथन के अपवाद है। उदाहरणार्थ 'वंशी और चिट्ठी' में वंशीवादक का व्यक्तित्व साकार नही है, उसकी करुण वंशीध्वनि से ही लेखिका उसके व्यक्तित्व का अनुमान लगाती है। इसी प्रकार इसी कहानी मे अज्ञात पत्र-प्रेषक की हटी वहिन का चरित्र भी आत्मचिन्तन एवं भावुकता के द्वारा अनुमानित रहा है। 'नारी हृदय की साध' में लम्वोदरा तथा शेषनाग नामक नदियों में वहिन-भाई के सम्बन्ध की कल्पना करके लेखिका ने उनके मानवीकरण द्वारा सुन्दर भावनाओं को व्यक्त किया है।

---

१. वैशाख की रात, पृष्ठ ५३
२. देखिये 'दिन रात', पृष्ठ ८४

कथोपकथन

आलोच्य कहानियों में नाटकीयता की अपेक्षा वर्णनात्मकता का प्राधान्य रहा है। केवल 'उऋण' शीर्षक गल्प में संवादों के माध्यम से मुख्य कथानक का विकास हुआ है, अन्यथा माली की लड़की, कब्रिस्तान में, अंबड़, वेकारी मे, साथी आदि अधिकांश कहानियों में केवल यत्र-तत्र अत्यन्त विरल वार्त्तालापों की आयोजना की गई है। नीलम, वंशी और चिट्ठी, वैशाख की रात, स्मृति आदि भावप्रधान गल्पों में प्रस्तुत तत्त्व का एकान्त अभाव रहा है। आलोच्य संवादों की उल्लेखनीय विशेषताएँ ये है कि वे अत्यन्त लघु, सोद्देश्य एवं पात्रानुकूल हैं। पात्रो के व्यक्तित्व को मुखर अभिव्यक्ति देने में इनका विशेष योगदान रहा है। उदाहरणार्थ 'वेकारी मे' शीर्षक कहानी में कथानायक एवं जल्लो मेहतरानी का यह वार्त्तालाप कितना सजीव है—

"जाने क्यों मैं अपने से झेप सा गया और अनायास ही रूमाल से मुँह पोंछते हुए पूछ बैठा—"जल्लो तनखाह मिल गई ?"

उसके हाथ में चमकता हुआ एक रुपया था जिसको दस वार माथे से छुआकर कहा, "जीते रहो वावूजी—बच्चे बने रहें वावूजी।"

उस घड़ी मुझे उससे वातें करना सुहाने लगा। मैंने फिर पूछा, "कितने रुपये हो जाते होंगे ?"

"भगवान् वनाये रखे वावूजी। छः-सात रुपए वन ही जाते है वावूजी और कुछ कपड़े-लत्ते—माँजी वहुत परवरिश करती है। अव यह वात है वावूजी गरीव मानस कभी राँवे, कभी न राँवे।"[1]

उक्त उद्धरण की विशेषता यह है कि लेखिका ने तीन पात्रों की भाव-भंगिमा, मनोभावों तथा परिस्थितिजन्य परिवर्तनों को एकसाथ लक्ष्य में रखा है। इन कहानियों में संवादों की एक अन्य उल्लेखनीय विशेषता यह है कि उनमें पात्रानुकूल भावों की भाँति भाषा में भी पात्रानुकूलता का ध्यान रखा गया है। यही कारण है कि 'सुभाना' का नायक सुभाना पंजावी-मिश्रित शब्दावली का व्यवहार करता है[2] और 'नूरी' कहानी में लेखिका एवं वालिका नूरी ठेठ काश्मीरी भाषा में वार्त्तालाप करते है।[3] 'कैदी' कहानी में कैदी ने भी इसी प्रकार शुद्ध काश्मीरी भाषा का प्रयोग किया है।[4] ऐसे स्थलों पर लेखिका ने प्रायः कोष्ठकों मे मूल उक्तियों के हिन्दी-अनुवाद भी दे दिये है, जिससे पाठकों को भाव-ग्रहण में कठिनाई नही होती।

---

१. वैशाख की रात, पृष्ठ १०२
२. देखिए 'दो फूल', पृष्ठ १०४
३. देखिए 'वैशाख की रात', पृष्ठ २१
४. देखिए 'नारी हृदय की साध', पृष्ठ ६३

देशकाल

श्रीमती मल्लिक ने अपनी कहानियों में सामाजिक समस्याओं की अपेक्षा पात्रों की वैयक्तिक समस्याओं का अंकन किया है। कतिपय कहानियों में विशेष के सामान्यीकरण द्वारा कुछ परिणाम निश्चित किये जा सकते है, किन्तु लेखिका की ओर से ऐसा कोई आग्रह नहीं है। फिर भी अत्यन्त विरल कहानियो में यत्र-तत्र समकालीन सभ्यता के विषय मे जो व्यंग्यपूर्ण संकेत किये गए है, वे उल्लेखनीय है। उदाहरणार्थ 'वुत' तथा 'पर जो चला जाता' शीर्षक गल्पों में शहरी सभ्यता के प्रति कटु व्यंग्य द्रष्टव्य है—

(अ) "बड़े-बड़े सभ्य नगरो मे जहाँ ऐसे पानी माँगना भी सलीके से बाहर है, वहाँ इस घोर अकाल के ज़माने में भी इधर देहातो में भैंसवाला घर छाछ के लिए अवश्य खुला होगा, ऐसा उनका अनुमान था।"[1]

(आ) "वह नहीं जानता था कि सैलानी सवार उस दुनिया से आ रहा है, जहाँ मरना-जीना, चोरी-डकैती धोखा आदि तनिक भी अनोखी बातें नही। जीवन के मूल्य जहाँ प्रतिक्षण बदल रहे है। किसी की स्मृति में चार आँसू बहाने का भी जहाँ अवकाश नही और जन्म या मिलने पर हर्ष प्रकट करना भी जहाँ उपहास अथवा कोरी भावुकता गिना जाता है और मनुष्य का मन निरन्तर यह सब सहते-सहते मानो चट्टान-सा बनता जा रहा है।"[2]

'नीलम' शीर्षक आख्यायिका के पूर्वार्द्ध में नीलम नामक अश्व (जो उक्त कहानी का नायक है) को केन्द्र बनाकर भारत-विभाजन के समय घटित लूटमार, मारकाट आदि के व्यंग्यात्मक चित्र अंकित किये गए है। उदाहरणार्थ एक उक्ति अवलोकनीय है—"दिन के बारह बजे थे। पर चारों ओर अद्‌भुत सन्नाटा था, तीन दिन की लगातार मारकाट, लूटमार के अनन्तर भी लोग अधखुली दुकानो, बरामदों, खम्भो के कोनों में भेड़ियों की भाँति छिपे बैठे थे। पुलिस की लारी तनिक आगे निकले तो वे लूटने दौड़ें।"[3]

प्रकृति-श्री का चित्रांकन करते समय सत्यवती जी ने विशेष तन्मयता का परिचय दिया है। काश्मीर के पर्वतीय प्रदेशों (पहलगाँव, श्रीनगर, चन्दनवाड़ी, गुलमर्ग आदि) की हिमाच्छादित चोटियों, मार्गों, वृक्षों, नालों, झीलों, जलप्रपातों आदि का वर्णन करते समय वे आत्म-विस्मृत-सी हो उठी है। नूरी, माली की लड़की, नारी हृदय की साध, पर जो चला जाता, हसन, कैदी, स्मृति, एक झलक, शाहबाना आदि अनेक कहानियों में विविध प्राकृतिक दृश्यों की सुन्दर अवतारणा हुई है। 'नारी हृदय की साध' और

---

१. वैशाख की रात, पृष्ठ १०
२. वैशाख की रात, पृष्ठ ८३-८४
३. नारी हृदय की साध, पृष्ठ १६

'शाहवाना' में लम्बोदरा और शेषनाग नाम्नी नदियों की नैसर्गिक श्री का मनोमुग्धकारी चित्रांकन किया गया है।[1] 'हसन' कहानी में काश्मीर का यह अनुपम सौन्दर्य अवलोकनीय है—"वह वैरी नाग, वह मार्तण्ड, वह अच्छावल ! नील नभोमण्डल के नीचे, छोटी-छोटी पर्वतमालाओं के विस्तृत घेरों मे, दूर तक फैली हुई काश्मीर की हरी-भरी घाटी, स्थान-स्थान पर दुग्धफेन-सी धवल जल-धाराएँ फेंकते हुए झरने, नदी-नाले, कमल-दलों से पूरित सरोवर, धूप में लहलहाते हुए धान के खेत ! अहा यही है, उसका प्यारा देश।"[2] इसी प्रकार 'स्मृति' कहानी मे प्राकृतिक एवं मानवीय सौन्दर्य की सामूहिक झाँकी कितनी मनोरम बन पड़ी है—"चन्द्रभागा पड़ाव से प्रायः एक-सौ गज नीचे जाकर बहती है। बहेकड़ तथा जंगली अनार की झाड़ियों के बीचोंबीच मार्ग बनाती हुई जहाँ तक पतली पगडंडी पड़ी है, वहीं छोटे-छोटे सफेद पत्थरो को इधर-उधर लुढ़काती हुई ग्रामीण पहाड़ी कन्याएँ सिर पर पीतल के कलसे रखे आती-जाती रहती है।"[3]

उद्देश्य

सत्यवती जी ने प्रमुख रूप से रेखाचित्रात्मक आख्यायिकाओं की रचना की है, जिनमें मुख्यतः इन उद्देश्यो का निर्वाह हुआ है—

(अ) मानव-मन की गहराइयों में पैठकर पात्रो की चारित्रिक प्रवृत्तियो का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण।

(आ) माता के वात्सल्यपूर्ण हृदय की सफल उद्भावना एव बाल-मनोविज्ञान का सहज अवतरण।

(इ) प्रकृति-श्री का रम्य आलेखन, यथा—हरे-भरे खेत, पीली सरसों का लह-लहाता सौन्दर्य, काश्मीर तथा उसके निकटस्थ पर्वतीय प्रदेशों की प्राकृतिक सुषमा, जल-प्रपात, नदी-नाले आदि।

(ई) पीड़ित वर्ग के प्रति हार्दिक संवेदना—उनकी सरलता, सहज विश्वास, सहनशीलता तथा स्नेह-भाव का सफल चित्रण और उनकी तुलना मे अभिजात वर्ग की स्वार्थपरता, कृत्रिम स्नेह-प्रदर्शन आदि हेय प्रवृत्तियो का व्यंग्यात्मक उल्लेख।

सत्यवती जी की कहानियो के उद्देश्य अथवा गुणों को अज्ञेय जी ने 'दो [illegible]ल' शीर्षक कथा-संग्रह की समीक्षा करते हुए इन शब्दो में व्यक्त किया है—"दो [illegible] एक ऐसे व्यक्ति के मनोभावों का प्रतिबिम्ब है जिसकी सौन्दर्यानुभूति औसत से क[illegible]्यादा है। मानव-जीवन के, खासकर नारी-जीवन के, दुख-क्लेश का जिक्र पुस्तक [illegible] किन्तु उनसे लेखिका का सम्बन्ध सौन्दर्य की खोज करनेवाले का ही सम्बन्ध है, [illegible]धारक का

---

१. देखिए 'दिन रात', पृष्ठ ६८
२. नारी हृदय की साध, पृष्ठ ३३
३. दो फूल, पृष्ठ ६६-६७

नहीं, दार्शनिक का नहीं, निरे रूखे यथार्थ सत्य की खोज करनेवाले का नहीं। यही सत्यवती जी की कहानियों की विशेषता है। और यही उनका प्रधान गुण भी है।"[1] सत्यवती जी की कहानियों में उद्देश्य प्राय: अभिव्यंजित रहे हैं, किन्तु कतिपय कहानियों के अन्त में उन्होंने उनका प्रत्यक्षत: उल्लेख भी कर दिया है। उदाहरणार्थ 'बसन्त है या पतझड़' तथा 'दो फूल' शीर्षक कहानियों में जीवन की निस्सारता का प्रतिपादन उनका प्रमुख लक्ष्य रहा है। दृष्टान्त रूप में 'दो फूल' कहानी के अन्त की ये पंक्तियाँ अवलोकनीय हैं—"ओह, मैंने तुझे अपने भापी से बचाया था मगर फिर भी मैं महाकाल से तेरी रक्षा नहीं कर पाई। एक क्षण तक बड़े गम्भीर भाव से मैंने उस मुरझाये गुलाब के फूल की ओर देखा। उसके बाद मेरे शरीर में कंपकंपी-सी दौड़ गई। मानो वह मुझसे कह रहा था—क्या तुम्हारे मानव-जीवन का इतिहास भी मेरे समान नहीं है।"[2]

भाषा-शैली

विवेच्य कहानियों की भाषा दीर्घवाक्यान्वित होने पर भी सरल, स्पष्ट एवं प्रभावपूर्ण है। फ़रमाइश, चश्मा, अजीब, इख्तियार, हुजूर आदि उर्दू-शब्दों[3]; स्ट्रावेरी, टाईफ़ायड, ट्यूटर आदि प्रचलित अंग्रेज़ी-शब्दों[4]; छाछ, सीत, दहलीज आदि प्रान्तीय शब्दों[5] एवं प्रसंगानुकूल तत्सम अथवा तद्भव शब्दों के प्रयोग ने उनकी भाषा को वांछित सजीवता एवं व्यावहारिकता प्रदान की है। इसके अतिरिक्त रोचक अनुप्रासात्मक युग्मों (लोट-पोट, मैली-कुचैली, हेल-मेल, टेढ़ी-मेढ़ी, अड़ोसियों-पड़ोसियों, उलट-पुलट, झटक-पटक, जहाँ-तहाँ, नंग-धड़ंग, तोड़-मरोड़ आदि) एवं सुन्दर तथा युक्तियुक्त उपमाओं (नवनीत-सा कोमल, दूध-सा सफ़ेद, परियों-सी सुन्दर, दुग्धफेन-सी धवल, सफ़ेद दूध-से कपड़े, पंखड़ियों-सी पतली आदि) के प्रयोग में भी वे सिद्धहस्त हैं। भाषा को सजाने-सँवारने के लिए उन्होंने व्यवहार-सहज मुहावरों का भी प्रसंगानुकूल प्रयोग किया है। अभिजात वर्ग के दम्भ एवं स्वार्थ का उल्लेख करते समय उनकी शैली व्यंग्यपूर्ण हो गई है[6] और गम्भीर भावों का विश्लेषण करते समय उन्होंने प्राय: सूक्ति शैली का प्रयोग किया है। यथा—"जीवन के आदि से अन्त तक मनुष्य न जाने कितने सम्बन्ध बनाता और तोड़ता चला जाता है, किन्तु इनमें से कुछ एक ऐसे होते हैं, जिनकी याद विस्मृति की सूखी घाटी में कभी-कभी अकस्मात् किसी उच्छृंखल पहाड़ी नाले के समान उमड़कर न

---

१. त्रिशंकु, पृष्ठ १०७
२. वैशाख की रात, पृष्ठ ६४
३. देखिए 'वैशाख की रात', पृष्ठ ७, ६, १५, २४, ३५
४. देखिए 'वैशाख की रात', पृष्ठ ७, २६, ३४
५. देखिए 'वैशाख की रात', पृष्ठ १०, ११, ११
६. देखिए 'वैशाख की रात', पृष्ठ ८

जाने कैसी हलचल-सी मचाकर उसे आप्लावित कर देती है।"[1]

श्रीमती मल्लिक की कथा-शैली मूलतः विवरणात्मक एवं चित्रात्मक है और उनमें मनोवैज्ञानिक विश्लेषण के अनुरूप ही वर्णनोचित गाम्भीर्य को स्थान प्राप्त हुआ है। वैसे उसमें सर्वत्र लयात्मक माधुर्य के दर्शन होते हैं। जब लेखिका वर्णन-प्रवाह में बहकर तन्मय हो जाती हैं तब अत्यन्त काव्यात्मक अथवा भावात्मक शब्दावली का प्रयोग करने लगती है। यथा—

(अ) "श्वास-प्रश्वास की इन प्रगति में, रवि-शशि की इन आँख-मिचौनी में और दिन रात की इस हेराफेरी में मेरा यौवन-वसन्त बिखर पड़ा था।"[2]

(आ) "इन वंशी बजानेवालों में कौन भाग्यशाली है जिसकी पर्वतवासिनी अधीर नेत्रों से उसकी प्रतीक्षा कर रही है? कौन वह बंदी विरही यक्ष है? अटपटी अलकें, क्लांत-श्रांत मुद्रा, धान के खेतों में ठिठककर एकटक ताकते हुए प्राण जिसके लिए विकल हैं—समझ में नहीं आता, किन कंपित हाथों से चिट्ठी सौंपी जाए और कहाँ संदेश या उत्तर दिया जाए।"[3]

ऐसी उक्तियों को लक्षित करके ही श्री चन्द्रगुप्त विद्यालंकार ने 'नारी हृदय की साध' की समीक्षा करते हुए श्रीमती मल्लिक की भाषा में गद्यकाव्य-जैसे प्रवाह के दर्शन किए हैं—"श्रीमती सत्यवती मल्लिक—की रचनाओं में मानव हृदय की कोमल भावनाओं का बहुत नाजुक चित्रण रहता है। संवेदनशीलता उनका एक असाधारण गुण है। कला की दृष्टि से भी उनकी कहानियाँ श्रेष्ठ कोटि की हैं—श्रीमती मल्लिक की कुछ कहानियाँ पूरी तरह गद्यकाव्य हैं।"[4] इस उक्ति से स्पष्ट है कि सत्यवती जी की कहानियाँ पूर्णतः कलात्मक हैं।

निष्कर्ष

सत्यवती जी ने प्रायः एकपात्रीय कहानियों की सृष्टि की है, जो अनेकशः रेखा-चित्र की सीमाओं का स्पर्श करती प्रतीत होती हैं। कथात्मक अंशों की अपेक्षा उनकी कहानियों में बौद्धिकता एवं भावुकता का प्राबल्य है। इनमें समाज के शोषित पात्रों के लिये संवेदना तथा अभिजातवर्गीय पात्रों के लिए व्यंग्यपूर्ण दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति हुई है। बाल-मनोविज्ञान का सहज चित्रांकन तथा प्रकृति-श्री की रम्य अवतारणा इन कहानियों की प्रमुख विशेषताएँ हैं। इस प्रसंग में श्री बनारसीदास चतुर्वेदी की यह उक्ति अवलोकनीय है—"नारी-हृदय के भावों का जैसा कलापूर्ण और मनोवैज्ञानिक विश्लेषण

---

१. वैशाख की रात, पृष्ठ ६६
२. वैशाख की रात, पृष्ठ ६०
३. नारी हृदय की साध, पृष्ठ १०८
४. आजकल, अक्तूबर १९६१, पृष्ठ ५०

श्रीमती कमलादेवी चौधरी ने किया है, वैसा सत्यवती जी अभी नहीं कर सकतीं, और न उनमें श्रीमती होमवती जी की तरह हिन्दू-नारी के दुर्भाग्यों तथा दुःखों का वर्णन करने की ही शक्ति है, पर कुछ चीज़ें ऐसी हैं, जो सत्यवती जी की निजी विशेषताएँ हैं। बाल-मनोविज्ञान का बड़ा ही आकर्षक वर्णन उनकी रचनाओं में पाया जाता है; और प्राकृतिक सौन्दर्य का चित्रण तो मानो उन्हीं के हिस्से में आया है।"[१] लेखिका ने काश्मीर के प्राकृतिक सौन्दर्य का बहुलतापूर्वक चित्रण किया है। उनकी कहानियों में आद्यन्त करुण रस की मार्मिकता व्याप्त रही है। प्रायः सभी कहानियाँ आत्मकथन की शैली में लिखी गई हैं और उनमें अनुभूतिजन्य गाम्भीर्य का विशेष अन्तःप्रसार रहा है।

---

१. रेखाचित्र (बनारसीदास चतुर्वेदी), पृष्ठ ३१६

श्रीमती रजनी पनिकर

श्रीमती रजनी पनिकर ने अनेक सामाजिक-मनोवैज्ञानिक कहानियों की रचना की है, जो 'सारिका', 'सन्मार्ग', 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' आदि पत्र-पत्रिकाओं में प्रायः प्रकाशित होती रही है। उनकी कहानियो का एक संकलन 'सिगरेट के टुकड़े' शीर्षक से प्रकाशित हुआ है। यहाँ उनकी कहानी-कला का मूल्यांकन इसी के आधार पर किया गया है। इस कथा-सग्रह मे निम्नलिखित सोलह कहानियों को स्थान प्राप्त हुआ है—नई पीढ़ी, यह पत्र, दो दीप, आप तुम, सिगरेट के टुकड़े, सातवी बहन, समस्या उलझती गई, भगवान् जल गया, मन की आँखे, कुसुम, सुलेखा, मूर्तियाँ, मनचली, पत्थर और संगीत, रंजना और रमण, गुणवन्ती मौसी। इन कहानियो मे व्यक्ति और समाज की विभिन्न समस्याओं का उल्लेख हुआ है।

कथानक

इस संग्रह की प्रथम कहानी 'नई पीढ़ी' मे मनोरमा नाम्नी एक क्रान्तिकारी कन्या का चरित्रांकन है, जिसने अपने माता-पिता की ऐश्वर्य-प्रियता के विद्रोह में सादे जीवन को ग्रहण किया और निर्धन रेवती से विवाह करके जन-सेवा को अपना लक्ष्य बनाया। 'यह पत्र' में एक विरह-विह्वला पत्नी का प्रवासी पति के नाम पत्र है, जिसमें वह पति से आग्रह करती है कि वे पत्नी को शुष्क पत्र न लिखकर रसभीना पत्र लिखा करें। उनके मार्ग-दर्शन के लिए वह 'पति की ओर से' एक पत्र भी लिखकर भेजती है। 'दो दीप' मे कैप्टेन राजेश के मनोभावों का चित्रण है—दीपावली को देखकर उसे अपनी प्रेयसी उमा की स्मृति आ जाती है और वह उसमे खो जाता है। 'आप तुम' कहानी में आधुनिक सभ्यता पर तीव्र व्यंग्य है। कथा-नायिका रमा अग्रवाल धनी माता-पिता की स्वच्छन्द कन्या है। वह युवक रमेश को धनी समझकर उसे अपनी ओर आकृष्ट करना चाहती है, किन्तु जब उसे यह ज्ञात हुआ कि वह क्लर्क है तब वह उसकी दरिद्र दशा पर घृणा से भर उठती है। 'सिगरेट के टुकड़े' की नायिका उमा विवाह के तीसरे दिन अपने पति प्रकाश से स्पष्ट कह देती है कि वे सिगरेट पीना त्याग दें, अन्यथा वह नही बोलेगी। प्रकाश गृह त्यागकर चला गया और पत्नी के नाम होटल से एक पत्र लिखा कि यदि वह समझौता करना चाहे तो उसे पति की इच्छाओं के सामने झुकना पड़ेगा। 'सातवी बहन' में एक निर्धन मध्यमवर्गीय परिवार का करुण चित्र है जहाँ पुत्र की आशा मे प्रतिवर्ष पुत्री की

वृद्धि होती जाती थी। 'समस्या उलझती गई' में किशोर की पत्नी द्वारा परपुरुष से प्रेम करने की समस्या का चित्रण है।

'भगवान् जल गया' में जमादारिन चम्पो के दुःखी जीवन का चित्रण हुआ है। 'मन की आँखें' में किशोर द्वारा माता-पिता का विरोध करके मालविका से अन्तर्जातीय विवाह करना, मालविका के सेवापरायण चरित्र द्वारा सास का मनःपरिवर्तन आदि घटनाओं द्वारा अन्तर्जातीय विवाह का समर्थन किया गया है। 'कुसुम' में विधवा कुसुम की मातृत्वविषयक आकांक्षा का मार्मिक चित्र अंकित किया गया है। 'सुलेखा' में दाम्पत्य जीवन के मनमुटाव के कारण पत्नी द्वारा पति-गृह के त्याग का चित्रण है। 'मूर्तियाँ' मे कला का जीवन-चित्र है, जिसने विवाह न करने का प्रण किया था, किन्तु डाक्टर धीर के सम्पर्क से उसका मन परिवर्तित हो गया। 'मनचली' में सविता के चरित्र द्वारा व्यक्तिवैचिव्य का उदाहरण प्रस्तुत किया गया है। लेखिका की अन्य कहानियों में भी व्यक्ति, समाज अथवा परिवार की मौलिक प्रवृत्तियो को प्रकट किया गया है। उन्होंने कथानक में साधारण वृत्तमात्र न रखकर घटनाओ के चुनाव में मनोविज्ञान का विशेष ध्यान रखा है। प्रत्येक कहानी एक न एक समस्या अथवा विवशता को लेकर लिखी गई है। यही कारण है कि पाठक के मन पर उसका प्रभाव स्थायी होता है। 'रंजना और रमन' कहानी में रंजना और उसके अत्याचारी पति रमन के मनोभावों को अत्यन्त सहज रीति से उभारा गया है। इस कहानी मे कथानक का विकास चरित्र-चित्रण के सहयोग से हुआ है। 'गुणवन्ती मौसी' हास्य रस की कथा है। श्रीमती पनिकर की कहानियों में घटना-बाहुल्य अथवा आकस्मिक संयोग-जैसी किसी अन्य कृत्रिमता के दर्शन नही होते। वे जीवन के सहज चित्र प्रस्तुत करती हैं, अतः समस्या-चित्रण की दृष्टि से उनकी कहानियाँ महत्त्वपूर्ण हैं।

चरित्र-चित्रण

श्रीमती रजनी पनिकर ने अपनी कहानियों में पुरुष पात्रो की अपेक्षा नारी-चरित्रों का विशेष सजीव चित्रण किया है। 'नारी' की विविध भावनाओं, परिस्थितियों, विवशताओं, कुंठाओं तथा समस्याओं के अत्यन्त सहज चित्र उनकी कहानियों में अंकित हुए हैं। 'नई पीढ़ी' की मनोरमा अपने माता-पिता की सुख ऐश्वर्यपूर्ण जीवन-पद्धति का सक्रिय विरोध करके दरिद्रों की सेवा को अपना जीवन-लक्ष्य स्थिर करती है, तो 'सातवी बहन' की शोभा भी अपने पिता के क्रूर तथा स्वार्थी स्वभाव को लेकर मन ही मन घृणा का पोषण करती है। 'यह पत्र' की विमला अपने प्रवासी पति से स्नेहभरा पत्र पाने को आतुर है, तो 'कुसुम' की कुसुम का वात्सल्याकांक्षी हृदय मातृत्व की इच्छा से विह्वल है। 'भगवान् जल गया' की चम्पा अपने बच्चों के सुख के लिए जी तोड़ परिश्रम करती है और अन्त में उन्हीं का भोजन जुटाने में प्राणों से हाथ धो बैठती है।

'रंजना और रमन', 'सुलेखा' तथा 'सिगरेट के टुकड़े' की नायिकाएँ अपने

पतियों की प्रवृत्तियों से तंग आकर दाम्पत्य जीवन का त्याग कर देती हैं। रंजना पाँच वर्ष तक पति की क्रूरता को सहती रही, पर अन्त में उसका मन भी विद्रोह कर उठा। पाठक के हृदय में उसके प्रति सहानुभूति के भाव ही उभरते हैं। 'सुलेखा' की सुलेखा तनिक-से मनमुटाव पर अपने पति हेमन्त का त्याग करके प्रसन्न न रह सकी। उसकी किरायेदारनी प्रभा भी पति से होनेवाले छोटे-मोटे मतभेदों के कारण पति को त्यागकर चली गई और हेमन्त से विवाह कर लिया। 'सिगरेट के टुकड़े' की नायिका उमा और भी असहिष्णु है। उसे पति का सिगरेट पीना सह्य नहीं, अतः वह विवाह के तीन दिन के भीतर ही यह नादिरशाही आज्ञा दे देती है कि यदि पति सिगरेट नहीं छोड़ेंगे तो वह उनसे नहीं बोलेगी। वस्तुतः उक्त पात्राएँ आधुनिक नारियों की प्रतीक हैं, जिनमें भारतीय उदात्त गुणों की अपेक्षा पाश्चात्य कृत्रिमता तथा मिथ्या सुख की कामना ने घर कर लिया है। इसी कारण वे पति से मतभेद नहीं सह पातीं।

'मन की आँखें' की मालविका भारतीय नारी की प्रतीक है, जो निःस्वार्थ सेवा आदि सद्गुणों से सास के विरोधी मन को भी अपने पक्ष में कर लेती है। 'पत्थर और संगीत' की निशा भी ऐसी ही शक्तिसम्पन्न नारी है जो अपने परिश्रम एवं सहनशीलता के बल पर राकेश-जैसे शुष्क प्राध्यापक को भी द्रवित कर देती है। 'आप तुम' की नायिका रमा तथा 'मनचली' की सविता आधुनिक फ़ैशनेबुल युवतियों की प्रतीक हैं—विलास ही उनके जीवन का ध्येय है। सविता फिर भी श्रद्धेय है, क्योंकि उसमें दीनों के लिए दया भी है। 'समस्या उलझती गई' की निशा विवाहित होकर भी राजा नामक पुरुष से प्रेम करके एक नवीन सामाजिक समस्या को लेकर सम्मुख आती है।

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि श्रीमती पनिकर की पात्राओं में पर्याप्त वैविध्य है। अधिकतर वे वर्तमान नारी की प्रतीक बनकर सम्मुख आई हैं—मालविका तथा निशा इसकी अपवाद हैं। इन कहानियों में पुरुष पात्रों में उल्लेखनीय विशेषताओं को स्थान नहीं दिया गया। परिस्थितियों के सन्दर्भ में जैसा उचित होता है, वैसा व्यवहार वे करते हैं—कोई विशिष्ट मानसिक दृढ़ता अथवा विशेपता उनमें लक्षित नहीं होती। यदि कुछ विशेषताएँ हैं भी तो वे वर्गगत हैं, जैसे रंजना के पति गाँव के मुखिया गजानन्द की अत्याचारी प्रवृत्ति, 'भगवान् जल गया' में लेखराज का मद्यपान करके अपनी पत्नी चम्पा तथा बच्चों पर अत्याचार आदि प्रवृत्तियाँ पुरुष जाति के एक वर्ग पर प्रकाश डालती हैं। 'मन की आँखें' में किशोर का व्यक्तित्व क्रान्तिकारी है। माता-पिता के विरोध की उपेक्षा करके वह मालविका से अन्तर्जातीय विवाह कर लेता है। अन्य पुरुष पात्र परिस्थितियों के अनुरूप उत्कर्ष अथवा अपकर्ष को प्राप्त हुए हैं। 'दो पत्र' में राजेश, 'सिगरेट के टुकड़े' में प्रकाश, 'समस्या उलझती गई' में राजा, 'पत्थर और संगीत' में राकेश आदि पात्रों का चरित्र परिस्थिति-प्रेरित रहकर ही विकसित हुआ है।

कथोपकथन

आलोच्य लेखिका ने उपन्यासो की भाँति अपनी कहानियों में भी संवाद-तत्त्व को गौण स्थान दिया है। नई पीढ़ी, यह पत्र, दो दीप, सिगरेट के टुकड़े, सातवीं बहन, मन की आँखें, कुसुम, मूर्तियाँ, मनचली, रंजना और रमन, गुणवन्ती मौसी आदि कहानियाँ इस तथ्य की प्रत्यायक है कि लेखिका ने वर्णनात्मकता अथवा चिन्तनपरक प्रवाह के मध्य अत्यन्त विरल स्थलों पर वार्त्तालाप का विधान किया है। ऐसी उक्तियाँ प्रायः लघु हैं, किन्तु पात्रों की भावनाओं को मुखर रूप देने और कथानक में नाटकीयता की सृष्टि करने में उनका योग उल्लेखनीय है। उदाहरणार्थ 'मन की आँखें' शीर्षक कहानी मे मालविका तथा उसकी सास के अधोलिखित संवाद से मालविका के स्नेही, सेवापरायण तथा निःस्वार्थ चरित्र का बोध होता है—

"किशोर की माँ कई बार कहती—"वहू तेरा रूप कहीं नष्ट न हो जाए।"

वह सदैव एक ही उत्तर देती—"माता जी, शरीर का कोई अंग दुःखी हो तो उसे काटकर तो नहीं फेंक दिया जाता, फिर आप चिन्ता न करें, मैंने भी सब के साथ टीका लगवा लिया था।"

"और तो कोई मेरे पास भी नही फटकता, वहू।"

"किसी को फुर्सत नही रहती माताजी, आप अन्यथा न सोचें।"[1]

माता को चेचक निकलने पर जहाँ पुत्रियाँ अपना रूप नष्ट होने के भय से पास भी न फटकीं, वहाँ वहू मालविका ने तन-मन से सेवा करके उन्हे स्वस्थ कर लिया। उसकी उक्त बातें उसके मन की सौम्यता तथा सौजन्य की परिचायक हैं। इसी प्रकार 'गुणवन्ती मौसी' में मौसी की उक्तियाँ हास्य रस की सृष्टि करने के अतिरिक्त उनके चरित्रांकन मे भी विशेष सहायक रही है।

देशकाल

श्रीमती पनिकर ने अपनी कहानियों में विविध सामाजिक समस्याओ को स्थान दिया है। 'नई पीढ़ी' में नई पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी के व्यक्तियों के वैचारिक मतभेद की समस्या अंकित है, तो 'आप तुम' जैसी कहानियों में उच्च वर्ग के परिवारों में नारी-स्वातन्त्र्य के कारण उत्पन्न होनेवाली विविध समस्याएँ चित्रित की गई हैं। कुछ कहानियों में पति-पत्नी में अनवन रहने के कारण दाम्पत्य जीवन की समस्याओं का समावेश हुआ है। इस अनवन के कई कारण हो सकते हैं—(अ) पत्नी अथवा पति द्वारा दूसरे पक्ष की किसी प्रवृत्ति के प्रति अरुचि (सिगरेट के टुकड़े), (आ) नारी की स्वतन्त्र जीवन-यापन की चाह के बलवती होने के कारण पति के विरोध को

---

१. सिगरेट के टुकड़े, पृष्ठ १०३-१०४

सहने की असमर्थता (सुलेखा), (इ) पति के कुव्यसन तथा अत्याचारपूर्ण प्रवृत्ति (रंजना और रमन)। इन कहानियों में वैमनस्य का अन्तिम परिणाम एक ही दिखाया गया है—पति अथवा पत्नी द्वारा गृह-त्याग। यह समस्या वर्तमान युग की ज्वलन्त समस्या है। अन्य कहानियों में उन्होंने परिवार में पुत्रियों के प्रति दुर्व्यवहार, परपुरुष के प्रति प्रेम अथवा मानसिक व्यभिचार, देवालयों में हरिजनों का प्रवेश, अन्तर्जातीय विवाह का विरोध आदि समस्याओं को स्थान दिया है। उनकी प्रत्येक कहानी में कोई न कोई समस्या अवश्य प्राप्त होती है और समाज के गत्यवरोध को दूर करने के लिए इनके समाधान की खोज करना आज की अनिवार्य आवश्यकता है। किन्तु, श्रीमती पनिकर ने मुख्यतः तटस्थ वृत्ति से समस्या-चित्रण किया है—समाधान प्रस्तुत करने की ओर केवल 'मन की आँखें' और 'सिगरेट के टुकड़े' शीर्षक कहानियो में ध्यान दिया गया है।

उद्देश्य

श्रीमती रजनी पनिकर की कहानियाँ प्रायः सोद्देश्य हैं, किन्तु उनमें लक्ष्य की अभिव्यक्ति व्यक्तिगत अनुभवो के रूप में हुई है—नैतिक अथवा सामाजिक दृष्टान्तो के रूप में नहीं। जो कहानियाँ व्यक्ति की विशेष मनःस्थिति को लेकर लिखी गई है, उनके निर्माण मे अनुभूति की प्रेरणा मुख्य रही है। इन कहानियों में समाज के वर्तमान परिवेश मे नारी की समस्याओ पर विभिन्न दृष्टियो से विचार किया गया है, किन्तु निष्कर्ष रूप मे लक्ष्य को प्रतिफलित करने की प्रवृत्ति लेखिका मे बहुत कम है। जो कहानियाँ जीवन के कुछ परिमित क्षणो अथवा दीर्घकाल के प्रकाश में सम्पूर्ण व्यक्ति का अध्ययन प्रस्तुत करती है, उनमें व्यष्टि की संघर्षशील परिस्थितियों का सूक्ष्म अध्ययन ही प्रमुख लक्ष्य रहा है। यद्यपि लेखिका ने अपनी कहानियाँ मुख्यतः व्यष्टि के धरातल से प्रस्तुत की है, किन्तु सामाजिक मर्यादाओं की उपेक्षा उन्होंने नही की है। अनेकशः उन्होंने सामाजिक बन्धनों को प्रश्नचिह्न के रूप मे व्यक्त किया है। सामाजिक नियमों की अनिवार्यता को स्वीकार करके भी वे यह नही चाहतीं कि व्यक्ति अपनी स्वतन्त्र सत्ता का एकदम लोप ही कर दे। किसी भी पक्ष मे अति नहीं होनी चाहिए, यही आलोच्य कहानियों का वास्तविक संदेश है।

भाषा-शैली

श्रीमती पनिकर की कहानियो में समाज के विविध वर्गों को स्थान मिला है, फलतः उनकी भाषा एकरूप न होकर एक ओर पात्रों के वर्गगत संस्कारों की छाप लिये है और दूसरी ओर उन्होंने शैली मे साहित्यिक गुणों के समावेश की ओर भी उचित ध्यान दिया है। उनकी शैली में सर्वत्र एक विशिष्ट प्रवाह है, जो भाषा की सरलता और स्वाभाविकता का परिणाम है। इन कहानियों की एक उल्लेखनीय विशेषता यह है कि लेखिका ने मौलिक उपमान-संयोजन की ओर आग्रहपूर्वक ध्यान दिया है। यथा—

(अ) "मनोरमा ने माँ को देखा तो गले मिलने के लिए आगे बढ़ी फिर एकाएक पीछे हट गई जैसे अज्ञात 'करेंट' ने उसे धक्का दे दिया हो।"[१]

(आ) "धीर की आयु अट्ठाईस-उनतीस वर्ष की है। रंग खूब गोरा है, ऐसे चमकता जैसे जून की दोपहरी में रेत का ढेर।"[२]

(इ) "कला देखने में साधारण है, परन्तु मुँह पर सौष्ठव है, रह-रहकर ऐसा झलक जाता है मानो दूध में उफान आया कि आया।"[३]

आलोच्य लेखिका की शैली में संवाद अधिक न होने पर भी सर्वत्र नाटकीयता का मिश्रण है, क्योंकि उन्होंने वर्णन की अपेक्षा चित्रण-पद्धति को ग्रहण किया है। उदाहरणार्थ 'सातवी वहन' कहानी मे यह दृश्य अवलोकनीय है—"चूल्हा किसी तरह से सुलग ही नही रहा, चाहे शोभा इतनी कोशिश कर रही है। इस बार की चीख इतनी हृदयविदारक थी कि शोभा के हाथ से पंखा छूट गया। शोभा के हाथ अभी भी काँप रहे है, माथे पर पसीने की बूंदें चमकने लगी। शोभा ने चूल्हे के निचले भाग को चिमटे से हिलाया, जल्दी से चिमटा शोभा के पाँव पर गिर गया।"[४]

निष्कर्ष

अन्त में यह उल्लेखनीय है कि श्रीमती पनिकर को नारी-मनोविज्ञान तथा वर्तमान नारी की समस्याओं और प्रवृत्तियों के चित्रण में विशेष सफलता प्राप्त हुई है। श्री आनन्द-प्रकाश जैन के शब्दो में, "श्रीमती पनिकर की कला सूक्ष्म निरीक्षण के साथ-साथ गंभीर यथार्थवादी समस्याओं को खोलती है और आधुनिक समाज की असंगतियों पर सीधी-सच्ची, किन्तु भावनामयी चोट करती है।"[५] यह उल्लेखनीय है कि समय के परिवर्तित मानदण्डों के साथ-साथ व्यक्ति की समस्याओं का स्वरूप भी परिवर्तित होता रहता है, किन्तु केवल चेतनाशील साहित्यकार ही उसे पहचान पाते हैं। वर्तमान युग के पूर्व की लेखिकाओं ने प्रायः नारी की उन्हीं पिष्टपेषित समस्याओ का चित्रण किया है जो चिर-काल से कथा-साहित्य का प्रमुख विषय रहती आई है, किन्तु वर्तमान युग में अन्य समस्याओं ने जिन्हें स्थानान्तरित कर दिया है। किन्तु, श्रीमती पनिकर ने इस दिशा में पर्याप्त सजगता का परिचय दिया है। वर्तमानयुगीन नारी की परिस्थितियों एवं प्रतिक्रियाओं को उन्होने अपनी सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक अन्तर्दृष्टि से भलीभाँति पहचाना है। इसी कारण उनकी कहानियाँ कला के नूतन मानदण्डों के अनुरूप सिद्ध हुई हैं।

●

१-२-३. सिगरेट के टुकड़े, पृष्ठ ६, १३१, १३१

४. सिगरेट के टुकड़े, पृष्ठ ६१

५. कथायन (सम्पादक—आनन्दप्रकाश जैन), पृष्ठ १२४

सुश्री कंचनलता सब्बरवाल

सुश्री कंचनलता ने अनेक सामाजिक उपन्यासों की रचना के अतिरिक्त कहानी-क्षेत्र में भी अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है। अब तक उनके दो कहानी-संग्रह प्रकाशित हुए हैं—'भूख' और 'प्यासी धरती सूखे ताल'। इनमें क्रमशः १६ और १० सामाजिक कहानियाँ संगृहीत हैं, जिनके शीर्षक इस प्रकार है—

भूख—भूख, दुर्दिन, दो पैर, आया, आत्मसम्मान, दो पहलू, चार वर्ष, वह कली, पालिश, मरम्मत, वासना और प्रेम, जीवन, आत्मग्लानि, वह तुम थीं, मजदूरी करता हूँ कुछ चोरी तो नहीं करता, बेचारा मास्टर, कर्मकार, वह बेचारा, स्वर्ग और नरक।

प्यासी धरती सूखे ताल—मन का सौदा, दर्द सर, भला आदमी, नये आँसू, दिल ही तो है, अजन्मे की डायरी, विसहरी, चाँदी के देवता, धरती गा उठी, प्यासी धरती सूखे ताल।

कथानक

आलोच्य कहानियों को मुख्य रूप से तीन वर्गों में विभक्त किया जा सकता है—(अ) जिनमें महरी, नौकर, जमादार, आया, चित्रकार, श्रमिक, शिक्षक, दर्जी आदि समाज के शोषित पात्रों की विवशताओं, पीड़ाओं तथा करुण अनुभूतियों का सहानुभूति-पूर्ण चित्रण किया गया है, (आ) जिनमें जीवन, उसकी क्रमिक अवस्थाओं तथा अनुभूतियों पर दार्शनिक दृष्टि से विचार किया गया है, (इ) जिनमें ग्राम्य जीवन का समस्या-मूलक चित्रण हुआ है। प्रथम वर्ग की कहानियों में अभिजातवर्ग के ऐश्वर्य, अत्याचार तथा निष्ठुरताओं और शोषित वर्ग के अभावों, विवशताओं, दैन्य एवं शोषण को प्रायः तुलनात्मक रूप में अथवा कारण-कार्य-रूप में चित्रित किया गया है। पीड़ितों के हृदय में पैठकर लेखिका ने उनकी भावनाओं को आत्मसात् करके ऐसे करुण चित्र प्रस्तुत किये हैं कि पाठक की चेतना अनायास ही करुणा-विगलित हो उठती है। दुर्दिन, आत्मसम्मान, दो पहलू, भूख, दर्द सर, भला आदमी, विसहरी, चाँदी के देवता आदि कहानियाँ इस प्रसंग में प्रमाण हैं। भारतीय नारी को भी लेखिका ने किसी सीमा तक शोषित माना है। वह तुम थीं, चार वर्ष, वासना और प्रेम, मन का सौदा, दिल ही तो है, अजन्मे की डायरी आदि कहानियों में समाज के परिवेश में नारी की विवशता, वेदना आदि का मार्मिक चित्रांकन हुआ है।

दूसरे वर्ग की कहानियों में दो पैर, वह कली, वासना और प्रेम तथा जीवन शीर्षक कहानियाँ उल्लेखनीय है। नवजात शिशु के पैर कितने कोमल तथा प्रिय लगते है, बाद में वही पैर जीवन की अनेक दुर्गम तथा सुगम राहों पर बढ़ते हुए अन्त में चितारोहण का पथ ग्रहण करते है—इस प्रकार 'दो पैर' कहानी में दो पैरों को माध्यम बनाकर मानव-जीवन की निस्सारता का प्रतिपादन किया गया है। 'वह कली' में जीवन रूपी कली के मुरझाने का प्रतीकात्मक चित्रण हुआ है। 'वासना और प्रेम' में इन दोनो भावों के अन्तर को स्पष्ट करते हुए तृप्ति और अतृप्ति को प्रेम और वासना की विभाजक रेखाएँ माना गया है। 'जीवन' कहानी में आत्मकथन की शैली में मृत्यु के समक्ष मानवीय विवशता के दृश्य अंकित किये गये हैं। 'नये आँसू', 'धरती गा उठी' और 'प्यासी धरती सूखे ताल' तृतीय वर्ग की कहानियाँ है। इनमें लेखिका ने ग्राम्य जीवन के सुख-दुःख, राग-द्वेष, कलह, मैत्री आदि से समन्वित कथानक प्रस्तुत किये हैं। ये कहानियाँ प्रायः सुखान्त है, इनमें प्रेमचन्द जी के कथा-शिल्प-जैसी सरलता एवं सहजता के दर्शन होते हैं। 'प्यासी धरती सूखे ताल' में ग्राम-विकास-योजना में कृषकों को आत्मनिर्भरता की प्रेरणा दी गई है। यह आदर्शवादी कहानी है और इसमें नारी जाति का विशेष गौरव-गान हुआ है। इसके कथानक का सारांश यह है कि खेती में जल के अभाव की पूर्ति के लिए ग्राम की एक वधू ने अन्य स्त्रियों के साथ मिलकर एक ताल खोदना प्रारम्भ किया। इससे पुरुषों को भी प्रेरणा मिली, अतः शेष कार्य उन्होंने पूर्ण किया।

सुश्री सब्बरवाल ने अनेक कहानियों में दो भिन्न स्थितियों अथवा भिन्न प्रवृत्तियोंवाले पात्रो के तुलनात्मक चित्र प्रस्तुत किये है। उदाहरणार्थ 'मन का सौदा' में शारदा और सुमन नाम्नी दो सखियों का चित्रण है। शारदा ने माता-पिता की धमकियों और सामाजिक मर्यादा का विचार करते हुए अपने प्रेमी युवक की अपेक्षा माता-पिता द्वारा चुने गये युवक से विवाह कर लिया, फलतः उसका सारा जीवन विषाक्त हो गया। उधर सुमन ने किसी की भी चिन्ता न करके अपने प्रेमी से ही विवाह किया तो वह सुखी रही। उसे धनवान् होते देख समाज भी पुरानी बातें भूलकर उसका सम्मान करने लगा। इसी प्रकार 'दर्द सर' में दो तुलनात्मक दृश्य अंकित हैं—एक ओर कूलर से शीतल कमरे में लेटी हुई अभिजात वर्ग की नारी, फिर भी सर दर्द से व्याकुल; और दूसरी ओर चिलचिलाती दोपहरी में घोर श्रम कर रहे श्रमजीवी वृद्ध तथा बालक, और फिर भी उनमें थकावट एवं क्लान्ति का नाम नहीं। इस दृश्य तथा अन्य कहानियों में ऐसे ही अन्य दृश्यों के अनुशीलन से स्पष्ट है कि लेखिका ने कथा-संयोजन में अनुभूति-चित्रण की ओर अत्यन्त सजगतापूर्वक ध्यान दिया है।

चरित्र-चित्रण

आलोच्य कहानियों में मुख्यतः दो प्रकार के पात्रों की सृष्टि की गई है—शोषक तथा शोषित। इनके चरित्रांकन में प्रायः वर्गगत प्रवृत्तियो का आधार लिया गया है।

शोषक पात्रों में अहं, जातीय गर्व, क्रूरता, स्वार्थपरता आदि दुर्गुणों का प्राबल्य है तथा पीड़ित पात्रों में दीनता, हीन-भावना, सेवा आदि भाव प्रमुख रहे हैं। 'दुर्दिन' में जमादार दम्पती, 'आत्मसम्मान' में महरी की पुत्री, 'दो पहलू' में भिखारिन और 'विसहरी' में चित्रकार इसी प्रकार के दीन-हीन पात्र हैं। ये पात्र स्वाभिमान एवं सौजन्य के पुतले हैं, किन्तु निर्धनता, रुग्णता, ऋण आदि विवशताओं के कारण अपनी दशा सुधारने में असमर्थ हैं। अभिजात वर्ग के पात्रों का अनेकशः व्यंग्यात्मक चित्रण हुआ है। 'चाँदी के देवता' में रानी का चरित्र इसी प्रकार का है। वह अपने कुत्ते की सेवा-शुश्रूषा करती है और पत्थर के भगवान् का बहुमूल्य प्रसाधनों से शृंगार करती है, किन्तु सर्वहारा वर्ग के व्यक्तियों की भरपूर उपेक्षा करती है। कतिपय कहानियों में अभिजात वर्ग के ऐसे पात्रों का भी संयोजन हुआ है जिनके मन में पीड़ित वर्ग के प्रति दया और सद्भाव हैं। 'भूख' में शिशिर और 'दुर्दिन' में शीला को इसी प्रकार के परदुःखकातर पात्रों के रूप में प्रस्तुत किया गया है। अनेक कहानियों में लेखिका ने दो विरोधी स्वभाव के पात्रों को तुलनात्मक रूप मे चित्रित किया है। उदाहरणार्थ 'मन का सौदा' में एक ओर शारदा है जो स्वेच्छा से समाज की वेदी पर अपने प्रणय-सम्बन्ध का बलिदान कर देती है और दूसरी ओर सुमन है जो सबकी उपेक्षा करके अपने प्रियतम को पाकर ही रहती है। इसी प्रकार 'भला आदमी' में एक ओर डॉ० श्रीमाली हैं जो प्रत्यक्ष में प्रभु-भक्त निष्ठावान् हिन्दू और धर्मात्मा हैं, किन्तु परोक्ष में निर्धनों के गले पर छुरी फेरनेवाले दुष्ट दुराचारी व्यक्ति हैं, तो दूसरी ओर डॉ० वर्मा हैं जो प्रत्यक्ष में मद्यप तथा नास्तिक हैं, किन्तु परोक्ष में एक सहृदय एवं दयावान् महात्मा से भी बढ़कर हैं।

लेखिका ने 'चार वर्ष', 'वासना और प्रेम' आदि कहानियों में नीलिमा, दूर्वा आदि पात्राओं के माध्यम से नारी की विवशताओं, सौजन्य, सहानुभूति आदि का भी अच्छा चित्रण किया है। 'दिल ही तो है' तथा 'अजन्मे की डायरी' में दो वेदनातुर नारियों की आन्तरिक पीड़ा का भावपूर्ण उल्लेख किया गया है। 'नये आँसू', 'धरती गा उठी' तथा 'प्यासी धरती सूखे ताल' शीर्षक कहानियों मे जीवन, पूनम, रमुआ, जगेसर, काका, मनतू आदि ग्रामीण कृषकों के मनोविज्ञान का सुन्दर चित्रांकन हुआ है। 'प्यासी धरती सूखे ताल' में मनतू की पत्नी, जिसने परिश्रम तथा सहयोग से ताल खोदा और गाँव की कच्ची सड़क का जीर्णोद्धार किया, एक आदर्श ग्रामीण महिला के रूप मे प्रस्तुत हुई है। इस प्रकार स्पष्ट है कि आलोच्य कहानियों में विविधरूप पात्रों का संयोजन हुआ है। चरित्रांकन के लिए लेखिका ने मुख्यतः वर्णनात्मक और नाटकीय शैलियों का आश्रय लिया है तथा पात्रों के स्वभावादि का इतना सजीव वर्णन किया है कि चारित्रिक विशेषताओं-सहित पात्र का व्यक्तित्व साकार हो उठता है। उदाहरणार्थ 'बेचारा मास्टर' कहानी के आरम्भ मे मास्टर जी के व्यक्तित्व का चित्रण द्रष्टव्य है—

"घुटनों तक की अधमैली धोती चढ़ाए जब भी वह मेरे सामने आया, मैंने उसे उपेक्षा की ही दृष्टि से देखा। उसकी बड़ी-बड़ी भयानक-सी दिखाई देनेवाली आँखों के

नीचे काले-काले-से बड़े-बड़े धब्बे थे। गालों के दोनों ओर की हड्डियाँ निकली हुई थी। चौड़े माथे पर अगणित सलवटें थीं। साँवले मुख पर कुछ विचित्र-सा भाव था—जिसे दीनता, गर्व और उदासीनता का सम्मिश्रण कह सकते हैं। बोलते समय उसके होंठ कुछ विचित्र ढंग से मुड़ जाते थे।"[1]

कथोपकथन

आलोच्य कहानियों में संक्षिप्त तथा सारगभित संवादों की सृष्टि की गई है, जिनमें पात्रों की व्यक्तिगत विशेषताओं की अपेक्षा उनकी वर्गगत प्रवृत्तियों का अधिक सफलता से प्रकाशन हुआ है। ये कथोपकथन कथानक, चरित्र-चित्रण, देश-काल तथा उद्देश्य की अभिव्यक्ति में समय-समय पर उपयोगी सिद्ध हुए हैं। उनकी अधिकांश कहानियों में अभिजात वर्ग की हृदयहीनता तथा पीड़ित वर्ग की विवश दीनता का तुलनात्मक अथवा एकपक्षीय अंकन हुआ है। दोनों पक्षों के वार्त्तालापों में वर्गगत विशेषताओं की अभिव्यक्ति हुई है। अभिजात वर्ग के व्यक्तियों की उक्तियों में उनकी स्वार्थपरता निष्ठुरता तथा दीनों के प्रति घृणा का प्रकाशन हुआ है। उदाहरणार्थ 'चाँदी के देवता' में रानी जी की उक्तियों में निर्धन मानवों के प्रति निर्दयता एवं निर्जीव पाषाण-प्रतिमा तथा कुत्ते-जैसे तुच्छ प्राणियों के लिए चिन्ता उनके अभिजातवर्गीय व्यक्तित्व का द्योतक है।[2] इसी प्रकार पीड़ित व्यक्तियों के संवादों में उनकी दयनीयता, अभावजन्य विवशता और कातर करुणा मानों साकार हो गई है। 'वह बेचारा' कहानी में माँजी तथा मास्टर-जी की उक्तियाँ प्रस्तुत प्रसंग में उल्लेखनीय है।[3]

इन कहानियों में संवाद भावों के अतिरिक्त भाषा की दृष्टि से भी पात्रानुकूल है। 'दुर्दिन' कहानी में जमादार की उक्ति—"चलित है सरकार अबहूँ, देख लेयो"[4]—इसका प्रमाण है। इसी प्रकार ग्राम्य कहानियों के पात्रों ने प्रायः गँवारू भाषा का व्यवहार किया है। उदाहरणार्थ 'नये आँसू' मे छुटकी जीजी के प्रति उसकी देवरानी की यह ताड़ना अवलोकनीय है—"तब सवेरे-सवेरे अँगनुआ में बर्तन काहे ले बैठी और उस छुटकी को तो देखो वह भी गजब की है माँ के साथ-साथ हाथों मे राख लगाये बैठी है जैसे और कोई तो करइया हइहै नाही।"[5] कुछ विशिष्ट शैली में प्रस्तुत कहानियों में संवाद अत्यन्त विरल हैं अथवा हैं ही नहीं। उदाहरणस्वरूप 'दिल ही तो है' की रचना पत्र-शैली में की गई है और 'अजन्मे की डायरी' को पात्र के चिन्तन-प्रवाह में प्रस्तुत किया

---

१. भूख, पृष्ठ ११९
२. देखिये 'प्यासी धरती सूखे ताल', पृष्ठ ६६, ७२
३. देखिये 'भूख', पृष्ठ १३२
४. भूख, पृष्ठ १६
५. प्यासी धरती सूखे ताल, पृष्ठ ३१

गया है। 'मास्टर ने दीनता से कहा', 'माँजी बिगड़ उठीं' आदि चित्रात्मक वाक्य[1] भी कथोपकथन की सजीवता में सहायक रहे हैं। लेखिका ने इस बात का भी उचित ध्यान रखा है कि संवाद अति विस्तृत और उबा देनेवाले न हों।

देश-काल

श्रीमती सब्बरवाल ने उपन्यासों की भाँति कहानियों में भी आर्थिक वैषम्य के चित्रण पर अधिक ध्यान दिया है। नौकर, महरी, आया, मास्टर, दर्जी, श्रमजीवी, जमादार, कलाकार आदि की जीवन-गाथाओं का चित्रण करके उन्होंने आर्थिक शोषण का विविध दृष्टियों से निरूपण किया है। प्रायः प्रत्येक कहानी में इस समस्या के दोनों कोण चित्रित हैं—एक ओर अभिजात वर्ग के अहंकार, ऐश्वर्य, अपव्यय आदि का चित्रण किया गया है तथा दूसरी ओर पीड़ित वर्ग के अभावों, दीनता और विवशताओं का मार्मिक चित्रण हुआ है। उदाहरणार्थ 'भूख' शीर्षक कहानी में गृहिणी की संकुचित मनोवृत्ति का यह उदाहरण देखिये—"अरे तो, और क्या नौकरों को मक्खन-अंडे दिये जायेंगे! यह हमारे बाल-बच्चे तो मुँह न लगायें और नौकर चीज न छोड़े।"[2] अनेक कहानियों में नारी की सामाजिक परतन्त्रता, दहेज-समस्या की विकरालता और अन्य सामाजिक एवं व्यक्तिगत विवशताओं का भावुकतापूर्वक वर्णन किया गया है। उदाहरणार्थ 'आत्मसम्मान' शीर्षक कहानी मे लेखिका का क्षोभ द्रष्टव्य है—"सच ही तो, पत्नी पति की सम्पत्ति मात्र ही तो है। उसका अधिकार है उसी तरह, जैसे अपने घर पर, घोड़े पर, वह दु:ख की साथिन नहीं, केवल अधिकार की वस्तु है।"[3] 'स्वर्ग और नरक' कहानी में लेखिका ने कश्मीर के मूल निवासियों की निर्धनता का हृदयस्पर्शी चित्रण किया है। 'नये आँसू', 'धरती गा उठी' तथा 'प्यासी धरती सूखे ताल' में ग्राम्य जीवन के कथानकों के अनुरूप अनेक समस्याओं का प्रसंगवश उल्लेख हुआ है जिनमें से मुख्य ये हैं—सम्मिलित परिवार के दोष, सन्तति में जमीन के लिए झगड़े, महामारी-जैसे भयंकर रोगों का प्रकोप तथा योग्य डॉक्टर के न होने से अकाल मृत्यु,[4] जल के कृत्रिम साधनों के अभाव में वर्षा न होने से खेती का नष्ट हो जाना[5] आदि। प्रस्तुत कहानियों में केवल ग्राम के दोषों की ही चर्चा नहीं हुई, अपितु गुणों का भी यत्र-तत्र उल्लेख हुआ है। यथा—खेती, गाय-भैंस आदि के कारण अन्न-दुग्ध की पूर्णता, परस्पर अपनत्व की भावना जिसका नगरों में अभाव है, तीज-त्योहार आदि पर मस्ती भरनेवाला राग-रंग, पंचायत के कारण झगड़ों का सहज ही निबटारा, शुद्ध वायु, खाद्य पदार्थों की शुद्धता, कृषकों की आत्मनिर्भरताजन्य प्रसन्नता आदि।

---

१. देखिये 'भूख', पृष्ठ १३२

२-३. भूख, पृष्ठ ५, ४०

४-५. देखिये 'प्यासी धरती सूखे ताल', पृष्ठ ७८, ८२

उद्देश्य

आलोच्य कहानियों में उद्देश्य की प्रधानता रही है। जीवन की विविधरूप अनुभूतियों एवं सामाजिक विकृतियों का यथार्थ चित्रण इन कहानियों का लक्ष्य है। उक्त उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए लेखिका ने प्रायः जीवन और समाज के अस्वस्थ चित्रों को ही कहानियों में स्थान दिया है। उनमें जीवन के प्रति वांछित निष्ठा अथवा आशा की झलक अत्यन्त विरल है। प्रत्यक्षतः उन्होंने समस्याओं के यथार्थ चित्र ही अंकित किये है, किन्तु परोक्षतः समाजगत विकारों के निवारण की प्रेरणा दी गई है। जिन कहानियों मे दो भिन्न स्थितियों अथवा पात्रों के तुलनात्मक चित्र अंकित किये गये है वहाँ उक्त प्रेरणा और भी स्पष्ट है—'मन का सौदा' तथा 'भला आदमी' शीर्षक कहानियाँ इस प्रसंग में पठनीय हैं। जीवन की कुरूपताओं को अभिव्यक्त करने का लक्ष्य होने से लेखिका की अधिकांश कहानियाँ दुखान्त रही है, किन्तु ग्राम्य जीवन विषयक कहानियाँ इसकी अपवाद है। इनमें ग्राम्य जीवन की निराशा, विवशता, संघर्ष आदि के अतिरिक्त आशा, उत्कंठा, उत्साह एवं आदर्शों की भी सुन्दर अभिव्यक्ति मिलती है। वस्तुतः उक्त कहानियों में यथार्थवाद की अपेक्षा आदर्शोन्मुख यथार्थ को ग्रहण किया गया है।

उद्देश्य की अभिव्यक्ति के लिए लेखिका ने पात्रो के वार्त्तालाप, आत्मचिन्तन तथा स्वोक्ति के अतिरिक्त प्रत्यक्ष कथन की प्रवृत्ति भी अपनाई है। उदाहरणार्थ 'स्वर्ग और नरक' कहानी में कश्मीर-निवासियों की आर्थिक विवशताओं की पृष्ठभूमि में लेखिका का यह सोद्देश्य जीवन-दर्शन देखिए—"आज तो स्वर्ग की सृष्टि होगी मानव की मुक्ति के आधार पर, उसके सुख के आधार पर, न कि उसकी विवशता की आधारशिला पर, *क्योंकि वस्तुतः मानव ही विधाता की सर्वाधिक सौन्दर्यपूर्ण रचना है।*"[1]

भाषा-शैली

कंचनलता जी ने कहानियों की रचना व्यावहारिक भाषा में की है, जिसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों के अतिरिक्त तद्भव और देशज शब्दों का विशेषतः प्रयोग हुआ है और उर्दू-अंग्रेजी के विदेशी शब्दों की प्रायः उपेक्षा की गई है। ग्राम्य जीवन की कहानियों में लड़कौरी, जुठास, हटकना, मांदी, तलइयाँ, लुगाई आदि देशज शब्दों[2] का प्रचुर प्रयोग हुआ है। संवादो के अतिरिक्त प्रत्यक्ष कथन में भी अनेकशः वाक्यों एवं वाक्यांशों में देशज शब्दो का मिश्रण हुआ है। यथा—(अ) 'चाची भी तनिक चुपाय गई',[3] (आ) "बड़के भाई की छुटकी लड़की के भी कौनो लड़का-वाला हुआ नही।"[4] बोली-ठोली, हल्ला-

---

१. भूख, पृष्ठ १४१-१४२

२. देखिये 'प्यासी धरती सूखे ताल', पृष्ठ २८, ४६, ७७, ७६, ८२, ८४

३-४. प्यासी धरती सूखे ताल, पृष्ठ १, ३०

गुल्ला, चीखती-चिल्लाती, जोड़-बटोर, लोट-पोट, मारते-पीटते, पूजा-पाठ, आदि युग्मक शब्दों और प्रसंगानुकूल मुहावरों ने भाषा में पर्याप्त सजीवता का संचार किया है।[1]

उपन्यासों की भाँति लेखिका की कहानियों में प्रायः दीर्घ वाक्यों को स्थान नहीं मिला है। यदि वैसे वाक्य कहीं हैं भी तो भी आवश्यकता से अधिक दीर्घ नहीं हैं, सुव्यवस्थित है और भावुकता की छाप लिये हैं। कहीं-कहीं 'जो' शब्द के मध्यवर्ती अनावश्यक प्रयोग से भाषाप्रवाह में अवरोध-सा उत्पन्न हुआ है। यथा—(अ) "आज छुट्टी जो हो जाती थी,"[2] (आ) "आज वह शून्य जो है,"[3] (इ) "उसने मुन्नी के हाथ से सोने की चूड़ियाँ जो उतारी हैं"[4] आदि। दूसरी ओर कतिपय वाक्यों में व्याकरण सम्बन्धी अशुद्ध प्रयोग भी मिलते हैं। यथा—(अ) "सवेरे-सवेरे फिजूल ही इतना बका दिया",[5] (आ) "तब ही तो दिनों-दिन चोरियाँ बढ़ती ही जा रही हैं",[6] (इ) "स्कूल तो चला जाया जाता है"[7] आदि। ऐसी अशुद्धियाँ अधिक तो नहीं हैं, किन्तु जहाँ हैं वहाँ वाक्य-विन्यास में अस्वाभाविकता अवश्य आ गई है। शैली की दृष्टि से इन कहानियों में वर्णनात्मक शैली और नाटकीय शैली का प्रसंगानुरूप सशक्त प्रयोग किया गया है। कहीं-कहीं शैली भावावेगमयी भी हो गई है। उदाहरणार्थ 'कर्मकार' कहानी का यह अंश देखिए— "सृष्टि तुम्हारी अनुपम देन से जगमगा रही है, फिर भी तुम क्यों भूखे हो ? क्यों······नंगे हो? तुम्हारी सन्तान क्यों सुख-साधनों से वंचित है—हे कर्मकार ! उत्तर दो—इस महान् सौन्दर्य के प्राण ! कुछ तो बोलो—तुम क्यों दीन हो—हीन हो—वंचित हो।"[8]

निष्कर्ष

आलोच्य कहानियों के उक्त वर्गीकरण एवं विवेचन से यह स्पष्ट है कि इनमें पर्याप्त विषय-वैविध्य एव शैली-वैविध्य के दर्शन होते हैं। वैसे, लेखिका की प्रतिनिधि कहानियाँ वे हैं जिनमें अभिजात वर्ग और शोषित वर्ग की प्रवृत्तियों का तुलनात्मक अथवा कारण-कार्य-रूप चित्रण हुआ है। ग्राम्य जीवन एवं नारी जीवन विषयक कहानियों के संयोजन में भी लेखिका प्रायः सफल रही हैं, किन्तु जिन कहानियों में जीवन की क्रियाओं एवं प्रतिक्रियाओं का दार्शनिक विवेचन हुआ है उनमें विषय के अनुरूप किंचित् नीरसता आ गई है। एक अन्य दोष यह है कि एक-आध अपवादस्वरूप कहानियों के अतिरिक्त लेखिका ने प्रायः जीवन के अस्वस्थ चित्रों को ही व्यक्त किया है। उपन्यासों में उन्होंने जो आदर्श-प्रेरित स्वस्थ कथानक प्रस्तुत किये हैं, कहानियों में उनका प्रायः अभाव रहा है।

●

---

१. देखिए 'प्यासी धरती सूखे ताल', पृष्ठ ३०, ३१, ३२, ३५, ४२, ४५, ८०, ८६

२-३-४. मूल, पृष्ठ १३, १८, ३३

५-६-७. मूल, पृष्ठ १५, २३, ५८

८. मूल, पृष्ठ १२७

श्रीमती शिवरानी विश्नोई

सुश्री शिवरानी विश्नोई हिन्दी की उदीयमान गल्प-लेखिका हैं। इन्होंने क्रमशः 'दुर्भाग्य', 'उपकार' एवं 'जीवन की अनुभूतियाँ' शीर्षक तीन कहानी-संग्रहों की रचना की है, जिनमें कुल मिलाकर तेंतीस कहानियाँ संकलित हैं। अन्य समकालीन लेखिकाओं की भाँति इन्होंने भी नारी के सामाजिक तथा पारिवारिक जीवन-चित्रों को अपनी कहानियों में स्थान दिया है।

कथानक

'दुर्भाग्य' शीर्षक संग्रह में 'तर्पण' एवं 'दुर्भाग्य' इन दो कहानियों के अतिरिक्त शेष नौ कहानियों में विषयवस्तु प्रायः एकरूप है। इनमें पति, मगेतर अथवा प्रेमी द्वारा पत्नी, भावी पत्नी अथवा प्रेयसी के प्रति विभिन्न कारणों से विमुखता का चित्रण हुआ है। किसी अन्य नारी पर मुग्ध होने के कारण, पत्नी के रूपहीना होने के कारण, बाद में सौन्दर्य क्षीण हो जाने के कारण, धन के दम्भ के कारण, पत्नी से पुत्र-प्राप्ति न होने के कारण अथवा सुरा एवं वेश्या के फेर में पड़कर पथभ्रष्ट हो जाने के कारण नायकों ने प्रायः हृदयहीनता का परिचय दिया है। बाद में ठोकर खाने पर नायक का हृदय-परिवर्तन, अनुताप एवं क्षमा-याचना इन कहानियों की मुख्य घटनाएँ है। कतिपय कहानियों में पति को अपने कृत्य पर अन्त तक अनुताप नहीं होता। ऐसे में लेखिका ने उपेक्षिता पत्नी की मृत्यु द्वारा दुखान्त कथानकों की सृष्टि की है—'रूप के लिए' तथा 'पुरुप का प्रेम' इसी प्रकार की कहानियाँ है। कतिपय अन्य कहानियों में अनुताप तो हुआ है, किन्तु पत्नी अथवा प्रेयसी की मृत्यु के बाद। ऐसे कथानक दु.खान्त होने पर भी अप्रिय प्रतीत नहीं होते। 'सुख की खोज' एवं 'कलंकिनी' इस प्रसंग मे प्रमाण हैं। 'तर्पण' एक काल्पनिक कहानी है, किन्तु इतिहास के आवरण में प्रतुस्त की गई है। इसका कथानक इस प्रकार है—अजमेर के निकटवर्ती अचलगढ़ किले के स्वामी विक्रमसिंह की कन्या विलासकुमारी के रूप से प्रेरित औरंगजेब के सेनापति अफ़जल खाँ ने विक्रम को मारकर विलास का हरण करना चाहा, किन्तु एक मुसलमान फ़कीर ने कुमारी की रक्षा की। कुमारी ने प्रण किया कि वह अफ़जल खाँ के खून से पिता का तर्पण करेगी और राठौर सेनापति की सहायता से उसने अपना प्रण पूर्ण किया। 'दुर्भाग्य' प्रस्तुत संग्रह की अन्तिम कहानी है। इसमें लेखिका ने सन् १९४७ की बाढ़ से पीड़ित बंगाल का करुण दृश्य अंकित करते

हुए कथानायक रामू, उसकी पत्नी तुलसी और उनके बच्चों के कष्टमय जीवन का चित्रण किया है।

'दुर्भाग्य' कथा-संग्रह में आलोच्य लेखिका ने जिन नौ कहानियों की एक-सी शृंखला प्रस्तुत की है, 'उपकार' संग्रह की प्रथम कहानी 'उपहार' उसी की एक छिटकी कड़ी है। इसमें एक श्रमिक परिवार का चित्रण है, जिसमें गंगू, उसकी पत्नी सुखिया तथा दो बच्चे हैं। प्रारम्भ में मद्यपान एवं रेशमी जान के संसर्ग से गंगू चरित्र-भ्रष्ट होकर पत्नी तथा बच्चों से निष्ठुरता का व्यवहार करता है, किन्तु एक बच्चे की मृत्यु उसे सुराह पर लाकर उसके हृदय-परिवर्तन का कारण बनती है। 'उपकार' शीर्षक संग्रह की प्रतिनिधि कहानियाँ वे है, जिनमे लेखिका ने युवक-युवतियों के स्वच्छन्द प्रेम के विभिन्न परिणाम प्रदर्शित किये है। एक कहानी मे यदि एक स्थिति का एक पक्ष प्रदर्शित किया गया है, तो दूसरी मे उसी स्थिति के दूसरे पक्ष का चित्रण है। उदाहरणार्थ 'अपूर्व मिलन' में नायिका उषा पिता द्वारा निर्वाचित वर को स्वीकार नही करती, पिता द्वारा गृह-निष्कासन पाकर स्वतन्त्र जीविकोपार्जन करती है, किन्तु विवाह अपने प्रेमी से ही करती है। दूसरी ओर 'प्रेम की राख' में नायिका उषा पिता द्वारा निर्वाचित वर को स्वीकार कर लेती है, किन्तु सुखी नहीं रह पाती और प्रेमी निर्मल की स्मृति में घुल-घुलकर प्राण त्याग देती है। 'देशदासी' में नायक और नायिका के सजातीय न होने से उनका प्रणय परिणय में परिवर्तित न हो सका, तो दोनों ने आजन्म विवाह न करने का प्रण कर लिया। उधर न्यू लाइट' की नायिका सौदामिनी समाज अथवा परिवार के विरोध की उपेक्षा करके भी विजातीय युवक मैजिस्ट्रेट प्रकाश को अपना जीवन-साथी चुन लेती है और अपने जीवन को सुखमय बनाती है। 'विधि की विडम्बना' में ज़मींदार-पुत्र सुधीर के कृषक-पुत्री मोती के प्रति आकर्षण, प्रेम एवं विवाह की घटनाएँ अंकित हैं। 'विश्वास' में पात्रों के स्नेह, ईर्ष्या, द्वेष, अनुताप आदि भावों के आधार पर एक ज़मींदार-परिवार के पतन एवं पुनः सुधार की रोचक घटनाएँ अंकित हैं। 'सुहाग की चूड़ियाँ' में एक ओर हिन्दू-पत्नी के एकाग्र पति-प्रेम एवं दृढ़ आस्था का चित्रण है, तो दूसरी ओर समाज के बदलते रंगों के प्रति तीखा व्यंग्य है। पुत्र की मृत्यु का मिथ्या समाचार पाकर माता अपनी पुत्रवधू से अत्यन्त दुर्व्यवहार करती है और जब वह लौट आता है तो उसी पुत्रवधू की सौ-सौ बलाएँ लेती है। संग्रह की अन्य कहानियों मे 'मिलन' में स्वच्छन्द प्रेम का चित्रण है और 'नमक की खान' में स्वार्थ पर आधारित प्रेम का उल्लेख हुआ है।

'जीवन की अनुभूतियाँ' शीर्षक कहानी-संग्रह की गल्पो में उक्त दो संग्रहों की भाँति विषय सम्बन्धी एकरूपता का दोष नहीं है। इस संग्रह की कहानियाँ तीन वर्गों में विभक्त की जा सकती हैं—(अ) भावुकताप्रधान कहानियाँ—श्याम की होली, निष्फल प्रयास, (आ) पारिवारिक अथवा सामाजिक कहानियाँ—विवाह के बाद, अभिलाषा, जीवन के मोड़, कांगड़ा के आंचल में, विदा, न्याय की तुला, (इ) वातावरणप्रधान अथवा राजनीतिक कहानियाँ—दिवाली, अभाव, गुण्डा कौन, परिवर्तन। 'श्याम की होली' तथा

'निष्फल प्रयास' में दो भिन्न कथानकों द्वारा यह चित्रित किया गया है कि श्रीकृष्ण तथा राधा आदि गोपियों का अनन्य प्रेम उनकी आत्मा का आकर्षण था, रूप-मोह अथवा वासना का परिणाम नहीं था। 'विवाह के बाद' तथा 'अभिलाषा' शीर्षक कहानियों में 'सुहाग की चूड़ियाँ' की भाँति समाज के प्रति तीव्र व्यंग्य है। 'विवाह के बाद' में विवाह के पूर्व नायिका कुसुम से वर-पक्षवालों ने अनेक प्रश्न पूछे, उसके अनेक गुणों की परीक्षा ली और बाद मे उसे चूल्हे-चौके में फँसा दिया, पूर्व गुण (सगीत-प्रेम आदि) अवगुण की कोटि में गिने जाने लगे। 'अभिलाषा' में शिक्षित, किन्तु बेकार, नायक की कष्टपूर्ण जीवन-कथा का वर्णन करके लेखिका ने समाज पर तीव्र व्यंग्य किया है। शेष पारिवारिक कहानियों में उन्होंने सुख-दुःख, कलह, समझौता, हृदय-परिवर्तन आदि के आधार पर जीवन के विभिन्न चित्र अंकित किये है और प्रायः उक्त कथानकों को सुखान्त मोड़ दिया है।

राजनीतिक कहानियों में मुख्यतः स्वातंत्र्योत्तर भारत के राजनीतिक वातावरण का चित्रण किया गया है। उदाहरणार्थ 'दिवाली' में स्वातंत्र्योपरान्त साम्प्रदायिक दंगों के कारण नायिका चारुमणि का अपने पति धीरेन्द्र से पृथक् होकर संयोगवश पुनः मिल जाना वर्णित है। 'अभाव' में एक दरिद्र परिवार का चित्रण है। नायक के भाई ने देश-रक्षा में पुलिस की गोली खाकर प्राणार्पण किया, किन्तु स्वतन्त्रता के उपरान्त उसके परिवार को इसका कुछ भी पुरस्कार न मिला। 'गुण्डा कौन' में स्वतन्त्रता-पूर्व के भारत में अंग्रेजों की दमन-नीति की चर्चा है। समाज में निर्धनों को तो गुण्डा कहा जाता है और धनी सब-कुछ लूटकर भी पवित्र कहलाते है। 'परिवर्तन' में साम्प्रदायिक दंगे का एक चित्र है—कथानायिका उषा के सद्व्यवहार तथा क्षमाशीलता ने धर्मान्ध यूसुफ़ के कलुषित हृदय को परिष्कृत एवं पावन बना दिया। लेखिका ने मुख्य रूप से सुखान्त कहानियों की रचना की है, किन्तु 'रूप के लिए', 'पुरुष का प्रेम', 'अभाव', 'दुर्भाग्य' आदि अनेक दुःखान्त कथानकों को भी सफलतापूर्वक प्रस्तुत किया गया है। वस्तुतः जीवन की नैसर्गिक गति को लक्ष्य में रखकर उन्होने सुख एवं दुःख दोनों प्रकार की भावनाओं को स्थान दिया है। 'उपहार' संग्रह की भूमिका में 'अपनी बात' में उन्होंने उक्त तथ्य को स्वीकार करते हुए लिखा है—"इन कहानियो मे हमारे समाज के रंगमंच पर सदैव घटित होनेवाली घटनाओ से सम्बन्धित मानव-जीवन के उत्थान और पतन का एवं उसके अन्तर में नित्यप्रति होनेवाले द्वन्द्वों का, रुदन और हास्य के सम्मिश्रण का, सजीव चित्र खींचने का प्रयास किया गया है।"

शिवरानी जी की कतिपय कहानियों में यह त्रुटि है कि उनके कथानकों में अनावश्यक प्रसंगों का समावेश हुआ है, जो कथा के सहज प्रवाह मे अनेकशः बाधक सिद्ध हुए हैं। उदाहरणार्थ 'पूजा' कहानी में रूपा का मोहिनी के घर जाना, मोहिनी की भाभी द्वारा सिनेमा देखने का प्रस्ताव, सबका सिनेमा जाना आदि घटनाएँ निरर्थक है, मुख्य कथानक से इनका कोई प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं है। इसी प्रकार 'कलंकिनी' में एक वृद्धा

द्वारा डॉक्टर अविनाश को बुलाना, एक युवक के घर जाना, युवक का उन्मादग्रस्त होकर अपनी जीवन-गाथा सुनाना आदि अनावश्यक प्रसंगों की अपेक्षा यदि प्रत्यक्षतः कहानी प्रारम्भ कर दी जाती तो प्रभावान्विति अपेक्षाकृत तीव्र हो जाती। जो भी हो, यह तो स्वीकार करना पड़ेगा कि आलोच्य लेखिका की कहानी-कला उत्तरोत्तर विकासोन्मुख रही है। 'दुर्भाग्य' की अपेक्षा 'उपकार' की गल्पों में कथानक वैविध्य द्वारा सम्पोषित हैं और 'जीवन की अनुभूतियाँ' में यह वैविध्य और भी स्पष्ट है।

चरित्र-चित्रण

श्रीमती विश्नोई ने पात्रों के चयन एवं उनके चरित्र-चित्रण में वांछित विविध-रूपता को प्रश्रय दिया है। अन्य अनेक लेखिकाओं की भाँति उन्होने भी पात्राओं के चरित्र-चित्रण में अपेक्षाकृत अधिक संवेदना एवं सहानुभूति का परिचय दिया है। उनकी अधिकांश नायिकाएँ भारतीय संस्कृति की गोद में पली हुई, पतिपरायणा, कष्ट-सहिष्णु, क्षमाशीला, लाजवन्ती आदर्श गृहिणियाँ है, जो पति को देवता मानकर पूजती हैं। 'मंजु' की मंजु, 'पूजा' की मोहिनी, 'रूप के लिये' की प्रेमा, 'परिवर्तन' की कृष्णा, 'सुख की खोज' की रमा, 'विश्राम' की मालती, 'अभिलाषा' की प्रभा, 'न्याय की तुला' की कामिनी और 'उपकार' की सुखिया ऐसी ही पात्राएँ हैं। ये अपने पतियों के उचित-अनुचित व्यवहार को चुपचाप सहन करती हैं। इस श्रेणी की नारियो का एक वर्ग वह है जो सामाजिक शृंखलाओं की अनिवार्यता के कारण विवश भाव से पति अथवा घर की अधिकारिणी स्त्री (सास, पति की चाची, भाभी अथवा पूर्व-पत्नी) के अत्याचार सहन करती हैं। 'विवाह के बाद' की कुसुम,' 'कांगड़ा के आँचल में' की रागिनी और 'मनो-वेदना' की उपा ऐसी ही विवश नारियाँ हैं। उनकी मनोवेदना एवं कुंठाओ का मनोवैज्ञा-निक चित्र अंकित करने में लेखिका विशेष सफल रही हैं।

'सुख की खोज' की कंचन तथा 'अभिनेत्री' की शीला इस श्रेणी की होकर भी अपने को इससे पृथक् कर लेती हैं, क्योंकि जब तक उनसे सहन होता है तब तक वे अत्याचार, अवहेलना, तिरस्कार सब सहती हैं, किन्तु जब पानी सिर से ऊँचा हो जाता है तब वे भी ईंट का जवाब पत्थर से देती हैं। कंचन जब देखती है कि उसके पति घोर स्वार्थी हैं—वे केवल अपने सुख के लिए कभी उसका और कभी उसकी सपत्नी रमा का आदर करते है—तो वह भी एक दिन पति-गृह का त्याग कर देती है और फिर कभी नहीं लौटती। शीला भी अपने पति एवं सास के क्रूर व्यवहार से पीड़ित होकर एक दिन स्वाभिमानपूर्वक सोचती है—"नारी बदला लेगी। जैसा कोई उसके साथ करेगा, वह भी वैसा ही करेगी। आज बीसवीं सदी की नारी प्रतिशोध चाहती है। अपने अब तक के त्याग और बलिदान का बदला चाहती है, जिसको पुरुष ने उसकी कमजोरियाँ और मजबूरियाँ कहकर उपहास में उड़ा दिया। वह अब अपमान न सहेगी।"[1] अपने विचारों

---

१. दुर्भाग्य, पृष्ठ ४१

को कार्य-रूप में परिणत करते हुए वह अभिनेत्री बन जाती है और एक दिन उसका पति अपने पूर्व-व्यवहार पर अनुतप्त एवं संतप्त होकर उसे सम्मानपूर्वक लौटा लाता है। 'तर्पण' की नायिका विलासकुमारी अथवा देवरानी की वीरता का चित्रण करके लेखिका ने इतिहास-प्रसिद्ध क्षत्रिय वीरांगनाओं के वीरत्व की स्मृति को सजीव कर दिया है।

आलोच्य पात्राओं का दूसरा वर्ग वह है जिसकी नारियाँ प्रेम एवं बलिदान की दिशा में विभिन्न आदर्श प्रस्तुत करती हैं। 'विधि की विडम्बना' की नायिका मोती सुवीर से प्रेम करते हुए किंचित् स्वाभिमान का परिचय देती है, किन्तु 'मिलन' की सुधा विनोद से विवाह होने के अनुमान से विष खाकर प्रेम की वेदी पर आहुति देने के लिए तत्पर रहती है। 'देशदासी' की लता विष तो नहीं खाती, किन्तु दिनेश से विवाह न होने पर आजन्म ब्रह्मचारिणी रहकर देश-सेवा का प्रण करती है। 'अपूर्व मिलन' की उषा साहसी है, वह अपने प्रेमी निर्मल को पाने के लिए पिता द्वारा अपमान की चिन्ता न करके विवाह के पूर्व पितृ-गृह से भाग निकलती है और संयोगवश अपने प्रेमी को पा लेती है। 'प्रेम की राख' की उषा इतनी साहसी न सही, फिर भी पिता द्वारा मनोनीत वर को स्वीकार करके वह प्रसन्न नहीं रहती और पति-गृह में अपने प्रेमी की स्मृति में घुलकर प्राण त्याग देती है। 'न्यू लाइट' की सौदामिनी भी कुछ कम दृढ़ एवं साहसी नहीं है। माता के विरोध की उपेक्षा करके वह उच्च शिक्षा प्राप्त कर लेडी डॉक्टर बनती है और विवाह करना स्वीकार नहीं करती। बाद में योग्य एवं गुणी पात्र प्रकाश को अपनाकर अन्तर्जातीय विवाह करके वह समाज के मुख पर मानो तमाचा जड़ देती है। 'नमक की खान' की सलीमा प्रेम के पथ में बहककर विजय की मिथ्या बातों में आकर शेरू के सच्चे प्रेम की उपेक्षा करती है, किन्तु जब विषम परिस्थितियों में दोनों प्रेमियों के हृदयों का सच्चा रहस्य उद्घाटित हो जाता है तो अपनी त्रुटि को सहज ही सुधार लेती है। 'सुहाग की चूड़ियाँ' में शारदा की सास, 'विश्वास' की माया, 'न्याय की तुला' की लक्ष्मी आदि दबंग प्रकृति की नारियों के चरित्रांकन में भी लेखिका सफल रही हैं।

नारियों की भाँति पुरुष पात्रों के चरित्रांकन में भी लेखिका ने वैविध्य एवं अनेकरूपता को ध्यान में रखा है। 'दुर्भाग्य' शीर्षक कथा-संग्रह के पात्रों का चरित्र प्रायः एकरूप है—कृत्रिम सौन्दर्य के वशीभूत होकर, मद्यपान आदि कुप्रवृत्तियों के कारण, पत्नी में रूप का अभाव होने अथवा बाद में सौन्दर्य क्षीण हो जाने के कारण पत्नी अथवा भावी पत्नी के प्रति विश्वासघात इन पात्रों की उल्लेखनीय प्रवृत्तियाँ है। 'मंजु' का विनोद, 'पूजा' का चन्द्रमोहन, 'अभिनेत्री' का विजय, 'परिवर्तन' का रमेश, 'सुख की खोज' का लक्ष्मीचन्द्र, 'मनोवेदना' का नायक सुरेश, 'कलंकिनी' का नायक आदि पात्र ऐसे ही क्रूर एवं दम्भी पुरुष हैं जो अपने दुष्कृत्यों द्वारा पत्नियों के मन को ठेस पहुँचाते है, किन्तु ठोकर खाने पर अपने दुर्गुणों पर अनुताप करके क्षमा-याचना द्वारा स्थिति को सुधार लेते हैं और पाठकों की संवेदना के अधिकारी हो जाते हैं। 'रूप के लिए' का नायक रमेश

तथा 'पुरुष का प्रेम' का नायक उक्त पात्रों से इस बात मे भिन्न हैं कि वे अन्त तक अपने पापों का प्रायश्चित्त नहीं करते। उनकी पत्नियाँ घुल-घुलकर प्राण दे देती है, किन्तु उन्हें तनिक भी अनुताप नही होता। 'दुर्भाग्य' का नायक रामू भी ऐसा ही स्वार्थी है, जो एक बार भीख लेने गया तो लौटा ही नही और उसकी पत्नी तुलसी अन्त तक बच्चों को लेकर मौत से लड़ती रही। ऐसे पात्र पाठकों के हृदय मे रोष एवं क्षोभ की सृष्टि करते हैं।

'उपकार' संग्रह में केवल 'उपकार' कहानी का गंगू ऐसा पात्र है जो उपर्युक्त नायकों की भाँति पहले पत्नी तथा बच्चों पर घोर अत्याचार करता है, किन्तु बाद मे परिस्थितियों के घात-प्रतिघात से सुमार्ग का अवलम्बन करता है। आलोच्य संग्रह के शेष कथानायक ('विधि की विडम्बना' का सुधीर, 'मिलन' का विनोद, 'देशदासी' का दिनेश, 'सुहाग की चूड़ियाँ' का मोहन, 'न्यू लाइट' का प्रकाश आदि) आदर्श पात्र है। इन सबका एक-सा गुण, जो इनके चरित्र में सर्वोपरि है, यह है कि ये अपनी पत्नी अथवा प्रेमिका के प्रति दृढ़ अनुराग रखते हैं और अन्त तक उसका निर्वाह करते है। 'जीवन की अनुभूतियाँ' शीर्षक कथा-संग्रह मे पुरुष पात्रों में पर्याप्त अनेकरूपता है। 'जीवन के मोड़' का रमेश और 'विदा' तथा 'अभाव' कहानियों के नायक उदार एवं सहृदय पात्र हैं। 'दिवाली' का रमेन्द्र तथा 'गुण्डा कौन' का रामधन वीर पात्र हैं। 'विवाह के बाद' का विजय, 'अभिलाषा' का विपन, 'न्याय की तुला' का राजनारायण, 'परिवर्तन' का यूसुफ़ आदि पात्र सामान्य है, जिनका आचरण परिस्थितियों से प्रभावित होता रहता है। 'जीवन के मोड़' का महेश कामुक पात्र है। लेखिका ने प्रायः पात्रो का परोक्ष चरित्र-चित्रण ही किया है, किन्तु कतिपय स्थलों पर प्रत्यक्ष कथन भी किया गया है। उदाहरणार्थ मंजु का यह चरित्र-कथन अवलोकनीय है—"मंजु शिशु-सी भोली, इन्द्रधनुष-सी सुन्दर, हिमाचल-सी दृढ मंजु छोटे-बड़े, अमीर-ग़रीब सबों की जीवन-प्राण थी। क्योंकि मुर्दों में भी वह जन-जीवन-जागृति का मन्त्र पढ-पढ़कर फूंक रही थी। विनाश के गर्त में डूबे हुए संसार को बचाकर अमर जीवन के सुख की ओर ले जा रही थी। देश के कोने-कोने में उसका नाम फैल चुका था।"[1]

कथोपकथन

विवेच्य लेखिका ने अपने पात्रों के मनोभावों को मुखर रूप देते हुए संक्षिप्त एवं अवसरानुकूल सारगर्भित संवादों की योजना की है। पात्रों के वार्तालापों में उनकी शिक्षा-दीक्षा, संस्कार, रुचि आदि विशेषताओं की अनुरूपता स्पष्टतः प्रतिबिम्बित रही है। यही कारण है कि वे नितान्त सजीव एवं स्वाभाविक प्रतीत होते हैं। स्नेह, घृणा, क्रोध, उपहास, ईर्ष्या, स्पर्द्धा आदि भावों को व्यक्त करते समय पात्रों, विशेषतः पात्राओं, की उक्तियाँ इतनी सशक्त हो उठी है कि वक्ता का चित्र साकार हो जाता है। उदा-

१. दुर्भाग्य, 'मंजु' शीर्षक कहानी, पृष्ठ ८६

हरणार्थ, 'अभिनेत्री' कहानी में शीला के प्रति उसकी सास की व्यंग्योक्तियाँ, 'सुहाग की चूड़ियाँ' में शारदा के प्रति उसकी सास के वाग्बाण तथा 'न्याय की तुला' में कामिनी के प्रति उसकी जेठानी की कटूक्तियाँ उल्लेखनीय हैं।[१] लेखिका ने संवादों में यथावसर वक्ता की भावभंगिमा आदि की भी चर्चा की है और इस प्रकार कथोपकथन को और भी सजीव एवं आकर्षक रूप प्रदान किया है। यथाप्रसंग पात्रों की उक्तियों में वाग्वैदग्ध्य, तर्क-वितर्क, उक्तिवैचित्र्य आदि प्रवृत्तियों का भी समावेश हुआ है। चरित्र-चित्रण एवं कथानक के अतिरिक्त कथोपकथन अनेकशः उद्देश्य की अभिव्यक्ति में सहायक सिद्ध हुए हैं। उदाहरणार्थ 'परिवर्तन' कहानी में उषा तथा उसके भाई के वे सम्भाषण उल्लेखनीय हैं, जिनमें वे निम्नलिखित विषयों की चर्चा करते हैं—अश्लील चलचित्रों का प्रचलन; आधुनिक शिक्षा के दोष जिसने स्वार्थपरता एवं शोषण-वृत्ति को बढ़ावा दिया है; पंजाब, नोआखली, बिहार आदि प्रदेशों में हिंसा का बोलबाला आदि।[२]

किसी विशेष मनःस्थिति में पात्र किस प्रकार का सम्भाषण कर सकता है, इसका लेखिका को अनुभूतिपरक ज्ञान है और इसी कारण उनके द्वारा आयोजित संवाद मनोवैज्ञानिक हो सके हैं। उदाहरणार्थ 'सुहाग की चूड़ियाँ' में मोहन तथा उसकी नवपरिणीता पत्नी शारदा का रेल में किया गया सम्भाषण विशेष रोचक एवं मधुर बन पड़ा है।[३] कतिपय स्थलों पर लेखिका ने पात्रों के वार्त्तालाप के परस्पर होनेवाले प्रभाव का भी आलंकारिक शैली में साथ-साथ उल्लेख कर दिया है। उदाहरणार्थ 'जीवन के मोड़' में कथानायक रमेश एवं उसकी पत्नी आशा का यह संवाद द्रष्टव्य है—

"क्यों नाराज हो ? आज हमें चाय भी नहीं दोगी।"

"घंटे-भर से तो पड़ी थी, पी क्यों न ली।" मानो आकाश में बिना वर्षा के बिजली चमक गई हो।

"तुम तो थीं नहीं, मैं तुम्हारी प्रतीक्षा में था, अकेला कैसे पीता।" मानो मलय समीर का एक झोंका बह गया हो। पर बाँस के झुंड में उससे भी आग लग जाती है, हृदय की आग हल्के समीरण ने और धधका दी।"[४]

देश-काल

शिवरानी जी ने अपनी कहानियों में विषयानुकूल पारिवारिक, सामाजिक एवं सामयिक राजनीतिक स्थितियों के चित्र अंकित करने के प्रति विशेष जागरूकता का परिचय दिया है। उक्त समस्याओं के जो विभिन्न पक्ष उन्होंने ग्रहण किये हैं, वे इस प्रकार हैं—

---

१. देखिए 'जीवन की अनुभूतियाँ', पृष्ठ १८४
२. देखिए 'जीवन की अनुभूतियाँ', पृष्ठ १५७-१५८
३. देखिये 'उपकार', पृष्ठ ७०-७२
४. जीवन की अनुभूतियाँ, पृष्ठ ६५

१. पारिवारिक समस्याएँ

(अ) संयुक्त परिवारों में घर की बड़ी-बूढ़ियों अथवा अधिक वेतन पानेवाले पतियों की पत्नियों द्वारा नवपरिणीताओं पर कठोर शासन, फलतः पीड़ित नारियों की कुंठाएँ।

(आ) समाज ने पुरुष को नारी की अपेक्षा जो अधिक स्वतन्त्रता एवं अधिकार प्रदान किये हैं, उनका दुरुपयोग करनेवाले पुरुषों का अपनी पत्नियों के प्रति दुर्व्यवहार, जिसके लिए मद्यपान, वेश्यागमन, परनारी-रमण, उपेक्षा, निरादर, अवहेलना अथवा ताड़ना की प्रवृत्तियाँ अपनाई जाती हैं।

२. सामाजिक समस्याएँ

(अ) युवक-युवतियों के स्वच्छन्द प्रेम के विभिन्न परिणाम—जहाँ समाज से दबकर चला जाए वहाँ निराशा और जहाँ साहस का परिचय देकर विरोध किया जाए वहाँ सफलता।

(आ) प्रेम-विवाह आदि में जाति-भेद आदि सामाजिक संकीर्णताओं का क्रूर बन्धन।

(इ) समाज में व्याप्त आर्थिक वैषम्य के भयंकर परिणाम, धनियों द्वारा निर्धनों का शोषण, निर्धनों की दयनीय अवस्था।

(ई) हिन्दू-समाज में विधवा के प्रति दुर्व्यवहार, पैतृक गृह एवं पति-गृह के वातावरण में वैषम्य के कारण नारी का असन्तोष, पश्चिमी सभ्यता से प्रभावित नारी की विलासोन्मुख प्रवृत्ति आदि।

३. राजनीति-सापेक्ष सामाजिक स्थिति-चित्र

(अ) अंग्रेजों के शासन-काल मे देशभक्तों के प्रति शासक-जाति के क्रूर अत्याचार।

(आ) स्वतन्त्रता के उपरान्त होनेवाला भयंकर साम्प्रदायिक रक्तपात, शरणार्थी समस्या, बापू द्वारा शान्ति-स्थापना का प्रयत्न आदि।

(इ) बंगाल के भयंकर अकाल की रोमांचकारी विभीषिका।

आलोच्य लेखिका ने अपने कथानकों मे तो उक्त समस्याओं को अभिव्यक्त किया ही है, इसके अतिरिक्त पात्रों की उक्तियों एवं उनकी विचारधारा में अनेकशः सामयिक देश-काल की चर्चा हुई है। उदाहरणार्थ अधोलिखित उक्तियाँ अवलोकनीय हैं—

(अ) 'पूजा' कहानी में किशोर की माता के प्रति कथित उक्ति—"आज देश रोटी रोटी चिल्ला रहा है, पर रोटी का टुकड़ा नसीब नहीं हो रहा है। जो देश दूसरों का पेट भरता था—आज उसके अपने बच्चों को रोटी नहीं है। उसके हजारों लाल भूख से दम तोड़ रहे हैं—लाखों एक वक्त खा-पीकर अपनी आत्मा को कुचलकर पड़ रहते हैं।"[1]

१. दुर्भाग्य, पृष्ठ १६

(आ) 'कलंकिनी' कहानी में सुरेश द्वारा हिन्दू विधवा की दुर्दशा का चित्रण करते समय की उक्ति—"सैकड़ों हिन्दू विधवायें अपने वैधव्य के कठिन जीवन को नहीं सह सकतीं, किस प्रकार अपना कलुषित जीवन व्यतीत करती हैं। क्या यह पुनर्विवाह से अच्छा है ? पर समाज इसी को श्रेयस्कर समझता है। इस समाज मे एक पुरुष अपनी दर्जनों शादी कर सकता है, पर एक बाल-विधवा को आजन्म वैधव्य की कठोर सेज पर सुलाना चाहता है।"[1]

(इ) 'अभाव' कहानी में नायक की विचारधारा—"माँ रसोईघर में खटपट कर रही थी और मैं सोच रहा था—क्या वास्तव में हम स्वतन्त्र हैं। आज प्रत्येक वस्तु का अभाव हमें खाये जा रहा है।"[2]

परिस्थितिजन्य वातावरण के अतिरिक्त आलोच्य लेखिका ने प्राकृतिक वायुमण्डल के भी अवसरानुकूल सुन्दर दृश्य-चित्र अंकित किये हैं। प्रमाणस्वरूप एक उद्धरण अवलोकनीय है—"संध्या का समय था। उषारानी के साम्राज्य पर निशारानी अपना आधिपत्य जमा रही थी। उषा युद्ध में हारे हुए राजा की नाईं शनै. शनैः क्षीण हो रही थी। उसके लोहित आंचल की लालिमा सुदूर क्षितिज में अब भी व्याप्त हो रही थी। इधर निशीथिनी प्रियतम के साथ स्वतन्त्रता से क्षितिज के प्रांगण में उतर रही थी। उसकी अलकावलियों में गुंथे तारक-मोती सहसा झिलमिला उठते थे।"[3]

उद्देश्य

जीवन एवं समाज मे व्याप्त कुरूपताओं के प्रति विद्रोह, अन्याय और अत्याचार का तीव्र विरोध तथा उच्च एवं उदात्त आदर्शों की प्रतिष्ठा आलोच्य कहानियों का प्रमुख लक्ष्य है। पारिवारिक एवं सामाजिक क्षेत्रों में नित्यप्रति सम्मुख आनेवाली समस्याओं को लेखिका ने प्रमुख रूप से चित्रित किया है और करुणा, सहानुभूति, हृदय-परिवर्तन संवेदना, अनुताप आदि भावनाओं का आश्रय लेकर उनके आदर्शवादी समाधान प्रस्तुत किए हैं। इस प्रसंग मे श्री भगवतीचरण वर्मा का मन्तव्य पठनीय है—"आदर्शवाद को सामने रखकर इन कहानियों का सृजन हुआ है। इन कहानियों में आज के जागते हुए और उन्नतिशील राष्ट्र की सजीव चेतना है। वे आज के युग का प्रतिनिधित्व करने का प्रयत्न करती हैं।"[4]

श्रीमती विश्नोई ने पारिवारिक, सामाजिक एवं राजनीतिक क्षेत्रों में समता एवं समरसता का पोषण किया है। रूढ़िवादी परम्पराओं (विधवा-विवाह-निषेध, नारी

---

१. दुर्भाग्य, पृष्ठ १५४
२. जीवन की अनुभूतियाँ, पृष्ठ १३७
३. उपकार, पृष्ठ १३७
४. दुर्भाग्य, भूमिका, पृष्ठ 'व'

पर पुरुष द्वारा शासन, संयुक्त परिवारों में नववधुओं पर परिवार की स्वामिनी स्त्रियों का नियन्त्रण, माता-पिता द्वारा कन्या के वर-निर्वाचन की स्वतन्त्रता का विरोध, जातीय भेद-भाव के कारण प्रेम-विवाह पर समाज का नियन्त्रण आदि) के कुरूप परिणाम दिखाकर उन्होंने प्रकारान्तर से बदलते युग की नवीन मान्यताओं का समर्थन किया है, किन्तु पश्चिमी सभ्यता की आड़ में मनमाने भोग-विलास मे लिप्त रहकर समाज को दूषित करनेवाले नर-नारियों के प्रति उन्हे सहानुभूति नहीं है।[1] 'पूजा' कहानी में आधुनिक नारी की पतनोन्मुख प्रवृत्तियों—सोसाइटी में बैठकर मद्यपान, मुँह रंगना, सोसाइटी गर्ल्स कहलाना, मर्दो के साथ नाचना, पैसे के लिए सब कुछ करना आदि की भरपूर निन्दा की गई है।[2] 'जीवन के मोड़' शीर्षक कहानी में आशा पहले इसी चकाचौंध का शिकार बनकर पति से दुर्व्यवहार करती है, किन्तु बाद में ठोकर खाने के पूर्व ही सँभलकर सुराह पर आ जाती है।

जो भी हो, यह स्वीकार करना पड़ेगा कि आलोच्य लेखिका की कहानियों में मानवमात्र के कल्याण की कामना निहित है। व्यक्ति एवं समाज, प्रजा एवं शासक, पुरुष एवं नारी प्रत्येक वर्ग की विरोधी इकाइयों के लिये उन्होंने समानाधिकारों एवं समरसताजनक भावों का प्रतिपादन किया है। लेखिका का विचार है कि यदि कर्त्तव्य को लक्ष्य में रखा जाए और अधिकारों का लोभ न किया जाए तो जीवन एवं समाज की विषमता स्वतः दूर हो जाएगी।

भाषा-शैली

आलोच्य कहानियों में लघुवाक्यान्वित सरल एवं व्यावहारिक हिन्दी का प्रयोग हुआ है, जिसमें तत्सम एवं तद्भव शब्दों के अतिरिक्त नफ़रत, दिल, कन्ट्रैक्ट, चिराग़[3], मजबूर, किस्मत, दुश्मन, तालीम[4] आदि प्रचलित विदेशी शब्दों; औंधे, गूमड़ा[5] आदि देशज शब्दों; अटरम-सटरम, कूड़े-कचरे, अल्लम-गल्लम[6] आदि शब्द-युग्मों एवं हृदय-कोकिल, संसार-सागर[7] आदि रूपकों ने पर्याप्त सजीवता का संचार किया है। लेखिका ने मुहावरों और लोकोक्तियों के प्रयोग की ओर भी व्यापक रूप से ध्यान दिया है। इनकी अभिव्यक्ति मुख्यतः अशिक्षित स्त्रियों की उक्तियों में हुई है। श्रीमती बिश्नोई की

१. देखिये 'उपकार', पृष्ठ ९३
२. देखिये 'दुर्भाग्य', पृष्ठ १९-२०
३. देखिये 'दुर्भाग्य', पृष्ठ ६६, ४९, ११७
४. देखिये 'जीवन की अनुभूतियाँ', पृष्ठ १४८, १४९, १६६, १६७
५. देखिये 'दुर्भाग्य', पृष्ठ ३४, ९१
६. देखिये 'दुर्भाग्य', पृष्ठ २, १८६, १८६
७. देखिये 'उपकार', पृष्ठ ७२, १४५

कहानियों में वर्णनात्मक एवं नाटकीय शैलियों के संयोग से रोचक तथा प्रभावपूर्ण कथा-शैली का विकास हुआ है। अवसरानुकूल आलंकारिक शब्दावली एवं सूक्ति वाक्यों का प्रयोग उनकी शैली की उल्लेखनीय विशेषतायें हैं। उदाहरणार्थ निम्नलिखित उद्धरण अवलोकनीय है—

१. आलंकारिक शैली

(अ) "और मंजु शिशु-सी भोली, इन्द्रधनुप-सी सुन्दर, हिमाचल-सी दृढ़ मंजु छोटे-बड़े, अमीर-गरीब सबों की जीवन-प्राण थी।"[1]

(आ) "टिमटिमाते हुए सितारे स्वार्थियों के रुदन पर मानो खिलखिलाकर हँस रहे थे।"[2]

२. सूक्ति शैली

(अ) "दाम्पत्य जीवन में स्वर्गीय प्रेम ही सब सुखों की कुंजी है।"[3]

(आ) "कुचला हुआ सर्प जब घात करता है तो अच्छे-अच्छे भी उसके दाँव को नहीं बचा सकते।"[4]

कुल मिलाकर शिवरानी जी की भापा-शैली भावानुरूप, सक्षम, बोधगम्य एवं प्रभावपूर्ण है। "उन सबों ने भी चाय पिया," "लड़की को कितना दिमाग़ है," "फिर क्या अपनी मज़ाक उड़वाऊँ" आदि कतिपय वाक्यों[5] में व्याकरण सम्बन्धी अशुद्धियाँ चिन्त्य हैं, किन्तु ऐसी अशुद्धियाँ अधिक नहीं है। अतः इनसे भापा के सहज सौन्दर्य में कोई बाधा नहीं पहुँची है।

निष्कर्ष

श्रीमती शिवरानी विश्नोई की रचनाओं के अनुशीलन से स्पष्ट है कि वे पारिवारिक कहानियाँ लिखने में विशेप सफल रही हैं। उनकी कहानियों में वर्तमान नारी-जागरण की सजीव चेतना को स्थान प्राप्त हुआ है। पारिवारिक, सामाजिक एवं राजनीतिक समस्याओं का चित्रण और करुणा, सहानुभूति तथा आदर्शवाद के आधार पर उनका सुन्दरतम समाधान उनकी कहानियों की उल्लेखनीय विशेषताएँ है। इन कहानियों का प्रमुख स्वर है—जीवन एवं समाज की कुरूपताओं के प्रति विद्रोह तथा अन्याय एवं अत्याचार का तीव्र विरोध। रूढ़िवादी विकृत परम्पराओं का खण्डन एवं नवालोक-युक्त सिद्धान्तों का मण्डन भी उक्त कहानियों की विशेपता है, किन्तु पश्चिमी सभ्यता से प्रभावित दुर्गुणों के प्रति लेखिका ने घृणा प्रकट की है। आलोच्य कहानियों में नारी अपने भारतीय आदर्शों को लेकर सामने आयी है, किन्तु अन्याय की अति होने

१-२. दुर्भाग्य, पृष्ठ ८, ११७

३-४. जीवन की अनुभूतियाँ, पृष्ठ ५८, ११५

५. उपकार, पृष्ठ ६, २२, ६२

पर वह ईंट का जवाब पत्थर से देती है। दूसरी ओर, लेखिका के पात्र-पात्राओं ने प्रेम एव देश-सेवा के क्षेत्र में उज्ज्वल आदर्श प्रस्तुत किये है। जीवन की सुख-दुःखमयी अनुभूतियों का स्वाभाविक चित्रण उनकी कहानियो का लक्ष्य है और वे इसमें सफल भी रही हैं।

श्रीमती मन्नू भंडारी

श्रीमती मन्नू भंडारी ने हिन्दी-कहानी की रूढ़ियों से मुक्त रहने के संकल्प के साथ नूतन शैली में कथा-रचना की है। अब तक उनके तीन कहानी-संग्रह प्रकाशित हुए हैं—मैं हार गई, तीन निगाहों की एक तस्वीर, एक पुरुष एक नारी। प्रथम दो संकलनों में लेखिका की क्रमश: बारह और आठ कहानियों को स्थान प्राप्त हुआ है। तृतीय संग्रह में कुल छह कहानियाँ हैं, जिनमें प्रथम तीन लेखिका के पति श्री राजेन्द्र यादव की है और शेष तीन लेखिका की हैं। वैसे, उक्त तीनों कहानियाँ लेखिका के प्रथमोक्त स्वतन्त्र संकलनों में स्थान पा चुकी हैं, अतः उनकी तीनों रचनाओं में कुल मिलाकर बीस कहानियाँ है जिनके शीर्षक क्रमशः इस प्रकार है—ईसा के घर इन्सान, गीत का चुम्बन, जीती बाज़ी की हार, एक कमज़ोर लड़की की कहानी, सयानी बुआ, अभिनेता, श्मशान; दीवार, बच्चे और बरसात; पंडित गजाधर शास्त्री, कील और कसक, दो कलाकार, मैं हार गई, तीन निगाहों की एक तस्वीर, अकेली, अनथाही गहराइयाँ, खोटे सिक्के, घुटन, हार, मजबूरी, चश्मे। इनके अतिरिक्त लेखिका ने कुछ अन्य कहानियाँ भी लिखी हैं जो समसामयिक पत्रिकाओं में स्थान पाती रही है, किन्तु उनकी कथा-प्रवृत्तियों के निर्धारण के लिए यहाँ केवल संग्रह-बद्ध कहानियों का आधार लिया गया है।

कथानक

सुश्री मन्नू भंडारी ने व्यक्तिगत चरित्रों को मुख्य केन्द्र बनाकर कथानकों की सृष्टि की है। पाश्चात्य कथा-साहित्य के प्रभावस्वरूप व्यक्ति-वैचित्र्य पर बल देने पर भी उन्होंने भारतीय रसानुभूति की प्रायः उपेक्षा नहीं की है। इसलिए उनकी कहानियाँ कथानक की दृष्टि से अत्यन्त प्रभावपूर्ण हैं। विषय की दृष्टि से इन कहानियों को पाँच वर्गों में विभक्त किया जा सकता है—(अ) करुण रस की मार्मिक टीस लिए हुए असफल प्रेम-कथाएँ (चश्मे, घुटन, एक कमजोर लड़की की कहानी), (आ) रेखाचित्र की सीमाओं का स्पर्श करती हुई चरित्रप्रधान कहानियाँ (अकेली, अनथाही गहराइयाँ, दो कलाकार, मजबूरी, सयानी बुआ, तीन निगाहों की एक तस्वीर, कील और कसक), (इ) व्यंग्य-चित्र (पंडित गजाधर शास्त्री, मैं हार गई, अभिनेता, खोटे सिक्के), (ई) मानव के सामान्य मनोविज्ञान की परिचयात्मक कहानियाँ (जीती बाज़ी की हार, श्मशान, ईसा के घर इन्सान), (उ) वर्तमान नारी की अधिकार-सजग क्रान्तिकारी चेतना की प्रतीक-रूप

कहानियाँ (हार; दीवार, बच्चे और बरसात)।

प्रेमपरक कहानियों में लेखिका ने बाह्य परिस्थितियों अथवा प्रेम-पात्र की दुर्बलताओं को हेतु-रूप में रखकर असफलताजन्य निराशा, वेदना एवं कुंठाओं के हृदयस्पर्शी चित्र अंकित किये हैं। चरित्रप्रधान कहानियों में कथानक प्रायः दो रूपों में चित्रित हुए हैं—एक तो वे जिनमें पात्रों की मानसिक गूढ ग्रन्थियाँ बाह्य परिस्थितियों से संश्लिष्ट रही हैं और दूसरी वे जिनमें पात्रों की मनोग्रन्थियों की अपेक्षा बहिर्मुखी प्रवृत्तियाँ प्रबल हैं। 'तीन निगाहों की एक तस्वीर' एवं 'कील और कसक' प्रथम वर्ग की प्रतिनिधि कहानियाँ है। 'तीन निगाहों की एक तस्वीर' की नायिका नैना पति की दीर्घ रुग्णावस्था के कारण काम-कुंठाओं एवं अतृप्त लालसाओं का आधार बनती है और अवचेतन मन की प्रक्रिया उसे पड़ोसी युवक हरीश की ओर आकृष्ट करती है। इसी प्रकार 'कील और कसक' की रानी की अतृप्त युवा प्रवृत्तियाँ पति की नीरसता से उपेक्षा पाकर पड़ोसी युवक शेखर द्वारा की गई अपनी प्रशंसा और सहानुभूति में तृप्ति का मार्ग खोजती हैं और जब शेखर उससे अधिक सुन्दरी नारी से विवाह कर लेता है तब वह प्रत्यक्ष रूप से अकारण ही वधु के प्रति असहिष्णु हो उठती है और तनिक-सी बातों को लेकर नित्य उससे झगड़ती है। द्वितीय वर्ग की चरित्रप्रधान कहानियाँ 'अकेली','मजबूरी', 'सयानी बुआ' और 'अनथाही गहराइयाँ' हैं। इनमें प्रतिपादित चरित्र अपेक्षाकृत साधारण मनोग्रन्थियों के है (वैसे व्यक्ति-वैचित्र्य यहाँ भी है) और उनके मनोविश्लेषण के लिए सामान्य एकसूत्रात्मक कथानकों की सृष्टि की गई है जिनमें मुख्य रूप से उन चरित्रों की मनःस्थिति और स्वभाव का कहीं घटना-संश्लिष्ट और कहीं विश्लिष्ट ढंग से विश्लेषण किया गया है।

'गजाधर शास्त्री' में उन आधुनिक लेखकों पर व्यंग्य है, जो मौलिकता के अभाव में तस्कर वृत्ति ग्रहण करते हुए आत्मप्रशंसा द्वारा अपने को श्रेष्ठ साहित्यकार सिद्ध करने के प्रयास में रहते हैं। 'मैं हार गई' में आधुनिक नेताओं के चरित्र-स्खलन पर तीखा व्यंग्य है। इसी प्रकार 'खोटे सिक्के' में सर्वहारा वर्ग के प्रति पूंजीपतियों की हृदयहीनता पर व्यंग्य है, तो 'अभिनेता' में भ्रमरवृत्ति युवकों के प्रतारक व्यक्तित्व का व्यंग्यपूर्ण चित्रण हुआ है। 'जीती बाजी की हार', 'श्मशान' और 'ईसा के घर इन्सान' शीर्षक कहानियों का मूल स्वर यह है कि मानव की जो जन्मजात सहज प्रवृतियाँ है, उन पर कृत्रिम नियन्त्रण रखना प्रायः असफल ही होता है, क्योंकि स्थायी रूप से उनका दमन कभी नहीं हो सकता। अतः उचित यही है कि जीवन की प्राकृतिक लालसाओं को तृप्त होने दिया जाए। 'हार' तथा 'दीवार, बच्चे और बरसात' में नारी को घर, परिवार और परम्पराओं से ऊँचा उठाकर स्वतन्त्र कर्त्तव्यों में संलग्न दिखाया गया है। 'हार' की नायिका पति के हृदय की महानता का बोध होने पर अन्त में अपना मार्ग परिवर्तित कर लेती है, किन्तु ऐसा वह हृदय की निष्ठा से ही करती है; परम्परागत मान्यताओं के बन्धनों से विवश होकर नहीं। 'घुटन' और 'दो कलाकार' शीर्षक कहानियों में लेखिका ने परिस्थितियों एवं पात्रों की मनोवृतियों को तुलनात्मक रूप में चित्रित किया है। इस प्रकार लेखिका ने रूढ़िगत

विषयों की अपेक्षा वैविध्य से सम्पोषित नूतन प्रसंगों को ग्रहण किया है। गौरव की बात यह है कि उनके कथानक एक ओर तथाकथित नयी कहानियों की अस्पष्टता एवं दुरूहता से मुक्त हैं और दूसरी ओर प्राचीनता का पिष्टपेषण भी उनमें नहीं है। अपनी इन्हीं विशेषताओं के कारण उनकी अधिकांश कहानियाँ विशेष स्वच्छ एवं प्रांजल रूप में प्रस्तुत हुई हैं।

चरित्र-चित्रण

आलोच्य लेखिका ने अपनी कहानी-कला को व्यष्टि के धरातल पर प्रनिष्ठित किया है। प्रायः प्रत्येक कहानी में किसी एक पात्र की किसी एक विशेषता को, जो प्रायः उस पात्र के व्यक्ति-वैचित्र्य की द्योतक है, केन्द्रबिन्दु बनाया गया है और उस पात्र के समस्त कर्म, परिस्थितियाँ, अन्य पात्रों का सहयोग सब उसी एक उद्दिष्ट प्रवृत्ति की मनोवैज्ञानिक अभिव्यक्ति में संलग्न रहे है। कुछ कहानियाँ, जिनमें दो पात्रों की विरोधी प्रवृत्तियों की तुलना ही लेखिका का लक्ष्य है, उक्त कथन की अपवाद हैं। वे कहानियाँ ये हैं—घुटन, अभिनेता, दो कलाकार, चश्मे। उनकी अधिकांश कहानियाँ नायिकाप्रधान है। नारी के विवध रूप, जो इन कहानियों में चित्रित हुए हैं, इस प्रकार है—

(अ) अतृप्त लालसाओं से विकृत व्यक्तित्व। यथा—'तीन निगाहों की एक तस्वीर' की दर्शना, 'कील और कसक' की रानी, 'ईसा के घर इन्सान' की एंजिला।

(आ) मृदुहृदया, स्नेहमयी, सहजविश्वासमयी कोमलांगी नारियाँ, जो विषम परिस्थितियों के समक्ष सहज ही घुटने टेक देती है। यथा—'घुटन' की मोना और प्रतिमा, 'चश्मे' की शैल, 'एक कमज़ोर लड़की की कहानी' की रूप, 'अभिनेता' की रंजना, 'गीत का चुम्बन' की कनिका।

(इ) व्यक्ति-वैचित्र्य से सम्पोषित ममतामयी वृद्धाएं। यथा—'अकेली' में सोमा बुआ, 'सयानी बुआ' में सयानी, 'मजबूरी' में बूढ़ी अम्मा।

(ई) अधिकार-सजग क्रान्तिकारी नारियाँ। यथा—'दीवार, बच्चे और बरसात' में नयी किरायेदारनी, 'हार' में दीपा।

'दो कलाकार' की अरुणा और चित्रा उक्त वर्गीकरण की अपवाद है। वस्तुतः लेखिका का उद्देश्य इनके चरित्रों की विरोधी प्रवृत्तियों की तुलना करना रहा है, अतः उसी के अनुरूप इन पात्राओ का चरित्रांकन हुआ है। चित्रा एक उत्कृष्ट चित्रकर्त्री है, जबकि अरुणा का लक्ष्य दीन-दुखियो की सेवा करना है। एक मृत भिखारिन के शरीर से चिपककर रोते निरीह बच्चों के दृश्य को चित्रा ने अपने चित्र में स्थान देकर धन एवं यश प्राप्त किया, जबकि अरुणा ने उन बच्चों को अपनी सन्तान की भाँति पाल-पोसकर सभ्य नागरिक की भाँति जीवन का अधिकार दिया। इसी प्रकार 'जीती बाजी की हार' में आशा, नलिनी और मुरला का चरित्र-विकास सोद्देश्य हुआ है।

'पंडित गजाधर शास्त्री', 'चश्मे', 'अनथाही गहराइयाँ', 'अभिनेता' और 'हार'

शीर्षक कतिपय अपवादस्वरूप कहानियों के अतिरिक्त लेखिका ने पुरुष पात्रों को प्रायः गौण स्थान दिया है। उदाहरणार्थ 'तीन निगाहो की एक तस्वीर' में हरीश, 'मजबूरी' में रामेश्वर, 'घुटन' में निरंजन, अरूप और प्रतिमा का पति, 'गीत का चुम्बन' में निखिल, 'कील और कसक' में कैलाश और शेखर, 'दो कलाकार' में मनोज, 'सयानी बुआ' में सयानी का पति और 'अकेली' में सोमा का पति प्रायः नायिकाओं के चरित्र-विकास में गौण उपादान बनकर प्रस्तुत हुए हैं। लेखिका ने पात्रो के चरित्रांकन में मनोवैज्ञानिक अन्तर्दृष्टि का परिचय दिया है। उनकी कहानियो में चरित्रों का मनोविश्लेपण प्रायः अन्य पुरुष की शैली मे हुआ है। वह पात्र जो अहं-रूप अर्थात् 'मैं' के रूप में कथानक प्रस्तुत करता है प्रायः गौण होता है और निरपेक्ष विश्लेपण के रूप में वह मुख्य पात्र की उद्दिष्ट विशेपताओं एवं परिस्थितियो को व्यक्त करता है। 'तीन निगाहों की एक तस्वीर' की नैना, 'सयानी बुआ' की 'मैं', 'ईसा के घर इन्सान' की 'मै', 'पंडित गजाधर शास्त्री' का 'मैं' और 'हार' की दीपा ऐसे ही पात्र-पात्राएँ है।

कथोपकथन

मन्नूजी की कहानियाँ मनोविश्लेपात्मक अवश्य है, किन्तु एक-जैसे विश्लेपण की नीरसता की अपेक्षा उन्होने अपनी कहानियों को नाटकीय सजीवता से अनुप्राणित किया है। लक्ष्य संवाद-योजना का भी वही है जो वर्णनात्मक एवं विश्लेपात्मक अशो का है अर्थात् केन्द्ररूप पात्र की विशिष्ट मनोवृत्ति को मुखर अभिव्यक्ति देना। कथोपकथन की प्रायः निम्नलिखित शैलियाँ आलोच्य कहानियों में प्राप्त होती हैं—

(अ) स्वतन्त्र कथोपकथन—'अनथाही गहराइयाँ' में सुनन्दा और शिवनाथ का अधोलिखित वार्त्तालाप इसका उदाहरण है—

"जरा ठहरो, एक बात पूछनी है। तुम ट्यूशन करना चाहोगे ?"

"चाहने से भी मिलेगा कहाँ ?" स्वर बुझा-सा था।

"मैंने एक जगह बात की है। तीसरी और चौथी कक्षा के दो बच्चे हैं, एक घण्टा रोज पढ़ा दोगे तो बीस दे देंगे—तुम्हारा खर्च ही निकलेगा।"

"यदि दिलवा दे तो सच आपकी बड़ी कृपा होगी, मैं इस समय बहुत ही कष्ट में हूँ। आप सोच भी नहीं सकतीं, इतने कष्ट में।"

"कृपा की क्या बात है, तुम काम करोगे और वे पैसे देंगे। चलो, यहाँ पास ही हैं। तुम्हे अभी मिला लाती हूँ।"[1]

(आ) पात्रों की गतिविधियों के बीच में प्रस्तुत किये गये संवाद—इस दृष्टि से 'मजबूरी' शीर्षक कहानी मे यह उदाहरण द्रष्टव्य है—

"अम्मा का काम समाप्त हुआ तो मिट्टी में सनी दोनों हथेलियों को जमीन पर

---

१. तीन निगाहों की एक तस्वीर, पृष्ठ ४८

पूरे जोर से टिकाते हुए उन्होंने उठने का प्रयत्न किया पर एक सर्द आह-सी उनके मुँह से निकलकर रह गई। वे उठ नहीं पाईं तो बड़े ही कातर स्वर में बोलीं, 'अरे नर्वदा, मुझे जरा उठा दे री, घुटने तो जैसे फिर जुड़ गये।'

'जुड़ेंगे तो सही। ऐसी सर्दी में जब से मिट्टी में सनी बैठी हो। बेटे-बहू आ रहे हैं तो ऐसी क्या नवाई हो रही है, सभी के घर आते हैं।' और नर्वदा ने अम्मा को सहारा देकर उठाया, उनके हाथ धुलाये और खटिया पर लिटा दिया।"[1]

(इ) वक्ता के कार्य-व्यापारों एवं मनोभावों के संकेत-संश्लिष्ट संवाद। यथा—

"अनार की प्लेट को अपनी ओर सरकाते हुए निर्मल ने कहा—'लाओ, मैं खुद खा लूंगा।' और वह बैठने का प्रयास करने लगा।

'क्यों, मेरे हाथ से क्या अनार की मिठास जाती रहती है?'—और प्लेट उसने वापस खींच ली।

'पगली।' निर्मल फिर लेट गया, और बड़े भावपूर्ण नेत्रों से घूमते हुए पंखे को निहारते हुए बोला—'पिताजी के सामने कुछ न कुछ बहाना तो बनाना ही होगा, शैल; पर मैं यहाँ से कहीं न जाऊँगा।'

मन ही मन निहाल होते हुए शैल ने बड़ी अदा से आँखें नचाते हुए कहा—'हाय राम! इतने बड़े होकर झूठ बोलोगे।' और अपनी ही बात पर वह खिलखिलाकर हँस पड़ी।"[2]

श्रीमती भंडारी की कहानियों में कथोपकथन यथाप्रसंग विनोद, व्यंग्य, स्नेह तथा जीवन के अन्य सहज तत्त्वों से अनुप्राणित रहे हैं। उन्होंने अशिक्षित स्त्रियों के वार्त्तालाप अत्यन्त स्वाभाविक एवं सजीव शैली में प्रस्तुत किये हैं। भावानुरूपता के अतिरिक्त भाषा की पात्रानुकूलता ने उनमें और भी अधिक रोचकता का संचार किया है। उदाहरणार्थ 'दीवार, बच्चे और बरसात' में भग्गो भाभी तथा अन्य स्त्रियों के सम्भाषण और 'अकेली' में सोमा बुआ की उक्तियाँ अवलोकनीय हैं। भग्गो भाभी की यह उक्ति प्रमाणस्वरूप उद्धरणीय है—

"लो, और सुनो। तो ये सब बेबात बातें हो गई। लुगाई घर के आदमी की तो परवा करे नहीं, और दूसरों के साथ मटरगस्ती करती फिरे, अखबारों में लिख लिखकर छपावै, दूसरे मर्दों के साथ चिट्ठी-पत्री करै, अब कब तक किसी के बर्दास्त होवै आखिर—बर्दास्त की भी एक हद होवै है। फिर एक महीने पहले कहे है कि बड़ी लड़ाई हुई दोनों में। वह कहे थी कि एक स्कूल में जगह खाली हुई है सो मैं तो काम करूँगी पढ़ाने का। आदमी ने भी साफ़ कह दी कि लुगाई से नौकरी कराके उसे इज्ज़त के कंकर नहीं कराने।

---

१. तीन निगाहों की एक तस्वीर, पृष्ठ १०४-१०५

२. एक पुरुष एक नारी, पृष्ठ १२५-१२६

जिस आदमी में कमाने की लियाकत नहीं होवै, वह अपनी लुगाई को भेजे कमाने के लिए। उन्ने तो बस कह दी कि नौकरी करूँगी, पर आदमी को तो घर की इज्जत का भी खियाल रखना पड़े कि नहीं। कहँ, खूब लड़ाई हुई दोनों में, और तब से ही बस अनबोला था। अब तुम्ही बताओ अम्मा, ये सब बातें 'आ बैल मुझे मार' वाली हैं कि नहीं? आदमी तुम्हें रानी की तरह रक्खै, तो तुम कहो कि नहीं, हम तो नौकरानी की तरह रहेंगे। औरत का तो काम ही होवै, घर-बार देखना, बाल-बच्चे रखना, पर बाल-बच्चे भी ऐसी औरतों के कहाँ से होवै, मरद पास आवै तो तुम्हें चिढ़ छूटे है, जाने मरा काटता होवै।"[1]

ऐसी उक्तियाँ कहीं कहीं दीर्घ अवश्य हैं, किन्तु अपनी विशिष्टता के कारण पाठक को ऊबने नहीं देतीं और पात्रों के मनोविज्ञान को समझने में सहयोग देती हैं।

देश-काल

श्रीमती मन्नू भंडारी की कहानियाँ प्रायः व्यक्ति-चरित्र के धरातल से निर्मित होकर मनोवैज्ञानिकता की दिशा में विकसित हुई हैं। वर्तमान युग में मुख्य रूप से ऐसी ही कहानियों की रचना की जा रही है जिनमें बाह्य देश-काल का स्वतन्त्र चित्रण नहीं होता, अपितु पात्रों के मानसिक वातावरण के पार्श्व में बाह्य वातावरण की अवतारणा की जाती है। मन्नू भंडारी ने भी देश-काल के अन्तर्गत परिस्थितियों का विश्लिष्ट चित्रांकन न करके पात्रों के कार्य-व्यापारों एवं चिन्तन की गतिविधियों के संश्लेष में उनकी अवतारणा की है। उनका यह चित्रण अपने में इतना अगाध है कि एक ओर उसमें बाह्य दृश्यों की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है और दूसरी ओर कहानी की सम्पूर्ण संवेदना सम्बद्ध पात्र की गतिविधि को लेकर पाठक के सम्मुख उद्भूत हुई है। 'घुटन' कहानी के प्रारम्भ की ये पंक्तियाँ ऐसी ही हैं—

"प्रतिमा ने एकाएक महसूस किया कि हवा एकदम रुक गई है और उमस बढ़ रही है। उसने उठकर बेबी के ऊपर से चादर हटा दी, बेबी पसीने से भीग गई थी। क्या मौसम है यहाँ का भी, कभी एकदम ठण्डक हो जाती है, और कभी बुरी तरह उमस हो जाती है। इस पल-पल बदलते मौसम में ही तो बेबी की सेहत ठीक नहीं रहती।

शून्य नजरों से वह आसमान को देखने लगी। नीला स्वच्छ आसमान और बेशुमार छिटके हुए तारे। उसने सोचा, लोग तारों भरे आसमान के सौन्दर्य की बड़ी चर्चा करते हैं, पर जाने क्यों उसे आसमान पर ये तारे भी अच्छे नहीं लगते, मानो आसमान के मुँह पर घनी चेचक निकल आई हो। दूसरे ही क्षण अपनी इस घिनौनी कल्पना पर वह खुद ही घृणा से भर उठी। उसे लगा उसका सौन्दर्य-बोध धीरे धीरे मरता जा रहा है। इन चार सालों में ही कितना परिवर्तन आ गया है उसके जीवन में, धीरे धीरे शायद सभी

१. मैं हार गई, पृष्ठ १२८–१२६

कुछ मर जाए। उसने आसमान से नजर हटा ली। करवट लेकर नीचे लॉन पर देखने लगी। 'सारी घास सूख गई। अब तो बारिश में ही हरियाली होगी।' जब वह यहां आई थी, कितने जतन से अपने बगीचे को सजाती और सँवारती थी, पर अब उसका मन नहीं लगता।"[१]

इस अवतरण मे प्रतिमा के मानसिक संघर्ष एवं बाह्य परिस्थिति का अन्योन्याश्रित चित्रण हुआ है, जिससे पाठक के मन में अनायास ही वर्ण्य का साकार चित्र अंकित हो जाता है। यह ध्यान देने योग्य बात है कि जिन कहानियों में लेखिका ने किन्ही विशिष्ट पात्रों को केन्द्र में रखकर व्यंग्य-चित्र अंकित किये है, उनमें अनायास ही समसामयिक देश-काल से सम्बद्ध संकेत प्रस्तुत हुए हैं। उदाहरणार्थ 'खोटे सिक्के' शीर्षक कहानी में सर्वहारा वर्ग के प्रति पूंजीपतियों की हृदयहीनता का व्यंग्यपूर्ण चित्रण हुआ है। 'अभिनेता और 'पंडित गजाधर शास्त्री' में भी लेखिका की दृष्टि इस शैली के अनुरूप रही है। 'मैं हार गई' में किसी व्यक्ति-चरित्र को लक्ष्य में नहीं रखा गया, अपितु बड़े मौलिक एवं प्रभावपूर्ण ढंग से नेताओं की दुर्बलताओं का पर्दाफाश किया गया है।

उद्देश्य

आलोच्य लेखिका ने कहानियों की रचना प्राय. दो रूपों में की है—(अ) समाज के परिवेश में व्यक्ति की आलोचना के धरातल से लिखी गई कहानियाँ, (आ) व्यक्ति-विशेष की मनःस्थिति को लेकर लिखी गई मनोवैज्ञानिक कहानियाँ। प्रथम प्रकार की कहानियों में सोद्देश्यता स्पष्ट है। इनमें चरित्रगत, नीतिगत अथवा समाजगत कोई न कोई लक्ष्य निश्चित रूप से अभिव्यक्त हुआ है। चश्मे, घुटन, अभिनेता, एक कमज़ोर लड़की की कहानी, ईसा के के घर इन्सान; दीवार, बच्चे और बरसात; खोटे सिक्के, गीत का चुम्बन, जीती बाजी की हार, श्मशान, मैं हार गई और दो कलाकार शीर्षक कहानियाँ इसी प्रकार की हैं। इनमे सामान्य जीवन-दर्शन और समाज के परिवेश में व्यक्ति-दर्शन की प्रवृत्तियाँ प्रमुख रही हैं। उदाहरणस्वरूप 'ईसा के घर इन्सान' शीर्षक कहानी का लक्ष्य यह सिद्ध करना है कि प्राकृतिक लालसाओं को कुंठित करने से व्यक्तित्व में विकार आ जाते हैं, अतः अतृप्त कामनाओं को तुष्ट करके सहज एवं स्वस्थ जीवन जीना चाहिये। लेखिका द्वारा अभिव्यंजित यह लक्ष्य फ्रायड के जीवन-दर्शन से प्रभावित है। इसी प्रकार 'घुटन' कहानी का लक्ष्य यह सिद्ध करना है कि समाज में सब व्यक्तियों की रुचि समान नहीं होती, अपितु कई बार प्रायः विरोधी ही होती है। 'घुटन' की एक पात्रा प्रतिमा यदि पति के वासनात्मक संसर्ग की अतिशयता से दुःखी है तो दूसरी पात्रा मोना अपनी माता की सतर्कता के फलस्वरूप प्रेमी के साहचर्य से वंचित रह जाने के कारण व्याकुल है। 'दो कलाकार' में भी दो सखियों के रुचि-वैभिन्न्य का प्रदर्शन है।

---

१. तीन निगाहों की एक तस्वीर, पृष्ठ ७३

इस कहानी में अरुणा के चरित्र में और 'हार' कहानी में दीपा के पति के चरित्र में लेखिका ने आदर्श की प्रतिष्ठा भी की है। उनकी मनोवैज्ञानिक कहानियों का मुख्य लक्ष्य व्यक्ति-वैचित्र्य की प्रतिष्ठा करना है। ये कहानियाँ प्रायः अनुभूति की प्रेरणा से लिखी गई हैं, इसी कारण इनके पात्र पाठकों की संवेदना को सहज ही जाग्रत कर देते हैं।

भाषा-शैली

श्रीमती भंडारी ने प्रायः गम्भीर और परिष्कृत भाषा-शैली का प्रयोग किया है। मनोवैज्ञानिक कहानियों के लिये यही शैली उपयुक्त भी है। अधिकांश कहानियों में उत्तम पुरुष की शैली को स्थान दिया गया है। 'तीन निगाहों की एक तस्वीर,' 'अकेली,' 'अनयाही गहराइयाँ,' 'हार', 'ईसा के घर इन्सान', 'सयानी बुआ', 'पंडित गजाधर शास्त्री' और 'मैं हार गई' में यही शैली प्रयुक्त हुई है। प्रायः इन सभी कहानियों में एक गौण पात्र प्रत्यक्ष दर्शक के रूप में समूची कहानी को व्यक्त करता है। उसके आत्मचरित्र का मुख्य केन्द्र वही पात्र है जिसकी मन.स्थिति का विश्लेषण उस कहानी का उद्दिष्ट है। अन्य कहानियों में अन्य पुरुष की शैली को प्रश्रय दिया गया है।

मनोविश्लेषात्मक होते हुए भी आलोच्य लेखिका की भाषा-शैली नीरस नहीं है, क्योंकि उन्होंने उसे आवश्यकता से अधिक अन्तर्मुखी नहीं बनने दिया है। इसके अतिरिक्त उन्होंने शैली में अवसरोचित नाटकीय सजीवता का भी संचरण किया है। शैली-वैविध्य की दृष्टि से 'अकेली', 'सयानी बुआ', 'पंडित गजाधर शास्त्री' और 'मजबूरी' शीर्षक कहानियाँ रेखाचित्र की शैली में लिखी गई हैं; 'दीवार, बच्चे और बरसात' शुद्ध नाटकीय शैली में विरचित है और 'तीन निगाहों की एक तस्वीर' में आत्मकथन शैली तथा डायरी शैली का समावेश हुआ है। 'चश्मे' शीर्षक कहानी शैली की दृष्टि से एक नूतन प्रयोग है। इसमें कथानायक निर्मल वर्मा और श्रीमती वर्मा का संवाद एवं कार्य-व्यापार प्रत्यक्ष है, किन्तु मुख्य घटनाओं की अवतारणा श्री वर्मा की स्मृति के माध्यम से हुई है। 'घुटन' और 'दो कलाकार' में तुलनात्मक शैली का प्रयोग है। 'मैं हार गई' शीर्षक कहानी में भी शैलीगत मौलिकता प्रशंसनीय है।

निष्कर्ष

निष्कर्ष-रूप में यह कथितव्य है कि सुश्री मन्नू भंडारी ने मौलिक कथानक, मनोवैज्ञानिक सूझ-बूझ, शैलीगत विविधता और भाषा की प्राणमयी ऋजुता के बल पर वर्तमान कहानी-साहित्य में महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया है। अन्य नये कहानीकारों की तुलना में उनकी कहानी-कला की उत्कृष्टता यह है कि वे पात्रों के अन्तर्मुखी व्यक्तित्व के साथ साथ उनके बाह्य कार्य-व्यापारों को भी उतना ही महत्त्व देती हैं, जिसके परिणामस्वरूप उनकी कहानियाँ अस्पष्टता अथवा दुरूहता के दोष से

मुक्त रहकर सजीवता एवं रोचकता से अनुप्राणित रहती हैं। एक अन्य उल्लेखनीय विशेषता यह है कि उन्होंने पश्चिम के व्यक्तिवैचित्र्यवाद और भारतीय रसवाद की ओर समान रूप से ध्यान दिया है। इसीलिए उनकी अधिकांश कहानियों में सौन्दर्यात्मक अभिरुचियों, मनोविज्ञान, विषय-बोध की प्रामाणिकता और कलात्मकता को सहज ही लक्षित किया जा सकता है।

श्रीमती शान्ति मेहरोत्रा

श्रीमती शान्ति मेहरोत्रा कवयित्री के अतिरिक्त सफल गद्य-लेखिका भी हैं। 'खुला आकाश : मेरे पंख' और 'सुरखाव के पर' मे उनकी गद्य-रचनाएँ संकलित हैं। 'सुरखाव के पर' में चवालीस गद्य-रचनाएँ हैं, किन्तु दूसरे संग्रह में बत्तीस गद्य-रचनाओं के अतिरिक्त चौबीस गीतों और इक्कीस कविताओं को भी स्थान प्राप्त हुआ है। गद्य के अन्तर्गत उन्होंने कहानियों, लघुकथाओं, एकालापो, स्केच अथवा रेखाचित्रों, हास्य-व्यंग्य-चित्रों और लेखों की रचना की है। लेखो के अतिरिक्त उक्त समस्त गद्य-रूपों का सम्बन्ध कथा-साहित्य से ही है, अतः इन सभी को ध्यान में रखकर लेखिका के कथा-शिल्प की समीक्षा यहाँ अभीष्ट रही है।

कथानक

श्रीमती मेहरोत्रा ने प्राय: व्यष्टि के धरातल से कथानक प्रस्तुत किये हैं। विशिष्ट परिस्थितियों से आवृत्त एक पात्र को चुनकर वे उसके परिवेश एवं आन्तरिक प्रतिक्रियाओं का इतना मार्मिक एवं अन्योन्याश्रित कथांकन करती हैं कि उस पात्र का पूर्ण मनोविज्ञान परिस्थितियों-सहित पाठकों के सम्मुख उभरकर आ जाता है। 'खुला आकाश : मेरे पंख' में संकलित 'मन की घाटी : दर्द के बादल', 'अपने-अपने दायरे', 'साँझ ढले', 'तल और सतह', 'तर्क से परे', 'सम्पदा लुट गई', 'छोटे हाथ : छोटी बात', 'सूने दिन : सूनी रातें', 'तब वह रो पड़ी', 'चट्टान के नीचे' और 'नीलाम' शीर्षक कहानियाँ इसी प्रकार की हैं। उदाहरणार्थ 'मन की घाटी : दर्द के बादल' में एक ऐसी वधु का चित्रण है जो सम्मिलित परिवार में रहती है और अपने अथक परिश्रम से सास, ननद, पति, देवर सबको प्रसन्न रखने की चेष्टा में संलग्न रहती है। फिर भी जहाँ कहीं तनिक चूक हुई कि उसकी स्थिति दयनीय हो जाती है। एक दिन थकान के कारण उठने में तनिक देर हो गई, तो सास ने व्यंग्य-तानों से छेद डाला और ननद ने मुँह फुला लिया। सास ने सीधे से यही नहीं बता-कर दिया कि क्या सब्जी बनेगी और जब वह उनकी आज्ञानुसार ननद, देवर, पति सबसे सब्जी के बारे में पूछने गई, तो सबने टाल दिया। परिणाम यह हुआ कि समय पर खाना नहीं बन सका, पति भूखे ही दफ़्तर चले गये और सास बड़ी सफाई से सब दोष वधु पर डालकर स्वयं एक ओर को हट गई।

लघुकथाओं में लेखिका ने एक घटना, एक उद्देश्य अथवा एक पात्र को लक्ष्य में

रखकर आकार में लघु, किन्तु प्रभाव में गम्भीर कथानकों की सृष्टि की है। 'मौली के तार', 'वर्षों का गज', 'सती', 'अभिव्यक्ति और अनुभव' तथा 'गिरवी रखी हुई आत्मा' शीर्षक कथाएँ इसी प्रकार की हैं। उदाहरणार्थ 'अभिव्यक्ति और अनुभव' में अभिजात वर्ग के एक लेखक का चित्रण है, जो तपती हुई कोलतार की सड़क पर जा रहे मजदूर के पाँवों के लिये कोई उपयुक्त उपमा खोजना चाहता है। जब वैसी कोई उपमा न सूझी तो उसने निश्चय किया कि वह स्वयं वैसी सड़क पर एक क्षण खड़ा होकर प्रत्यक्ष अनुभूति की सहायता से समुचित उपमान खोजेगा। वैसा करने पर उसकी जो अवस्था हुई, उसके बाद वह उस दिन लिखने योग्य ही कहाँ रह गया! शीघ्रता से बंगले में लौटा, पंखा तेज किया, तलवों में मरहम लगाई, खस के परदे तर किये और असह्य पीड़ा को भूलने के लिये नींद की गोली खाकर सो गया। कितने सीमित, किन्तु प्रभावपूर्ण शब्दों में लेखिका ने सर्वहारा वर्ग एवं अभिजात वर्ग के जीवन-वैषम्य की तुलना की है!

एकालापक कहानियों में सर्वत्र एक ही पात्र है, जो 'मैं' की शैली में अपनी किसी भावात्मक अनुभूति को व्यक्त करता हुआ घटनाओं एवं पात्रों की पूर्वापर सम्बन्ध से चर्चा करता है। 'प्रतीक्षा', 'सिन्दूर की रेखा', 'टूटा दर्पण : गहरी छाया', 'जिन्दगी : एक उलझी डोर' और 'दिवा-स्वप्न' शीर्षक गद्य-चित्र इसी शैली में लिखित हैं। इनमें से प्रत्येक में एक पात्र की कोई विशिष्ट भाव-दशा अपने सम्पूर्ण विकास में कथानक का मेरुदण्ड बनकर प्रस्तुत हुई है।

'सुरखाब के पर' में संगृहीत गद्य-चित्रों की विशेषता यह है कि उनमें हास्य-व्यंग्य का प्राधान्य है। लेखिका ने विविध विषयों को लेकर हास्य रस की सृष्टि की है, जिनमें से मुख्य ये हैं—पतियों की लापरवाही, भुलक्कड़ प्रवृत्ति, दीर्घसूत्रता, आलस्य, परनारी के प्रति रससिक्त भावना तथा अन्य ऐसी ही विचित्र प्रवृत्तियाँ, ज्योतिषियों तथा पंडों के ढोंगपूर्ण कार्य-व्यापार, अफ़सरों की चापलूसी के विविध ढंग, मेहमानों की मेज़बान के प्रति शोषक प्रवृत्ति, पड़ोसियों और मकानदारों की अनधिकार चेष्टायें, संपादकों के अज्ञान के फलस्वरूप अयोग्य व्यक्तियों का साहित्य में प्रवेश, नौकरों और महरियों के नखरे आदि। कहने का तात्पर्य यह है कि कहीं लेखिका ने सामयिक समस्याओं को लेकर हास्य-व्यंग्य की सृष्टि की है और कहीं व्यक्ति-वैचित्र्य को आधार बनाया है। इन कहानियों की विशेषता यह है कि इनमें व्यंग्य का पुट सरसता लिये है, उसमें कटुता कहीं भी नहीं है। 'पासा पलट गया', 'जनवासा', 'सौ का नोट', 'नया मकान', 'प्रदर्शिनी', 'यात्रा का भार', 'मालवेज ट्रैवेल लाइट' आदि अनेक कहानियाँ हास्य-व्यंग्य की दिशा में उत्कृष्ट रचनाएँ हैं, किन्तु 'सुरखाब के पर', 'इलाज का चक्कर', 'घर की पुताई', 'वैनिटी-बैग' आदि कतिपय कहानियों को पढ़कर उद्दिष्ट रसानुभूति उतनी नहीं होती। कहीं कहीं तो ऐसा प्रतीत होने लगता है मानो लेखिका ने हास्य-व्यंग्य की सायास योजना की है। फिर भी, यह कम महत्त्वपूर्ण नहीं है कि उन्होंने पारिवारिक कहानियों की बँधी हुई लीक से हटकर लेखिकाओं का ध्यान नए विषय-क्षेत्रों की ओर आकृष्ट किया है।

चरित्र-चित्रण

आलोच्य लेखिका ने कथानकों की भाँति चरित्र-चित्रण को भी वैविध्य से सम्पोपित किया है। जिन कथा-चित्रों को कहानियों की संज्ञा दी गई है, उनमें समाज के परिवेश में व्यक्ति की विशेष मनोदशा का मनोवैज्ञानिक चित्रण हुआ है। प्रायः ऐसी सभी कहानियों में केन्द्ररूप पात्र की परिस्थितियों, बहिर्मुख कार्य-व्यापारों एवं आन्तरिक संवेदनाओं का इतना सुगुम्फित एवं अनुपातमय कथांकन हुआ है कि प्रत्येक पात्र अपने परिवेश के साथ पाठक की चेतना में सजीव हो उठा है। उदाहरणार्थ 'साँझ ढले' की वृद्धा की मनोदशा उल्लेखनीय है। वृद्धावस्था की विडम्बना ने उसे खुजली का रोग देकर मीठे पदार्थ खाने से वंचित कर दिया है। उधर घर में गुलावजामुन-जैसे स्वादु पदार्थ बनते हैं। पोते-पोती को खाते देखकर उसके मुँह में पानी आ जाता है और अभिलाषा उसके शब्दों में व्यजित होकर ही रहती है। वैसा होने पर गुलावजामुन तो मिल जाता है, किन्तु बहू की झुँझलाहट, महाराजिन की व्यंग्योक्तियाँ, रोग की अत्यधिक वृद्धि, पुत्र का क्रोध एवं डॉक्टर का भय सब मिलकर उसकी स्थिति को दयनीय बना डालते हैं। जब रोग-परीक्षा के बाद, उसका अन्त समय निकट जानकर, डॉक्टर ने अपना निर्णय दे दिया कि अब वह सब-कुछ खा सकती है, तो उसका रोम रोम खिल गया। उसने विजय-गर्व से महाराजिन और वधु की ओर देखा। इसी प्रकार 'अपने-अपने दायरे' और 'छोटे हाथ : छोटी बात' शीर्षक कहानियो में एक-जैसी स्थिति में रहनेवाले बच्चों की मनःस्थितियों का मनोवैज्ञानिक अंकन हुआ है। बच्चे चाहते है कि अपने साथियों में खेलें किन्तु माता-पिता उन्हे अधिकतर घर में ही रहने को विवश करते है। घर में भी माता पिता के व्यस्त रहने के कारण उन्हें किसी से बात करने का संयोग नहीं मिलता, फलतः वे उदास रहते हैं।

एकालापों मे 'मैं' की शैली में पात्रों की संवेदनात्मक अनुभूतियों को आत्म-विश्लेषणपरक अभिव्यक्ति दी गई है। ऐसी प्रत्येक कहानी में प्रमुख पात्र की आत्मचेतना समस्त परिस्थितियों एवं गौण पात्रों का मेरुदण्ड बनकर व्यक्त हुई है। लघुकथाओं मे लेखिका ने चरित्र-चित्रण में सोद्देश्यता रखी है। इनमें पात्र प्रायः वर्गों के प्रतीक हैं और उनके चरित्र सकेत शैली में व्यक्त हुए हैं।

शान्ति जी की हास्य-व्यंग्यप्रधान कहानियो में प्रायः दो प्रकार के पात्र दृष्टिगत होते हैं—एक वे जो व्यक्ति-वैचित्र्य के कारण पाठकों का ध्यान आकृष्ट करते हैं और दूसरे वे जो समाज में व्याप्त वर्गों अथवा देशकालगत प्रवृत्तियों के प्रतीकरूप होकर सम्मुख आये हैं। वस्तुतः इन कहानियों में भी पात्र-रचना सोद्देश्य हुई है। कहीं तो लेखिका ने किसी पात्र की मूर्खता को लेकर हास्य की सृष्टि करनी चाही है और कही किसी की दुष्टता अथवा कांइयाँपन को लेकर। ये दोनों प्रकार के पात्र प्रायः कृत्रिम एवं चेष्टित हैं,

किन्तु ये ही इन कहानियों के नायक हैं। सहज पात्रों को भी इनमें स्थान प्राप्त हुआ है, किन्तु केवल गौण रूप में। उन्होंने मुख्यत: पात्रों की प्रवृत्तियों एवं परिस्थितियों का ही चित्रण किया है, परन्तु अनेक स्थलों पर उनकी आकृति एवं वेशभूषा के चित्रण द्वारा चरित्र-चित्रण में सजीवता एवं चित्रोपमता का समावेश किया गया है। यथा—"दूर क्यों जाते हैं, रामदास को ही लीजिए न ! धोबी की धुली हुई कमीज़, खाकी नेकर, ढेर-सा तेल ठोककर माथे पर दोनों ओर करीने से चिपकाये हुए बाल—देखने में लगता है जैसे किसी बड़े घर का लड़का हो। पन्द्रह-सोलह बरस का है, लेकिन चेहरे को बड़े-बूढ़ों की तरह गम्भीर बनाये रहने का बराबर प्रयास करता है। काम करता तो फुर्ती से है लेकिन इस भाव से जैसे किसी पर अहसान कर रहा हो।"[1]

कथोपकथन

श्रीमती मेहरोत्रा ने अपनी कहानियों को संवादों की रोचकता से विभूषित करके उनमें सजीवता का संचार किया है। उनके कथोपकथन देशकाल, पात्र की परिस्थिति और कहानी की गति के अनुकूल हैं। लघु एवं सुगठित होने के कारण वे कथानकों को गति देने के साथ साथ पात्रों की भावनाओं को मुखरित करने में विशेष उपयोगी रहे हैं। उनमें पात्र एवं प्रसंग के अनुरूप व्यंग्य, विनोद, स्नेह, घृणा, रोष, क्षोभ, हास-परिहास, मान, हठ, कातरता, राग-द्वेष आदि विभिन्न भावों की सारगर्भित अभिव्यक्ति हुई है। वार्तालाप करते समय पात्रों की मुख-मुद्रा एवं अन्य गतिविधियों के संकेतों ने प्राय: चित्रोपमता की सृष्टि की है। उदाहरणस्वरूप 'सम्पदा लुट गई' शीर्षक कहानी का नाटकीय प्रारम्भ द्रष्टव्य है—

"कुमुद ! एक बात बताती हूँ, किसी से कहियो मत ! तुझे मेरी कसम है।"

"क्या ?"

कृष्णा ने इधर-उधर देखकर कुमुद के कान में धीरे से कहा, "बुढ़िया के पास बहुत धन है।"

"सच ?" कुमुद की आँखें आश्चर्य से फैल गयी। मुँह खुला का खुला रह गया।

"और नहीं तो क्या झूठ ! मैंने अपनी आँखों से देखा है।"

कुमुद ने कृष्णा के पास खिसकते हुए आग्रह-भरे स्वर में पूछा, "पूरी बात बताओ, जीजी ! कैसे देखा, कब देखा, क्या देखा ?"[2]

लेखिका ने संवादों की भाषा-शैली में प्राय: पात्रानुकूलता का ध्यान रखा है। उदाहरणार्थ महरी की यह उक्ति अवलोकनीय है—"अब महरी प्रसन्न होकर बोली, "हाँ, और क्या ! सच पूछो अम्मा जी, जौन हमरी बहुरिया ऐसन हुकुम चलावै तौन हम ओहका

---

१. सुरखाब के पर, पृष्ठ १९६
२. खुला आकाश : मेरे पंख, पृष्ठ ७३

खड़े-खड़े निकार देई। विटवा पाछे कित्तव गुस्साय। विटियन वहुरियन का ढंग से चले का चाही। ई नाही कि उड़ गई फुर्र से।"[1] इस उक्ति में भाषा का स्वरूप तो द्रष्टव्य है ही विशेषता यह भी है कि लेखिका ने संवाद के माध्यम से परिवार की इस समस्याविशेष को अत्यन्त रोचक ढंग से प्रस्तुत किया है।

देशकाल

शान्ति जी ने अपनी कहानियों में वातावरण के प्रसंगानुकूल सजीव चित्र अंकित किये हैं। उदाहरणार्थ 'मन की घाटी : दर्द के बादल,' 'अपने-अपने दायरे,' 'साँझ ढले,' 'तर्क से परे,' 'नीम हकीम,' 'सम्पदा लुट गई' और 'बेटे की वापसी' शीर्षक कहानियों में घरेलू वातावरण का सजीव दृश्यांकन हुआ है। 'तब वह रो पड़ी' कहानी के प्रारम्भ में रेल के जनाने डिब्बे का अत्यन्त स्वाभाविक एवं सूक्ष्म चित्रण किया गया है। उदाहरणार्थ निम्नलिखित पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—"डब्बे के भीतर खासी चहल-पहल थी। एक ओर घुटनों से नीची फ्राक पहने और कन्धों पर सफेद दुपट्टा डाले कुछ ईसाई महिलाएँ सुबह की प्रार्थना के बाद आँखें बन्द करके तीखे स्वर में झूम झूमकर गा रही थी, 'जय जय ईसू, जय जय ईसू।' पास ही तीन-चार अधेड़ स्त्रियाँ बायीं ओर कमर में धोती का पल्ला खोंसे, पान चबाती हुईं, अपनी बहुओं की व्याख्या कर रही थीं और धीरे धीरे इस निष्कर्ष पर पहुँच रही थीं कि आजकल के लड़के बिलकुल बेहाथ हो गये हैं और बहुओं को बिगाड़ने में काफ़ी दिलचस्पी लेते हैं। बीच की सीट पर बैठी कॉलेज की पाँच-छह लड़कियों में बहस चल रही थी कि क्लास में सबसे भला लड़का कौन है। 'भले' से उनका आशय शायद उन इने-गिने लड़कों से था जो लड़कियों के सामने पड़ जाने पर लाज से गुलाबी हो या तो नोट-बुक के बँधे हुए फ़ीते को जल्दी जल्दी खोलकर फिर से बाँधने लगते हैं या मोजे ठीक करने के बहाने सिर झुका लेते हैं।"[2]

लघुकथाओं में लेखिका ने देशकाल अथवा वातावरण की अपेक्षा उद्देश्य की अभिव्यंजना पर अधिक बल दिया है। एकालापों में पात्रों के मानसिक चिन्तन के संश्लेष में बाह्य परिस्थितियों का उल्लेख हुआ है। ऐसे प्रसंगो मे वातावरण और पात्रों की गतिविधियों को पारस्परिक सन्दर्भसहित प्रस्तुत किया गया है। 'प्रतीक्षा' शीर्षक एकालाप के प्रारम्भ की ये पंक्तियाँ उदाहरणस्वरूप द्रष्टव्य हैं—"रात बहुत अँधेरी है। लेकिन आज पूर्णिमा भी होती तो मेरे लिए क्या अँधेरा कुछ घट जाता? दर्द कुछ बँट जाता? सूने घर पर छायी मनहूसियत कुछ कम हो जाती?...पता नहीं 'वे' सोये हैं या जाग रहे हैं, दबे पाँव चली आयी हूँ और खड़ी खड़ी तेरी राह देख रही हूँ।"[3]

---

१. सुरखाब के पर, पृष्ठ १५६
२. खुला आकाश : मेरे पंख, पृष्ठ १०१
३. खुला आकाश : मेरे पंख, पृष्ठ १६५

हास्य-व्यंग्यमयी कहानियों में परिस्थितियों के प्रत्यक्ष चित्र अत्यन्त विरल रहे है और वैसा होना उचित भी है, क्योंकि उन कहानियों के हल्के-फुल्के कथानकों में वैसे गम्भीर चित्र विषय से दूर जा पड़ते। फिर भी लेखिका ने हास्य-व्यंग्य की सृष्टि के लिए जिन विषयों का चयन किया है उनमें अनायास ही देशकालपरक सामयिक प्रवृत्तियो की व्यंग्यात्मक अभिव्यक्ति हो गई है। यथा—ज्योतिषियों के पाखण्ड, मातहतों द्वारा अफ़सरों की चापलूसी, सिफ़ारिश, नौकरों और महरियों के नख़रे, पड़ोसियों की अनधिकार चेष्टा, मकान मिलने की कठिनाइयाँ और मकान-मालिकों की चित्र-विचित्र प्रवृत्तियाँ, सम्पादकों की लापरवाही से साहित्य में अयोग्य व्यक्तियों का प्रवेश, वरपक्ष वालों की कन्यापक्षवालों पर धौंस आदि।

उद्देश्य

शान्ति मेहरोत्रा की कहानियाँ प्रायः सोद्देश्य हैं और उनमें अनुभूति की प्रेरणा सर्वत्र विद्यमान है। उनमें विषयगत वैविध्य के अनुरूप लक्ष्य की भावना भी विभिन्न शैलियों में अभिव्यंजित हुई है। जिन कहानियों में समाज के व्यक्तिविशेष की अनुभूतियों को व्यक्त किया गया है उनका लक्ष्य प्रायः यह प्रदर्शित करना है कि परिस्थिति-चक्र मनुष्य को कितना दीन, कितना कातर एवं कितना निरुपाय बना डालता है। इस कोटि की कहानियों में करुण रस की मार्मिकता का व्यापक अन्त.प्रसार रहा है। लघुकथाओं में तो सोद्देश्यता ही कहानी की समूची संवेदना का मेरुदण्ड बनकर प्रस्तुत हुई है। उदाहरणार्थ 'सती' कहानी में 'सती' के विषय में एक नूतन आदर्श की प्रतिष्ठा प्रमुख लक्ष्य है। कथानायिका कमली अन्य स्त्रियों के साथ टीलेवाले बाबा से अखंड सौभाग्यवती होने का वरदान माँगने जा रही थी, किन्तु इस विचार से बीच में ही लौट आई कि यदि वरदान सत्य हो गया तो उसके वियोग में दुःखी उसके पति का जीवन विषाक्त हो जाएगा। इससे तो अच्छा है कि जो भाग्य में लिखा हो, सो ही हो। यदि पति पहले मर गये तो वह जैसे भी होगा कष्टों को सह लेगी, किन्तु पति अन्त समय तक उसकी सेवाओं से वंचित न रहें तभी अच्छा है। इसी प्रकार 'अभिव्यक्ति और अनुभव', 'वर्षों का गज', 'गिरवी रखी हुई आत्मा' शीर्षक अन्य लघुकथाओं मे भी उद्देश्य की प्रेरणा सर्वोपरि रही है। एकालापों में पात्रों की आत्मानुभूति को मुखरित करना चरम उद्दिष्ट रहा है। हास्यप्रधान कहानियों का प्रमुख उद्देश्य पाठकों का मनोरंजन है और इसके लिए लेखिका ने जिन विषयों का चयन किया है (व्यक्तिवैचित्र्य अथवा समसामयिक अनैतिक प्रवृत्तियाँ), उनमें सूक्ष्म अनुभूति एवं व्यापक लोक-दर्शन, की प्रेरणाएँ अनिवार्यतः निहित हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि उनकी अधिकांश कहानियों में उद्देश्य की अभिव्यक्ति प्रायः यथार्थजन्य अनुभूतियों पर आवृत रही है, आदर्शवाद अथवा नैतिकता के दृष्टान्त-रूप मे नहीं।

भाषा-शैली

मेहरोत्रा जी की कहानियों में भाषा-शैली का भावानुरूप प्रयोग हुआ है। हास्य-

व्यंग्यप्रधान कहानियों में प्रायः हल्की-फुल्की, सरल एवं सुबोध भाषा का प्रयोग है जबकि अन्य कथा-चित्रों में गम्भीर एव परिष्कृत शब्दावली को स्थान दिया गया है। वर्णन एवं नाटकीयता के अनुपातमय समावेश से शैली प्रायः निखरे हुए प्रांजल रूप में प्रस्तुत हुई है। कहानियों और लघुकथाओं में प्रायः अन्य पुरुष की शैली का प्रयोग है, एकालापों में उत्तम पुरुष की शैली का, और हास्य-व्यंग्य-चित्रों में कहीं उक्त एक शैली के दर्शन होते हैं और कहीं दूसरी के। लेखिका की शैली का उल्लेखनीय गुण यह है कि उसमें वर्णनात्मक प्रसंगों में चित्रात्मक शैली की सजीवता का प्रायः संचार रहा है। इसी शैली के बल पर वे अनेकशः बिम्ब-विधान में सफल रही हैं। उदाहरणार्थ 'चट्टान के नीचे' शीर्षक कहानी के प्रारम्भ से उद्धृत अधोलिखित दृश्य-चित्रण अवलोकनीय है—

"दवाइयों की गन्ध में बसा अस्पताल, रोगियों से घिरा जीवन। नवजात शिशुओं को ममतामयी बाँहों से घेरे गौरवशालिनी माताएँ, ठण्डी लाशें, असाध्य रोगों पर विजय पाकर परिवार के बीच वापस लौटती प्रसन्न स्त्रियाँ, कर्त्तव्यों से बँधा मेरा कुँवारा यौवन। जैसे मैं उन सबके लिए थी, मेरे लिए कोई नहीं। असम्पृक्त, औरों के सुख से अछूती, औरों के दुःख से दूर। रोगियों के शरीर को जांचते हुए हाथ, चीरते-फाड़ते, मौत से निरन्तर लड़ते हुए हाथ, पराये शिशुओं को स्पर्श करते हाथ, स्पन्दनहीन, भावना-हीन हाथ।"[1]

आलोच्य कहानियों में प्रसंगानुकूल विविधता के दर्शन होते हैं—कहीं संकेतात्मक शैली है, कहीं भावात्मक, कहीं सरल एवं प्रसादगुणान्वित भाषा है और कहीं तनिक गम्भीर एवं परिष्कृत और कहीं चमत्कारपूर्ण एवं अलंकृत। एक उदाहरण देखिए— "जितनी गहरी लगन नवविवाहिता को अपने कपड़ों से, नक़ल करनेवाले फिसड्डी लड़के को पिछली कोनेवाली सीट से तथा नवयुवकों को सिगरेट के पैकेट से होती है, उससे कहीं गहरी लगन मातहत को अपने अफ़सर से होती है।"[2]

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि सुश्री शान्ति मेहरोत्रा ने भाव एवं अभिव्यक्ति दोनों क्षेत्रों मे विविधता को प्रश्रय दिया है। एक विशिष्ट दिशा में अपनी प्रतिभा का विकास करने की अपेक्षा उन्होंने समस्त प्रचलित कथा-रूपों को अपनी लेखनी का विषय बनाया है और भावानुरूप सशक्त अभिव्यक्ति के बल पर प्रायः सभी दिशाओं मे उन्हें किसी सीमा तक सफलता की उपलब्धि हुई है। गौरव की बात यह है कि करुण एवं हास्य दो विरोधी रसों की कथात्मक अभिव्यक्ति में वे समान रूप से सफल रही हैं। हास्य-व्यंग्य-पूर्ण कहानियों की लेखिका के रूप में उनकी प्रतिभा विशेष विकसित हुई है और इस दिशा मे उन्होंने हिन्दी-कथा-साहित्य में एक अभाव की पूर्ति की है। पुरुष कहानी-लेखकों ने तो इस दिशा में फिर भी ध्यान दिया है (सो भी विशेष नहीं), किन्तु नारी-लेखिकाओं

१. खुला आकाश : मेरे पंख, पृष्ठ १२७
२. सुरखाब के पर, पृष्ठ ५१

ने तो प्रायः इसकी उपेक्षा ही की है। अतः शान्ति मेहरोत्रा द्वारा प्रस्तुत की गई हास्य-व्यंग्य-कथाओं का महत्त्व स्वतःसिद्ध है। यद्यपि यह सत्य है कि कतिपय कहानियों में लेखिका द्वारा प्रस्तुत हास्य चेष्टित-सा प्रतीत होने लगता है, किन्तु सर्वत्र ऐसा नही है। फिर, इतनी बहुसंख्यक कहानियों में एक-आध कहानी वैसी श्रेष्ठ न भी हो तो उतनी खलती नही।

श्रीमती सरूपकुमारी बख्शी

श्रीमती सरूपकुमारी ने 'कौड़ियों का नाच', 'रेडियम के अक्षर' तथा 'निर्झर कन्या' शीर्षक तीन कहानी-संग्रहों की रचना की है। प्रत्येक कथा-संग्रह में दस कहानियों को स्थान प्राप्त हुआ है, जिनके नाम क्रमशः इस प्रकार हैं—

(अ) कौड़ियों का नाच—टूटा हुआ चिराग़, जंगीसिंह, लुटेरे का दान, प्लास्टिक की दुनिया, निराली शान, काश्मीरी मुहल्ला, तितलियों की सभा, फ़ैशन की घुड़दौड़, इन्सानियत का नकाब और कौड़ियों का नाच।

(आ) रेडियम के अक्षर—मशीन की पीड़ा, घर की बेटी, बाँके और बन्नो, काश्मीर का फूल, कजली का प्रेमी, शीशे की मेम, मास्टर जी, ठंडी मशीन, मशीनों के आँसू तथा रेडियम के अक्षर।

(इ) निर्झर कन्या—निर्झर कन्या, बन्नो की झाड़ू, नारी का आँचल, फीफी का फ़ैशन, चुनरिया तारों की, अयोग्य बेटा, सेंट की शीशी, कोकिला, बुलबुल और जीवन की सात समस्याएँ।

श्रीमती बख्शी की कहानी-कला के मूल्यांकन के लिए उक्त सभी कहानियों को एकसाथ दृष्टि में रखा जाएगा।

कथानक

लेखिका ने 'टूटा हुआ चिराग', 'जंगीसिंह', 'लुटेरे का दान', 'मास्टर जी' तथा 'ठंडी मशीन' शीर्षक कहानियों में रेखाचित्र और कहानी के समन्वित रूप को स्थान दिया है। 'प्लास्टिक की दुनिया', 'निराली शान', 'काश्मीरी मुहल्ला', 'तितलियों की सभा' और 'फ़ैशन की घुड़दौड़' में जहाँ यान्त्रिक सभ्यता की कृत्रिमता, खोखलेपन तथा ऊपरी दिखावे की प्रवृत्ति के प्रति तीव्र व्यंग्य है वहाँ घटनाओं के आकस्मिक आरोह-अवरोह अथवा रोचक कथोपकथन के द्वारा हास्य रस का भी सुन्दर परिपाक हुआ है। 'इन्सानियत का नक़ाब' तथा 'कौड़ियों का नाच' में भिन्न कथानकों द्वारा यह चित्रित किया गया है कि आधुनिकता के बहाव में मानव कितना पतित होता जा रहा है—यहाँ सभ्य वह है जो पार्टियों में बैठकर मद्यपान करे, अन्य व्यक्तियों का छिद्रान्वेषण कर उनका उपहास करे, रेसकोर्स में धन नष्ट करे आदि।

'मशीन की पीड़ा' तथा 'मशीन के आँसू' में आधुनिक यान्त्रिक सभ्यता के प्रति

मार्मिक व्यंग्य है। यन्त्र-युग ने मानव को भी एक यन्त्र बना डाला है, न उसमें विचार-शक्ति रही, न जीवन का आनन्द उठाने का समय तथा सुविधा, न अपनों के प्रति वह प्रेम और ममत्व जो कभी उस हृदय पर छाया रहता था। 'घर की बेटी' और 'बाँके और बन्नो' शीर्षक कहानियों में क्रमशः दीनानाथ और राजरानी तथा बाँके और बन्नो के मध्य दाम्पत्य-कलह, बाद के अनुताप और पारस्परिक सुलह के चित्रों को समान स्तर पर प्रस्तुत किया गया है, अन्तर केवल परिस्थितियों का है जिसे लेखिका ने कौशलपूर्वक ध्यान में रखा है। 'कश्मीर का फूल', 'कजली का प्रेमी', 'शीशे की मेम' तथा 'रेडियम के अक्षर' शीर्षक कहानियों में परिस्थिति-सापेक्ष सामान्य दुःख-सुखमय जीवन-चित्र अंकित किये गये हैं। इनमें यथार्थ-बोध और अनुभवजनित मार्मिकता को सहज ही देखा जा सकता है।

यों तो लेखिका की प्रायः समस्त कहानियों में घटनाएँ चरित्र-चित्रण के समक्ष गौण रही हैं, फिर भी 'निर्झर कन्या' की कहानियों में उक्त विशेषता सर्वाधिक द्रष्टव्य है। इस संग्रह की कहानियों को पढ़ते पढ़ते पाठक को स्पष्टतः आभास होने लगता है कि पात्रों की प्रवृत्तियों के विश्लेषणार्थ ही मानो घटना-प्रवाह आयोजित किया गया है। 'निर्झर कन्या' की सदैव हँसनेवाली झरना, 'बन्नो की झाड़ू' की तेजस्विनी जमादार-गृहिणी बन्नो (जो झाड़ू से ही जीवन की सब समस्यायें हल करती है), 'नारी का आँचल' की दुर्गा जो जीवन की विषम परिस्थितियों से संघर्ष करने के लिये सिर मुँडवाकर पुरुष-रूप में रहती है, 'फीफी का फ़ैशन' की फ़ैशनेबल फीफी, 'चुनरिया तारों की' की बालिका निशा, 'अयोग्य बेटा' का नायक रजीन्दर सिंह, 'सेंट की शीशी' की सेंट चुरानेवाली कुमकुम, 'कोकिला' की बालिका कोकिला (जो पशु-पक्षियों से अनन्य प्रेम करती है) और 'बुलबुल' की अनाथ बालिका बुलबुल (जो परदुःख से सहज ही द्रवित होती रहती है) आदि सभी पात्र-पात्राएँ ऐसे हैं जो अपनी विशिष्ट प्रवृत्तियों के कारण अनायास ही उक्त कहानियों में केन्द्र-रूप हो गये है। लेखिका ने अन्य दोनों कथा-संग्रहों की भाँति इन कहानियों में भी यथावसर आधुनिक सभ्यता की कृत्रिमता, अन्याय, घूस-खोरी, शोषण आदि प्रवृत्तियों पर व्यंग्य किये हैं। व्यंग्य की तीव्रता अथवा संवादों की अतिशयता अथवा शब्दाडम्बर के आवरण में अनेकशः कथानक कुछ दब-सा गया है, फिर भी लेखिका की कहानी-कला में प्रभावान्विति है—इस तथ्य को झुठलाया नहीं जा सकता। उनकी कहानियाँ अधिकांशतः रोचक, चमत्कारपूर्ण एवं मौलिक है और उनमें व्यंग्य के साथ हास्य की प्रवृत्ति भी प्रायः मुखरित रही है।

चरित्र-चित्रण

श्रीमती बख्शी ने पात्रों की वर्गगत एवं वैयक्तिक प्रवृत्तियों के चित्रण की ओर पर्याप्त ध्यान दिया है। समाज के उपेक्षित वर्ग के प्रति उनके अन्तस् में गहन संवेदना है। 'टूटा हुआ चिराग़' में फटेहाल लखनवी शायर, 'मशीन की पीड़ा' में भोला, 'मास्टर जी'

में मास्टर तुलसीराम तथा 'रेडियम के अक्षर' में केशव का जीवन-चित्रण इस प्रसंग में उल्लेखनीय है। इनमें सर्वाधिक मर्मस्पर्शी व्यक्तित्व मास्टर तुलसी राम का है। अपने उद्दण्ड शिष्यों के प्रति भी उनके हृदय में ममत्व का जो कोमल स्रोत विद्यमान रहता है, उससे पाठक का मन भी भीग उठता है। 'प्लास्टिक की दुनिया', 'निराली शान', 'तितलियों की सभा', 'फ़ैशन की घुड़दौड़', 'इन्सानियत का नक़ाब', 'कौड़ियो का नाच' तथा 'मशीन के आँसू' मे प्रमुख पात्र-पात्राओ को आधुनिक सभ्यता के प्रतिनिधियो के रूप में प्रस्तुत किया गया है। झूठे दिखावे और झूठी शान के पीछे पागलो की भाँति दौड़कर वास्तविकता से दूर भागना, फ़ैशन के चक्कर में अपना सर्वस्व लुटा देना, मद्यपान, क्लब, पार्टियों, रेसकोर्स आदि मे निःसंकोच भाग लेना, ऊपरी टीपटाप द्वारा अपने को अपनी आयु से छोटा दिखाने का प्रयत्न करना आदि उक्त पात्र-पात्राओ की प्रमुख प्रवृत्तियाँ हैं, जिन्हें लेखिका ने हास्य-व्यंग्यपूर्ण शैली में अंकित किया है। एक आधुनिका का चरित्र लेखिका के शब्दो मे उद्धरणीय है—

"डाली समाज की प्रेमिका है। विशेषकर जब से उन्होंने अपने पति को तलाक़ दे दिया है तब से तो वह बहुत प्रसिद्ध हो गई है। सुना है कि बहुत अमीर है और बड़े ठाठ से ज़िन्दगी बसर कर रही है। बंगला है, मोटर है, बैरा है। उनकी आमदनी का ज़रिया क्या है, यह किसी को मालूम नही है। उनकी आँखें सुन्दर हैं, होटल के साइन-बोर्ड की तरह चमकदार, शरीर छरहरा अँधेरे कमरों में जाने के लिये बनी हुई सीढ़ी की तरह घुमावदार। आवाज़ सुरीली जैसे शराबखाने के काउंटर पर सिक्कों की खनन-खनन।"[1]

'फीफी का फ़ैशन' तथा 'सेंट की शीशी' में फीफी तथा कुमकुम फ़ैशन की प्रवृत्ति को दूसरे ही ढंग से सन्तुष्ट करती हैं। फ़ैशन करके समाज में अपनी धाक जमाना तो उन्हें प्रिय है, किन्तु इसके लिये अपना धन व्यय करना उन्हें स्वीकार्य नहीं। अतः वे चोरी तथा छल द्वारा दूसरों को उल्लू बनाकर अपना उल्लू सीधा करती हैं। सरूपकुमारी जी पात्रों की दुर्बलताओं को भी सहानुभूति की दृष्टि से देखती है और इसी कारण वे उनकी प्रवृत्तियों का मनोवैज्ञानिक चित्रण करने में सफल हो सकी है। अन्य कहानियों में 'बन्नो की झाड़ू', 'नारी का आँचल', 'कोकिला' और 'बुलबुल' में क्रमशः बन्नो, दुर्गा, कोकिला और बुलबुल का व्यक्तित्व अत्यन्त सजीव रूप में उभरा है। यह कहना असंगत न होगा कि पुरुष पात्रों की अपेक्षा लेखिका नारी पात्राओं के चरित्र-चित्रण में अधिक सफल हो सकी हैं।

'लुटेरे का दान' मे मारवाड़ी सेठ का चरित्र एवं 'ठंडी मशीन' में सेठानी सोनाबाई का व्यक्तित्व उनके अपने ही संभाषणों में मुखर हो उठा है। सेठ जी की वाक्पटुता, कृपणता तथा शोषण-वृत्ति एवं सेठानी सोनाबाई की कार्यपटुता, वाग्वैदग्ध्य तथा बुद्धि-

१. कौड़ियों का नाच, पृष्ठ ५०

कौशल का परिचय पाकर पाठक दाँतों तले उँगली दबा लेता है। 'घर की बेटी' में राजरानी और 'बांके और बन्नो' में बन्नो का चरित्र मानो एक ही साँचे में ढाला गया है। ये दोनों जबान से तीखी होकर भी हृदय की बुरी नहीं है। दोनों ने ही क्रोध में अपने अपने पति पर प्रहार करके उन्हें घर से निकाल दिया था, किन्तु बाद में इन दोनों पात्राओं को अपने कृत्य पर अनुतप्त एवं संतप्त होते दिखाकर लेखिका ने उनके चरित्र को अतिवादी होने से बचा लिया है। वस्तुतः लेखिका के किसी भी पात्र अथवा पात्रा पर अस्वाभाविकता का आरोप नहीं लगाया जा सकता। वर्णन में स्वाभाविकता के लिए उन्होंने श्रीमती महादेवी वर्मा की भाँति पात्रों की बाह्य आकृति एवं वेशभूषा का चित्रात्मक वर्णन किया है। उदाहरणार्थ 'जंगीसिंह' तथा 'कौड़ियों का नाच' शीर्षक कहानियों से ये उद्धरण द्रष्टव्य हैं—

(अ) "उसका चेहरा भी खूब था···रंगसुर्ख दीदे झरोखों की तरह बड़े बड़े कटावदार। नाक मीनार की तरह लम्बी, कुछ घुमाव लिये हुए। गाल गुम्बद की तरह फूले हुए, खूब गोल गोल होंठ फाटक के कपाट की तरह मजबूत और दाँत नन्हे नन्हे दीयों की कतार। बड़ी बड़ी मूँछें, ऊपर की तरफ बटी हुई, नोकदार। सच कहूँ जनाब, ऐसा मालूम हुआ करता था जैसे इधर और उधर दो सिपाही अपने हाथ में नेजा लिये उस चेहरे की हिफाजत कर रहे हैं।"[१]

(आ) "लाला जी ठाठ में थे, जालीदार तंजेब का कुर्ता, सोने के बटन, खूब घेरदार और लट्ठे की सलवार, चोंचदार तिल्लाई जूती···"[२]

कथोपकथन

आलोच्य लेखिका ने चरित्र-चित्रण में सजीवता एवं स्पष्टता लाने के लिये वातावरण के अनुरूप रुचिर संवादों की योजना की है। उनके अधिकांश पात्रों को बोलने से इतना लगाव है कि जब भी बोलना आरम्भ करेंगे तब सामयिक, आध्यात्मिक अथवा साहित्यिक जिस किसी विषय पर बोलते ही जाएँगे, मानो धाराप्रवाह भाषण दे रहे हों। 'मशीन की पीडा' में माधव तथा 'रेडियम के अक्षर' में केशव की उक्तियाँ इसी प्रकार की हैं। ऐसे संवादों से पाठक चमत्कृत तो होता है, किन्तु ये कथानक के सहज प्रवाह में व्याघात उत्पन्न करते हैं और पाठक के मस्तिष्क पर बोझ की भाँति छा जाते हैं। जो संवाद इस प्रवृत्ति से मुक्त हैं उनकी उल्लेखनीय विशेषता यह है कि वे भावना एवं भाषा दोनों की दृष्टि से पात्रों के संस्कारों एवं स्तर के अनुकूल है। 'निराली शान' में सेविका चम्पा शुद्ध पूर्वी हिन्दी में बोलती है,[३] तो 'अयोग्य बेटा' में पात्र पंजाबी होने के कारण सदैव पंजाबी में ही वार्त्तालाप करते हैं। यथा—

१-२. कौड़ियों का नाच, पृष्ठ २५, ११५

३. देखिये 'कौड़ियों का नाच', पृष्ठ ६९

"वेजी, मैं रोट्टी नइयों खाणी," रजीन्दर ने कहा।

"तू रोट्टी नइयो खाणी। मैं तेरे वास्ते तन्दूर दी रोट्टी वणा के रखी ए। लस्सी दी गड़वी रिड़क-रिड़क के मेरी बाँह वी दुखदी पई ए।"

"ना वेजी, मैं लस्सी वजारों पी आया।"

"कोई गल नई, राजी। इक गिलास होर पी लै न। मुंह हाथ धो लै। छेत्ती कर न, पुत्तर" सरदारनी ने उसे पुचकारकर कहा।"[1]

'कौड़ियों का नाच' मे श्रीमती कमानी अपनी उक्तियों में लरकी, मैन, गयाँ (गया) आदि शब्दों का प्रयोग करती हैं,[2] तो 'ठंडी मशीन' में सेठानी सोनाबाई शुद्ध मारवाड़ी भाषा का प्रयोग करती हैं। उदाहरणार्थ उनकी अधोलिखित रोचक उक्ति अवलोकनीय है—

"जय विन्दणी !" वहू से वोली, "ई कोई आयो रहो सरकारी भेदियो करम फूटो। म्हांसू एक वात पूछो। वा पूछो कि आप टूथ पेस्ट करो या मंजण दातण। मैं बोल्यो आपाँ तो भाई दातण कर लेवाँ। फिर पूछवा लागो कि आपाँ मैज कुरसी पर खाओ वा अठणी-उठणी खा लेवो। तो मैं तो भाई कह दियो, किशाण री मेज कुरसी, उतरा नौकर काँ से लाऊँ। आपाँ तो सीदा-सादा चौका मां ही जीम लो। आप जादातर मोटर ऊँ जाओ या रिक्शा ऊँ, कूण सवारी आप वर्तो। ए वाई, म्हाने तो घणों डर लागो ई कोई होय इणकम टैक्सवालो, आयो है पूछला को तई कि आपणी आमदणी कतरी की होय और सामणे मोटर खड़ी हो। तो मां तो वासो कह दियो, अजी जाओ जी, किशी मोटर किशा रिक्शा, आपाँ तो भई वश मां चली जाओ और राम जी मोखलिया पैर दिया मैं कोण वास्ते जाऊँ शवारी मां। ए भाई शाव आप ही वताओ इतरा पैशा कांशे आये। और जो आपाँ ये मोटर देखो तो या तो मेरे वेटे की हो, सरकारी अफशर हो, हैसियत राखवो कै तई राखणी पाड़े। ईको अतरो इस्तीमाल करूं तो पिटरोल रों खर्चो न हो जाय। ए वाई, रहा कोई इणकम टिक्शवालो।"[3]

देशकाल

श्रीमती बख्शी ने अपनी कहानियों में निम्नलिखित सामयिक समस्याओं को स्थान दिया है—

(अ) पाश्चात्य सभ्यता ने भारतीय युवक-युवतियों को इस सीमा तक प्रभावित कर लिया है कि वे कृत्रिमता एवं दिखावे की ओर अधिकाधिक उन्मुख होकर अपने वास्तविक कर्त्तव्यों को भूलते जा रहे हैं। इस सन्दर्भ में उन्होंने फ़ैशन, कृत्रिम सौन्दर्य-

---

१. निर्झर कन्या, पृष्ठ ६३

२. देखिए 'कौड़ियों का नाच', पृष्ठ ११६

३. रेडियम के अक्षर, पृष्ठ ७८

प्रसाधन, क्लब, मद्यपान, रेसकोर्स आदि की अनेक स्थलों पर चर्चा की है।

(आ) भौतिक विज्ञान की यान्त्रिकता ने मानव के अन्तर का रस चूसकर उसे एक निर्जीव मशीन में परिवर्तित कर दिया है।

(इ) आर्थिक वैषम्य ने अभिजात वर्ग को सर्वहारा वर्ग का शोषण करने की सुविधा प्रदान करके उनके जीवन को अभावग्रस्त बना डाला है। इस प्रसंग में 'रेडियम के अक्षर' में वृद्ध रमजानी के प्रस्तुत शब्द उल्लेखनीय हैं—"यह समाज भी अच्छा मज़ाक है। जिनके हाथ में राज की बागडोर है, वे खिलाड़ी हैं और हम ग़रीब भूखे लोग हैं, काली, सफ़ेद गोटें, पिटने और पीटने के लिये।"[1]

(ई) चौथी समस्या नारी-वर्ग की है। आज के प्रगतिशील युग में नारी स्वतन्त्र जीवन को अपनाये या परिवार पर अपने स्वतन्त्र जीवन की आहुति दे? और यदि वह दोनों में समीकरण करे, तो कैसे?

(उ) आज विज्ञान ने साहित्य को सौ वर्ष पीछे छोड़ दिया है, यदि यही गति रही तो शीघ्र ही विज्ञान मानव को नष्ट कर देगा।

समस्याओं की इस विविधता से सहज ही अनुमान किया जा सकता है कि लेखिका की संग्रह-शक्ति और यथार्थ-बोध में कितनी गहराई है। ये समस्याएँ कुछ विशिष्ट कहानियों में ही न उभरकर प्रायः सभी कहानियों में प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप में अनुस्यूत रही है। इस पारस्परिकता का कारण यह है कि इन सभी के मूल में मानवता की प्रतिष्ठा का प्रश्न है।

उद्देश्य

यान्त्रिक युग की विभीषिकाओं का चित्रण आलोच्य कहानियों का प्रमुख लक्ष्य है। भौतिक विज्ञान के प्रगतिशील चरणों ने मानव के शरीर, हृदय तथा आत्मा को यन्त्रवत् बनाकर साहित्य को परास्त किया है, आर्थिक वैषम्य को जटिल बनाया है तथा नारी को पारिवारिक कर्त्तव्यों से विमुख किया है। विज्ञान अपने सर्जनात्मक एवं ध्वंसात्मक दोनों रूपों में मानव का शत्रु है, यही सन्देश इन कहानियों मे व्यंजित है। यद्यपि लेखिका ने यथार्थ के उग्र-कटु चित्र अंकित किये हैं और समाधान की दिशा मे कोई प्रत्यक्ष सुझाव नहीं दिया, तथापि आलोच्य कहानियों में यह ध्वनित है कि वे एक आदर्श संस्कृति का निर्माण करने के पक्ष में हैं। उनकी यह इच्छा नहीं है कि 'विज्ञान' के बढ़ते पग मानव की स्वतन्त्र सत्ता को लील जाएँ। इसी कारण वर्तमान परिस्थितियों के प्रति उनके मन मे गहरा क्षोभ निहित है।

भाषा-शैली

सरूपकुमारी जी अभिव्यंजना-पक्ष की सज्जा के प्रति विशेष जागरूक रही है।

---

१. रेडियम के अक्षर, पृष्ठ १२५

अनुप्रास की चकाचौंध, नवीन उपमाओं, चमत्कारपूर्ण रूपकों और धारावाहिक वर्णन-प्रवाह से युक्त उनकी भाषा-शैली में व्यंग्य एवं वक्रता का विशेष अन्तःप्रसार रहा है। शैली की दृष्टि से अधोलिखित उद्धरण अवेक्षणीय है—

"उसने शीशा और कंघा ताकचे पर रख दिया और नजर की चोर-बत्ती चारों ओर घुमाई। सूर्य की फीकी-फीकी सी रौशनी टकों पर विकने वाली वेश्या के समान उसके मैले-कुचैले बिस्तर पर लोटकर, फूलदार नीले ट्रंक को टटोलकर ताकचे पर रखे शीशे में अपनी ही चमक से चुहलकर, सिर के झटके से अँधेरा बिखेरकर खिड़की के रास्ते गली में निकल भागी थी।"[1]

आलोच्य कहानियों में व्यावहारिक एवं रोचक शब्दावली को स्थान प्राप्त हुआ है। मुसलमान पात्रों के प्रसंग में गुफ्तगू, आवाद, खुद, अदीब, खफ्तुल हवास आदि उर्दू-फ़ारसी के शब्दों; अशिक्षित पात्रों की उक्तियों में लम्बरी बदमास, दुर्दसा, टेम, सहर आदि विकृतियों; पाश्चात्य सभ्यता में रंगे पात्रों के कथनों में माई डियर, हाइड्रोजन आदि शब्दों तथा इसी प्रकार सिन्धी, मारवाड़ी आदि विभिन्न पात्रों के प्रसंग में विभिन्न प्रान्तीय भाषाओं के शब्दो को लेखिका ने अपनी भाषा में मिश्रित किया है। गद्य-भाषा में अनुप्रासमयी शैली की सृष्टि करने में उन्हें विशेष रुचि है। उनकी कहानियों में पग पग पर ऐसे उद्धरण प्राप्य हैं। यथा—

(अ) "इतने में बाबा पहुँच गये। हम सबको फटकारा। चन्दू की चंदिया पर हल्की-सी चपत लगाई और माफी माँगकर मेहमान को फ़र्श पर बैठाया।"[2]

(आ) "एक एक कर सबको निकाला गया और उनके स्थान पर मल्लो मालिन, चुन्नो चपरासिन, बन्नो जमादारिन, मोती मिसिराइन और कल्लो चौकीदारिन की सेना भर ली गई।"[3]

लेखिका की शैली अधिकांशतः चित्रात्मक है, यहाँ तक कि नेत्रों के समक्ष एक सजीव चित्र अंकित हो जाता है। उदाहरणार्थ निम्नलिखित उद्धरण अवलोकनीय हैं—

(अ) "सोडे की बोतलें जन्न से खुल रही थीं, बियर झलक रही थी, काउंटर पर सिक्के खनखना रहे थे, हँसी ठट्ठा हो रहा था।"[4]

(आ) "बिम्मो ने निम्मी की चोटी पकड़ ली, निम्मी ने उसके बाल नोच लिये, बिम्मो ने निम्मी की ओढ़नी चीर डाली, निम्मी ने उसका मुँह छील दिया। उसने उसकी कापी फाड़कर फेंक दी, इसने उसकी गुड़िया पटक दी। एक ने दूसरे की कलाई मरोड़ दी,

---

१. रेडियम के अक्षर, पृष्ठ १-२
२. कौड़ियों का नाच, पृष्ठ ५
३. रेडियम के अक्षर, पृष्ठ २८
४. रेडियम के अक्षर, पृष्ठ ११५

दूसरी ने उसकी गरदन पकड़ ली।"[१]

इसके अतिरिक्त लेखिका ने कतिपय स्थलों पर तुक-साम्य द्वारा भाषा में चमत्कार की सृष्टि का प्रयास किया है। यथा —"वास्तविक बात यह थी कि वह ऐसी कन्या को पत्नी बनाना चाहता था जो उसके लिए लाये साइकिल, अंगूठी और बटन और लाये चाँदी की छड़ी, सोने की घड़ी, मोती की लड़ी।"[२] इसी प्रकार उन्होंने अनेक स्थलों पर मौलिक उपमाओं की खोज की है, जिनमें रोचकता भी सहज विद्यमान है। निम्नलिखित उद्धरण इसी प्रवृत्ति के परिचायक हैं—

(अ) "खद्दर की टोपी देखते ही उनका दिल गुड़ुप से डूब गया जैसे झील के पानी में पत्थर का डला।"[३]

(आ) "फटी हुई पाग के अन्दर से निकला हुआ उसका सिर ऐसा लग रहा था जैसे कोई बम का गोला हो, अभी फूटनेवाला।"[४]

(इ) "पशुओं के बिना खेत सूना रहता है जैसे बच्चों के बिना घर या नौकाओं के बिना झील।"[५]

लेखिका की शैली में व्यंग्य की छाया प्रायः सर्वत्र व्याप्त रही है। यह व्यंग्य मुख्य रूप से शोषक वर्ग के प्रति है। कतिपय प्रसंगों में व्यंग्य विशेष तीव्र एवं स्पष्ट रूप से मुखर हो उठा है। यथा—"दीनू के कानों में हवा की सीटियाँ- सी बज रही थीं। वह बार बार कान को ढाँपने का यत्न कर रहा था किन्तु कालर फटा हुआ था। फटा हुआ न होता तो सभा के मेम्बर मिस्टर भवानीदास उस लड़के को अपना कोट भला क्यों देने लगे थे? दुर्गा भी किसी प्रकार अपनी हड्डियों को चादर की गठरी में, जो उसे शोभा रानी ने दी थी, छिपाये बैठा था। चादर फटी हुई थी, तभी तो उसे ओढ़ने को मिल गई वरना कौन गृहलक्ष्मी इतनी बुद्धू होगी कि घर की अच्छी चादर एक नौकर को दे डालेगी!"[६] इस प्रकार लेखिका की भाषा में सर्वत्र एक चुलबुलापन है। ऐसे कतिपय स्थल कृत्रिम-से प्रतीत होते हैं, किन्तु सर्वत्र ऐसा नहीं है; और जहाँ सामान्य वर्णनात्मक भाषा का प्रयोग हुआ है वहाँ निश्चय ही उसमें सहज सौन्दर्य का समावेश हो गया है।

सरूपकुमारी जी की कहानियों का विश्लेषण करने पर निष्कर्षस्वरूप यह कहा जा सकता है कि उन्होंने यथार्थ के कटु चित्र अंकित करके परोक्षतः आदर्श संस्कृति की सृष्टि पर बल दिया है। पात्रों के चयन में उन्होंने सूक्ष्म दृष्टि का परिचय दिया है और उनकी विशेषताओं का वे इतना सांगोपांग एवं चित्रात्मक रूप प्रस्तुत कर सकी है, जैसा अधिकांश महिला-कलाकारों की रचनाओं में प्रायः दुर्लभ रहा है। उनकी कहानियाँ चरित्र-

---

१. रेडियम के अक्षर, पृष्ठ १७
२. रेडियम के अक्षर, पृष्ठ १७
३-४-५. निर्झर कन्या, पृष्ठ २४,३४,८४
६. निर्झर कन्या, पृष्ठ ३४-३५

प्रधान है और पात्रों के साकार चित्र प्रस्तुत करने में उन्हें सराहनीय सफलता मिली है। इसका श्रेय उनकी शैली को भी दिया जाना चाहिए, जिसमें ताज़गी, सादगी और शक्ति का एकसाथ समावेश है। सत्य यह है कि उनकी कहानियों में कथानक ने शिल्प को नए मोड़ दिए हैं और दूसरी ओर कथा-शिल्प की सुचारुता से कथानक की शोभा बढ़ गई है। इसका यह अर्थ नहीं है कि इन कहानियों में कथानक और शैली आत्मनिर्भर नहीं हैं। वस्तुतः ये दोनों तत्त्व सर्वत्र एक-दूसरे के विकास में सहायक रहे हैं।

●

सुश्री सोमा वीरा

सुश्री सोमा वीरा के कहानी-संग्रह 'धरती की बेटी' में तेंतीस कहानियाँ संकलित हैं, जिनमें से अधिकांश इससे पूर्व पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी थीं। इन कहानियों का विषयानुसार वर्गीकरण निम्नलिखित है—

१. वृद्ध-विवाह—संघर्ष, सीमा, त्रिन्दिया।
२. पर्दा-प्रथा—दृष्टिदान, अधूरी गाँठ।
३. पति का पत्नी के प्रति अन्याय—ढहती कगारें, सूनी माँग, भूख।
४. दहेज-प्रथा—राख की पुड़िया।
५. ज्योतिष सम्बन्धी अन्धविश्वास—भाग्य रेखा, अटूट अमंगल, जन्म कुण्डली।
६. विधवा-विवाह—रेत के टीले।
७. पति-पत्नी के मध्य अनबन, मतभेद, समझौता आदि—अधूरी गाँठ, संकरी राहें, लाल बोतल पीले पत्ते, भग्न स्वप्न, मंजिल का दीप, अम्मा पापा कटारे ले।
८. सास, सौतेली सास और विमाता का दुर्व्यवहार—आत्महत्या, घर की लाज, डगमगाते चरण, अवगुंठन।
९. समाजगत वैषम्य (वर्गभेद, वर्णभेद)—आँधी का आम, सलोनी अँगूठी, मिट्टी के खिलौने, ममता, बाजी, स्वर्णदीप, सुभागी, धरती की बेटी।
१०. रेखाचित्र—सन्ध्या लहरें और वे दोनों।

ये कहानियाँ सामाजिक हैं और इनमें नारी-हृदय की भावनाओं को सरल एवं स्वाभाविक अभिव्यक्ति प्रदान की गई है।

कथानक

विषयवस्तु के उक्त वर्गीकरण से यह स्पष्ट है कि लेखिका ने प्रायः रूढ़िगत विषयों को ही स्थान दिया है, किन्तु विषय-प्रस्तुति नितान्त मौलिक रूप में की है। उन्होंने परम्परागत बेड़ियों को अनिवार्य विवशता के रूप में अंगीकार नहीं किया, अपितु उनके विरुद्ध सशक्त विद्रोह की प्रेरणा दी है। कथानकों की यथार्थ परिस्थितियाँ लेखिका के मनोनुकूल साँचे में ढलकर उज्ज्वल हो उठी हैं और यही इन कहानियों की सबसे बड़ी सफलता है। इनमें भावना की अपेक्षा बौद्धिकता का प्राधान्य है। इसका प्रमाण यह है कि अधिकांश कहानियों में अन्त में संयोग तथा हृदय-परिवर्तन के द्वारा घटनाओं को अप्रत्याशित मोड़

दे दिये गये हैं। कतिपय कहानियों में यह परिवर्तन स्वाभाविक गति से हुआ है, फलत: वे सफल रही है। आत्महत्या, संकरी राहें, लाल बोतल पीले पत्ते, ममता, भग्न स्वप्न, मिट्टी के खिलौने, अवगुंठन, विन्दिया और धरती की बेटी ऐसी ही कथाएँ हैं। कुछ कहानियो में हृदय-परिवर्तन के लिये उचित पृष्ठभूमि प्रस्तुत नहीं की गई, फलत: एसा प्रतीत होने लगता है कि कथानक को वलपूर्वक एक निश्चित दिशा में ठेला गया है। राख की पुड़िया, अधूरी गाँठ, स्वर्णदीप और दृष्टिदान शीर्षक कहानियाँ इसी प्रकार की हैं। इनमे कथानक की समाप्ति अप्रत्याशित रूप में हुई है, फलत: इनमें शिथिलता एवं अस्वाभाविकता आ गई है।

नारी होने के नाते लेखिका ने नारी-जीवन की परिस्थितियों एवं प्रवृत्तियों का अत्यन्त सहज चित्रण किया है। इस प्रसंग में श्री विष्णु प्रभाकर की यह उक्ति द्रष्टव्य है—"इन कहानियों में हिन्दू मध्यवित्त परिवार की नारी के अपमान, वेदना और पीड़ा के जो चित्र उभरे हैं वे मर्म को छूते हैं। नारी के इस दुखद इतिहास का वे जिस प्रभावशाली ढंग से चित्रण कर पाई हैं उतना शायद इतिहासकार नहीं कर पाता।"[1] अधिकांश कहानियों में घरेलू जीवन के चित्र अंकित किये गये हैं जो नितान्त सजीव एवं स्वाभाविक हैं। 'संध्या, लहरे और वे दोनों' तथा 'वाजी' शीर्षक कहानियाँ क्रमश: इस तथ्य की प्रत्यायक हैं कि सोमा जी रेखाचित्र एवं व्यंग्यचित्र की रचना में भी सिद्धहस्त हैं। 'जन्म-कुण्डली', 'भाग्य रेखा' एव 'अटूट अमंगल' के कथानको को देखते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि ये तीन स्वतन्त्र कहानियाँ न होकर एक उपन्यास के तीन परिच्छेद है। इसका कारण यह है कि इनमें मुख्य पात्रों के नाम वही हैं और घटनाओं में परस्पर पूर्वापर सम्बन्ध है। इन्हें लघु उपन्यास का रूप देने में लेखिका को सफलता मिल सकती थी। इनमें हिन्दू-परिवारों की रूढ़िवादिता और प्रचलित अन्धविश्वासों का चित्रण हुआ है। उन्होने कुछ कहानियों मे वाल-मनोविज्ञान की भी सुन्दर झाँकी प्रस्तुत की है। 'संघर्ष', 'आंधी का आम', 'सलोनी', 'मिट्टी के खिलौने' और 'अम्मा पापा कटारे ले' शीर्षक कहानियाँ इस दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। उनकी कहानियों की एक सामान्य विशेषता यह है कि प्रारम्भ नाटकीय और जिज्ञासावर्द्धक हैं, विकास मे सहजता एवं स्वाभाविकता है तथा अन्त में सांकेतिकता का आश्रय लिया गया है। उन्होंने प्राय: कथानक के समाहार में निर्णयात्मक पद्धति नही अपनायी है, अपितु उन्हे ऐसे विन्दु पर समाप्त किया है कि पाठक को कथान्त में कल्पना का अवसर मिलता है। इससे उनकी कहानी-कला में अतिरिक्त प्राणवत्ता आ गई है।

चरित्र-चित्रण

सुश्री सोमा वीरा ने मुख्य रूप से नारी की परिस्थितियों एवं मनोवृत्तियों का

---

१. धरती की बेटी, दो शब्द, पृष्ठ १

चित्रण किया है। उनकी अधिकांश नायिकाएँ शक्ति, साहस और स्नेह की प्रतिमूर्ति हैं। यथा—'संघर्ष' की रेणु, 'ढहती कगारें' की मंजु, 'दृष्टिदान' की शुभा, 'अधूरी गाँठ' की ललिता, 'अँगूठी' की रूपला, 'रेत के टीले' की गौरी, 'भाग्य रेखा' की शुभा, 'स्वर्णदीप' की रागिनी, 'डगमगाते चरण' की रेणु, 'धरती की बेटी' की चित्रा और 'भाई-बहन' की सुनीता। अधिकांश पात्राएँ परिस्थितिजन्य विवशताओं एवं विषमताओं के विरुद्ध लोहा लेती हैं, किन्तु ऐसे प्रसंगों में वे कटुता का परिचय न देकर त्याग, तप एवं स्नेह के बल पर विजय प्राप्त करती हैं और यही कारण है कि उनका गौरव पाठकों की दृष्टि में बहुत ऊँचा उठ जाता है। रेणु, मंजु, शुभा और गौरी ऐसी ही गरिमामयी पात्राएँ हैं।

लेखिका ने नारी को केवल मधुर रूपों में ही प्रस्तुत नहीं किया, अपितु विमाता, सास, सौतेली सास, अभिजातवर्गीय दम्भ की प्रतीकरूपा रमणी आदि के रूप में उन्होंने नारी के कटु-कर्कश रूप भी प्रस्तुत किये हैं। यथा—'संघर्ष' में माँ, 'रेत के टीले' में गौरी की सास, 'आत्महत्या' में दिवाकर की माँ, 'लाल बोतल पीले पत्ते' में हरिमति, 'अवगुण्ठन' में रोहित की माँ, 'घर की लाज' में हेमा की सौतेली सास, 'डगमगाते चरण' में शरद की माँ और 'आँधी का आम' में वीना। इन पात्राओं की रचना सर्वत्र सोद्देश्य हुई है, क्योंकि इनका दुर्व्यवहार नायिकाओं की विषम परिस्थितियों का हेतुस्वरूप रहा है। 'भूख' की राधा और 'सीमा' की सीमा ऐसी ही नायिकाएँ हैं जिन्होंने अत्याचार एवं अन्याय को विवश भाव से अंगीकार कर आत्मा का हनन किया है अन्यथा सभी कहानियों की नायिकाएँ साधना की दृढ़ता एवं विद्रोह की तीव्रता से परिस्थितियों को अपने अनुकूल बनाकर ही दम लेती हैं।

इन कहानियों में पुरुष-पात्र विविध रूपों में अंकित हुए है। संघर्ष, ढहती कगारें, सूनी माँग, अधूरी गाँठ, भूख, अँगूठी, सीमा, बिन्दिया, राख की पुड़िया आदि कहानियों में एक न एक पात्र ऐसा अवश्य है जिसे अन्यायी, अत्याचारी अथवा प्रतारक की संज्ञा दी जा सकती है। ऐसे दुष्ट पात्रों की सामान्य प्रवृत्ति यह है कि नारी के तप-त्याग अथवा शक्ति के सम्मुख उनका हृदय-परिवर्तन हो जाता है और वे उदारचेता हो जाते है। 'दृष्टिदान' में शुभा के श्वसुर, 'राख की पुड़िया' में सेठ जी, 'अधूरी गाँठ' में रमेश, 'बिन्दिया' में सेठ किशोरीलाल और 'स्वर्णदीप' में हिमांशु का चरित्र ऐसा ही है। पात्रों के इस आकस्मिक भाव-परिवर्तन से कहीं कहीं कथानक में अस्वाभाविकता भी लक्षित होती है। दूसरी ओर लेखिका ने ऐसे पात्रों को भी स्थान दिया है जो स्नेही विचारक, उद्धारक अथवा रक्षक के रूप में सामने आए हैं। 'ढहती कगारें' में उपेन्द्र, 'अँगूठी' में रतन, 'सीमा' मे अमर और 'रेत के टीले' में रवीन्द्र का व्यक्तित्व इसी कोटि का है। वर्गभेद तथा अन्य विषमताओ के दिग्दर्शन के उद्देश्य से लेखिका ने पात्रों का जो चरित्र प्रस्तुत किया है वह प्रायः पिष्टपेषित है अर्थात् निम्नवर्गीय पात्रों का व्यक्तित्व हीन भाव से युक्त तथा दीनता से ग्रसित है तथा अभिजातवर्गीय पात्रों का चरित्र दम्भ एवं स्वार्थ का उदाहरण है। कतिपय पात्र इसके अपवाद भी हैं: 'स्वर्णदीप' में रागिनी

हरिजन बालक चन्दन से तनिक भी घृणा नहीं करती और 'धरती की बेटी' में चित्रा चमारों और भंगियो के उपचार मे रुचि लेती है। चरित्र-चित्रण के प्रसंग मे 'घर की लाज' से यह रेखाचित्र अवलोकनीय है, जिसमें पात्र की आकृति का रोचक विवरण दिया गया है—

"नरेश को देख देखकर मुझे विधाता के हथौड़े पर विस्मय हुआ करता है। क्या ही अनोखी-अद्भुत शक्लें ठोका करता है वह अपने कारखाने में बैठे बैठे। चिपटे चिपटे गाल, छोटा-सा माथा, जिस पर सदा बालों की लटे झूलती रहती हैं। छोटी छोटी आँखें, जो सदा गढ़ो में धँसी रहती हैं। भिण्डी-जैसी नाक, तुरई-जैसी कमर, कोई कमर में एक घूँसा जमा दे खेल खेल मे, तो उसके सूखे सूखे पैरों में इतनी भी शक्ति नहीं कि उसके शरीर का बोझ ही सँभाल सके। जो बुशशर्ट वह पहनता है, उससे वह अच्छा-खासा, चलता-फिरता चिड़ियाघर, या किसी सिनेमा का पोस्टर लगा करता है। जिस पर मजा यह कि वह अपने दल के लड़कों में सबसे अधिक सुन्दर, सबसे अधिक फ़ैशनेबुल माना जाता है।"[1]

कथोपकथन

सुश्री सोमा वीरा ने पात्रानुरूप सहज, संक्षिप्त एवं सारगर्भित संवादों का विधान किया है, जो कथानकों के सरल विकास में साधक सिद्ध हुए हैं। इन संवादो की सर्वोपरि विशेषता यह है कि ये पात्रों की चरित्रगत प्रवृत्तियों की अभिव्यक्ति में विशेष सहायक रहे है। उदाहरणार्थ 'सीमा' कहानी में उषा और उसकी सौतेली माँ के वे वार्त्तालाप उद्धरणीय हैं जिनमे उषा की विद्रोहपूर्ण भावनाओं और सीमा के धीर-गम्भीर व्यक्तित्व की नाटकीय अभिव्यक्ति हुई है। उषा को इस बात का अत्यन्त क्षोभ था कि सीमा ने अपनी इच्छा के विरुद्ध उसके वृद्ध पिता को पति-रूप में ग्रहण कर लिया—

"सब कुछ जानती हो, समझती हो छोटी माँ। फिर भी तुमने यह अन्याय होने दिया ? क्यों नहीं प्रतिकार किया इसका ? क्यो नही समझाया अपनी ताई जी को ?'

'युग युग से चलते चले आये संस्कारों ने मेरे मुख पर ताला डाल दिया था। जब तक हमारे घरेलू वातावरण में परिवर्तन नहीं होता···।'

'घरेलू वातावरण का नाम न लो मेरे सामने।' अग्निशिखा-सी भभक उठी थी उषा, 'वातावरण बनानेवाले भी तो हम ही हैं न ? यदि मैं होती तुम्हारे स्थान पर···'

बात अधूरी छोड़ उसे चुप रह जाते देख, सीमा ने कुछ मुस्कराकर पूछा था 'तो क्या करती तुम ?' शीश झुका कुछ सोचने लगी थी उषा। सहसा वह समझ न सकी थी कि क्या उत्तर दे। फिर कुछ सोचते-से स्वर में कहा था—'ऐसी स्थिति में मैं क्या करती, यह इस समय मैं कैसे कहूँ। किन्तु इतना मैं निश्चित रूप से जानती हूँ कि तुम्हारी तरह

1. धरती की बेटी, पृष्ठ २२६

मैं बलि का बकरा बनना स्वीकार न कर लेती। समय सब कुछ सुझा देता मुझे। मैं विद्रोह कर बैठती, किन्तु किसी वासना के भूखे की भूख बुझाने के लिए..."[1]

इस संग्रह की कहानियों में पति-पत्नी, सास-वधु, पिता-पुत्र, माता-पुत्री आदि के घरेलू वार्तालाप इतने स्वाभाविक रूप में अंकित हैं कि कहीं भी आयास अथवा कृत्रिमता की छाया नहीं है। वस्तुस्थिति तो यह है कि इन कहानियों की सजीवता का मुख्य आधार इनमें आयोजित संवाद ही हैं। लेखिका ने वर्णनात्मक शैली का अत्यल्प प्रयोग किया है, मुख्यतः नाटकीयता से विभूषित होकर ही उनकी कहानियाँ विकसित हुई है। ऐसी स्थिति में यह स्वाभाविक ही है कि अन्य तत्त्व अधिकांशतः सवादों के माध्यम से विकसित हुए हैं। उदाहरणस्वरूप 'डगमगाते चरण' शीर्षक कहानी में बेकारी से निराश पति से वार्त्तालाप करती हुई रेणु की अधोलिखित उक्ति में देशकालविषयक तथ्य की कितनी सहज एवं अवसरोचित अभिव्यक्ति हुई है—

"रेणु अधीर हो उठी। बोली—'क्यों तुम मेरी बातो को बालकों की बकवास के समान उड़ा देना चाहते हो, शरद ! एक बात बता सकते हो तुम मुझे ? अपना घर-बार खोकर, प्रिय-परिजनों से विलग होकर, कितने अभागे प्राणी आये पंजाब से। परन्तु उनमें से क्या किसी ने भी आत्महत्या की ? किसी के सामने अपने दुखड़े रोये। तुम्हारे देशी नौजवान बेकार घूमते रहे। वे शेरदिल अपना अपना धन्धा चुन, सभी प्रकार के व्यवसायो में अपनी धाक जमा बैठे। बोलो शरद, शेर-पंजाब रणजीत की किस सन्तान को तुमने भीख माँगते देखा ? मूँगफली बेचकर, चाट का ठेला लगाकर, उन्होंने नये सिरे से जीवन आरम्भ किया, किन्तु आश नहीं छोड़ी।"[2]

भावों की दृष्टि से आलोच्य कथोपकथन सर्वत्र पात्रानुकूल हैं, किन्तु भाषा की दृष्टि से वे प्रायः एकरूप हैं। शिक्षित-अशिक्षित, उच्चवर्गीय-निम्नवर्गीय, सेवक-स्वामी सब प्रकार के पात्र एक-जैसी भाषा का प्रयोग करते हैं। हाँ, शैली अर्थात् 'टोन' सबकी भिन्न है और यह होना भी चाहिए था।

देशकाल

सुश्री सोमा ने कहानियों में दो प्रकार की समस्याओं का चित्रण किया है—एक वे जिनका सम्बन्ध मुख्य रूप से नारी से है और दूसरी वे जो समाज में व्याप्त वर्णगत एवं वर्गगत वैषम्य की ओर संकेत करती हैं। प्रथम प्रकार की समस्याओं में मुख्य ये हैं—वृद्ध-विवाह, पर्दा-प्रथा, विधवा के सारहीन जीवन की नीरसता, दहेज-प्रथा, अन्धविश्वास, पत्नी के प्रति पति का दुर्व्यवहार तथा सास, सौतेली सास एवं विमाता की अनीति। ये समस्याएँ विगत शताब्दी तक भारत की ज्वलन्त समस्याएँ थीं और आज भी न केवल गाँवों और कस्बों में, अपितु नगरों में भी कम से कम बीस प्रतिशत घर ऐसे हैं जहाँ

१-२. धरती की बेटी, पृष्ठ ८१, २४७

परम्परागत रूढ़ियाँ हिन्दू-नारी के जीवन को विषाक्त किये हैं। सोमा वीरा की कहानियों की विशेषता यह है कि उनमें रूढ़ियों का यथातथ्य चित्रण मात्र ही नहीं किया गया, अपितु उन पर सशक्त प्रहार किये गये हैं। उदाहरणार्थ 'संघर्ष' की नायिका रेणु को जब यह ज्ञात होता है कि सौतेली माता की प्रेरणा से उसके पिता एक तीसवर्षीय दुहेजू वर से उसका विवाह करने जा रहे हैं तब वह भावी वर को पत्र लिखती है, जिसका एक अंश इस प्रकार है—

"एक प्रश्न का उत्तर यदि आप सच्चे दिल से दे सकें तो सारी नारी जाति, समस्त पुरुष वर्ग को, सम्पूर्ण उत्तरदायित्व से मुक्त कर देगी। यदि आपका प्रथम विवाह एक तीस वर्ष की प्रौढ़ा, दो नन्हें बालकों की माँ से होना निश्चित हुआ होता, तो क्या आप सहर्ष उस विवाह की अनुमति दे देते ? और क्या आज आप ऐसी दुखिया को सहर्ष अंगीकार करने को तैयार हैं ?'[1]

रेणु के उक्त पत्र ने दिलीप की आत्मा को झकझोर डाला और प्रत्युत्तर में उसने उसे बहन मानकर क्षमा-याचना की। श्री विष्णु प्रभाकर के शब्दों में, "ये कहानियाँ विवशता का ही चित्रण नहीं करतीं, विवशता से लोहा लेने की प्रेरणा भी देती है।"[2] दूसरे प्रकार की सामाजिक समस्याएँ जिन्हें लेखिका ने प्रायः अंकित किया है, ये हैं— वर्गभेद, जातिभेद, ऊँच-नीच, छुआछूत। इनसे सम्बद्ध कहानियों में कहीं व्यंग्य है तो कहीं तुलना, कहीं यथार्थ है तो कहीं आदर्श, कहीं आकस्मिकता है और कहीं संयोग। उन्होंने बाह्य संघर्ष और अन्तर्द्वन्द्व की अपेक्षा परिस्थितियों के अनायास प्रभाव एवं आकस्मिक हृदय-परिवर्तन के द्वारा समस्याओं के समाधान प्रस्तुत किये है, और यह विशेषता अनेक कहानियों में उनकी कला की दुर्बलता बनकर प्रकट हुई है।

उद्देश्य

शोषण, अन्याय एवं भेदभाव के विरुद्ध विद्रोह सोमा वीरा की कहानियों का मूल स्वर है और यही उनका लक्ष्य भी है, जो उनकी कहानियों में बड़ी कुशलता से व्यंजित हुआ है। सैद्धान्तिक रूप से तो वह युग अब लद गया जब नारी जाति को पुरुषों के अन्याय सहने पड़ते थे, पूँजीपतियों द्वारा सर्वहारा वर्ग का अपमान होता था और हरिजनों को अस्पृश्य समझा जाता था, किन्तु व्यावहारिक रूप से उस युग की छाप अभी पूर्णतः लुप्त नहीं हुई है। वृद्ध-विवाह, दहेज-प्रथा, पर्दा-प्रथा, परम्परागत अन्धविश्वास, धार्मिक बाह्याडम्बर आदि कुप्रवृत्तियाँ हिन्दू-समाज को भीतर से खोखला किये हैं और जातिभेद, वर्गभेद, उच्च वर्ग का दम्भ, निम्न वर्ग की हीनता आदि कीटाणुओं ने उसे बाहर से ग्रसित कर रखा है। लेखिका का लक्ष्य यह है कि समाज की जर्जरता तथा

---

१. धरती की बेटी, पृष्ठ ६
२. देखिए 'धरती की बेटी', दो शब्द

अन्धकार का नाश करके ज्ञान एवं समरसता का प्रकाश किया जाए। इस दृष्टि से उनकी कहानियाँ निश्चय ही पाठकों के लिये प्रेरणा-स्रोत एवं शक्ति-पुंज हैं। उन्होंने परिस्थितियों के यथार्थ चित्र अंकित किये है और प्रायः उन्हें आदर्शोन्मुख रखते हुए समाधान की दिशा में प्रेरणा दी है। किन्तु, महत्त्वपूर्ण बात यह है कि उन्होंने आदर्श के दिशा-संकेत मात्र दिये हैं। उपदेश देना, अथवा प्रत्यक्ष कथन द्वारा उद्देश्य को स्पष्ट करके कहानियों के सौन्दर्य को क्षीण कर देना, उनकी प्रवृत्ति नहीं है।

भाषा-शैली

सोमा जी की कहानियों की भाषा आडम्बरशून्य, सक्षम एवं प्रभावमयी है। अभिव्यक्ति की सरलता और सहजता उनकी कहानियों की सर्वाधिक उल्लेखनीय शक्ति है। आकार की दृष्टि से उनके अनेक वाक्य लघु होते हैं, किन्तु प्रभाव की दृष्टि से वे नावक के तीर की भाँति अगाध है। पात्रों के मानस-मन्थन को व्यक्त करते समय लेखिका ने यत्र-तत्र वर्णनात्मक शैली का प्रयोग किया है, अन्यथा प्रमुख रूप से नाटकीयता एवं चित्रात्मकता का संयोग रहा है। चित्रात्मक अभिव्यक्ति का सजीव उदाहरण द्रष्टव्य है—

"सभी के अधरों पर हँसी थी, आँखों में चमक थी, चाल में उमंग थी। सभी दुकेले थे। हरेक के साथ कोई न कोई चल रहा था—एक दूसरे से छेड़खानी करते, शालीनतापूर्वक संग संग चलते, या स्नेह से हाथ में हाथ बाँधे, वे सब न जाने कहाँ कहाँ से आये थे, और न जाने कहाँ लौट जानेवाले थे।

उन्हीं के बीच वह बूढ़ा भी था—

निःसंग ! एकाकी ! नीरव !

ज़िन्दगी के भार से मानो उसकी कमर भी झुकने लगी थी। छाती पर दोनों हाथ बाँधे, वह अकेला चुपचाप, अपने विचारों में डूबा-सा, एक एक कदम आगे सरक रहा था।"[१]

भाषा के अलंकरण की प्रवृत्ति लेखिका की नहीं रही, किन्तु अत्यन्त विरल स्थलों पर अनायास ही अलंकारों का समावेश हो गया है। उदाहरणार्थ यह उत्प्रेक्षा कितनी मौलिक है—"दीदी की सिसकियाँ एकदम थम गईं मानो किसी ने लैमनेड की उफनती हुई बोतल में डाट लगा दी हो।"[२] कुछ कहानियों में व्यंग्य का सुन्दर पुट है, किन्तु उसका सम्बन्ध शैली की अपेक्षा कथागत घटनाओं एवं परिस्थितियों से अधिक है। लेखिका की अभिव्यंजना-शैली के विषय में श्री विष्णु प्रभाकर के इस मत को उद्धृत करना पर्याप्त होगा—"भाषा सरल, अकृत्रिम और छटा के यत्न से अछूती है; इसीलिए गहरा प्रभाव छोड़ती है। अभिव्यक्ति में भी व्यर्थ का आवेश नहीं है, अतिरेक और आडम्बर भी नहीं है; इसीलिए वे अनायास ही मन को छू जाती हैं। ये कहानियाँ पढकर चित्त उदात्त होता

१-२. धरती की बेटी, पृष्ठ ६६,३

है। लगता है जैसे स्वस्थ लेखनी से निकले हुए कुछ प्रेरणादायक चित्र देख लिए हों। वस्तुतः सरलता इन कहानियों की बहुत बड़ी शक्ति है।"[१]

निष्कर्ष

अन्त में यह कहना उचित होगा कि सुश्री सोमा वीरा की कहानियाँ शक्ति और प्रकाश की प्रेरिका हैं। परम्परागत विषयों को अपनाकर भी उन्होंने सजीव एवं सशक्त कथा-चित्र अंकित किये है। सरलता उनकी कहानियों की मुख्य शक्ति है और रोचकता उनका विशेष गुण है। उनके द्वारा चित्रित समस्याएँ प्रायः पिष्टपेषित हैं, किन्तु उनके समाधान समसामयिक प्रवृत्तियों के अनुरूप हैं। समाज की जर्जर मान्यताओं पर मृदुता, किन्तु दृढ़ता, से प्रहार उक्त कहानियों का लक्ष्य है। वर्णनगत स्वाभाविकता एवं नाटकीयता उनकी भाषा-शैली के ऐसे गुण हैं जिनके फलस्वरूप अभिव्यक्ति में आडम्बर का अभाव रहा है। जागरूक प्रतिभा, अनुभूति की विविधता और परिष्कृत रुचि के योग से वे अपनी कहानियों में मौलिकता, स्थायित्व आदि गुणों को ला सकी हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

---

१. देखिये 'धरती की बेटी', दो शब्द, पृष्ठ ३

द्वितीय प्रकरण

स्वातंत्र्योत्तर युग की अन्य कहानी-लेखिकाएँ

वर्तमान युग में कहानी-लेखन की ओर बहुसंख्यक महिलाओं की रुचि रही है। सत्यवती मल्लिक, रजनी पनिकर, मन्नू भंडारी प्रभृति मुख्य लेखिकाओं के अतिरिक्त इस युग में निम्नलिखित अड़तीस लेखिकाओं ने भी हिन्दी-कहानी के विकास-क्रम में योग दिया है—सुश्री चारुशीला मित्रा, सावित्री सिंह 'किरण', इन्दुमती, हीरादेवी चतुर्वेदी, कौशल्या अश्क, शीला शर्मा, मालती ढिंडा, राजकुमारी शिवपुरी, तारा पोतदार, सीतादेवी, नमिता लुम्बा, प्रकाशवती नारायण, लीला अवस्थी, किरणकुमारी गुप्ता, उषा सक्सेना 'माधवी', सत्यवती देवी भैया, पुष्पा भारती, राधिका जौहरी, पुष्पा महाजन, रीता, शकुन्तला देवी, शकुन्तला शर्मा, इन्दिरा 'नूपुर', मालती परूलकर, शान्ति जोशी, विमला रैना, पद्मावती पटरथ, सीता, विपुला देवी, कान्ता सिन्हा, उषा प्रियम्वदा, उषा, आशा रानी 'अशु', सुमन कारलकर, विजयलक्ष्मी गौर, रत्ना थापा, अणिमा सिंह, कृष्णा सोवती।

कहानी-लेखिकाओं का उपर्युक्त क्रम-निर्धारण उनके कथा-संग्रहों के प्रकाशन-काल के आधार पर किया गया है, यद्यपि इनमें से अधिकांश लेखिकाओं की कहानियाँ पत्र-पत्रिकाओं में आगे-पीछे प्रकाशित होती रही हैं। सभी लेखिकाओं के विषय में यह जानना कठिन है कि उनकी प्रथम कहानी कब प्रकाशित हुई थी, अतः हमने कथा-संग्रहों को ही प्रमाण माना है और प्रकाशन-काल का वहाँ भी उल्लेख न होने पर अनुमान का आधार लिया है। इन लेखिकाओं में से अधिकांश का एक एक कहानी-संग्रह प्रकाश में आया है। इस विषय में केवल ये अपवाद है—मालती ढिंडा और सत्यवती देवी भैया के दो दो कथा-संग्रह उपलब्ध हैं तथा कृष्णा सोवती का कथा-संकलन प्रकाशित न होने पर भी यहाँ उनकी बहुचर्चित कहानी 'तिन पहाड़' की समीक्षा की गई है। कहानी-लेखिकाओं की संख्या को भी अड़तीस या चालीस तक ही सीमित नहीं किया जा सकता, क्योंकि वर्तमान युग में अनेक नई प्रतिभाओं का उदय हो रहा है। कुछ ऐसी प्रसिद्ध लेखिकाएँ भी हैं जिन्होंने सशक्त कहानियों की रचना तो की है, किन्तु पत्र-पत्रिकाओं में बिखरी हुई होने के कारण उनकी कहानियों का क्रमपूर्वक मूल्यांकन न तो सुविधाजनक है और न ही इससे उनकी विकासोन्मुख प्रतिभा का सही मूल्यांकन हो सकेगा। ऐसी लेखिकाओं में प्रमुख हैं—वसन्त प्रभा, प्रिया कपूर, शिवानी, शशिप्रभा शास्त्री और शान्ति भटनागर। तथापि यह उल्लेखनीय है कि इन्होंने भी अन्य समकालीन लेखिकाओं की भाँति मुख्यतः सामाजिक

कहानियों की ही रचना की है और हिन्दी-कहानी के विकास में किसी उल्लेखनीय नवीनता का परिचय नही दिया है। अतः इस युग की बहुसंख्यक कहानी-लेखिकाओ की प्रवृत्तियो के अनुशीलन के लिए उक्त अड़तीस लेखिकाओं की कहानी-कला का मूल्यांकन पर्याप्त होगा।

१. सुश्री चारुशीला मित्रा

सुश्री चारुशीला मूलतः बंगला-लेखिका है, किन्तु उन्होंने 'त्रिशूल' में अपनी तीन दीर्घाकार हिन्दी-कहानियों (शूल में फूल, बलिदान, दो सखी) को संकलित किया है। इनमें प्रेम के सुख-दुःखमय चित्रों के अतिरिक्त सामाजिक समस्याओं का भी निरूपण किया गया है। विषय-प्रतिपादन में रोचकता लाने के लिए लेखिका ने एक ओर घटनाओ के आरोह-अवरोह पर विशेष ध्यान दिया है और दूसरी ओर घटना-विधान में सरसता और सोद्देश्यता पर भी उनकी समन्वयात्मक दृष्टि रही है। 'शूल में फूल' और 'दो सखी' घटनाप्रधान कहानियाँ है, किन्तु 'बलिदान' में गणिका सावित्री के चरित्रोत्कर्ष द्वारा चरित्र-चित्रण को प्रधानता दी गई है। यह कहानी प्रारम्भ में किंचित् शिथिल प्रतीत होती है, किन्तु बाद में कथानक की गम्भीरता तथा सावित्री के उज्ज्वल चरित्रांकन से लेखिका ने इस दोष का पर्याप्त सीमा तक मार्जन कर लिया है। सावित्री के अतिरिक्त 'शूल में फूल' में उमा तथा 'दो सखी' मे कल्याणी और शिवानी के चरित्र भी सजीव बन पड़े है। चरित्र-चित्रण में स्पष्टता लाने के लिये लेखिका ने कथोपकथन की सजीवता और सारवत्ता की ओर भी यथोचित ध्यान दिया है। देशकाल की दृष्टि से 'बलिदान' तथा 'दो सखी' उल्लेखनीय कहानियाँ हैं। इनमें क्रमशः समाज में वेश्या के स्थान तथा दहेज-प्रथा के कुपरिणाम पर गम्भीरतापूर्वक विचार किया गया है। वातावरण में स्पष्टता और प्रभावान्विति लाने के लिये लेखिका ने 'बलिदान' में कलकत्ता के विभिन्न दृश्यों (हावड़ा-पुल, बाजारों की भीड़, वेश्याओं के कोठे आदि) का विस्तार से वर्णन किया है।[1] समाज के यथार्थ एवं आदर्श चित्र अंकित करके पाठकों को शिवत्व की प्रेरणा देना इन कहानियों का प्रमुख लक्ष्य है। इसीलिए इनमें अनुभूति की गम्भीरता और चिन्तन की सजगता को प्रायः देखा जा सकता है।

आलोच्य कहानियों का दुर्बल पक्ष यह है कि इनमें अभिव्यंजना सम्बन्धी सतत जागरूकता का अभाव है। अहिन्दीभाषी होने के कारण लेखिका की भाषा में अनेक अशुद्धियाँ लक्षित की जा सकती हैं। वर्तनी विषयक अशुद्धियों (कुर्शी, दुसरे, ससूर, बाबु, मूर्छित आदि)[2] के अतिरिक्त उन्होंने वाक्य-विन्यास में भी प्रायः लिंग, वचन तथा सर्वनाम सम्बन्धी भूलें की हैं। 'हरिजीवन को भी जिद सवार हुआ,' 'घर की चारो ओर मैंने नज़र

---

१. देखिये 'त्रिशूल', पृष्ठ ५०-५३

२. देखिये 'त्रिशूल', पृष्ठ २०, ४५, ८०, ६५, १०५

दौड़ाया', 'आप मुझे उद्धार करना चाहते हैं' आदि वाक्य' इसी प्रकार के हैं। साधारणतः ये भूलें अक्षम्य हैं, किन्तु लेखिका के बंगभाषी होने के कारण हमें उनकी भाषा-शैली का उदार दृष्टि से मूल्यांकन करना होगा। भाषागत अशुद्धियों की उपेक्षा करके यदि हम भावगत संवेदना और शैलीगत माधुर्य को लक्ष्य में रखकर उनकी कहानियों का मूल्यांकन करें, तो हमें निराश न होना पड़ेगा।

२. कुमारी सावित्री सिंह 'किरण'

कुमारी सावित्री सिंह ने 'सप्त किरण' शीर्षक कृति में सात कहानियों को स्थान दिया है, जिनका क्रम इस प्रकार है—बहन का हृदय, जय-विजय, जीवन का अन्त, परदेशी. उसमें दया थी, खानदान की लाज, प्रेम की वेदी पर। इससे पूर्व उनका कविता-संग्रह 'ढलते आँसू' प्रकाशित हो चुका था, फलतः उन्होंने गद्य में भी कवित्व के निर्वाह का मनोहारी प्रयत्न किया है। इसीलिए उनकी अधिकांश कहानियों का प्रारम्भ प्रकृति-सौन्दर्य की ललित अभिव्यंजना से हुआ है और कथा-वृत्त के अन्तर्गत भी प्रकृति को महत्त्वपूर्ण स्थान मिला है। उदाहरणार्थ 'जीवन का अन्त' शीर्षक कहानी की ये पंक्तियाँ देखिए—"वर्षा रुक चुकी थी। प्राची के प्रांगण में उषा मधुर मधुर मुसका रही थी। प्रभात ने आकर उसे भुजपाश में कस लिया। दोनों खिलखिलाकर हँस पड़े। पेड़ हर्ष से तालियाँ बजाने लगे। मधुकर ने कमलिनी के साथ नृत्य करना प्रारम्भ कर दिया।"[२] प्रकृति-चित्रण में कल्पनाजनित मानवीकरण का आश्रय लेखिका ने सर्वत्र लिया है, किन्तु वैसे उनकी कहानियाँ यथार्थवाद से अनुप्राणित है। 'परदेशी', 'खानदान की लाज' और 'प्रेम की वेदी पर' शीर्षक कहानियों में प्रेम की सफलता अथवा असफलता के विषय में तीन यथार्थ चित्र प्रस्तुत किये गए है और अन्य कहानियों में जीवन में निर्धनता के अभिशाप की करुणामूलक चर्चा की गई है। इन कहानियों की संवेदनशीलता असन्दिग्ध है, किन्तु कहीं कही मन पर यह छाप अवश्य पड़ती है कि लेखिका ने कथा-पट को संक्षिप्त न रखकर तनिक और विस्तृत रखा होता तो अच्छा होता।

इस कथा-संग्रह में नारी-जीवन की विवशताओं और आदर्शों का सहृदयतापूर्वक चित्रण किया गया है, किन्तु लेखिका ने किसी भी प्रसंग में पुरुष-पात्रों की हृदयहीनता आदि का पूर्वाग्रहप्रेरित कथन नहीं किया है। 'बहन का हृदय' में रामू के प्रति रज्जो के अमित स्नेह, 'जय-विजय' में कायर प्रेमी दीपक द्वारा परित्यक्ता कनक के निर्मल मातृत्व आदि का लेखिका ने मनोविज्ञानानुकूल मार्मिक चित्रण किया है। लेखिका ने चरित्र-चित्रण में कथोपकथन की सजीवता की ओर भी यथोचित ध्यान दिया है। वातावरण और मनोभावों को ध्यान में रखते हुए संक्षिप्त भावमूलक संवादों की योजना उनकी प्रमुख विशे-

---

१. देखिये 'त्रिशूल', पृष्ठ १३, ५१, ७२

२. सप्त किरण, पृष्ठ १८-१९

पता है। 'जय-विजय' में कनक और वृद्ध पथिक के संवाद तथा 'प्रेम की वेदी पर' में दिनेश और रजनी के वार्त्तालाप को इसी कोटि में रखा जा सकता है।[1]

कुमारी 'किरण' ने अपनी कहानियों में समकालीन देशकाल का निरर्थक वर्णन-विस्तार न करके सोद्देश्य कथन की प्रणाली को सफलतापूर्वक अपनाया है। उन्होंने समाज द्वारा अभिशप्त नारी, मातृत्व की महिमा, सामाजिक सन्देह के फलस्वरूप आश्रयहीना नारी द्वारा आत्महत्या आदि का परिस्थितिमूलक चित्रण किया है। ऐसे प्रसंगों में देश-काल और उद्देश्य, दोनों मुखर रहे हैं।[2] यहाँ यह उल्लेख्य है कि लेखिका को वातावरण के सुखद अथवा दुखद चित्र अंकित करने में जितनी सफलता मिली है, उतनी सफलता से वे सर्वत्र उद्देश्य का निर्वाह नहीं कर सकी हैं। 'बहन का हृदय', 'जीवन का अन्त' और 'प्रेम की वेदी पर' शीर्षक कहानियाँ इसी प्रकार की हैं। उद्देश्य-निर्वाह की दृष्टि से उन्हें सर्वाधिक सफलता 'जय-विजय' में मिली है, जिसमें उद्देश्य (मातृत्व की महिमा की स्थापना) का प्रत्यक्ष कथन न करके उसे व्यंजना के द्वारा मर्मवेधी बनाया गया है। अन्त में यह उल्लेखनीय है कि उन्होंने भावना और भाषा, दोनों की दृष्टि से भावुकता को विशेष प्रश्रय दिया है। 'चकोरी' और सुमित्राकुमारी सिनहा की भाँति उनकी अभिव्यंजना-शैली भी कवित्व का लालित्य लिये हुए है। दो-चार स्थानों पर भाषा सम्बन्धी त्रुटियों को अपवाद मानना होगा।

३. सुश्री इन्दुमती

सुश्री इन्दुमती ने 'उखड़े बिरवे' शीर्षक कथा-संग्रह की रचना की है, जिसमें निम्नलिखित सोलह सामाजिक कहानियाँ संगृहीत हैं—हम स्वतन्त्र हैं, हीर-राँझा, पाषाण, मीना, पुन्नू पुत्त, मालन, उखड़े बिरवे, धर्म की शास्ति, कार्तिक की माँ, रंगमयी, द्रौपदियाँ, मानवता जीएगी, युक्त बलिदान, कहाँ से कहाँ, टिमटिमाता दिया, कलियुगी कुन्तियाँ। इन सब कहानियों के कथानक भारत-विभाजन के समय के साम्प्रदायिक दंगों के विषय से सम्बद्ध हैं। भारत-विभाजन के उपरान्त पीड़ित जनता के समक्ष अनेक समस्याएँ आईं। उन्हीं समस्याओं के किसी एक रूप का प्रत्येक कहानी में चित्रण है। किन्हीं दो या तीन कहानियों में प्रायः एक ही समस्या को यत्किंचित् अन्तर के साथ चित्रित किया गया है। उदाहरणार्थ 'पुन्नू पुत्त' में कासिम चाचा द्वारा एक हिन्दू-परिवार की रक्षा में प्राणाहुति देने की कथा अंकित है, तो 'युक्त बलिदान' में भी इन्साफ़ ने अपने मित्र सुनील के परिवार की रक्षा के लिए आत्मबलि दी है। 'कहाँ से कहाँ' कहानी का कथानक सबसे विचित्र है। इसमें लेखिका ने जिस मौलिक समस्या की ओर इंगित किया है, उस ओर अधिकारियों एवं अन्य साहित्यकारों का ध्यान सम्भवतः कभी न गया होगा।

---

१. देखिए 'सप्त किरण', पृष्ठ १०-११, ४६-४७
२. देखिए 'सप्त किरण', पृष्ठ ११, १४, २१-२२

उन दिनों के साम्प्रदायिक दंगों ने तत्कालीन पीढ़ी पर जो घातक प्रहार किये थे वे तो स्पष्ट ही थे, किन्तु माताओं के भय तथा मानसिक अशान्ति के कारण गर्भस्थ शिशुओं पर जो अत्यन्त भयंकर प्रभाव पड़े होंगे, (पाँव टेढ़े होना, दृष्टिहीन होना आदि); उन्हीं का वर्णन प्रस्तुत कहानी में किया गया है। 'मालन' और 'कार्त्तिक की माँ' शीर्षक आख्यायिकाओं की विषयवस्तु प्रायः एक-सी ही है। मातृत्व नारी-जीवन का ऐसा वरदान है कि उसके समक्ष वह पत्नीत्व को तुच्छ समझती है—यही विषयवस्तु दोनो कथाओं में परिस्थिति-वैभिन्न्य के साथ अंकित की गई है।

आलोच्य समस्त कहानियों में लेखिका ने व्यंग्यात्मक शैली में स्वतन्त्रता की परवर्ती विभीषिकाओं का दिग्दर्शन कराया है। भारत-विभाजन ने एक बार पुनः महाभारत के इतिहास की आवृत्ति कर दी है। भारतीय रमणियों को द्रौपदी की भाँति अनेक पतियों की अंकशायिनी बनना पड़ा, कुन्ती की भाँति अपने किशोर पुत्रों को जनता के कल्याणार्थ कार्य-क्षेत्र में भेजना पड़ा—ये सब घटनाएँ 'द्रौपदियाँ' और 'कलियुगी कुन्तियाँ' शीर्षक कहानियो में पठनीय हैं। 'टिमटिमाता दिया' में पुरुष की कायरता, नीचता तथा पीड़ित नारी के स्वाभिमान का चित्रण है। शेष कहानियों में भिन्न कथानकों द्वारा लेखिका ने यह दिखाया है कि साम्प्रदायिक विद्वेष ने पति से पत्नी को, माता से बच्चे को, पिता से पुत्री को, परिवार से सन्तान को और प्रेमिका से प्रेमी को किस निष्ठुरता से वंचित कर दिया।

'उखड़े बिरवे' की कहानियों में चरित्र-चित्रण की दृष्टि से विविधता मिलती है। वस्तुतः वास्तविक जगत् में जैसी भिन्न प्रकृति के पात्र उपलब्ध होते है, ठीक वैसे ही पात्र आलोच्य लेखिका ने चित्रित किए है—परिस्थितियों से प्रभावित होकर अपने को बुझा देनेवाले भी; और विषमताओं को चुनौती देने को तत्पर कर्मवीर भी ! उदाहरणार्थ 'हीर-राँझा' की कमल, 'पाषाण' की मोहिनी, 'पुन्नू पुत्त' का पूरण तथा 'कलियुगी कुन्तियाँ' की प्रकाश ऐसे पात्र-पात्राएँ हैं जो परिस्थितियों की प्रतिकूलता के कारण विषण्ण एवं उदास हैं; किन्तु 'उखड़े बिरवे' की शकुन्तला, 'मालन' की मालन, 'रंगमयी' की रंगमयी तथा 'कार्त्तिक की माँ' की बालिका ऐसी दृढ़ संकलपवाली पात्राएँ है जो परिस्थितियों को अपने अनुकूल बनाने में पूर्ण शक्ति से कटिबद्ध रहती है और स्वाभिमानपूर्वक जीवन-यापन को श्रेयस्कर समझती हैं। पुरुष पात्रों मे 'पाषाण' में मदन, 'पुन्नू पुत्त' में कासिम चाचा, 'युक्त बलिदान' में इन्साफ़, 'टिमटिमाता दिया' में धर्मदेव आदर्श पात्र है, जो अपने स्वार्थों की बलि देकर परहित में विश्वास करते हैं; और वैसा ही आचरण भी करते है।

आलोच्य संग्रह की अधिकांश कहानियाँ चरित्रप्रधान है तथा इनमें ऐसे पात्रों को भी स्थान दिया गया है, जो धर्म के नाम पर नृशंस कर्म करते हैं और निरीह बच्चों एवं स्त्रियों पर भाँति भाँति के अत्याचार करते हैं। प्रत्यक्ष-वर्णन की अपेक्षा लेखिका ने परोक्ष विधियों से पात्रो की चारित्रिक प्रवृत्तियों को अभिव्यक्त किया है। पात्रों के अन्तर्मन

के भावों को मुखर रूप देने में संवाद-योजना अनेकशः विशेष उपयोगी सिद्ध हुई है। उदाहरणार्थ 'टिमटिमाता दिया' में सावित्री तथा उसके देवर का यह संवाद अवलोकनीय है—

" 'सावित्री का मुख कठोर हो आया। उसने अधीर स्वर में कहा—आप क्या मनुष्य नहीं हैं वेद जी ? शान्ति न आपकी वाग्दत्ता है ! आप ही लोगों का इतिहास बताता है, अपनी वाग्दत्ताओं के लिए इसी देश के निवासी अपना रक्त बहा देते थे। वह रक्त अब सफ़ेद हो गया है न !'

" 'हटाओ भी भाभी, किस फेरे में पड़ी हो। शान्ति मेरे किस काम की भला अब ?' वेद ने दुबारा दुहराया।"[१]

शान्ति वेद की वाग्दत्ता थी, किन्तु विभाजन के समय आततायियों के बलात्कार का शिकार होने से वह वेद की दृष्टि में अपावन हो चुकी थी। उक्त संवाद में सावित्री की संवेदनशील प्रवृत्ति और वेद की संकुचित दृष्टि का संक्षिप्त, किन्तु मार्मिक निरूपण हुआ है। संवादों की भाषा प्रायः पात्रानुकूल है। उदाहरणार्थ 'कार्तिक की माँ' में माँ ने अनेक स्थानों पर शुद्ध बंगला में सम्भाषण किया है।[२] इसी प्रकार 'पुन्नू पुत्त' में उमरी की अधोलिखित उक्ति में पंजाबी भाषा का प्रभाव द्रष्टव्य है—"उमरी की आँखों से अश्रुधारा बह रही थी। उसने रोते रोते कहा—'शाहनी जी को मैं खोजूँगी पुन्नू पुत्त। तम जाओ जहाँ तुम जीते रह सको चन्ना'।"[३]

'उखड़े बिरवे' की कहानियों मे देशकाल का संवादों के माध्यम से तो चित्रण हुआ ही है, लेखिका ने प्रायः प्रत्येक कहानी मे समकालीन भारत की सामाजिक एवं राजनीतिक स्थिति का प्रत्यक्ष रूप में भी वर्णन किया है। उदाहरणार्थ अधोलिखित उद्धरण द्रष्टव्य हैं—

(अ) "और फिर देश के दो टुकड़े हो गए। अस्वाभाविक प्रश्न-चिह्न-सी सीमाओं में भारत भूमि बाँट दी गई। आमने-सामने अक्षौहिणी सेनाएँ खड़ी न हुई तो क्या, भाई ने भाई का रक्त उलीचना शुरू किया ही।"[४]

(आ) "तभी आघात आया देश पर। कश्मीर भी अछूता न बचा। मनु की सन्तानों के भीतर बैठा हुआ दानव जाग्रत हो उठा और अपनी ही सृष्टि-सभ्यता को असंख्य मुखों से लीलने लगा।"[५]

भारत-विभाजन के उपरान्त जनसंख्या के इतस्ततः जाने तथा साम्प्रदायिक दंगों आदि के कारण जनता के समक्ष जो अनेक समस्याएँ आईं उनका यथार्थ चित्रांकन

१. उखड़े बिरवे, पृष्ठ ११६
२. देखिए 'उखड़े बिरवे', पृष्ठ ७०
३. उखड़े बिरवे, पृष्ठ ४३
४-५. उखड़े बिरवे, पृष्ठ १११, ११७

आलोच्य कहानियों का लक्ष्य है। अनेक कहानियों में दृढ़ संकल्पवान् आदर्श पात्रों का आश्रय लेकर लेखिका ने उक्त समस्याओं के जो समाधान प्रस्तुत किये हैं, वे निश्चय ही सराहनीय हैं। उनकी विविध कहानियों में यथार्थ एवं आदर्श का सुन्दर समन्वय प्रस्तुत किया गया है। यह उल्लेखनीय है कि उन्होंने अपने सशक्त विचारों के अनुरूप तीव्र तथा व्यंग्यपूर्ण भाषा-शैली का प्रयोग किया है। यथा—"हम स्वतन्त्र हैं। हमें धार्मिक स्वतन्त्रता भी मिली है, क्योंकि हमने मुसलमानों को पाकिस्तान दे दिया। और अब हम गांधी जी को भी मार सकते हैं, क्योंकि हम हिन्दू हैं, हिन्दुस्तान के निवासी; और गांधी जी तो मुसलमानों की ही बात कहते हैं। दीपा बार बार यही कहती, 'हमने ही मानवता की हत्या की है, हमने ही उस युग-पुरुष को मरने दिया है और यह मिली हमें स्वतन्त्रता सब कार्य करने की। अराजकता की भी'।"[1]

४. श्रीमती हीरादेवी चतुर्वेदी

श्रीमती हीरादेवी-विरचित 'उलझी लड़ियाँ' शीर्षक कहानी-संग्रह में निम्नलिखित पन्द्रह सामाजिक कहानियाँ संगृहीत हैं—उलझी लड़ियाँ, निर्माण, मोल तोल, ध्वंस और निर्माण, घर की रानी, तीखा घूंट, कवि, लहर, मेलजोल, पिस्तौल का धड़ाका, कलाकार, भाग्य-चक्र, धूमिल स्मृति, रक्त स्नान, हड़ताल। इनमें जीवन की सुख-दुःखमयी परिस्थितियों में उलझे हुए पात्रों के हर्ष-शोकपूर्ण भावों को सहज रूप में व्यक्त किया गया है। कष्टों, अभावों एवं संघर्षों में पिसते मानव की वेदनापूर्ण विह्वलता, पूँजीपतियों द्वारा सर्वहारा वर्ग का शोषण तथा साहित्य-सेवकों की आर्थिक विपन्नता उक्त कहानियों के मुख्य विषय हैं। लेखिका ने चमत्कार अथवा घटना-बाहुल्य को प्रश्रय न देकर अनुभूति-प्रेरित ऐसे कथा-चित्र अंकित किये है जो जीवन का यथार्थ स्वरूप प्रस्तुत करते हैं।

अधिकांश कहानियों में चेतना-प्रवाह पद्धति में कथानकों का विकास हुआ है। 'उलझी लड़ियां', 'निर्माण', 'मोल तोल', 'ध्वंस और निर्माण', 'तीखा घूंट', 'लहर', 'धूमिल स्मृति' तथा 'रक्त स्नान' शीर्षक कहानियाँ इसी कोटि की है। घटनाओं की भाँति, आलोच्य कहानियों मे, पात्रों की संख्या भी सीमित है। प्रत्यक्ष रूप से प्रायः एक ही पात्र अथवा पात्रा सम्मुख आती है और उसकी चिन्तनधारा में अन्य सम्बद्ध पात्रों की चर्चा होती है। उदाहरणार्थ 'उलझी लड़ियाँ' में नायिका रूपा की अन्तर्व्यथा अवलोकनीय है।[2] आय कम होने के कारण उसके पति को नौकरी के लिये कलकत्ता जाना पड़ा, किन्तु मकान न मिलने के कारण वे उसे आठ महीने तक भी न बुला पाये। पिछली सुखद स्मृतियों एवं वर्तमान विरह-वेदना की तुलना करके वह बार बार अनुताप करती है कि

---

१. उखड़े बिरवे, पृष्ठ १२

२. देखिये 'उलझी लड़ियां', पृष्ठ १–७

नाहक ही उसने पति को परदेश जाने को बाध्य किया। 'निर्माण', 'घर की रानी' आदि कहानियाँ भी इसी प्रकार आत्म-चिन्तन के धरातल से लिखी गई है। 'कवि', 'लहर' 'मेलजोल' आदि में भी प्रमुखता तो एक पात्र की है, किन्तु इनमें अन्य पात्र भी प्रत्यक्षतः सम्मुख आए है। इसी कारण इन कहानियो मे कथानक एवं चरित्र-चित्रण में पूर्वोक्त कहानियो से भिन्नता है।

आलोच्य पात्र प्रायः परिस्थिति-प्रताड़ित रहे हैं, वेदना एवं अनुताप ही उनके जीवन के मुख्य प्राप्य है। पात्रो की अपेक्षा पात्राओ की चिंतनधारा इन कहानियों का मूल तन्तु है। लेखिका ने पात्रों मे सर्वत्र मानवोचित स्वाभाविकता की रक्षा की है। कतिपय पात्र आदर्श की सीमाओं का भी स्पर्श करते है, किन्तु वे भी मानवीय औचित्य के भीतर ही रहते हैं। 'घर की रानी' की सरला, 'निर्माण' की मेनका, 'तीखा घूंट' की परवतिया और 'मेल जोल' का साधु ऐसे ही चरित्र है। अधिकांश कहानियों में शोषित पात्रों की जीवन-गाथा अंकित है, शोपक पात्रो की चर्चा प्रायः परोक्ष रूप में हुई है।

चिन्तनप्रधान कहानियों में संवाद-योजना को अधिक स्थान नहीं मिला, किन्तु 'मेलजोल', 'पिस्तौल का धड़ाका', 'लहर' आदि कहानियों में कथोपकथन का सुचारु विधान हुआ है। अधिकतर सवाद संक्षिप्त, सारगर्भित एवं पात्रानुकूल हैं तथा चरित्र-चित्रण में उनका विशेष योग रहा है। 'लहर' में विमला के पति हरीश जव तनिक-सी बात पर क्रुद्ध होकर बिना खाये चले गये तो विमला से भी न खाया गया। इस पर उसका अपनी सखी कमला से अधोलिखित वार्त्तालाप उद्धरणीय है—

"कमला ने गम्भीर वाणी से कहा—'चलो तुम मेरे कहने से भोजन कर लो।'

'नही कमला यह मैं नही कर सकती। 'वे' भूखे चले जाएँ और मैं खाना खा लूं।'

'लेकिन वे तो कहीं भी खा सकते हैं।' कमला ने कहा—'दिन-भर भूखे रह कर थोड़े ही काम करते रहेंगे दफ़्तर में ? और कुछ नही तो दोस्तों के कहने पर चाय-नाश्ता उन्हें स्वीकार करना ही पड़ेगा वहाँ।'

'मैं उन्हें खूब जानती हूँ, कमला। वे हरगिज नहीं खाएँगे पिएँगे कुछ। दिन-भर पूरा पूरा उपवास रखेंगे। उनका ऐसा स्वभाव नही कि मैं घर में भूखी बैठी रहूँ और वे बाहर कुछ खा पी लें।'"[1]

उक्त संवाद मे विमला एवं उसके पति की चारित्रिक प्रवृत्तियों एवं एक-दूसरे के प्रति घनिष्ठ प्रीति की अभिव्यक्ति हुई है। वैसे, प्रस्तुत कहानी-संग्रह में निम्नलिखित समस्याओं का चित्रण मिलता है—निर्धनता, महँगाई, बेकारी, पूंजीपतियों द्वारा सर्वहारा वर्ग का शोषण, देश की स्वतन्त्रता के बाद का साम्प्रदायिक रक्तपात, धन के अभाव में साहित्यकार की कला का ह्रास आदि। शोषितों के प्रति लेखिका के हृदय मे गहन सहानु-

---

१. उलझी लड़ियां, पृष्ठ ५६

भूति है और शोषकों के प्रति घोर क्षोभ, जिसे उन्होंने प्रायः व्यक्त किया है। उदाहरणार्थ 'मोल तोल' कहानी की ये पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—"आज के युग में पूँजीपतियों का रवैया कुछ अनोखा ही है। वे नौकरी करायेंगे कसकर, मेहनताना देंगे कम से कम और तुर्रा यह कि इतने पर भी यह अपेक्षा करेंगे कि नौकरी करनेवाला साहित्य-स्रष्टा भी उनकी हाँ में हाँ मिलाने का आदी हो। जो ऐसा नही कर सकता, वह चाहे कितना श्रमी और विद्वान् क्यों न हो पूँजीपतियों की समझ में उसका कोई मूल्य नहीं। बाजार की वस्तुओ के मोल-तोल की तरह ही ये पूँजीपति साहित्यिक का भी मूल्य आँकना चाहते हैं।"[1]

श्रमिक वर्ग की परस्पर आत्मीयता, उच्च विचार, कठोर परिश्रम आदि के चित्रण में लेखिका विशेषतः प्रवृत्त हुई है। उनकी तद्विषयक विचारधारा पर प्रायः प्रगतिवाद का प्रभाव है। 'रक्त स्नान' कहानी में देश-विभाजन के उपरान्त साम्प्रदायिक रक्तपात की चर्चा हुई है।[2] समस्या-चित्रण के अतिरिक्त इन कहानियों में प्रसंगानुकूल प्राकृतिक सौन्दर्य का भी चित्रण हुआ है। उदाहरणार्थ 'कवि' शीर्षक कहानी से यह उक्ति देखिए—"कवि बराबर जागता रहा। सन्तप्त आकाश के तारे धीरे-धीरे उसी में विलुप्त होने लगे। प्राची में सुनहरी उषा एक सजी सजाई सुकुमार बाला-सी आकर अपनी सुन्दरता बिखेरती हुई कवि को निहारने लगी। रात्रि ने मानो कवि की दयार्द्र दशा पर आँसू बहाकर उसे सान्त्वना दी और अपने अश्रु-कण ओस-बिन्दुओं के रूप में संसार के पुष्प पुष्प और पल्लव पल्लव पर बिखेरकर वह चली गई।"[3] प्रगतिवाद की भाँति लेखिका को गांधी जी के सिद्धान्तों के प्रति भी विशेष श्रद्धा है। गांधी जी द्वारा प्रस्तावित तप, संयम एवं सदाचार को उन्होने अधिकांश समस्याओं का समाधान माना है। 'निर्माण' तथा 'मेलजोल' कहानियाँ इसकी प्रमाण हैं।[4] परिस्थिति-प्रताड़ित जीवन के यथार्थ चित्र अंकित करना इन कहानियों का लक्ष्य है, किन्तु लेखिका ने अनेकशः इस ओर संकेत किया है कि मानव आत्म-संयम एवं आत्म-परिष्कार द्वारा अनेक विषम परिस्थितियों पर विजय प्राप्त कर सकता है।

हीरादेवी जी की कहानियों में भावानुरूप प्रौढ़ एवं परिष्कृत भाषा-शैली को स्थान मिला है। श्रमिकों तथा पूँजीपतियों का वर्णन करते समय उन्होंने प्रायः व्यंग्यपूर्ण शब्दावली को प्रश्रय दिया है। उदाहरणार्थ 'धूमिल स्मृति' से यह परिस्थिति-चित्र देखिए—"और जो ग़रीब हैं मजदूर हैं, उन्हें ग्रीष्म की प्रखर धूप नही लगती, लू नही लगती। शीत की तीर-जैसी हवा उन्हें कँपा नहीं सकती। मूसलाधार वर्षा उनका कुछ बिगाड़ नहीं सकती। चाहे कितना पसीना उन्हें बहाना पड़े, कदाचित् उन्हें थकावट भी

---

१. उलझी लड़ियाँ, पृष्ठ २५
२. देखिये 'उलझी लड़ियाँ', पृष्ठ १२४
३. उलझी लड़ियाँ, पृष्ठ ५६
४. देखिये 'उलझी लड़ियाँ', पृष्ठ १६, ७७

नहीं आती। यदि यह सब होता भी हो, तो हुआ करे, परन्तु उनकी मुद्रा पर इसका कोई चिह्न नहीं दीखता।"[3] सारांश यह कि आलोच्य कहानियों में आदर्श की अपेक्षा अनुभूति को अधिक प्रश्रय दिया गया है। इनमें समकालीन देशकाल के चित्रण पर विशेष ध्यान दिया गया है और साथ ही पात्रों की वहिर्मुखी प्रवृत्तियों की अपेक्षा उनके अन्तर्जगत् का चित्रण हुआ है। इनमें से अधिकांश कहानियों की एक विशेषता यह भी है कि ये चेतना-प्रवाह-पद्धति में लिखी गई हैं।

५. श्रीमती कौशल्या अश्क

'दो धारा' श्री उपेन्द्रनाथ अश्क और श्रीमती कौशल्या अश्क का कथा-संग्रह है, जिसमें दोनों की पाँच-पाँच कहानियाँ संकलित हैं। कौशल्या जी की पाँच कहानियों के शीर्षक क्रमशः इस प्रकार हैं—ठेस, थकान, निम्मो, फ़ैसला और जगन्नाथ। अपने सरल एवं भावुक व्यक्तित्व के अनुरूप, जैसा कि उक्त संकलन में अश्क जी द्वारा प्रस्तुत श्रीमती जी के रेखाचित्र से स्पष्ट है,[1] आलोच्य लेखिका ने अपनी आख्यायिकाओं में भी बोधगम्य, सहज एवं भावुकतापूर्ण कथानकों की सृष्टि की है। व्यक्ति अपने मन में भविष्य के लिए अनेक ऊँची कल्पनाएँ सँजोता है, जाने-अनजाने अनेक अतृप्त आकांक्षाएँ उसे व्याकुल बनाए रहती हैं और उनकी पूर्ति की दिशा में वह सदैव आशान्वित रहता है, किन्तु जब कठोर यथार्थ से टकराकर वे चूर-चूर हो जाती हैं तब वह असह्य वेदना से व्याकुल हो उठता है—लेखिका ने इसी भाव को विभिन्न कथानकों द्वारा प्रस्तुत किया है। उदाहरणार्थ 'ठेस' की नायिका कवि की कृपा से भिखारिणी के जीवन से छुटकारा पाकर उसके घर की प्रबन्धिका बन जाती है, किन्तु उसका मन कवि से 'कुछ और' के लिए आतुर रहता है और न मिलने पर कुंठा, निराशा, वेदना आदि का जन्म होता है। 'थकान' का नायक हरि तथा 'फ़ैसला' का नायक ब्रजेश असुन्दर पत्नियों के कारण वेदना एवं कुंठा के बोझ को ढोते हैं। 'निम्मो' पत्र-शैली में लिखित भावपूर्ण कहानी है। ये पत्र नायक जुगल द्वारा अपनी प्रेयसी निम्मो को लिखे गये हैं, जिनमें विगत सुखद दिवसों की मधुर स्मृति के अतिरिक्त प्रेयसी की वर्तमान कटुता के प्रति नायक के उपालम्भ, स्नेह, शिकायत, फटकार, मीठी भर्त्सना आदि विभिन्न भावों का सम्मिश्रण है। दुर्भाग्य से, राजनीतिक गड़बड़ के कारण, वे पत्र निम्मो को यथासमय नहीं मिल पाते और अपने को उपेक्षित समझकर प्रेमी पहले ही युद्ध में वीरगति पाकर परलोकवासी हो जाता है। 'जगन्नाथ' कहानी एक घरेलू कर्मचारी का मनोवैज्ञानिक चरित्रांकन है। घर में मालकिन द्वारा प्रशंसा न पाने पर बाहरवालों से जब प्रशंसा मिलती है तब उसका स्नेहपूर्ण मन उनके प्रति अपनी क्रियात्मक कृतज्ञता (उन्हें अपना बनाया भोजन चखने को देकर

---

१. उलझी लड़ियाँ, पृष्ठ ११२

अथवा उनका काम करके) की अभिव्यक्ति किये बिना नहीं रहता। फलतः एक दिन उसे अपनी नौकरी से हाथ धोना पड़ता है। इस कहानी से प्रमाणित है कि श्रीमती कौशल्या अश्क अपने कथा-पात्रों का सहज एवं मनोविज्ञान-सम्मत चित्रण करने में विशेष सफल हुई हैं।

पात्रों के व्यक्तित्व एवं क्रिया-कलाप का भी लेखिका ने अनेकशः अत्यन्त सजीव एवं नाटकीय चित्रण किया है। उदाहरणार्थ 'जगन्नाथ' कहानी के नायक जगन्नाथ का यह रोचक रेखाचित्र अवलोकनीय है—"उसकी नाक चपटी थी, जिसकी नोक खासी ऊपर को उठी हुई थी, भवें टेढ़ी थीं और नाक-भौं चढ़ाने में उसे कोई कठिनाई न होती थी। जब भी उसे अप्रसन्नता अथवा क्रोध प्रकट करना होता, वह नाक-भौं चढ़ा देता।"[1] इन कहानियों में चरित्र-चित्रण के लिए मुख्यतः वर्णन-विवरण-पद्धति का आश्रय लिया गया है, किन्तु यथावसर पात्र और प्रसंग के अनुरूप संवाद भी प्रस्तुत किये गए हैं। पात्रों के मानसिक संघर्ष एवं आत्मपीड़ा को मनोवैज्ञानिक रूप में व्यक्त करने में संवादों का योगदान महत्त्वपूर्ण है। पात्रों के चेतना-प्रवाह का चित्रण करते हुए लेखिका ने मानसिक वातावरण की सहज अवतारणा की है। इसी प्रकार वाह्य देशकाल के मूर्तीकरण में भी वे सफल रही हैं। उदाहरणस्वरूप 'फ़ैसला' कहानी की प्रारम्भिक पंक्तियाँ उद्धरणीय हैं—"शिशिर की हिम-शीतल ठिठुरती हुई रात अपने धुएँ और धुंध के साथ कब की उतर आई थी। नगर के समस्त कोलाहल का जैसे गला घोंटकर उसने उसे चुप करा दिया था। ट्रामें, मोटरें, तांगे सब मौन हो गए थे और धुंध ने पूर्ण रूप से सर्वत्र अपना एकाधिकार जमा लिया था—मार्गों की बिजलियाँ (युद्ध-काल की बचत के कारण) बुझी हुई थीं। सूची-भेद अन्धकार और नीरवता छाई हुई थी। और किसी इक्के-दुक्के तांगे या साइकिल की खड़खड़ाहट अथवा उसकी टिमटिमाती बत्ती इस नीरव अन्धकार को और भी घनीभूत कर रही थी।"[2]

'निम्मो' कहानी में यत्र-तत्र सन् १९४२ के भारत की राजनीतिक स्थिति की चर्चा के अतिरिक्त एक पत्र में नायक द्वारा सैनिकों के कैम्प-जीवन पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है।[3] वस्तुतः लेखिका का उद्दिष्ट कल्पना और यथार्थ में वैषम्य का चित्रण करके व्यक्ति और परिस्थितियों के प्रति व्यंग्यपूर्ण दृष्टिकोण प्रस्तुत करना है। वैसे, इन गल्पों मे सरल, भावपूर्ण तथा साहित्यिक भाषा-शैली को स्थान प्राप्त हुआ है। शैली मुख्यतः विवरणात्मक, अनेकशः चित्रात्मक एवं सर्वत्र गम्भीर तथा मनोवैज्ञानिक रही है। परिस्थितियों के अनुरूप मानव के मनोभावों को परखने की सूक्ष्म प्रतिभा लेखिका में विद्यमान है। इसी कारण अपने पात्रो के अन्तराल में पैठकर सहज चित्र उभारने में उन्हें

---

१. दो धारा, पृष्ठ २१६-२२०
२. दो धारा, पृष्ठ २०१
३. देखिये 'दो धारा', पृष्ठ १९०-१९१

आशातीत सफलता प्राप्त हुई है, जिससे उनकी कहानी-कला में सजीवता आ गई है।

६. श्रीमती शीला शर्मा

श्रीमती शीला शर्मा के 'टूटी चूड़ियाँ' शीर्षक कथा-संग्रह में निम्नलिखित इक्कीस लघु कथाओं को स्थान प्राप्त हुआ है—शिकार, सिगरेट, रीना, जूतों की जोड़ी, टूटी चूड़ियाँ, मिठाई की दुअन्नी, काका, गुड़िया, ननकू लठैत, ताई जी, कलुई, आवारा, केकवाला, हरीरा, कोनी, राजा मुन्ना, न्याय, कुर्ता-टोपी, सोने की करधनी, परिस्थिति, कमीने कही के। इन कहानियों में लेखिका ने दैनिक जीवन के सामान्य अनुभवों को रोचक एवं प्रभावपूर्ण कथानकों का रूप प्रदान किया है। बाल-पात्रों की बालोचित भावनाएँ एवं क्रिया-कलाप, दाम्पत्य जीवन की कटु अथवा सरस अनुभूतियाँ, सौतेली सन्तान के प्रति विमाता का कटु व्यवहार, सास का वधु के प्रति अत्याचार और ग्रामीण पात्रों की दैनिक समस्याएँ उक्त कहानियों में प्रमुख रही हैं। 'शिकार', 'गुड़िया' और 'कुर्ता-टोपी' शीर्षक कहानियों में लेखिका ने कल्पना का आश्रय लेकर क्रमशः मृग-मृगी, गुड़िया, कुर्ता, टोपी आदि अमानवीय पदार्थों को मानव की भाँति वार्तालाप, विचार-विमर्श तथा प्रेम, शोक आदि की अनुभूति में संलग्न दिखाया है। उनकी अधिकांश कहानियों में समाज, न्याय-विधान, परिस्थिति अथवा व्यक्तिविशेष के प्रति तीव्र व्यंग्य एवं विद्रोह के भाव निहित रहे हैं। 'गुड़िया', 'ननकू लठैत', 'ताई जी', 'आवारा', 'हरीरा', 'राजा मुन्ना', 'न्याय', 'सोने की करधनी' और 'कमीने कही के' शीर्षक आख्यायिकाएँ इस दृष्टि से पठनीय हैं। यह उल्लेखनीय है कि अधिकांश कथानक विषय-वैविध्य से सम्पोषित, रोचक एवं सुगठित हैं। लेखिका में जीवन के सामान्य क्षेत्रों से भी सुन्दर एवं आकर्षक घटना-चयन की क्षमता है और उन्हें सुव्यवस्थित रूप में कथा-बद्ध करने में भी उन्हे वांछित सफलता प्राप्त हुई है।

विवेच्य कहानियों में पात्रों के सहज एवं सजीव चरित्र अंकित किये गए हैं। यों तो लेखिका ने प्रायः विभिन्न वय और वर्ग के पात्रों को अपनी कहानियों में स्थान दिया है, किन्तु बाल-पात्रों के आशा, निराशा, उत्साह, आवेग, स्पर्धा आदि परिस्थिति-सापेक्ष चरित्र-चित्रण में वे विशेष सफल रही हैं। इसके अतिरिक्त नारी-सुलभ ईर्ष्या, द्वेष, स्नेह, ममत्व, वाचालता, सहनशीलता, त्याग, दम्भ आदि मनोभावों के अत्यन्त स्वाभाविक चित्र उन्होंने अंकित किये हैं। अशिक्षित अथवा अर्धशिक्षित पुरुषों और नारियों की तदनुरूप भावनाओं के इतने नाटकीय एवं सजीव रूप लेखिका ने प्रस्तुत किये है कि उक्त कहानियों में विशेष सौन्दर्य का संचरण हुआ है। 'शिकार', 'गुड़िया' और 'कुर्ता-टोपी' शीर्षक कहानियों में मृग-मृगी, गुड़िया, कुर्ता-टोपी आदि अमानवीय प्राणियों अथवा पदार्थों का मानवीकरण इतना मूर्त है कि उनसे पाठकों का सहज ही साधारणीकरण हो जाता है। 'कमीने कही के' में मेजर त्रिपाठी और उनकी पत्नी लीला के चरित्रों के असभ्य एवं अश्लील रूपों का अनावरण करके अभिजात वर्ग के प्रति व्यंग्य-

पूर्ण संकेत किये गए है। लेखिका ने पात्रानुकूल, रोचक एवं सजीव कथोपकथन का संयोजन किया है। संवादों में सम्बद्ध पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है और भाषा भी वक्ता के स्तर के अनुकूल रही है। बाल-पात्रों की उक्तियों में मोछी, छिगट (सिगरट), ऊपल (ऊपर)[1] आदि शब्दों, अशिक्षित पात्रो के वाक्यो में लौडिया, चुभे हैं, निकले है[2] आदि प्रयोगों तथा फ़ैशनपरस्त आधुनिक रंग में रँगे पात्रो के संवादो में थैंक यू, इन्लार्ज, कोर्नेस, लिवर, बेबी, हसबैंड[3] आदि अंग्रेज़ी-शब्दों का प्रयोग इसका उदाहरण है।

प्रस्तुत कहानियों में मुख्य रूप से पारिवारिक वातावरण के चित्रण में लेखिका को विशेष सफलता मिली है। वधू के प्रति सास का अत्याचार, विमाता का सौतेली सन्तान के प्रति दुर्व्यवहार, पड़ोसी स्त्रियों की परस्पर ईर्ष्या, पति द्वारा पत्नी के प्रति अनुचित व्यवहार आदि विभिन्न दैनिक समस्याओं के सहज चित्र प्रस्तुत कहानियों में अंकित हुए हैं। कहीं-कहीं लेखिका ने समाज के दो वर्गों की तुलना करके सामाजिक वैषम्य के व्यंग्यपूर्ण चित्र प्रस्तुत किये हैं। 'ननकू लठैत', 'हरीरा', 'न्याय' तथा 'कमीने कही के' शीर्षक कहानियाँ उक्त प्रसंग में पठनीय है। व्यक्ति, समाज अथवा परिस्थिति के प्रति तीव्र व्यंग्य इन कहानियो का लक्ष्य है और लेखिका इस दृष्टि से विशेष सफल रही हैं। उनकी अधिकांश कहानियों में अन्याय के विरुद्ध विद्रोह की भावना निहित है।

'टूटी चूड़ियाँ' की कहानियों में सरल एवं सजीव भाषा को स्थान प्राप्त हुआ है। लेखिका ने ग्रामीण शब्दों एवं वाक्यांशों का बहुलता से प्रयोग किया है। यथा—बकसिया, लौंडिया, भाग जइयो, खटिया, डंगर, ठलुआ, खटुलिया आदि।[4] 'ठाकुर साहेब की बाँछें खिल उठीं', 'ननकू के काटो तो खून नहीं', 'आज सवेरे ही सवेरे क्यों बरस पड़ी', 'लाला जी खाट से लगे हैं' आदि सरल एवं प्रसंगानुकूल मुहावरों[5] के प्रयोग ने भाषा को अतिरिक्त सजीवता प्रदान की है। श्रीमती शर्मा की विशेषता यह है कि उन्होंने घटनाओ की सहजता, मनोविज्ञान की सजगता, व्यंग्यात्मकता और भावानुकूल भाषा को अपनी कहानियों में अनिवार्यतः स्थान दिया है।

७. सुश्री मालती ढिंडा

सुश्री मालती ढिंडा ने 'एकान्त साधना' और 'संघर्ष' शीर्षक दो कहानी-संग्रहों की रचना की है, जिनमें क्रमशः आठ (एकान्त साधना, चूड़ीवाला, हसीन ख्वाब, भाई साहेब, खंडहर, चित्रा, चिरनिद्रा, माँ) और ग्यारह (जीवन-संघर्ष, दो भाई, अंजुमन, अमर

---

१. देखिए 'टूटी चूड़ियाँ', पृष्ठ ६
२-३. देखिये 'टूटी चूड़ियाँ', पृष्ठ ३४, १०८
४. देखिये 'टूटी चूड़ियाँ', पृष्ठ २८, ३२, ३३, ४५, ७६, ८१, ८२
५. देखिये 'टूटी चूड़ियाँ', पृष्ठ ४५, ४७, ५७, ६३

भावना, अतृप्त, मेरी दीदी, दुःख दर्द, परवश-बेबस, कसौटी, इन्जेक्शन, देवता) कहानियाँ संकलित हैं। विषयवस्तु की दृष्टि से इन कहानियों को निम्नलिखित वर्गों में विभक्त किया जा सकता है—

(अ) राष्ट्रीय चेतना से युक्त कहानियाँ—'एकान्त साधना', 'जीवन-संघर्ष', 'अमर भावना' और 'दुःख-दर्द' शीर्षक कहानियाँ इस वर्ग के अन्तर्गत गण्य हैं। इनमें भारत की स्वतन्त्रता के लिए किये गए सत्याग्रह-आन्दोलन, क्रान्तिकारी दल का संगठन, पुलिस का दमन-चक्र आदि की चर्चा की गई है।

(आ) ऐतिहासिक कहानियाँ—'हसीन ख्वाब' और 'अंजुमन' शीर्षक कहानियाँ इसी प्रकार की हैं। इनमें ऐतिहासिक पात्रों का आश्रय लेकर (नादिरशाह, औरंगजेब, सिकन्दर, औरंगजेब की पुत्री अंजुमन आदि) काल्पनिक, किन्तु रोचक घटनाएँ अंकित की गई हैं।

(इ) सामाजिक कहानियाँ—'चूड़ीवाला', 'भाई साहेब', 'चित्रा', 'चिरनिद्रा', 'खंडहर', 'माँ', 'दो भाई', 'अतृप्त', 'मेरी दीदी', 'परवश-बेबस', 'कसौटी', 'इन्जेक्शन' और 'देवता' शीर्षक कहानियो मे प्रायः सामाजिक विषयों को स्थान प्राप्त हुआ है, जिनमें से मुख्य ये हैं—भ्रातृ-प्रेम, अपत्य-स्नेह, पति द्वारा पत्नी के प्रति अन्यायपूर्ण आचरण, विवाहिता का पर-पुरुष से प्रेम अथवा विवाहित पुरुष का पर-स्त्री के प्रति आकर्षण।

यद्यपि मालती ढिडा की कहानियों का विषय-क्षेत्र सीमित है, तथापि सरलता एवं रोचकता की दृष्टि से वे पठनीय हैं। डॉ० हरिवंशराय 'बच्चन' ने 'संघर्ष' की भूमिका में लिखा है—"उन्होंने पारिवारिक जीवन और आधुनिक समाज के नर-नारी सम्बन्धों को उलट-पुलटकर देखा जाँचा है। और इसके लिए भी वे बधाई की पात्र हैं।"[1] मालती जी ने नारी-हृदय की आकांक्षाओं, मानसिक-ग्रन्थियों एवं समस्याओं को विशेष रूप से अंकित किया है। उनकी गल्पों में नारी का प्रेयसी-रूप सर्वाधिक प्रबल रहा है—कतिपय कहानियों में यह प्रबलता दोष की सीमा तक पहुँच गई है। उदाहरणार्थ 'हसीन ख्वाब' की नायिका नसीम, 'अतृप्त' की नायिका अचला और 'परवश-बेबस' की नायिका छाया विवाहिता होकर भी पर-पुरुष से प्रेम-सम्पर्क स्थापित करती हैं। अचला और छाया तो इसी पीड़ा में घुलकर प्राण त्याग देती हैं कि उनके प्रेमी उन्हें प्राप्त नहीं हो सकते, क्योंकि वे सधवा हैं। 'एकान्त साधना' की राधा अपने प्रेमी की तुष्टि के लिए पुत्र को देश-सेवा की ओर उन्मुख करती है। उधर चित्रा की नायिका वासना के कुत्सित आवेग में अपने मातृ-कर्तव्य तक का विस्मरण कर देती है। वर्तमान युग में उक्त प्रकार की पात्राओं का अस्तित्व देशकाल-विरुद्ध अथवा अस्वाभाविक नहीं माना जा सकता, किन्तु फिर भी साहित्य में ऐसे पात्रों एवं कथानकों का [illegible] समाज के लिये अहितकर अथवा अशिव है। इसके अतिरिक्त यह लेखिका के सीमित दृष्टिकोण का सूचक है कि उन्होंने नारी के

---

१. देखिये 'संघर्ष', भूमिका, पृष्ठ ५

पुत्री, भगिनी, पत्नी; और सबसे चरम मातृ रूप तक की उपेक्षा करके उसके प्रेयसी-रूप को मान्यता दी है।

पुरुष पात्रों को आलोच्य लेखिका ने सहज रूप में प्रस्तुत किया है। उनमें मानवोचित त्रुटियाँ भी हैं; और गुण भी। 'मेरी दीदी' और 'इन्जेक्शन' के नायक—क्रमश: जगमोहन और सुरेश—अपनी पत्नियों के प्रति अन्यायपूर्ण आचरण करते है, तो 'हसीन ख्वाब' का नादिरशाह और 'अतृप्त' का कामेश्वर ऐसे पात्र हैं जो अपनी पत्नियों से अन्यतम प्रेम करते हैं। 'चिरनिद्रा' का कुमार, 'दो भाई' का गोपाल, 'कसौटी' का विपिन, 'अंजुमन' का सिकन्दर, 'देवता' का कमल आदि अनेक पात्र ऐसे है जिन्होंने उदात्त भावों का परिचय देकर अनुकरणीय आदर्श प्रस्तुत किये हैं। राष्ट्रीय कहानियों में लेखिका ने ऐसे पात्र-पात्राओं की सृष्टि की है जो देश-भक्ति के लिये सर्वस्व अर्पण करके अपने को धन्य समझते हैं। उन्होंने परोक्ष प्रणालियों के अतिरिक्त अनेकश: वर्णनात्मक शैली में भी चरित्र-चित्रण किया है। उदाहरणार्थ 'एकान्त साधना' शीर्षक कहानी के प्रारम्भ में राधा के व्यक्तित्व का वर्णन अवलोकनीय है—"सदा की गम्भीर राधा के चेहरे पर धीमी धीमी मुस्कराहट सदाबहार की तरह खिली ही रहती थी। उसके माथे पर बल कभी भी किसी ने न देखे थे। उसका सुन्दर मुस्कराता हुआ चेहरा एक न भूलनेवाली चीज थी। राधा का पति गजेन्द्र कभी कभी सोचता—यह मानवी है या देवी? उसने कितनी ही बार राधा को व्यर्थ की बातों पर डाँटा भी था, अपनी ही गलती पर उसे बुरा-भला भी कहा था, पर राधा ने कभी शिकायत न की, कभी आँखें न उठाई। लोगों की निगाहों में उसका जीवन लक्ष्यहीन-सा था। न पहिनने का शौक न घूमने का और न ही अपनी सुन्दरता का होश।"[1]

पात्रों के आन्तरिक भावों को व्यक्त करने के लिए लेखिका ने प्रसगानुकूल रोचक कथोपकथन की योजना की है। उदाहरणार्थ 'चूड़ीवाला' कहानी में बालिका तारा तथा चूड़ीवाले का यह सम्भाषण अवलोकनीय है—

"बालिका ने जेब से दो पैसे निकालकर कहा—'दो पैछा ले लो चूड़ीवाले।'

चूड़ीवाले ने गम्भीरता से कहा—'जाओ भीतर से और ले आओ।' अनमनी-सी बालिका भीतर गई। चूड़ीवाले ने भीतर ही से बालिका की आवाज़ सुनी—'अम्मा कहती हैं दो आना लोगे?'

चूड़ीवाले ने कहा—'नही साढे तीन आना ही दे दो।'

'अम्मा कहती हैं दो आना देंगे, नहीं तो चूड़ी उतार लो।' निराशा भरे स्वर में बालिका ने कहा। फिर अपने मन से जोड़ा—दो पैसा ले लो न चूलीवाले।"[2]

आधुनिक नारी की रुचि, मान्यताओ एव समस्याओ के सजीव चित्र अंकित करना

१. एकान्त साधना, पृष्ठ १

२. कमला, सितम्बर १६४०, पृष्ठ ५२६

आलोच्य कहानियो का लक्ष्य रहा है। इसके लिए समकालीन देशकाल को दृष्टिपथ में रखकर प्राय. समस्याओं के यथार्थ चित्र प्रस्तुत किये गए हैं। वर्तमान भारतीय नारियाँ पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित होकर अपने चिरप्रथित आदर्श का विस्मरण करके पंकिल मार्ग का अनुसरण कर रही हैं। वे त्याग एवं आदर्श के पथ से भ्रष्ट होकर वासना के अस्थिर आकर्षण को सत्य मानकर भगिनी, पत्नी, माता आदि के पावन कर्त्तव्यों का विस्मरण करके प्रेयसी-रूप पर बल दे रही हैं। श्रीमती ढिंडा ने नारी-जीवन की यह समस्या तो प्रस्तुत की है, किन्तु इसके समाधान के लिए उन्होने कोई प्रयत्न नही किया। इस प्रसंग मे 'बच्चन' जी की यह उक्ति देखिए—"आधुनिक समाज में नारी के सामने उपस्थित होनेवाली समस्याओ से वे खूब परिचित हैं। समस्याओं का हल ? आशा है वे इसे बुरा न मानेंगी यदि मैं कहूँ कि उसकी ओर उन्होंने ध्यान नही दिया। जहाँ दिया है वहाँ नवीन मान्यताओं को ला सकने में वे समर्थ नहीं हुई। पर समस्याओं को ठीक से रखना भी कम गुण नहीं। आज का सामाजिक जीवन जिन मानसिक गुत्थियो को सामने लाता है उनको मालती जी ने देखा है······जहाँ उन्होने पुरानी मान्यतायें रखी हैं वे उनकी प्राण प्रतिष्ठा नही कर सकी।"[१] यहाँ यह उल्लेखनीय है कि लेखिका ने पारिवारिक कहानियों के अतिरिक्त अपनी राष्ट्रीय कहानियों में भारत की स्वतन्त्रता के लिये किये गये अहिंसात्मक एवं क्रान्तिकारी प्रयासो की चर्चा करके तत्कालीन स्थिति को प्रतिबिम्बित किया है।

विवेच्य कहानियों मे सरल एवं व्यावहारिक भाषा-शैली का प्रयोग हुआ है। फुर्तीलेपन, गिरफ़्तारी, सुपुर्द, तकाज़ा, ज़िन्दा, खूंखार, तबाही आदि व्यावहारिक उर्दू-शब्दों[२] तथा हृदय हिल जाना, बीड़ा उठाना, तीर निशाने पर बैठना, सिर चढ़ाना[३] आदि मुहावरो के प्रसंगानुकूल प्रयोग ने भाषा मे पर्याप्त सजीवता की वृद्धि की है। उनके वाक्य लघु एवं प्रभावोत्पादक हैं तथा शैली मुख्यतः वर्णनात्मक है। प्रमाणार्थ एक उदाहरण द्रष्टव्य है—"ललिता कुमार के लिए पहेली बन गई कभी न सुलझनेवाली पहेली। जब कभी कुमार उसे हँसाने की कोशिश करता तो वह अधिक व्यथित हो उठती। साकार चलते फिरते गम को देखकर कुमार का हृदय रो उठता। एक दिन कुमार को सब-कुछ असह्य मालूम हुआ। वह कहने लगा, 'ललिता, ऐसे कब तक काट सकोगी जिन्दगी ?' ललिता ने अपनी फूली आँखों से कुमार की तरफ इस तरह देखा जैसे वह ऐसी बात कह रहा है जो वह समझ नही पाती।"[४]

मालती जी की कहानियों के अनुशीलन से स्पष्ट है कि उनमें आधुनिक समाज-सापेक्ष नारी की समस्याओं का यथार्थ स्वरूप अंकित किया गया है। किन्तु, समस्याओं

---

१. संघर्ष, भूमिका, पृष्ठ ४

२. देखिये 'संघर्ष,' पृष्ठ १२, १३, ४०, ४१, ६२, ६४, ६५

३. देखिये 'संघर्ष,' पृष्ठ ७, १४, १३१, १३२

४. एकान्त साधना, पृष्ठ ४५

का समाधान देने के लिये लेखिका ने अपनी ओर से विशेष प्रयत्न नहीं किया और जहाँ किया भी है, वहाँ नवीन मान्यताओं को न ला सकने के कारण वे सफल नहीं हुईं। उनकी कहानियों का विषय-क्षेत्र परिमित है—घर और नारी का हृदय। तथापि प्रतिपाद्य को सरल और रोचक रूप में प्रस्तुत करने में वे सफल हुई हैं।

८. श्रीमती राजकुमारी शिवपुरी

श्रीमती राजकुमारी द्वारा लिखित 'स्मृतियों की आँधी' शीर्षक कहानी-संग्रह में निम्नलिखित पन्द्रह कहानियाँ संगृहीत हैं—दो फूल, होली, हीरा, ज़रूरत, अवशेष, कनक, आप तो कुछ समझते नहीं, मरने से पहले एक बार तुमसे अवश्य मिलूंगी, प्राचीन रोमान्स, माथे का टीका, हाय रे समाज, साधना, पूजा के फूल, नैना, कहीं ऐसा न हो। ये कहानियाँ सामाजिक हैं और इनमें निम्नलिखित विषयों की अभिव्यक्ति हुई है—असफल प्रेम, माँ की ममता, धनिकों द्वारा निर्धनों की उपेक्षा, अछूतों के प्रति समाज की हृदयहीनता, वृद्धा सास को भारस्वरूप मानकर वधुओं द्वारा उसकी मृत्यु की कामना, दाम्पत्य प्रेम, नारी की निष्ठुरता एवं सहृदयता, विधवा के प्रति समाज के अनुदार विचार। 'कनक' और 'माथे का टीका' शीर्षक अपवादस्वरूप कहानियों के अतिरिक्त उक्त सभी कहानियों में घटनाओं का विकास एवं परिणति प्राय· करुण रस में हुई है। अधिकांश कहानियों में प्रेम के असफल चित्र अंकित हुए है। सामाजिक बाधाओं के कारण, किसी भ्रान्ति के कारण अथवा पुरुष वर्ग की निष्ठुरता के कारण नायक और नायिका का प्रेम चिर मिलन में परिणत नही हो पाता और अन्त होता है नायक अथवा नायिका की मृत्यु में अथवा दोनों की या किसी एक की वेदनातुर भावना में।

श्रीमती शिवपुरी ने भावुकता एवं करुणा की रेखाओं से अपने कथा-पात्रों का चरित्र-निर्माण किया है। एक-आध गौण पात्रों के अतिरिक्त प्रायः सभी पात्र-पात्राएँ वास्तविकता की अपेक्षा भाव-लोक में अधिक विचरण करते है। प्रायः परिस्थिति-प्रताड़ित होने के कारण वेदना एवं निराशा ही उनका प्राप्य है, आह्लाद एवं उत्कण्ठा के क्षण उनके जीवन में अत्यन्त विरल रहे है। कतिपय पात्रों ने आदर्शवादिता का परिचय भी दिया है। उदाहरणार्थ 'अवशेष' में पंकज समाज की उपेक्षा करके भी अछूत बालिका कोयली को भाई का स्नेह देता है, 'कनक' में कनक कुत्सितहृदया निशा द्वारा सताये गए कंवल का उद्धार करने में अपने प्राणों की बाजी लगा देती है। यह उल्लेखनीय है कि पात्रों के व्यक्तित्व के अनुरूप उनके संवादों में भी भावुकता एवं वेदनाजन्य निराशा का बाहुल्य रहा है। विचारशील पात्रों की उक्तियों में जीवन-दर्शन विषयक तथ्यों की विश्लेषणपरक अभिव्यक्ति हुई है। उदाहरणस्वरूप 'हाय रे समाज' शीर्षक कहानी में प्रकाश एवं ज्योति के कथोपकथन का यह अंश अवलोकनीय है—

"कारण ?"

"कारण ! मुझमें कलंक है ज्योति।"

"कलंक ? हूँ, चाँद में भी कलंक है प्रकाश। किन्तु चाँद मे कलंक होते हुए भी वह आकाश में रहता है, चाँदनी निष्कलंक होकर उज्ज्वल होकर भी पृथ्वी पर बिछी रहती है।"

"किन्तु मैं तुम्हे दुखी नही देख सकता ज्योति।"

'प्रकाश, संसार में आकर परपीड़ा से पीड़ित होना मानव का धर्म है; अपने ही सुख में डूबे रहना भी कोई जीवन है।"

"किन्तु मैं तुम्हारा जीवन धूल में नहीं मिलाना चाहता।"

"धूल में···धूल में हीरे का जन्म होता है। प्रकाश, धूल में ही मिलकर बीज पौधे का रूप धारण कर सुन्दर-सुन्दर पुष्पो की सृष्टि से, संसार को मुग्ध कर आश्चर्य-सागर मे डुबा देता है। और···एक दिन मानव भी धूल में मिल जाता है, फिर···।"[१]

उक्त उद्धरण से यह भी प्रमाणित है कि पात्रों के कथोपकथन मे प्रसंगानुकूल उक्ति-वैचित्र्य, वाग्वैदग्ध्य एवं तर्क का भी समावेश हुआ है। इन कहानियों में अधिकांश संवाद प्रायः ऐसे हैं कि जिनमे या तो जीवन-दर्शन के तथ्यों का विश्लेषण हुआ है अथवा पात्रों के भावसंकुल मनोवेगों की अभिव्यक्ति हुई है। फलतः सहज संवाद अत्यल्प हैं और इसी कारण प्रस्तुत कहानियों में प्रायः कृत्रिमता एवं नीरसता का प्रसार रहा है।

राजकुमारी जी ने प्रायः रूढ़िप्राप्त समस्याओं का चित्रण किया है अर्थात् समाज की जातीय संकीर्णता, निर्धनों एवं अछूतों का निरादर, विधवा के प्रति अनुदारता, प्रेमियों के मार्ग मे बाधा आदि से आगे वे नही बढ़ी हैं। उनका लक्ष्य प्रायः करुण अनुभूतियों का चित्रण रहा है। इसी लक्ष्य की प्रेरणा से उन्होने जीवन के सुखी एवं सन्तुष्ट चित्रों को प्रायः ग्रहण नहीं किया। जीवन के प्रति यह अस्वस्थ एवं एकांगी दृष्टिकोण विशेष प्रशंसनीय नहीं माना जा सकेगा। आखिर जब कथा-साहित्य मानव-जीवन का सच्चा चित्रांकन है, तो जीवन के आह्लाद एवं उल्लास के प्रति लेखिका की यह विरक्ति क्यों ?

आलोच्य कहानियों में तत्सम-बहुला, समस्त शब्दान्वित, गम्भीर एवं परिष्कृत भाषा-शैली को स्थान मिला है। जैसे जटिल एवं बोझिल विषय है, वैसी ही गुरु-गम्भीर भाषा भी है, किन्तु मात्र भावानुरूपता ही अभिव्यंजना की 'उत्कृष्टता' सिद्ध नहीं कर सकती। विश्लेषणात्मक एवं नीरस संवादों ने लेखिका की शैली को और भी बोझिल बना दिया है, किन्तु सर्वत्र ऐसा नहीं है। सामान्य घटनाओं एवं पात्रों की गतिविधियों में व्यक्त लघु एवं सारगर्भित संवादो ने निश्चय ही शैली में सजीवता का संचार किया है। भाषा एवं शैलीगत गम्भीरता के अनुरूप अनेकशः सूक्ति-वाक्यों का भी समावेश हुआ है। यथा—"नियति के चक्र के लपेटे में आ जानेवाले प्राणी के लिए संसार की समस्त

१. स्मृतियों की आँधी, पृष्ठ ६७

वस्तुएं समान हो जाती हैं, चाहे वे कितनी भी अमूल्य क्यों न हों।"[1] निष्कर्षस्वरूप सारांश यह है कि सुश्री शिवपुरी को सफलता की उपलब्धि के लिए अभी बहुत साधना करनी होगी। करुण रस की एकांगिता को लाँघकर उन्हें जीवन को उसकी सम्पूर्णता में ग्रहण करना होगा। भाव एवं अभिव्यक्ति दोनों क्षेत्रों में गम्भीरता का अंचल छोड़कर सहजता के धरातल पर पदन्यास करने से निश्चय ही वे सफलता की दिशा में अग्रसर हो सकेंगी।

६. सुश्री तारा पोतदार

सुश्री तारा पोतदार ने 'रेखाएं और बिन्दु' शीर्षक कहानी-संग्रह की रचना की है, जिसमें निम्नलिखित चौदह कहानियों को स्थान प्राप्त हुआ है—उसके पत्र, नौकरों का राशन, पतिंगा, किसकी पसन्द, वह होली, ग्यारह साल, कौन जाने, फारेनजाइटिस, कहानी, मलमल का कुर्ता, मानव और दानव, उस दिन, सरूप, समर्पण। इन कहानियों का स्वरूप प्रायः बौद्धिक है और कथानक इनमे प्रायः नगण्य अथवा विशृंखल रूप में व्यक्त हुए हैं। घटनाओं के उस तारतम्य का, जो कहानियों मे रोचकता और सजीवता का आधार होता है, आलोच्य कहानियों में प्रायः अभाव रहा है। अधिकांश कहानियों में या तो कथा-सूत्रों के संकेत दे दिये गए है अथवा मुख्य पात्र के मानसिक ऊहा-पोह अथवा भावों के आवेग में कोई भूली-बिसरी सम्बद्ध घटना दृष्टान्त-रूप में प्रस्तुत कर दी गई है। 'नौकरों का राशन', 'ग्यारह साल', 'मलमल का कुर्ता', 'सरूप' आदि कतिपय कहानियो में लेखिका क्रमबद्ध कथा-सूत्र प्रस्तुत करने मे तनिक सायास रही भी है तो बीच-बीच में आवश्यकता से अधिक विषयान्तर की प्रवृत्ति ने कथानक को अव्य-वस्थित-सा बना दिया है।

'पतिंगा', 'कौन जानें', 'कहानी', 'मानव और दानव' शीर्षक अपवादस्वरूप कहानियो के अतिरिक्त अन्य कहानियाँ एकपात्रीय है और वह पात्र 'मैं' के रूप में व्यक्त हुआ है। उस पात्र की चिन्तनधारा के अस्त-व्यस्त प्रवाह को ही इन कहानियों में अभिव्यक्ति प्राप्त हुई है। चाहे तो उसे बिखरा-छिटका कथानक कह लें और चाहे उसे उस पात्र के मानसिक ऊहापोह की ही संज्ञा दे। 'उस दिन' और 'समर्पण' शीर्षक कहा-नियों मे तो स्वयं लेखिका ही अपनी अनुभूतियों को लेकर 'मैं' की शैली में उपस्थित हुई हैं। जो भी हो, वस्तुस्थिति यह है कि इन कहानियों में भावना की अपेक्षा विचारो का प्राधान्य है जिससे ये प्रायः कहानियों की सहज विशेषताओं से बहुत दूर जा पड़ी हैं। वर्णन-विश्लेषण के धारा-प्रवाह में लेखिका ने संवादो की भी योजना की है, किन्तु उचित अनुपात के अभाव में ये संवाद उतने सफल नहीं हुए हैं। 'मलमल का कुर्ता', 'उस दिन', 'सरूप', 'समर्पण' आदि कतिपय कहानियों मे तो संवादों के नाम पर यत्र-तत्र एक-आध

---

१. स्मृतियों की आँधी, पृष्ठ ४२

उक्तियाँ ही है, जो उक्त कहानियों की वर्णनात्मक नीरसता को दूर करने में विशेष सहायक सिद्ध नही हुई है। वस्तुतः इन कहानियों में देशकाल और वातावरण का प्राधान्य है। 'कहानी' तथा 'मानव और दानव' शीर्षक आख्यायिकाएँ शुद्ध रूप से वातावरण-प्रधान हैं। इनमें अथ से इति तक साम्प्रदायिक रक्तपात एवं धर्मान्धता-प्रेरित क्रूरता का चित्रण हुआ है। इसी प्रकार अन्य कहानियों में भी कही मुख्य रूप में और कहीं प्रासंगिक रूप में देशकाल सम्बन्धी तथ्यों का उल्लेख हुआ है। यथा—

(अ) "आजकल साहित्य सेवा के नाम पर खुल्लमखुल्ला व्यवसाय हो रहा है। मैं दोष भी नही देता। गुलाम भारत में उदरपूर्ति का कोई मार्ग न मिलने से यदि लोग इसे अपनाएँ तो हम उन्हे दोष ही क्यों दे ! फिर मेरे समान तो लाखों बेकार पड़े हैं।"[1]

(आ) "कहाँ वे ऊँचे पूरे खूबसूरत घोड़े जिनकी तारीफ़ में तवारीख के पन्ने भरे पड़े हैं और कहाँ ये। उँह, पर समय जो बदल गया है। इस समय आदमियों को ही खाने को नही मिलता, तो घोड़े की क्या बिसात ? सुना है, एक समय था जब हमारे यहाँ के राजा महाराजा तो क्या, सेठ साहूकार भी हीरा, जवाहारात बोरों में भरकर रखा करते थे। भगवान की माया कही धूप कही छाया।"[2]

सुश्री पोतदार ने कहानियों की रचना प्रायः सोद्देश्य की है। 'नौकरों का राशन' और 'उसके पत्र' में समसामयिक परिस्थितियों की अभिव्यक्ति प्रमुख लक्ष्य है और 'पतिगा' तथा 'ग्यारह साल' में जीवन-दर्शन सम्बन्धी विशिष्ट दृष्टिकोण की स्थापना की गई है। 'वह होली', 'उस दिन' तथा 'समर्पण' में किसी करुण अथवा सरस अनुभूति का चित्रण है और 'किस की पसन्द' तथा 'सरूप' में व्यक्ति-वैचित्र्य की अभिव्यक्ति रही है। भाव-पक्ष सम्बन्धी उक्त तथ्यों से भी अधिक उद्दिष्ट लक्ष्य, जो आलोच्य कहानियों में समान रूप से व्याप्त रहा है, यह है कि लेखिका की दृष्टि शिल्प-विधान विषयक नूतन प्रयोगों की ओर रही है। जहाँ तक भाषा का प्रश्न है, इन कहानियों में सरल शब्दों का प्रयोग होने पर भी शब्दाडम्बर की प्रवृत्ति है। इससे शैली में दुरूहता एवं नीरसता के अन्तःप्रसार को सहज ही लक्षित किया जा सकता है। पाठक प्रायः इन कहानियों को उत्सुकता से पढ़ना नही चाहेगा, क्योंकि शैली की कृत्रिमता प्रायः मस्तिष्क पर बोझ बनकर छा जाती है। 'उस दिन' और 'समर्पण' जैसी कतिपय कहानियाँ तो भाषा शैली की अस्पष्टता एवं विशृंखलता के कारण कहानी की अपेक्षा विक्षेप शैली में लिखे गये निबन्ध के अधिक निकट हैं।

१०. सुश्री सीता देवी

सुश्री सीता देवी के 'वारुणी' शीर्षक कथा-संग्रह में निम्नलिखित आठ कहानियाँ संगृहीत है—पुनर्जन्म, हाथी के दाँत, पुत्र का हृदय, पाप का मूल्य, अपना-पराया, दिन

१-२. रेखाएँ और बिन्दु, पृष्ठ ३, २५

का भूला, सौतेला बेटा, बिना टिकट की यात्रा। ये सब कहानियाँ सामाजिक है और इनमें निम्नलिखित विषयों का चित्रण हुआ है—सामाजिक संकीर्णता, देश-विभाजन के समय साम्प्रदायिक दंगे, रक्तपात, त्रिया-हठ, त्रिया-चरित्र, विमाता का दुर्व्यवहार, युवकों की आदर्शवादिता, पाखण्डी समाज-सुधारकों का व्यावहारिक छिछला रूप आदि। प्रायः सभी कहानियों में चरित्र-चित्रण का प्राधान्य है। लेखिका के पात्र कल्पना-लोक के अद्भुत प्राणी नहीं हैं, अपितु यथार्थ जगत् के सरल एवं सहज व्यक्ति हैं। यदि वे आदर्श कार्य भी करते हैं, तो भी मानवीय सम्भावनाओं की सीमाओं का अतिक्रमण नहीं करते। उदाहरणार्थ 'हाथी के दाँत' का रामनाथ अपने पर-उपदेश-कुशल समाज-सुधारक पिता को बारात नहीं लौटाने देता, अपितु गुण्डों द्वारा सतायी हुई गर्भवती लीला का पाणिग्रहण करके ही रहता है। 'दिन का भूला' की सुनीता अपने कुमार्गोन्मुख पति को सर्वनाश होने के पूर्व ही सँभाल लेती है। 'सौतेला बेटा' का रामप्रकाश अपनी सौतेली माता से सब प्रकार के कष्ट एवं अन्याय पाकर भी उनके शव की आदर से अन्त्येष्टि करता है। ऐसे पात्र समाज में दुर्लभ नहीं हैं। अहमद-जैसे रँगे सियार, रायबहादुर दीनानाथ जैसे पर-उपदेशक, विष्णुप्रिया-जैसी पाप-प्रतिमाएँ, सावित्री-जैसी सौतेली माताएँ भी समाज में सर्वत्र सुलभ हैं। तात्पर्य यह है कि लेखिका ने चरित्र-चित्रण में मनोवैज्ञानिक सम्भावनाओं का सर्वत्र ध्यान रखा है। मानवोचित दुर्बलताएँ, विवशताएँ एवं आदर्श उनके पात्रों में साकार हो गये हैं। वैसे, लेखिका ने पात्रों की प्रवृत्तियों का स्थूल चित्रण किया है। उनके मनोभावों की गहराइयों में पैठकर अन्तर्द्वन्द्व अथवा परिस्थितिजन्य कुंठाओं के चित्रण का उन्होंने प्रयास नहीं किया। परोक्ष चित्रण के अतिरिक्त उन्होंने अनेकशः प्रत्यक्ष चरित्र-चित्रण भी किया है। उदाहरणार्थ 'हाथी के दाँत' शीर्षक कहानी के आरम्भ में क्रमशः रायबहादुर दीनानाथ एवं उनके पुत्र रामनाथ की चारित्रिक विभिन्नताओं का पृथक्-पृथक् अनुच्छेदों में वर्णन किया गया है।[1]

आलोच्य कहानियों में पात्र एवं स्थिति की अनुकूलता का ध्यान रखते हुए लघु एवं सारगर्भित संवादों का आयोजन हुआ है, जो चरित्रांकन के अतिरिक्त घटनाओं के तारतम्य में भी योग देते रहे हैं। संवादो में यथाप्रसंग तर्कशीलता एवं उक्ति-वैचित्र्य का सुन्दर अन्तःप्रसार रहा है। शैली में चित्रगुण के समावेश के लिए पात्रो की चेष्टादि का निरूपण भी उन्होंने स्वाभाविक रूप में किया है। यथा—(अ) "विष्णुप्रिया मसाला पीसते-पीसते बोली"[2], (अ) "मैं ज़रा साहस करके बोला।"[3] पात्र-वैविध्य एवं घटना-वैविध्य के अनुरूप संवादों में भी उक्ति-वैविध्य को स्थान दिया गया है। संवादों की भाषा प्राय. एकरूप है, केवल 'पुनर्जन्म' कहानी में मुसलमान पात्रों के मुख से बुज़दिल, फ़ायदा आदि अत्यन्त सामान्य उर्दू-शब्दों का व्यवहार कराया गया है।

---

१. देखिये 'वारुणी', पृष्ठ १२

२-३. वारुणी, पृष्ठ ३०

सुश्री सीता देवी की कहानियों में जिन सामाजिक प्रवृत्तियों का उल्लेख हुआ है, वे सार्वकालिक हैं। केवल 'पुनर्जन्म' मे भारत-विभाजन के समय होनेवाले साम्प्रदायिक दंगों की चर्चा इसका अपवाद है। 'हाथी के दाँत' में समाज-सुधार का दम भरनेवाले रंगे सियारों एवं 'बिना टिकट की यात्रा' में सरकार की आँखों मे धूल झोंककर बिना टिकट यात्रा करनेवालों पर गहरे व्यंग्य किये गए है। 'पुत्र का हृदय', 'पाप का मूल्य', 'दिन का भूला' तथा 'सौतेला बेटा' मे गार्हस्थ्य जीवन के विविध चित्र अंकित करते हुए लेखिका ने स्वार्थ, विवशता, कपट, आदर्शवादिता आदि भिन्न विविधताओं में घिरे गृहस्थ-पात्रों का यथातथ्य चित्र अंकित करने का प्रयास किया है। 'पाप का मूल्य' में वृद्ध-विवाह की विडम्बना तथा त्रिया-चरित्र की विचित्रताओं की ओर भी इंगित किया गया है। वस्तुतः इस कथा-संग्रह में लेखिका का लक्ष्य समाज, धर्म एवं संस्कारों के अनुरूप पात्र-वैविध्य का चित्रण करना है।[1] इस दिशा में उन्होने विशेष व्यापक दृष्टि का परिचय तो नहीं दिया, फिर भी जिन पात्रों को उन्होंने अपनी कहानियों में स्थान दिया है, उनके चरित्र के विभिन्न पक्षों के परिस्थिति-सापेक्ष उत्कर्षापकर्ष में वे सफल रही हैं।

'वारुणी' की कहानियों की रचना व्यास शैली में हुई है। यद्यपि इनमें प्रचलित देशज, तद्भव एवं विदेशी शब्दों का पर्याप्त प्रयोग उपलब्ध होता है, तथापि भाषा का झुकाव शुद्ध हिन्दी की ओर अधिक रहा है। 'कब्र मे पैर लटकाये बैठे हुऐ थे',[2] 'सीधे मुँह बात भी न करती थीं'[3] आदि मुहावरों के व्यवहार से भाषा में विशिष्ट प्रांजलता एवं माधुर्य का अन्त.प्रसार हो सका है। 'पुनर्जन्म', 'पाप का मूल्य' तथा 'बिना टिकट की यात्रा' शीर्षक कहानियों की रचना आत्मकथन की शैली में हुई है तथा शेष गल्प अन्य पुरुष की शैली में प्रणीत हैं। शैली में सर्वत्र सजीवता एवं मार्मिकता के अतिरिक्त एक विशेष प्रवाह परिलक्षित होता है। 'पाप का मूल्य' कहानी से ये पंक्तियाँ द्रष्टव्य है—
"सत्तावन वर्ष की अवस्थावाले पं० लक्ष्मीशंकर मिश्र जब अपना चौथा विवाह करके उन्नीस वर्ष की विष्णुप्रिया को घर ले आये, तो न जाने क्यों अनायास ही मेरा हृदय स्पंदित हो उठा। इस श्वेत संगमरमर-सी विष्णुप्रिया को मैं एकटक देखता ही रह गया। एकहरा वदन, सुडौल मुँह, श्वेत रंग, आरक्त कपोल—और सत्तावन वर्ष के, वृद्ध जर्जर, समाप्तप्राय सूखी-सी टाँगोंवाले तथा ऊँची धोती पहिने हुए संक्षेप-से पं० लक्ष्मीशंकर ! ओफ़ !"[4]

११. श्रीमती नमिता लुम्बा

श्रीमती नमिता लुम्बा के 'जिन्दगी के अनुभव' शीर्षक कहानी-संग्रह में निम्नलिखित सोलह कहानियाँ संकलित हैं—प्रतिदान, जिन्दगी का अनुभव, अपराजिता,

---

१. देखिये 'वारुणी', दो शब्द, पृष्ठ ६
२-३-४. वारुणी, पृष्ठ ३०,३३,२७

लेडीज़ कम्पार्टमेंट, खूनी, बीती बात, कमल-कुसुम, तंद्रा, उफान, निराशा, कवयित्री, विसर्जन, सिविल लाइन, दिल्ली दूर है, जनवरी की एक रात, मातृहीना। इनमें मानव-जीवन के सुख-दुःख के विविधतापूर्ण चित्र अंकित किये गए हैं। अधिकांश कहानियों में पुरुषों की भ्रमर-वृत्ति, उनके द्वारा प्रवंचित नारियों की आत्म-पीड़ा, पति अथवा प्रेमी की स्वार्थपरता, पत्नी अथवा प्रेमिका की विवश कुंठाओं आदि को मूर्त रूप प्रदान किया गया है। इसके विपरीत 'खूनी' शीर्षक कहानी में श्रेष्ठि-पुत्री उत्पला द्वारा ड्राइवर विनय से प्रेम करने और फिर एक धनी युवक से विवाह कर लेने का वर्णन करके नारी द्वारा पुरुष के प्रति प्रवंचना की भी चर्चा की गई है। किन्तु, विनय ने इस घटना को नारी की भाँति मौन भाव से न सहकर उत्पला की हत्या करके चित्र का दूसरा पहलू प्रस्तुत किया है। अपराजिता, लेडीज़ कम्पार्टमेंट, कमल-कुसुम, तंद्रा, सिविल लाइन, दिल्ली दूर है आदि कहानियों में नारी-जीवन के विविध चित्रों के अतिरिक्त अछूत-समस्या, दलित वर्ग के अभावों और मातृहीना बालिका की व्यथा का यथार्थवादी शैली में चित्रण हुआ है। इन कहानियों में कहीं सुखपूर्ण, कहीं करुण और कहीं हास्य-व्यंग्यपूर्ण चित्र प्रस्तुत किये गए हैं।

श्रीमती लुम्बा ने नारी-जीवन की विविधता का अंकन करके चरित्र-चित्रण में एकरसता नहीं आने दी है। उनका उद्देश्य यह चित्रित करना है कि जहाँ नारी सहनशीलता और त्याग के बल पर पुरुष के विश्वासघात को भी सहज भाव से स्वीकार कर लेती है वहाँ पुरुष ऐसी ही परिस्थितियों का बदला नारी को श्रीहीन करके लेता है। 'जिन्दगी का अनुभव' और 'बीती बात' शीर्षक कहानियाँ 'खूनी' शीर्षक कहानी से इसी अर्थ में भिन्न है। डॉ० रामकुमार वर्मा ने श्रीमती लुम्बा की चरित्र-चित्रण-शैली के विषय में ठीक ही लिखा है—"चरित्रों की रूपरेखा में लेखिका ने परिस्थिति और संस्कार का समन्वय करते हुए मर्मस्पर्शी स्थल उपस्थित किए हैं। 'प्रतिदान' और 'लेडीज़ कम्पार्टमेंट' इसके उदाहरण है। कभी-कभी पात्र के व्यक्तित्व की प्रत्येक रेखा स्पष्ट करने में कथानक विस्तृत होकर बिखर गया है। 'कमल-कुसुम' कहानी इसीलिए बड़ी हो गई, किन्तु ऐसा कम स्थलों पर हुआ है।"[1] श्रीमती लुम्बा ने चरित्र-चित्रण में मनोविज्ञान के निर्वाह की ओर भी उचित ध्यान दिया है। इसीलिए वे सामाजिक परिस्थितियों के प्रति व्यक्ति की अनुकूल और प्रतिकूल प्रतिक्रियाओं का मार्मिक चित्रण कर सकी हैं। फिर भी उनकी कहानियों में एक दोष को अवश्य स्वीकार करना होगा। उन्होंने नारी के प्रति सहानुभूति से प्रेरित होकर पुरुष-पात्रों का चरित्र प्रायः एकांगी रूप में प्रस्तुत किया है। यही कारण है कि उनकी अधिकांश कहानियों में पुरुष को प्रतारक, विश्वासघाती, हृदयहीन तथा स्वार्थी प्राणी के रूप में चित्रित किया गया है।

श्रीमती लुम्बा ने पात्रों के मनोभावों के आदान-प्रदान के लिए संक्षिप्त, पात्रानु-

---

१. जिन्दगी के अनुभव, परिचय, पृष्ठ ब

कूल एवं रोचक संवादों का विधान किया है। 'कमल-कुसुम', 'कवयित्री', 'विसर्जन', 'सिविल लाइन', 'जनवरी की एक रात' और 'मातृहीना' शीर्षक कहानियों का प्रारम्भ कथोपकथन से हुआ है। उन्होंने संवादों को भाव और भाषा, दोनों की दृष्टि से पात्रानुकूल रखा है, फलतः पात्रों की उक्तियों में पर्याप्त सजीवता और रोचकता विद्यमान है। उदाहरणार्थ 'दिल्ली दूर है' कहानी में फुलिया और उसके पति चमरू का यह वार्तालाप देखिये—

"वह कहती, 'तुम्हें क्या? काहे को खामखा अपना पसीना बहाते हो? क्या तुम्हें कोई राज मिल जायगा? या हमें एक दिन सिनेमा दिखला पाओगे? यहाँ तो बच्चे भूखे मरते है और तुम लगे हो कांग्रेस और गांधी बाबा के नाम पर उछल-कूद करने। हाँ नहीं तो।' और वह मुँह फुलाती हुई एक ओर जा बैठती। चमरू हँसता हुआ आता और उसे छेड़ने लगता। 'अरी तू तो हमेशा फूहड़ ही रहेगी। आज कांग्रेस की बात कौन नही जानता? कांग्रेस तो हम लोगन की पंचायत है। देखती नहीं गांधी बाबा दिल्ली में हरिजनों के बीच बैठे रहते हैं?—उनका राज होगा तो हम सबका भाग फिर जायगा। फिर तुझको ऐसे थोड़े ही रहना पड़ेगा। देखना तुझे बढ़िया खिलाऊंगा। बढ़िया पहनाऊँगा।"[1]

आलोच्य कहानियो में वर्तमान समाज की निम्नलिखित समस्याओं का चित्रण हुआ है—(अ) विवाहित पुरुष द्वारा परनारी से प्रेम करके पत्नी और प्रेमिका, दोनों से विश्वासघात करना अथवा वेश्यागमन, मद्यपान आदि कुप्रवृत्तियों के कारण पत्नी की उपेक्षा करना (प्रतिदान, निराशा, कवयित्री), (आ) धनी पुरुष अथवा स्त्री द्वारा निर्धन को प्रेमपात्र बनाकर मन बहलाना और स्वार्थपूर्ति के उपरान्त उसे दूध की मक्खी की भाँति निकाल फेंकना (जिन्दगी का अनुभव, खूनी), (इ) अछूतों तथा दलितों का समाज द्वारा तिरस्कार तथा उनके आर्थिक अभावों का चित्रण (कमल-कुसुम, दिल्ली दूर है), (ई) दहेज-समस्या के कारण कन्या को भार समझना (निराशा) आदि। श्रीमती लुम्बा ने दलित वर्ग के प्रति पाठकों की सहानुभूति जाग्रत करने के उद्देश्य को सम्मुख रखते हुए जीवन के विभिन्न पक्षों के स्थिति-सापेक्ष चित्र प्रस्तुत किये हैं। उन्होंने श्रमिक वर्ग की भाँति नारी को भी शोषित के रूप में स्वीकार किया है। पूंजीपति श्रमिकों पर अत्याचार करके उनके जीवन में अभावो की सृष्टि करते हैं और पुरुष पति अथवा प्रेमी के रूप में नारी की सद्वृत्तियों का अनुचित लाभ उठाते हैं। इस प्रसंग में 'कवयित्री' शीर्षक कहानी में भुवन की विचारधारा का निम्नलिखित अंश उद्धरणीय है—"नारी के अन्दर जो महान् आत्मा सुप्तावस्था में पड़ी हुई है, उसे कौन जगाए? उसे इस सामाजिक शिथिलता, इस मिथ्या बेबसी को झाड़कर उठ खड़े होने में कौन सहायता करे? पुरुष? कभी नही। भला वह अपना नुकसान क्यों कर होने देगा? क्या कभी किसी पूंजीपति ने

---

१. जिन्दगी के अनुभव, पृष्ठ १२८

अपने मजदूरों को उनकी असली हालत समझाने, उन्हें इन्सान का हक बताने की कोशिश की है।"[1] यहां यह उल्लेखनीय है कि उन्होंने इन समस्याओं को यथार्थवादी शैली मे प्रस्तुत करने पर भी इनके मूल में सुधार की प्रेरणा अवश्य रखी है।

श्रीमती लुम्बा की भाषा प्रांजल, मुहावरेदार और प्रवाहपूर्ण है। उनकी शैली में वर्णनात्मकता की अपेक्षा चित्रात्मकता को अधिक स्थान प्राप्त हुआ है। व्यक्ति, समाज अथवा देश की कुरूपताओं का उल्लेख करते समय शैली में व्यंग्य-विद्रूप की तीव्रता का भी स्वतः समावेश हो गया है। यथा—"संध्या को लड़की ढूंढ़ने में ज्यादा दिक्कत नहीं हुई। भारत में लड़कियों की कोई कमी नही है। सौत है तो क्या हुआ? आदमी दुश्चरित्र है तो भी कोई बात नहीं। शादी के बाद खाने-पहनने को तो दे ही देगा। बाप-मां के कन्धे का तो बोझ हल्का होगा। वे निश्चिन्त तो हो जाएँगे। कुमारी होने की बदनामी तो मिट जायगी। फिर ग़रीब मां-बाप को दहेज की सज़ा भी न भुगतनी पड़ेगी। मरघट के मुर्दे से तो अच्छा है।"[2] निष्कर्षस्वरूप यह कहना उचित होगा कि श्रीमती लुम्बा की कहानियों में कथागत रोचकता, सजीवता एवं व्यंग्यात्मकता प्रायः सर्वत्र सुलभ है। वर्तमान संघर्षों के संसर्ग में मानव की भावनाओं, विवशताओं एवं कुंठाओं के चित्रण में उन्हें विशेष सफलता मिली है। उन्होंने हृदय की सहज प्रेरणा से उत्साहित होकर कथा-रचना की है; इसी कारण उनकी कहानियों में संवेदना, मार्मिकता, उक्ति-वक्रता आदि गुणों का सफल समावेश हुआ है।

१२. श्रीमती प्रकाशवती नारायण

श्रीमती प्रकाशवती ने 'टूटा क्रम' शीर्षक कथा-संग्रह में निम्नलिखित ग्यारह कहानियों को स्थान दिया है—जब देश को लौटियो, कुरूपा की साधना, निवाले, पाप की छाया, अपने अपने देवता, शोरवा, भूखी, सावन का पथिक, प्यास, गाँव का घर, टूटा क्रम। इनमें से अधिकांश कहानियों में नारी-जीवन की दुर्बलताओं, परिस्थितिजन्य विवशताओं एवं अन्तर्वेदना के मर्मस्पर्शी चित्र अंकित किये गए हैं। 'जब देश को लौटियो' के कथानक पर रुस्तम और सोहराब की कहानी की छाया स्पष्ट है। 'कुरूपा की साधना' सामान्य कोटि की दार्शनिक कथा है। 'निवाले' में अधिक खानेवाले नौकर को निकाल देने के विषय में गृहिणी करुणा के हृदय-परिवर्तन की कथा अंकित है। 'पाप की छाया' बंगाल के दुर्भिक्ष से पीड़ित नारी की कथा है, जिसे तन बेचकर भोजन जुटाना होता था। एक दिन उसने पाप की छाया से उत्पन्न शिशु को त्याग देने का निश्चय किया, किन्तु मातृत्व ने उसका हृदय-परिवर्तन कर दिया। 'शोरवा' में पशु-हिंसा का विरोध किया गया है। 'टूटा क्रम' में पुरुष की प्रतिहिंसा तथा नारी की क्षमा, सहनशीलता आदि का

---

१. जिन्दगी के अनुभव, पृष्ठ ९६
२. जिन्दगी के अनुभव, पृष्ठ ८०-८१

चित्रण हुआ है। इसी प्रकार लेखिका की अन्य कहानियों में भी विभिन्न पारिवारिक एवं सामाजिक स्थितियाँ चित्रित हैं। उन्होंने मनोविज्ञान का आश्रय लेते हुए कथानक प्रायः सुखान्त रखे है और प्रायः सर्वत्र हृदय-परिवर्तन की योजना की है। यह उल्लेखनीय है कि वे आकस्मिक हृदय-परिवर्तन द्वारा चरित्रों और घटनाओं को अस्वाभाविक नही बनाती, अपितु पृष्ठभूमि में मनोवैज्ञानिक परिस्थितियों को स्थान देती हैं।

श्रीमती प्रकाशवती ने पुरुषों की अपेक्षा नारियों के चरित्रांकन के प्रति अधिक आग्रह रखा है। दया, उदारता, क्षमा, सहनशीलता, सेवा आदि विशेषताएँ प्रायः सभी पात्राओं में लक्षित की जा सकती है। 'निवाले' की करुणा तथा 'प्यास' की दीपो यदि उक्त गुणो से कुछ काल के लिये रिक्त हो गई तो इसमे लेखिका ने परिस्थितियों को ही दोषी ठहराया है और बाद मे उक्त नायिकाओं के हृदय-परिष्कार द्वारा उन्हें पुनः भारतीय नारी की उज्ज्वल गरिमा से युक्त कर दिया है। लेखिका नारी की दुर्बलताओं से भी परिचित है; 'शोरवा' मे चच्ची तथा गफूर की माँ का पीर ओलिया तथा झाड़-फूंक में अन्धविश्वास इसका उदाहरण है। 'पाप की छाया' मे मणि के स्नेहपूर्ण मातृत्व की सफल अभिव्यंजना की गई है। 'टूटा क्रम' में शेखर, श्यामा तथा रेखा के चरित्र का तुलनात्मक चित्र अंकित करते हुए पुरुष की प्रतिशोध-भावना, कटुता और स्वार्थपरता तथा नारी की सहनशीलता, क्षमा एवं करुणा का उल्लेख किया गया है। 'अपने अपने देवता' में मधु तथा कुंकुम नामक भाई-बहिन की बाल-सुलभ उक्तियों और क्रियाओं की अभिव्यंजना बाल-मनोविज्ञान के सर्वथा अनुरूप है। संवाद-योजना तथा घटना-योजना के अतिरिक्त लेखिका ने मुख्य रूप से पात्रो के मनोभावों के विश्लेषण द्वारा उनके चरित्र की विशेषताओं को स्पष्ट किया है। 'कुरूपा की साधना' में पूर्णा का आत्मचिन्तन इस प्रसंग में अवेक्षणीय है।[1] 'प्यासा' में स्नेह-वत्सल सोनू के पितृ-हृदय का मार्मिक अंकन हुआ है। लेखिका ने यथार्थ तथा आदर्श दोनों प्रकार के पात्रों की सृष्टि की है, किन्तु स्वाभाविकता का उल्लंघन कही भी नही किया है। किन्तु, पात्रो के मनोभाव-विश्लेषण पर बल होने के कारण इस संग्रह की कहानियो में संवादों की योजना गौण रूप में हुई है।

आलोच्य लेखिका ने अधिकांश कहानियों में नारी-समाज की समस्याओं पर विचार व्यक्त किये है। इस विषय मे 'कुरूपा की साधना', 'पाप की छाया' 'भूखी' तथा 'टूटा क्रम' शीर्षक कहानियाँ उल्लेखनीय है। 'कुरूपा की साधना' में रूपहीन नारी की पुरुष-समाज द्वारा उपेक्षा तथा नारी की तज्जन्य वेदना का अंकन हुआ है। यथा—"पुरुष कुरूप होकर भी नारी पर विजय पाता है, पर नारी ? युवती हो, शिक्षित हो, सभ्य हो, सुशील हो तब भी पनाह नही, जब तक कि प्यासी आँखों को टिकाने का आकर्षण उसके पास नहीं है।"[2] अन्य क्षेत्रों में भी पुरुष को नारी से अधिक सामाजिक सुविधायें प्राप्त हैं। पुरुष लाख पाप करके भी दूध का धोया रहता है, किन्तु नारी के किसी एक पाप पर, चाहे वह

१. देखिये 'टूटा क्रम,' पृष्ठ २४

२. टूटा क्रम, पृष्ठ १७

विवश परिस्थितियों का ही परिणाम रहा हो, समाज तुरन्त उँगली उठाता है। 'पाप की छाया' कहानी में इसी तथ्य की अभिव्यक्ति की गई है। 'भूखी' कहानी में अनाथ ब्राह्मण-कन्या यमुना की समस्या के मूल में समाज की रूढ़िवादिता ही है—"पाव भर सत्तू पैंचा माँगने पर भी सब की भवें तन जाती। वाह रे समाज ! ब्राह्मण की लड़की होने से कोई काम नहीं करवाए और काम के बिना खाना कौन देगा?" इन कहानियों के अनुशीलन से स्पष्ट है कि इनका मुख्य उद्देश्य नारी-जीवन की दुर्बलताओं, समस्याओं, विवशताओं, तथा विशेषताओं का चित्रण करना रहा है। इसके अतिरिक्त कुछ कहानियों में विशिष्ट उद्देश्यों की भी अभिव्यक्ति हुई है। 'कुरूपा की साधना' में यौवन तथा सौन्दर्य की नश्वरता, 'शोरबा' में पशु-हिंसा के प्रति ग्लानि तथा 'गाँव का घर' में ग्राम्य जीवन की सरलता एवं नागरिक जीवन की कृत्रिमता आदि उद्देश्यों की व्यंजना की गई है।

श्रीमती प्रकाशवती ने अपनी कहानियों में मुख्यतः तत्सम शब्दों का प्रयोग किया है, किन्तु 'शोरबा' में जमीला, सोहराब आदि मुसलमान पात्रों के होने के कारण प्रायः उर्दूमिश्रित हिन्दी का व्यवहार किया गया है। गौजना, घैला, घटर घटर आदि देशज शब्दों[२] का प्रयोग विशेषतः उल्लेखनीय है। 'इस सन्नाटी रात में', 'तुम्हें हृदय नहीं है', 'मैंने साइकिल लाई है', 'देवता की अन्तर्चक्षु तीव्र हो उठी'[३] आदि कतिपय अशुद्ध वाक्य व्याकरण सम्बन्धी असावधानी के परिणाम हैं। वैसे, इन कहानियों की शैली चित्रात्मक, भावपूर्ण एवं प्रवाहपूर्ण है। 'जब देश को लौटियो' की शैली तो भावुकता के अतिरेक में गद्यकाव्य की लयात्मकता से युक्त हो गई है। यथा—"काशी की वह मशहूर गली, अपनी किस्मत को गला फाड़ फाड़कर थककर—जैसे चुप होने के अभिनय में लीन-सी, जहाँ-तहाँ दर्दीले तारों की छेड़-छाड़ घायल की चीख की तरह रह रहकर उठती और उस नीरवता में फैलकर चुप हो जाती।"[४] भाव यह है कि लेखिका की कथा-शैली प्रसंगानुरूप सशक्त तथा प्रभावपूर्ण है।

१३. सुश्री लीला अवस्थी

सुश्री लीला अवस्थी ने उपन्यास-लेखन के अतिरिक्त कहानी के क्षेत्र में भी प्रतिभा का परिचय दिया है। 'दूब के फूल' उनका प्रथम कहानी-संग्रह है। यद्यपि इसमें इस शीर्षक की कोई कहानी नहीं है, तथापि यह नाम इसलिए चुना गया है कि इस संकलन की कहानियों में भारतीय नारी की विवशता एवं पीड़ा का चित्रण है और दूब की तुच्छता को लक्ष्य में रखकर नारी के लिए उसे प्रतीक-रूप माना गया है। प्रस्तुत संग्रह की समस्त

---

१. टूटा क्रम, पृष्ठ ६६
२. देखिए 'टूटा क्रम', पृष्ठ २६, ३५, ३५
३. टूटा क्रम, पृष्ठ ५, ५, १८, ४३
४. टूटा क्रम, पृष्ठ २

कहानियाँ पारिवारिक हैं। प्रतीक्षा, ग से गधा और घ से घर, कुसंस्कार, अन्तर्द्वन्द्व, व्यक्तित्व, आदि और अन्त, प्रवाह और द्वीप, बदला तथा बात की बात शीर्षक कहानियों में नारी के बालिका, बहिन, माता, प्रेयसी, पत्नी, नर्तकी आदि विविध रूपों का परिस्थिति-प्रताड़ित एवं समस्याप्रधान चित्रण किया गया है। 'नयी आँधी' और 'परिवर्तन' शीर्षक कहानियाँ शरणार्थी-समस्या को लेकर लिखी गई हैं। 'बिन्दो का भैया' में रक्षा बन्धन के दिन ससुराल मे गई हुई बहिन बिन्दो की स्मृतियों से पीड़ित उसके भाई मोहन की आकुल भावनाओं का चित्रण है। अन्त में बहिन की विवशताओं का अनुमान करके मोहन स्वयं उसकी ससुराल जाकर राखी बँधवाने का निर्णय कर लेता है। 'नयी आँधी' तथा 'मैं हूँ रूवी' कहानियों में कथानक का तत्त्व प्रायः नगण्य है। इनमें जीवन के अति सीमित अंश को लेकर अपूर्ण परिणाम प्रस्तुत किये गए हैं। सामान्यतः लेखिका की सभी कहानियों—विशेषतः 'अन्तर्द्वन्द्व', 'मैं हूँ रूवी', 'व्यक्तित्व', 'आदि और अन्त', 'परिणय' तथा 'स्वप्न'—मे शिथिल कथानक के दर्शन होते हैं। 'आदि और अन्त' में परिस्थितियों के अभिशाप के चित्रण द्वारा निरुद्देश्य ही नजमा के जीवन में कष्टों की अवतारण की गई है। श्रीयुत माखनलाल चतुर्वेदी के शब्दों में, "यह कहानियाँ खिलौनों की तरह शुरू होती हैं, होनी की बीती हुई घटाओं की मसोस पैदा करती हैं और पाठक को परिणाम पर पहुँचाने के लिए खुला छोड़ देती है।"[१] हमारी समझ में यह इन कहानियों का गुण नहीं, अपितु दोष है।

सुश्री लीला अवस्थी ने भारतीय नारी के कष्टों का सूक्ष्मता से अध्ययन किया है और तदनुरूप नारी-पात्रों की सृष्टि की है। इस संग्रह की भूमिका में उन्होंने लिखा है—"इसमें ऐसी ही नारियाँ पात्र बनी हैं जिनमें 'फूल' पन नाममात्र का और 'दूब' पन की ही भरमार।"[२] कोई प्रेमी के दुर्व्यवहार से पीड़ित है तो कोई भाई के, किसी के माता-पिता उससे उचित व्यवहार नहीं करते तो 'ग से गधा और घ से घर' की नायिका काकी अपने पुत्र हिमू के अत्याचारों से व्यथित है। 'अन्तर्द्वन्द्व' की कम्मो, 'प्रवाह और द्वीप' की ऋजु, 'बात की बात' की मीरा तथा 'स्वप्न' की इन्दु ऐसे ही पीड़ित नारी-चरित्र हैं। 'व्यक्तित्व' की चन्द्रा अपने पड़ोसी रमेश तथा रजनीकान्त के अत्याचारों का शिकार बनती है, तो 'बदला' की कमल का वेश्यागामी पति चमन उसके घर-संसार में आग लगाये रखता है। कोमलहृदया नारियाँ मन ही मन घुलती है और सब-कुछ सहन करती हैं, किन्तु कतिपय पात्राएँ विद्रोह की साकार प्रतिमाएँ भी है। यदि बीसवी शताब्दी का पुरुष राम की भाँति एकपत्नीव्रतधारी नही रह सकता तो नारियाँ भी सीता की भाँति निर्विरोध पुरुषों के अत्याचार सहन नही कर सकती।[३] 'बदला' की कमल अपने पति की

---

१. दूब के फूल, पृष्ठ 'ग'

२. देखिये, 'दूब के फूल', आप से, पृष्ठ 'ख'

३. देखिये 'दूब के फूल', पृष्ठ १४८

चहेती वेश्या को फँसाकर पति को सुराह पर ले आती है, 'व्यक्तित्व' की चन्द्रा धनलोलुप पड़ोसियों से अपनी रक्षा करना जानती है और 'अन्तर्द्वन्द्व' की कम्मो तथा 'प्रवाह और द्वीप' की ऋजु पुरुषों से घृणा करती हैं।

पुरुष पात्रों को अत्याचारी, ईर्ष्यालु, शंकालु, धनलोलुप आदि रूपों मे चित्रित करके लेखिका ने उनके साथ न्याय नहीं किया। बीसवी शताब्दी की नारी इतनी पिसी तथा घुटी हुई नही है, जितना लेखिका ने उसे दिखाया है। 'कुसंस्कार' मे डॉक्टर भाटिया, 'अन्तर्द्वन्द्व' में दिलीप, 'परिवर्तन' मे हरवंस, 'स्वप्न' में नरेश आदि कतिपय गुणवान् पात्रों की सृष्टि करके लेखिका ने किसी सीमा तक अपने दृष्टिकोण को जातीय पक्षपात से दूषित होने से बचा लिया है। 'नयी आँधी' और 'मैं हूँ रूबी' में कथानक के साथ-साथ चरित्र-चित्रण के तत्त्व की भी उपेक्षा की गई है। शेष कहानियों में लेखिका ने वर्णनात्मक शैली में अथवा घटना-विवरण के माध्यम से पात्रों की चारित्रिक प्रवृत्तियों को अनावृत्त किया है। उदाहरणार्थ 'प्रवाह और द्वीप' में ऋजु का चरित्र-चित्रण अवेक्षणीय है—"ऋजु लोगों को बड़ी मीठी लगती थी, प्यारी लगती थी। वैसे तो वह शरीर थी, परन्तु शायद यह शरारत ही उसकी मिठास हो। वह चाहे जिससे भी स्नेह करे, परन्तु ज्यों ही कोई दूसरा उससे स्नेह करता वह बिगड़ पड़ती। मुहल्ले के सभी लड़के उसकी दृष्टि में मिट्टन के प्रतीक थे. उन सबके माँ-बाप उसे अपने माँ-बाप के समान लगते।"[1] ऋजु और नजमा की बालोचित प्रवृत्तियों का चित्रण मनोवैज्ञानिक दृष्टि से किया गया है। यह उल्लेखनीय है कि लेखिका ने अपने पात्रों को किसी उच्च धरातल पर प्रतिष्ठित नही किया। अपने व्यक्तिगत सुख-दु.ख के दायरे में घिरे वे समाज अथवा राष्ट्र के लिए कभी कुछ नहीं सोचते, करना तो दूर की बात है।

सुश्री लीला अवस्थी ने कहानियों में संवाद-तत्त्व की योजना की ओर यथोचित ध्यान नहीं दिया है। वर्णनात्मक शैली के मध्य यत्र-तत्र जो संवादात्मक उक्तियाँ प्रस्तुत की गई हैं, उनमें आकार की लघुता के अतिरिक्त अन्य किसी उल्लेखनीय विशेषता की खोज व्यर्थ होगी। वस्तुतः उनकी कहानियों का महत्त्व इस बात में है कि वे देशकाल-सापेक्ष हैं। उन्होंने बीसवीं शताब्दी की नारी को विद्रोहिणी के रूप में प्रस्तुत किया है। 'व्यक्तित्व' की चन्द्रा की भाँति उसमें रमेश-जैसे पुरुषों की प्रवृत्तियों का मूल्यांकन करने की पूर्ण क्षमता है। 'अन्तर्द्वन्द्व' तथा 'प्रवाह और द्वीप' की नायिकाओं की भाँति वह विवाह न करने का प्रण करके अपने पाँवों पर स्वयं खड़ी हो सकती है। 'बदला' की कमल की भाँति वह पति के अत्याचारों का बदला लेकर उसे सुराह पर ला सकती है। इस प्रसंग में कमल की विद्रोहात्मक दृढ़ता उल्लेखनीय है—"नारी बदला लेगी। जैसा कोई उसके साथ करेगा वह भी वैसा ही करेगी। आज बीसवीं सदी की नारी प्रतिशोध चाहती है। अपने अब तक के त्याग और बलिदान का बदला चाहती है, जिसको पुरुष ने उसकी

---

१. दूब के फूल, पृष्ठ ९५

कमज़ोरियाँ और मजबूरियाँ कहकर उपहास से उड़ा दिया। वह अब अपमान न सहेगी।"[1] 'नयी आँधी' तथा 'परिवर्तन' शीर्षक कहानियों में भारत-विभाजन के परिणामस्वरूप उत्पन्न शरणार्थी-समस्या की चर्चा की गई है। 'कुसंस्कार' कहानी में अंग्रेज़ी सभ्यता से प्रभावित क्लबों तथा नृत्यों पर बहुत ही सजीव व्यंग्य किये गए हैं। यथा—"जैसे ही क्लब में घुसते हैं अपनी वासना की तृप्ति के लिए जो भी करना चाहें विलायती ढंग से कर सकते हैं। इस कामुक मनोवृत्ति पर शान चढ़ाने के लिए ऊपर से कुछ पी भी लिया जाता है जिससे कि चेतन बुद्धि तनिक भी 'हाँ' 'न' न कर पाये और मन में जो भी इच्छा उत्पन्न हो वह बिना किसी बाहरी या भीतरी रुकावट के कर गुज़रा जाये। परन्तु विलायती शिष्टाचार के साथ यह लोग मन में उद्दाम वासना लेकर आते हैं और उन्हें एक विलायती ढंग से तृप्त कर लेते हैं। भला हो इन अंग्रेज़ों का जिन्होंने हमारे उच्च शिक्षित और सम्पन्न समाज को वासना की तृप्ति के लिए 'एक' के फार्मूला के स्थान पर नृत्य भूमि पर 'भूमा' के प्रगाढ़ आलिंगन से तृप्ति पाने की राह दिखाई।"[2]

भारतीय नारी की विवशताओं का परिस्थिति-सापेक्ष चित्रण विवेच्य लेखिका की अधिकांश कहानियों का प्रमुख लक्ष्य रहा है। कतिपय कहानियों में उक्त उद्देश्य की अपेक्षा किसी अन्य लक्ष्य को भी दृष्टि में रखा गया है। उदाहरणार्थ 'बिन्दो का भैया' में भाई-बहिन के स्नेह की पावनता तथा गम्भीरता का दिग्दर्शन ही एकमात्र लक्ष्य है। 'नयी आँधी' तथा 'परिवर्तन' शीर्षक कहानियाँ भारत-विभाजन के परिणामस्वरूप शरणार्थी-समस्या को लेकर प्रणीत की गई है। 'कुसंस्कार' में रूबी के चरित्रांकन द्वारा यह अभिव्यक्त किया गया है कि अंग्रेज़ी सभ्यता ने भारतीय संस्कृति की पावनता में विष घोल दिया है। 'मैं हूँ रूबी' तथा 'आदि और अन्त' में कोई उल्लेखनीय उद्देश्य नहीं है। लेखिका ने मुख्यतः नारी-जीवन की पारिवारिक समस्याओं का चित्रण किया है, किन्तु विवाह से घृणा करने अथवा पुरुषों से बदला लेने के अतिरिक्त कोई अन्य उपयोगी सुझाव प्रस्तुत नहीं किया है। श्री माखनलाल चतुर्वेदी के शब्दों में—"यह कहानियाँ नारी समस्या पर ही अधिक बल देती हैं, परिस्थितियाँ उत्पन्न करती है, उनकी गम्भीरता से वातावरण बनाती हैं और सुलझाव के दरवाज़े पर आकर मौन रह जाती है।"[3]

लीला अवस्थी ने अपनी कहानियों में वार्तालाप की सामान्य शब्दावली का प्रयोग किया है, इसी कारण उनमें सहज बोधगम्यता के दर्शन होते है। तत्सम एवं तद्भव शब्दों की अपेक्षा उन्होंने देशज एवं विदेशी शब्दों का प्रयोग बहुलता से किया है। उदाहरणार्थ 'नयी आँधी' कहानी की निम्नलिखित पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—"सरयू बाबा के हाथ मशीन की तरह पराठे बेलते जा रहे थे और करारे-करारे सेंककर थाली पर रखते

---

१. दूब के फूल, पृष्ठ १४८

२. दूब के फूल, पृष्ठ ४३

३. दूब के फूल, पृष्ठ 'ग'

जा रहे थे। मंगू पहाड़ी दौड़ दौड़कर कभी पराठे, कभी साग-सब्ज़ी, कभी चटनी ग्राहकों की पत्तल पर डालता जा रहा था। मंगू को सरयू बाबा की चुप्पी पर अचरज हो रहा था। नहीं तो बाबा की हाथ भर की जबान भी मशीन की तरह फुर्ती से चलती थी। कभी ग्राहकों से बात करते और कभी मंगू पर हुक्म चलाते। ग्राहक भी मन लगाकर बाबा की बातें सुनते।"[1] अतः यह कहना अनुचित न होगा कि प्रस्तुत कहानियों में अभिव्यंजना की अपेक्षा वातावरण के चित्रण और सोद्देश्यता पर अधिक बल दिया गया है।

१४. श्रीमती किरणकुमारी गुप्ता

डॉ० किरणकुमारी गुप्ता ने 'पुरस्कार' शीर्षक कहानी-संग्रह में निम्नलिखित नौ कहानियों को स्थान दिया है—पुरस्कार, नारी, प्रेम का बदला, उस पार, अमर वेदना, रत्ना, भाग्यचक्र, बलिदान, मिसरानी या चमारी। इनमें विवाह-पूर्व प्रेम और दाम्पत्य प्रेम के मधुर अथवा करुण चित्र अंकित किये गए हैं। रानी, प्रेम का बदला, उस पार आदि अधिकांश कहानियों में लेखिका ने यह व्यक्त किया है कि वासना, विश्वासघात, उपेक्षा आदि भाव प्रेम के सौन्दर्य को कलुषित कर देते है, किन्तु इन दुर्गुणों के लिए उन्होने नारी के स्थान पर केवल पुरुष-जाति को ही दोषी ठहराया है। 'नारी की कामायनी मनु के प्रेम में स्वर्ग का त्याग करके मर्त्य लोक में आती है, किन्तु मनु उसके सौन्दर्य का उपभोग करके गर्भावस्था में उसकी उपेक्षा करते हैं। 'प्रेम का बदला' की राधा वेश्या-पुत्री होकर भी श्रेष्ठ-पुत्र विष्णु के साथ रहकर पत्नी के त्याग एवं गौरव का परिचय देती है, किन्तु विष्णु आर्थिक अभावों से त्रस्त होकर उसे त्यागकर पितृ-गृह लौटकर किसी अन्य कन्या से विवाह कर लेता है।'उस पार' मे चित्रकार चित्रक के प्रति नायिका कवि के पावन प्रेम और चित्रक की उसके प्रति कलुषित दृष्टि का चित्रण हुआ है। 'भाग्य-चक्र' की नायिका पहले अपने प्रेमी गोपाल के विश्वासघात की शिकार होती है, किन्तु बाद में संयोग से पुनः प्रिय का एकनिष्ठ प्रेम प्राप्त करती है। 'मिसरानी या चमारी' में बाल-विधवा मिसरानी के प्रति उसके देवर बनवारी के कुभाव, वासनापूर्ति होने पर उसे निर्दयतापूर्वक ठुकरा देने और तब एक मोची द्वारा उसे अपने प्रेमाश्रय मे स्थान देने का चित्रण हुआ है।

उपर्युक्त स्पष्टीकरण का यह तात्पर्य नही है कि आलोच्य लेखिका ने पुरुष जाति के साथ केवल अन्याय ही किया है। 'पुरस्कार', 'रत्ना' तथा 'बलिदान' शीर्षक कहानियों में पुरुषों की सहृदयता, प्रेम एवं त्याग के सुन्दर आदर्श प्रस्तुत किये गए है। 'पुरस्कार' में राजकुमारी मनोज्ञा के प्रति राजकुमार अभय के निष्कलुष प्रेम का अत्यन्त हृदयस्पर्शी चित्रण हुआ है। 'रत्ना' में गोस्वामी तुलसीदास के पत्नी-प्रेम की प्रेरणा से लौकिक प्रेम को राम-भक्ति में परिणत करने का चित्रण हुआ है। 'बलिदान' मे बगरू और गुलाबी के प्रेमोत्सर्ग का मार्मिक चित्र अंकित किया गया है। 'अमर वेदना' में

१. दूब के फूल, पृष्ठ ७

विरहिणी नायिका कवयित्री सुनयना की कविताओं के माध्यम से यह प्रकट किया गया है कि विरहावस्था में प्रणीत काव्य में मार्मिकता की चरम सीमा रहती है। आलोच्य कहानियों में घटनाओं के आरोह-अवरोह को अत्यन्त सहज रूप में आयोजित किया गया है। घटनाएँ चरित्रों के विकास में सहायक हैं और चरित्र घटनाओं को गतिशील बनाने में सचेष्ट रहे हैं। लेखिका को कथागत विभिन्न घटनाओं में तारतम्य एवं मार्मिकता के आयोजन में भी सफलता मिली है। उन्होंने नारी पात्रों को उच्च गुणों से विभूषित करते हुए उन्हें गर्हित भावों से निर्लिप्त रखा है। उन्होंने पुरुषों को आदर्श और यथार्थ, दोनों से प्रभावित दिखाया है। फिर भी असत् प्रवृत्तियोंवाले पुरुषों की संख्या अपेक्षाकृत अधिक है। कहना न होगा कि लेखिका को नारी-जाति के प्रति विशेष श्रद्धा है, किन्तु पुरुषों के प्रति उक्त दृष्टिकोण निश्चय ही एकांगी है। उनके पुरुष पात्र यदि गौरवमय कार्य करते भी हैं तो नारी की प्रेरणा से ही ! उदाहरणार्थ 'वलिदान' का बगरू गुलाबी की प्रेरणा एवं आदर्श से प्रभावित होकर ही प्रेम-मार्ग में शहीद हुआ। 'रत्ना' के तुलसी पत्नी की प्रेरणा से ही अमर हुए—"रत्ना के बिना रामचरितमानस की रचना न होती और भारत की जनता को कर्त्तव्य, प्रेम तथा भक्ति का उपदेश न मिला होता। तुलसी साधारण तुलसी ही रहते, वह महात्मा गोस्वामी तुलसीदास के नाम से विख्यात न हुए होते।"[1] लेखिका ने संक्षिप्त एवं सारगर्भित कथोपकथन की योजना द्वारा पात्रों की भावनाओं को सहज अभिव्यक्ति प्रदान की है। कथानक को विकसित करने के अतिरिक्त संवाद पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं के प्रकाशन में भी उपयोगी सिद्ध हुए हैं। उदाहरणार्थ 'रत्ना' मे तुलसी के प्रति रत्ना की उक्तियाँ उसकी विवेकशीलता एवं दार्शनिक मेधा की परिचायिका हैं।[2] लेखिका ने पात्रानुकूल संवाद-योजना द्वारा भी कहानियों में स्वाभाविकता का समावेश किया है। 'अमर वेदना', 'भाग्य-चक्र' और 'मिसरानी या चमारी' शीर्षक कहानियों का प्रारम्भ संवाद-शैली में हुआ है, जिससे कथा-प्रारम्भ में नाटकीयता आ गई है।

श्रीमती गुप्ता ने यत्र-तत्र हिन्दू-समाज की कुप्रवृत्तियों का उल्लेख करते हुए वातावरण के सजीव चित्र अंकित किए है। 'प्रेम का वलिदान' शीर्षक कहानी में विष्णु के पिता ताराचन्द के प्रति राधा की यह व्यंग्योक्ति इसी प्रकार की है—"एक वेश्या को पत्नी रूप में अपनाने में तुम्हारी मर्यादा नष्ट होती है क्योंकि उस समय वह तुम्हारी पूजा करती है, तुम्हे अपना देवता मानती है, किन्तु जब वही वेश्या प्रेम का दिखावा करती है तो तुम कठपुतली की भाँति उसके इशारे पर नाचते हो।"[3] इसके अतिरिक्त उन्होंने नारी जाति की उच्च मर्यादाओं, धार्मिक रूढ़ियो की निस्सारता आदि को भी

१. पुरस्कार, पृष्ठ ६४-६५
२. देखिये 'पुरस्कार', पृष्ठ ६३-६४
३. पुरस्कार, पृष्ठ ३५-३६

अनेक स्थानों पर प्रकट किया है। 'नारी' शीर्षक कहानी में उन्होंने स्वर्ग लोक का सुन्दर गरिमापूर्ण चित्र अंकित किया है और मनु एवं कामायनी की पौराणिक कहानी को नूतन रूप में प्रस्तुत किया है। इन कहानियों का उद्देश्य है—भारतीय नारी के गौरवास्पद भावों का मूल्यांकन ! नारी पुरुष की प्रेरणा-शक्ति है, उसकी पथ-प्रदर्शिका है—कष्टों मे भी मुस्करानेवाली, पुरुष के अत्याचारों को धैर्यपूर्वक सहन करके उसके दुर्गुणों को भी सद्गुणों का नाम देकर प्रकट करनेवाली भारतीय नारी निश्चय ही महान् है। नारी-जीवन के इन विविध रूपों को व्यक्त करने के अतिरिक्त लेखिका ने उसके मातृ रूप की गरिमा का भी चित्रण किया है। 'नारी' की कामायनी मातृत्व का वरदान पाकर मनु की निर्दयता का विस्मरण कर देती है, 'मिसरानी या चमारी' की मिसरानी बदनामी से बचने के लिए गर्भस्थ शिशु की हत्या करने को तैयार नहीं होती, 'भाग्य-चक्र' की कमला अनेकानेक कष्ट सहकर भी शिशु के सुख के लिए सचेष्ट रहती है।[1]

श्रीमती किरणकुमारी ने प्रस्तुत कृति की भूमिका में लिखा है—"शैली में मेरे आदर्श प्रसाद जी हैं। मैंने उनकी नकल करने का प्रयास तनिक भी नही किया है। हाँ, कामना अवश्य की है।"[2] सम्भवतः इसी कामना के फलस्वरूप उन्होने तत्समबहुला भाषा का प्रयोग किया है। शैली में सहजता और व्यावहारिकता लाने के लिए उन्होंने मुहावरों और लोकोक्तियों का भी पर्याप्त प्रयोग किया है। कतिपय स्थलों पर उनकी शैली काव्यात्मक भी हो गई है। यथा—"ऊषा ने जब स्वर्ण थाल में रोली भरकर बिखेर दी तो पूर्व दिशा मुस्करा उठी और गुलाबी की अलसाई आँखों में अनुराग छा गया।"[3] उनकी शैली में प्रसंगानुकूल सरलता एवं गाम्भीर्य विद्यमान है, किन्तु कहीं-कहीं 'असावधानता' जैसे व्याकरण-विरुद्ध प्रयोग भी मिलते है।[4] निष्कर्षस्वरूप यह कहा जा सकता है कि श्रीमती गुप्ता प्रतिभा-सम्पन्न कहानी-लेखिका है। प्रेम के सरस और मार्मिक चित्र अंकित करने में उन्हें विशेष सफलता मिली है और उनकी भाषा-शैली भावानुकूल तथा प्रवाहपूर्ण है।

१५. कुमारी उषा सक्सेना 'माधवी'

कुमारी उषा सक्सेना ने गद्यकाव्य की शैली में भावप्रधान गल्पों का प्रणयन करके हिन्दी-कहानी-क्षेत्र में एक मौलिक कड़ी का संयोजन किया है। 'बहते बादल' में उनकी ग्यारह भावात्मक कहानियाँ संकलित हैं, जिनके शीर्षक यथाक्रम इस प्रकार हैं—

---

१. देखिए 'पुरस्कार', पृष्ठ ५५,१००
२. पुरस्कार, 'दो शब्द' से उद्धृत
३. पुरस्कार, पृष्ठ ९४
४. पुरस्कार, पृष्ठ ४१

स्वप्न, वसंत, वर्ष, डाकू, विजय की पराजय, विद्युत्, सन्देश, वासना का पुजारी, सगाई, मंगलमय ज्योति और कल्पना-स्वप्न-सत्य। डॉ० धीरेन्द्र वर्मा ने इन कहानियों का आलोचनात्मक परिचय देते हुए संग्रह के आरम्भ में लिखा है—"प्रस्तुत कहानियाँ एक विशेष शैली में लिखी गई है जिनमें कहानी-कला तथा गद्यकाव्य के गुणों का अनोखा मिश्रण है। फिर इन कलात्मक अंगों के पीछे कुछ संदेश भी छिपा हुआ है। निःसन्देह लेखिका में प्रतिभा है और योग्यता है।"[1] आलोच्य कहानियों को विषय की दृष्टि से दो वर्गों में विभक्त किया जा सकता है—(अ) वे कहानियाँ, जिनमें घटना-क्रम एवं चरित्र-चित्रण की उपेक्षा की गई है और प्राकृतिक सत्यों के मूल में निहित जीवन-दर्शन का विश्लेषण किया गया है, (आ) वे कहानियाँ, जिनमे पात्रों और घटनाओं को सहज मानवीय धरातल पर प्रस्तुत किया गया है। प्रथम वर्ग की रचनाओं में 'स्वप्न', 'वसन्त', 'वर्ष', 'विजय की पराजय', 'विद्युत्', वासना का पुजारी' और 'मंगलमय ज्योति' शीर्षक कहानियाँ उल्लेखनीय है। इनमें मेघ, विद्युत, मृगी, पर्वत, झील, वृक्ष आदि प्राकृतिक पदार्थों की पात्र-रूप में प्रतिष्ठा की गई है तथा प्रकृति के प्रांगण में होनेवाले नैत्यिक आवर्तन-विवर्तनों को मानव-जीवन के किसी तदनुरूप प्रतीक कार्य-व्यापार के रूप में अथवा जीवन के किसी प्रेरक तथ्य के रूप में अंकित किया गया है। 'डाकू', 'सगाई' तथा 'कल्पना-स्वप्न-सत्य' द्वितीय वर्ग की कहानियाँ है। इनमें कहानी एवं पाठक के मध्य प्राकृतिक कार्य-व्यापार का माध्यम नही है। इन कहानियों में क्रमशः डाकू के जीवन की हेतुरूप विवशताओं और बाद की समस्याओं, प्रेम की विवाह में परिणति न होने पर मन के अनुताप एव दाम्पत्य प्रेम की मधुर अनुभूतियों का सोद्देश्य चित्रण हुआ है।

'बहते बादल' की कहानियों में मानव-पात्रो की अपेक्षा प्राकृतिक पदार्थों की 'पात्रों' के रूप में अवतारणा की गई है। मृग, मृगी, तितली, वर्ष, नीम का वृक्ष, गिलहरी, कौआ, पर्वत, झील, विद्युत्, नक्षत्र, वसुन्धरा, पवन, गुलाब, चन्द्र, भानु आदि प्रकृति-तत्त्वों को लेखिका ने अपनी कहानियों में स्थान देकर उनकी मूक भावनाओं को मुखर रूप प्रदान किया है। यद्यपि पुराण, महाभारत, शतपथ ब्राह्मण, पंचतन्त्र, हितोपदेश आदि प्राचीन ग्रन्थों में तदनुरूप पात्र-चयन सर्वत्र उपलब्ध है, तथापि विवेच्य लेखिका ने इन पात्रों के प्राणों में जिस ओजस्वी एवं प्रेरक व्यक्तित्व की प्रतिष्ठा की है, वह वहाँ दुर्लभ है। उदाहरणार्थ 'विजय की पराजय' शीर्षक कहानी वृद्ध नीम के वृक्ष का व्यक्तित्व उल्लेखनीय है। जब उसे यह ज्ञात होता है कि उसे शीघ्र ही काट दिया जाएगा तब एक श्रेष्ठ विचारक की भाँति अपने अतीत के सुख-दुःखमय जीवन का विश्लेषण करता है, आश्रय में निवास करनेवाले कौए तथा गिलहरी के विषय में चिन्तित होता है तथा अपने अन्त के विषय में विरक्त ऋषि की भाँति उपेक्षा प्रकट करता है। इसी प्रकार झील, पर्वत, मेघ आदि पात्रों में लेखिका ने मानववत् ईर्ष्या-द्वेष, गर्व, दम्भ आदि विशेषताओं का अन्तःप्रसार

---

१. बहते बादल, परिचय, पृष्ठ ५

किया है। 'वर्ष', 'सगाई' तथा 'कल्पना-स्वप्न-सत्य' शीर्षक कहानियों में मयंक, छबीली, राजू, यामिनी, राका, गोपाल, चिंतन, वनमाला, नीलू आदि मानव-पात्रों को स्थान दिया गया है और कथानक के अनुरूप उनकी चारित्रिक विशेषताओं का परिस्थिति-सापेक्ष चित्रण किया गया है।

आलोच्य लेखिका ने प्राकृतिक उपकरणों का मानवीकरण करके उनके मध्य सजीव एवं मार्मिक वार्त्तालापों की योजना की है। इन कथोपकथनों में एक ओर प्राकृतिक तत्त्वों के मूक भावों को मुखर रूप प्राप्त हुआ है और दूसरी ओर अधिकांश संवादों में मानव-जीवन का सत्य सहज रूप में प्रस्फुटित हुआ है।[1] इस प्रवृत्ति के अनुरूप लेखिका ने सामाजिक कहानियों में भी संवादों को आदर्श की अभिव्यक्ति में सहायक रखा है। वातावरण के चित्रण में भी उनकी दृष्टि मानव-समाज तक सीमित नहीं रही है, अपितु उन्होंने प्रकृति-क्षेत्र की समस्याओं की ओर पाठक का ध्यान आकृष्ट किया है। आखेटक द्वारा छल से मृग की हत्या, वसन्त का आगमन तथा गमन, मानव द्वारा स्वार्थवश वृक्षों को काट देना, गुलाब के काँटों से तितली का शरीर बिंध जाना आदि ऐसे प्रसंग हैं जो इन कहानियों में सर्वत्र सुलभ हैं। अन्य समकालीन परिस्थितियों के चित्रण के प्रसंग में 'कल्पना-स्वप्न-सत्य' शीर्षक कहानी में नीलू की उक्तियों में युगानुरूप परिवर्तनशील साहित्यिक मानदण्डों की चर्चा की गई है। यथा—"आज का व्यक्ति कल्पना, स्वप्न एवं आदर्श के पीछे भागना मूर्खता समझता है। वह यथार्थ-चित्रण अर्थात् नग्न सत्य का ही दर्शन करना चाहता है।"[2] लेखिका को यथार्थ के इस पक्ष से सहानुभूति नहीं है, अतः उन्होंने सामाजिक कहानियों में तो आदर्श को व्यक्त किया ही है, प्रकृतिपरक कहानियों में भी आदर्श के संकेत प्रस्तुत करने पर ही उनका अधिक बल रहा है। डॉ० रामकुमार वर्मा के निम्नलिखित अभिमत में उनके इसी दृष्टिकोण को स्वीकृति मिली है—"जीवन के अन्तःतल राग की रेखा में मनोभावों के जो आकर्षक रंग उषा ने भरे हैं, वे कभी धूमिल न होंगे, ऐसा मेरा विश्वास है। इन कहानियों में प्रेम का आलोक है, वासना की छाया नहीं। प्रकृति के अन्तर्गत मानवीकरण में जीवन का सत्य शतमुखी बन गया है।"[3]

सुश्री उषा सक्सेना की कहानियों में शुद्ध साहित्यिक हिन्दी का प्रयोग मिलता है। उनकी भाषा परिष्कृत होते हुए भी सरल एवं सरस है। वर्णन-शैली में नाटकीयता एवं रागात्मकता के मिश्रण से अतिरिक्त प्रवाह आ गया है। भावुकता के आवेग में उनकी शैली प्रायः कथा-शैली की सीमा का स्पर्श करती हुई गद्यकाव्य की रागात्मकता से तादात्म्य स्थापित करती प्रतीत होती है। एक उदाहरण द्रष्टव्य है—"रात्रि के बारह बजे गिरजाघर से बड़ी जोरों की घण्टा-ध्वनि के साथ साथ नव वर्ष का स्वागत एवं अभि-

---

१. देखिए 'बहते बादल', पृष्ठ ८३
२. बहते बादल, पृष्ठ ११६
३. बहते बादल, भूमिका, पृष्ठ ७

नन्दन हुआ। इसी समय मन्दिर में भी भगवान् की आरती तथा अर्चना हुई जो मुझे नव वर्ष की वन्दना ही प्रतीत हुई। प्रातःकालीन बाल अरुण की चंचल किरणों ने ओस रूपी मुक्ताओं का उपहार नव वर्ष को दिया। हरी-हरी लम्बी दूब, गुलाब, कमल तथा विभिन्न पुष्पों ने लहरा लहराकर नव वर्ष की अभ्यर्थना की। जब मुझे पवन के आर्द्र झकोरों ने जगाया तो मैंने अपने को पाया एक नवीन अल्हड़ सुकुमार करों में।"[1]

कतिपय स्थलों पर लेखिका की अभिव्यंजना-प्रणाली में किंचित् दौर्बल्य का आभास होता है, किन्तु ऐसे प्रसंग बहुत कम हैं। प्राकृतिक उपकरणों के मानवीकरण तथा रागात्मक शैली के प्रयोग की दृष्टि से यह कथा-संग्रह हिन्दी-कहानी के क्षेत्र में एक नूतन प्रयोग है और इस दृष्टि से इसका महत्त्व असन्दिग्ध है।

१६. सुश्री सत्यवती देवी 'भैया'

सुश्री सत्यवती देवी के 'बिखरी आशा' और 'जीवन की पहेलियाँ' शीर्षक दो कहानी-संग्रह प्रकाशित हुए हैं। इनमें क्रमशः नौ और दस कहानियों को स्थान प्राप्त हुआ है, जो इस प्रकार है—

बिखरी आशा—जीवन की साध, बिखरी आशा, माता का हृदय, नर्त्तकी, एक ही कसक, सुख की खोज, वैभव और प्रेम, मानवता की पुकार, दीपावली की भेंट।

जीवन की पहेलियाँ—विजयी पौरुष, कमल-पत्र, दे खुदा की राह पर, कर्त्तव्य पथ, जीवन का अभिशाप, जीवन का प्रश्न, भाग्य लिपि, जुए का नशा, घूँघट, संसार-चक्र।

उपर्युक्त कहानियों में 'विजयी पौरुष' देशकालपरक काल्पनिक कथा है, क्योंकि इसमें चन्द्र नगर, सूर्य नगर, सूर्य सिंह, त्रिभुवन आदि ऐतिहासिक स्थानों एवं व्यक्तियों का उल्लेख हुआ है। शेष कहानियाँ सामाजिक हैं और इनमें संयोग, हृदय-परिवर्तन तथा आदर्शवादिता को विशेष रूप से स्थान दिया गया है। उदाहरणार्थ 'बिखरी आशा' में सन्ध्या और राकेश पति-पत्नी होने पर भी घटनावश अपरिचित रूप में पृथक् रहते हैं, परस्पर प्रेम करने लगते है और कथान्त में रहस्योद्घाटन होने पर एक-दूसरे को स्वीकार कर लेते है। इसी प्रकार 'भाग्य लिपि' में भाग्यवश डॉक्टर चन्द्रभूषण के पत्नी तथा पुत्री से विलग होने तथा उसी चक्र से संयोगवश पुनः मिल जाने की कथा अंकित है। 'मानवता की पुकार' और 'जीवन की साध' में भी इसी प्रकार संयोग का विशेष महत्त्व रहा है। 'माता का हृदय', 'नर्त्तकी', 'वैभव और प्रेम', 'दीपावली की भेंट', 'जुए का नशा' और 'घूँघट' शीर्षक कहानियों में पात्रों के हृदय-परिवर्तन द्वारा घटनाओं को सुखान्त रखा गया है। 'जीवन का प्रश्न' तथा 'एक ही कसक' मे पात्रों की आदर्शवादिता को उभारकर सुखान्त कथानक के उक्त लक्ष्य की पूर्ति की गई है। कहने का तात्पर्य यह है कि इन कहानियों में संयोग, आकस्मिकता एवं हृदय-परिवर्तन की सहायता से कथानकों को सुखान्त की ओर

---

१. बहते बादल, पृष्ठ ४२

प्रेरित किया गया है, जिससे कहीं-कहीं कथानक के सहज विकास में बाधा पहुँची है। 'जीवन का अभिशाप' और 'सुख की खोज' में नायिकाओं की मृत्यु हो जाने से कथानक दुखान्त में परिवर्तित हो गए हैं। 'कमल-पत्र' तथा 'दे खुदा की राह पर' शीर्षक कहानियों में भारतवासियों द्वारा स्वतन्त्रता के लिए किये गए क्रान्तिकारी प्रयत्नों की झलक दिखाई गई है। उक्त दोनों कहानियाँ कथानक की दृष्टि से किंचित् शिथिल रही हैं। इस विवेचन से स्पष्ट है कि इन कहानियों में किसी न किसी निश्चित लक्ष्य को लेकर घटनाओं की योजना की गई है। जीवन एवं समाज की विविध समस्याओं का अंकन करके लेखिका ने अनेकशः आदर्शवादी समाधान भी प्रस्तुत किये हैं। कतिपय कहानियों में घटनाओं के संयोजन में यत्किंचित् शैथिल्य के दर्शन होते हैं। फिर भी, मानव-जीवन एवं समाज के ये कथा-चित्र अपने में रोचक एवं शिक्षाप्रद हैं।

आलोच्य कहानियों में मुख्य पात्रों के चरित्रों को प्रायः आदर्श रूप मे चित्रित किया गया है। युवकों के चरित्र में मानसिक दृढ़ता का विशेष अन्तःप्रसार रहा है। क्रूर काल की कठिन परिस्थितियों में भी वे अपने सिद्धान्तों पर अटल रहते हैं। 'विजयी पौरुष' में युवराज त्रिभुवन, 'कमल-पत्र' में मधुकर, 'दे खुदा की राह पर' में क्रान्तिकारी दल का नेता चन्द्रकेतु, 'कर्त्तव्य पथ' में सुधांशु, 'जीवन का अभिशाप' में सुशील, 'जीवन का प्रश्न' में सुधीर एवं योगेश, 'घूंघट' में शेखर, 'जीवन की साध' में रसाल, 'नर्तकी' में करुणेन्द्र, 'वैभव और प्रेम' मे किशोर, 'मानवता की पुकार' में समर और महीप ऐसे ही आदर्श पात्र हैं। जिन 'आदर्शों' के पालन में वे कटिबद्ध होते हैं उन्हें पूर्ण करते हैं, माता-पिता समाज अथवा परिस्थितियों को स्वतः उनके आगे पराभूत होना पड़ता है। नारी पात्रों को लेखिका ने प्रायः भारतीय संस्कृति के अनुरूप सौम्य रूप में प्रस्तुत किया है। उनमें पति परायणता, सहनशीलता, धर्मभीरुता आदि विशेषताएँ अधिक हैं। 'विजयी पौरुष' की वन्दना, 'कमल-पत्र' की निशा एवं 'कर्त्तव्य-पथ' की सुधा की भाँति साहस एवं शौर्य की पुतलियाँ भी इन कहानियों में हैं, किन्तु अधिकांश पात्राएँ प्रायः परिस्थिति-प्रताड़ित रही हैं। लेखिका ने वर्णनात्मक शैली मे प्रत्यक्ष चरित्र-चित्रण प्रायः नहीं किया, अपितु परिस्थितियों के सन्दर्भ में पात्रों की क्रिया-कलाप तथा उनकी युक्तियों द्वारा ही उनकी विशेषताओं को व्यक्त किया गया है। कथानक को नाटकीय सौन्दर्य प्रदान करने और पात्रों की चारित्रिक प्रवृत्तियों को स्पष्ट करने के लिए इन कहानियों में संक्षिप्त एवं भावपूर्ण कथोपकथन का विधान किया गया है। परिस्थितियों एवं वक्ता की मनःस्थिति के अनुरूप यत्र-तत्र संवादों में व्यंग्य, रोष, घृणा, उक्ति वैचित्र्य, भावुकता आदि का भी समावेश हुआ है। संवादों की भाषा को भी लेखिका ने प्रायः पात्रानुकूल रखा है। उदाहरणार्थ 'जीवन का प्रश्न' में साबिर की पत्नी की उर्दू बहुला शब्दावली द्रष्टव्य है—"बहन घबराओ नहीं, अगर खुदा को मंजूर हुआ तो मैं तुम्हारे मादरे वतन जरूर भेज दूँगी, पर तुम सोच लो तुम्हारा मजहब तुम्हें कबूल करेगा ? अगर तुम कहो तो मेरा भाई

वहीद अभी बिन व्याहा है, निकाह पढ़ा दूँ !"[1]

आलोच्य कहानियों में देशकाल का रूढ़ि-प्राप्त निरूपण किया गया है। 'कमल-पत्र', 'दे खुदा की राह पर' तथा 'जीवन का अभिशाप' शीर्षक कहानियों में स्वतन्त्रता के पूर्व भारत की राष्ट्रीय स्थिति का चित्रण है—नेताओं का कारावद्ध होना, अहिंसात्मक आन्दोलन, क्रान्तिकारी दल के प्रयास, पुलिस का दमन-चक्र, स्वतन्त्रता की घोषणा आदि घटनाएँ इन कहानियों में प्रसंगानुसार उल्लिखित है। 'जीवन का प्रश्न' में शरणार्थी कन्याओं की निराश्रयिता एवं सम्बन्धियों द्वारा अस्वीकार करने की समस्या का चित्रण हुआ है। अन्य कहानियों मे समाज की संकुचित मनोवृत्ति, अवलाओं पर अत्याचार, दहेज-प्रथा, विधवा-विवाह-निषेध आदि कुप्रथाओं का चित्रण हुआ है। 'नर्त्तकी' की तिलोत्तमा मरते समय कहती है—"समाज की चक्की ने पीसकर मुझे नर्तकी रूप में गढ़ा है।"[2] इसी प्रकार 'मानवता की पुकार' में महीप की यह उक्ति द्रष्टव्य है—"तो फिर वह समाज रसातल में जाय, जो एक सती स्त्री को कुलटा कहकर घर से निकलवा सकता है। एक निर्दोष परित्यक्ता बाला को ठुकरा सकता है।"[3] इन उक्तियों से स्पष्ट है कि लेखिका का स्वर क्रान्तिमूलक तथा रूढ़ि-विरोधी है। अन्यत्र 'कर्त्तव्य पथ' की मंजु सौरभ से कहती है—"समाज हमारा बलिदान चाहता है तो फिर बलिदान ही हो। पर उसकी मोह-निद्रा तो खुले, समाज की दृष्टि में हमारे दिल ही नही होता, मानो हम मिट्टी की पुतली ही हैं। सुख-दुःख से हमारा कोई सम्बन्ध नहीं तो फिर वह हमारे सामने स्वयं ही आदर्श रखता क्यों नही। चोर चोरी करके दूसरे को चोरी न करने का उपदेश दे तो कितना हास्यास्पद होगा। जिस समाज में भ्रूण हत्याएँ, बाल-वृद्ध-विवाह, बहु-विवाह आदि हों, जहाँ विधवा पुत्री और पुत्रवधु के रहते बूढ़े बाबा वर बन जाते हैं उस समाज को क्या अधिकार है हम बाल-विधवाओं का हृदय मसलने का।"[4]

आलोच्य कहानियों का लक्ष्य समाज-सुधार है। इसके लिए लेखिका ने नवयुवकों को 'आदर्श' एवं 'क्रान्ति' की प्रेरणा दी है। कटु से कटु परिस्थितियों में भी यदि युवक अपने निश्चय पर दृढ़ रहें और नवयुवतियाँ परोक्षतः उनका साथ दें तो सहज ही कुरीतियों का उन्मूलन हो सकता है। 'कर्त्तव्य पथ' मे सौरभ द्वारा मंजु के प्रति कथित ये विचार उद्धरणीय हैं—"तुम तो यह भी नहीं जानती कि कब तुम्हारा विवाह हुआ और कब विधवा हुई, फिर भी तुम्हारे दूसरे विवाह की सम्मति समाज नहीं देगा, तब आवश्यकता है हमें क्रान्ति करने की, समाज को बता देने की कि समय पलट चुका है अब बाबा आदम के जमाने की रीति निभ न सकेगी।"[5] इसी प्रसंग में 'जीवन का प्रश्न' कहानी से क्रमशः

---

१. जीवन की पहेलियाँ, पृष्ठ ८२
२. बिखरी आशा, पृष्ठ ५६
३. बिखरी आशा, पृष्ठ ११३
४-५. जीवन की पहेलियाँ, पृष्ठ ६१-६२, ६२

सुधीर एवं योगेश की ये उक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—

(अ) "नवयुवकों पर देश का भविष्य अवलम्बित है, उन्हें दृढ़ होना चाहिए।"[1]

(आ) "प्रत्येक युवक का कर्त्तव्य है कि वह सिद्धान्तवादी तथा दृढ़ निश्चयी हो।"[2]

भारतीय नारी का गौरव-गान आलोच्य कहानियों का द्वितीय प्रमुख उद्देश्य है। 'नर्त्तकी' में तिलोत्तमा, 'दीपावली की भेंट' में पूर्णिमा आदि स्त्री-चरित्र इसके प्रमाण हैं। 'जीवन की साध' में लतिका के पिता माधव बाबू की यह उक्ति कितनी गौरवपूर्ण है—"ठीक है तब मैंने यह नहीं सोचा था कि गंगा शिव के ही मस्तक पर ठहरती है। सती हिन्दू नारी पति के सिवा दूसरे की पूजा नहीं कर सकती। सोचा था तुम्हारी शिक्षा से वह संस्कार मेट दूंगा। किन्तु नहीं, अब समझा भारत की नारी का गौरव इतना ऊँचा क्यों है।"[3]

आलोच्य कहानियों की भाषा सरल और लघुवाक्यगर्भित होने के साथ-साथ मुहावरेदार भी है। एक मछली सारे तालाब को गन्दा करती है, वह आस्तीन का साँप आपको ही डसने को तैयार है, उनका बाल भी बाँका न होगा, आँखों देखी मक्खी निगलनेवाली नहीं, सेठ गणेशलाल कच्ची गोटी नहीं खेले थे आदि उक्तियाँ[4] ऐसी ही हैं। लेखिका ने वर्णनात्मक एवं नाटकीय शैली के मिश्रण द्वारा कहानियों में रोचकता का सुन्दर समाहार किया है। संवादों की भाषा भावपूर्ण एवं रोचक है तथा शैलीगत प्रवाह पर विशेष ध्यान दिया गया है। निष्कर्षस्वरूप यह कहा जा सकता है कि यद्यपि श्रीमती सत्यवती देवी की कहानियों में समस्या-चित्रण अथवा युगीन चेतना की उपेक्षा के कारण मनोवैज्ञानिक सौन्दर्य का अभाव है, तथापि भावपूर्ण आदर्शोन्मुख कथानकों की सृष्टि में वे सिद्धहस्त हैं। असत् पात्रों के चरित्रों का सत् में परिमार्जन करके उन्होंने अपनी उदारता एवं सहानुभूति का परिचय दिया है।

१७. सुश्री पुष्पा भारती

सुश्री भारती ने 'किनारों के बीच' और 'विधाता के निर्माता' शीर्षक उपन्यासों के अतिरिक्त 'मरियम' में अपनी तेरह कहानियों का संग्रह किया है। इनका क्रम इस प्रकार है—बस्ती का कारीगर, रहस्य, भूल, युग-स्रष्टा, बदली, मरियम, आधुनिका, दो पहिये, ईश्वर के आगे, मधु चली गई, समस्या का अन्त, एक रात : एक दिन, शंका-समाधान। इसमें परिस्थितिजन्य वैयक्तिक कुंठा, आशा-निराशा, हास-विलास, ईर्ष्या-

---

१-२. जीवन की पहेलियाँ, पृष्ठ ९०, ९१

३. बिखरी आशा, पृष्ठ १४

४. देखिए (अ) बिखरी आशा, पृष्ठ १५, ४७, ४९, (आ) जीवन की पहेलियाँ, पृष्ठ ९३-११३

द्वेष, अनुराग-विराग, भावुकता-नीरसता आदि का विविध सन्दर्भों में चित्रण हुआ है। 'वस्ती का कारीगर', 'रहस्य', 'वदली', 'मरियम', 'दो पहिये' और 'समस्या का अन्त' इस संग्रह की श्रेष्ठ रचनाएँ हैं। यद्यपि इन्हें भी उच्च कोटि की कहानियाँ नहीं कहा जा सकता, तथापि इनमें लेखिका के उद्दिष्ट मूल भाव से पाठक का तादात्म्य हो जाता है और इसी दृष्टि से अन्य कहानियों की तुलना में इनका महत्त्व अपेक्षाकृत अधिक है। इसके विपरीत 'युग-स्रष्टा' और 'एक रात : एक दिन' शीर्षक कहानियाँ प्रायः निरुद्देश्य हैं तथा अन्य कहानियाँ भी कहानी-कला की दृष्टि से विशेष प्रभावशाली नहीं बन पड़ी हैं। लेखिका ने अधिकांश कहानियों में पारिवारिक जीवन के सुख-दुःखमय चित्रों को स्थान दिया है : 'वदली', 'आधुनिका', 'शका-समाधान' और 'ईश्वर के आगे' शीर्षक कहानियाँ इसी प्रकार की हैं। 'वस्ती का कारीगर' में कारीगर जमुना के जीवन के उतार-चढ़ाव के माध्यम से छल-कपट एवं धन-लिप्सा को जन्म देनेवाले नागरिक जीवन की तुलना में सरलता, सादगी, सन्तोष और निर्धनता से युक्त ग्राम्य जीवन की उत्कृष्टता सिद्ध की गई है। 'रहस्य' में मित्र के प्रति विश्वासघात को दण्डनीय अवगुण मानकर रोचक कथानक की सृष्टि की गई है। 'भूल' तथा 'समस्या का अन्त' में विधवा-जीवन की नीरसता एवं यन्त्रणाओं का चित्रण करते हुए इनका समाधान पुनर्विवाह में माना गया है। 'मरियम', 'दो पहिये', और 'मधु चली गई' में क्रमशः सख्य भाव, दाम्पत्य प्रेम और प्रेमी-प्रेमिका के अनुराग की आदर्शमूलक चर्चा की गई है।

पुष्पा भारती की कहानियों में एक ओर ऐसे पात्र हैं जो परिस्थितियों के घात-प्रतिघात से प्रभावित होते हुए कथा-विकास में योग देते हैं और दूसरी ओर उन पात्रों को प्रस्तुत किया गया है जो विपरीत परिस्थितियों में भी चारित्रिक दृढ़ता का परिचय देते हैं और पाठक की सहानुभूति अथवा श्रद्धा को सहज ही पा लेते हैं। 'वस्ती का कारीगर' में पति का सच्चा हित चाहनेवाली सुहागी, 'भूल' में विधवा देवयानी को दृढ़तापूर्वक अपनानेवाला नायक कुमार, 'मरियम' में सख्य-स्नेह का आदर्श प्रस्तुत करनेवाली रोज़ और मरियम तथा 'समस्या का अन्त' में विधवा भाभी को अपनाकर उसे सुखी बनानेवाला अशोक ऐसे ही पात्र हैं, जिन पर समाज को गर्व हो सकता है। लेखिका ने चरित्र-निरूपण के लिए मुख्यतः कथोपकथन का आश्रय लिया है तथा 'वस्ती का कारीगर', 'युग-स्रष्टा', 'वदली', 'मरियम', 'आधुनिका' आदि अनेक कहानियों का प्रारम्भ वार्तालाप से ही किया है। ये संवाद चरित्र के अतिरिक्त प्रायः देशकाल की अभिव्यक्ति में भी सहायक रहे हैं : 'आधुनिका' में प्राचीना और आधुनिका का प्रारम्भिक दीर्घ संवाद इसी प्रकार का है।[1]

'मरियम' में संकलित कहानियों में देशकाल सम्बन्धी निम्नलिखित समस्याओं को स्थान दिया गया है — (अ) नगरों और ग्रामों की जीवनधारा की तुलनात्मक श्रेष्ठता,

---

१. देखिए 'मरियम', पृष्ठ ६५-७०

(आ) विधवा के सामाजिक एवं पारिवारिक जीवन की यन्त्रणाएँ (इ) नारी द्वारा प्राचीन और नवीन संस्कृतियों में समन्वय-स्थापना की आवश्यकता। इन समस्याओं के लिए लेखिका ने जो समाधान प्रस्तुत किये हैं उनमे उद्देश्य की प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति के स्थान पर व्यंजना का आश्रय प्रमुख रहा है। उन्होंने नागरिक जीवन के कपट-कर्दममय रूप की अपेक्षा ग्राम्य जीवन की सरलता को अधिक महत्त्व दिया है, विधवा के पुनर्विवाह को समाज के लिए मंगलकारी माना है तथा नारी-आदर्शों मे से न तो पति की अन्ध-भक्ति का समर्थन किया है और न ही अहंवादी विद्रोहिणी नारी का। उनकी दृष्टि प्राचीन एवं नवीन के समन्वय पर केन्द्रित रही है। अन्त में प्रस्तुत कृति के कला-पक्ष पर विचार कर लेना भी उपयुक्त होगा। अपने उपन्यासो की भाँति उन्होने कहानियों में भी व्यावहारिक भाषा को अपनाया है, जिससे उनकी अभिव्यंजना-शैली सर्वत्र सरल-स्पष्ट रही है। फिर भी, लेखिका के कलकत्ता-निवासिनी होने के कारण, स्थानीय प्रभाव के फलस्वरूप भाषा मे अनेक त्रुटियाँ हैं, जो सर्वथा चिन्त्य हैं। यथा—(अ) तुम्हारी सफर कैसी रही, (आ) मुझे मरियम से मुलाकात न हो सकी, (इ) तुम्हारी चाल-चलन अच्छी नजर नही आती।[1] शब्दो, वाक्यांशों अथवा वाक्यों में इस प्रकार की अशुद्धियाँ बहुत अधिक न होने पर भी कथा-प्रवाह में बाधक सिद्ध हुई हैं। फिर भी, यह स्वीकार करना होगा कि उनमें कहानी-लेखन की प्रतिभा है और कतिपय कहानियो मे वे अत्यन्त सशक्त रूप में हमारे सामने आई हैं।

१८. श्रीमती राधिका जौहरी

इन्होंने 'पलकें' शीर्षक कहानी-संग्रह मे बारह लघुकथाओं को स्थान दिया है, जिनका क्रम इस प्रकार है—साध-पूर्ति, प्रवाह, जमादारिन, ममत्व, इमरती का झमेला, एक राह, विदा, हिलोर, कचोट, अभागी, आवेग, पलकें। इनमें जीवन-संघर्ष से उत्पन्न विभिन्न प्रतिक्रियाओ (अन्तर्द्वन्द्व, द्वेष, घृणा, तृष्णा, अर्थ-लालसा, आशा, निराशा, तृप्ति, असन्तोष आदि) को चित्रित किया गया है, किन्तु उपस्थापन की शैली प्रायः उतनी प्रभावशाली नही है। इनके कथानक जीवन की सामान्य घटनाओं से चुने गए हैं, किन्तु उनमें न तो मार्मिकता आ सकी है और न ही उनके औचित्य को सिद्ध किया गया है। इसका कारण यह है कि इन कहानियों मे सामाजिक समस्याओ के निरूपण और समाधान का प्रायः अभाव रहा है। 'जमादारिन' कहानी उक्त कथन की अपवाद हो सकती है, क्योंकि इसमें हरिजनों के प्रति उच्च वर्गवालों के दुर्व्यवहार का उल्लेख है और यह समस्या चिरकाल तक भारतीय समाज की ज्वलन्त समस्या बनकर साहित्य में स्थान पाती रही है। फिर भी यह नही कहा जा सकेगा कि इस कहानी में विषय-संयोजन में भी उसी कला का परिचय दिया गया है, जो विषय-चयन मे सुलभ है। वस्तुतः लेखिका

---

१. मरियम, पृष्ठ-क्रम च, ५५, १२४

ने अपने कथानकों को स्थूल वर्णन का आश्रय लेकर बोझिल तथा नीरस बना दिया है।

विवेच्य कहानियों के पात्र परिस्थितियों के सम्मुख अत्यन्त विवश हैं। निराशा तथा वेदना के दोले में झूलते हुए परिस्थितियों से उत्पन्न कुंठाओं को लेकर घुलते रहना और एक दिन इसी अवस्था में मृत्यु का वरण करना—यही इन पात्रों का सामान्य जीवन-क्रम है। भावुकता इनके चरित्र का विशिष्ट अंग है, किन्तु किसी प्रकार के आदर्श की आशा इनसे नहीं की जा सकती। तात्पर्य यह है कि राधिका जी को कथानक की भाँति चरित्रो के सहज तथा स्वस्थ विकास में भी असफलता मिली है। कथोपकथन का तत्त्व तो और भी अधिक उपेक्षित रहा है। वर्णन-शैली को प्राथमिकता देते हुए लेखिका ने पात्रों की भावनाओं को अत्यन्त विरल स्थलों पर वार्त्तालाप के माध्यम से मुखर किया है, किन्तु उनमें कोई उल्लेखनीय विशेषता अप्राप्य है। हाँ, संवादों से कथानकों में किंचित् नाटकीयता का समावेश अवश्य हो सका है। यहाँ यह उल्लेख्य है कि लेखिका ने इन कहानियो में जिन समस्याओ को स्थान दिया है, वे प्रायः व्यक्तिगत हैं। किन्तु, वे सामाजिक व्याघात से उत्पन्न हुई है, अतः उनमें कतिपय स्थलों पर देश-काल सम्बन्धी संकेत भी लक्षित होते है। यथा—

(अ) "नारी आज से नहीं युग-युग से ही प्राकृतिक, ईश्वरप्रदत्त वरदान द्वारा सदैव ही अधिकृत रहती आई है—रहेगी भी।"[1]

(आ) "स्वतन्त्र भारत में जब से बापू ने हरिजनो से स्नेह कर अपनी छत्रछाया उन पर की तब से किसकी मजाल जो इन्हें अधिक कठोर यातनाएँ दे या इनसे अधिक सख्ती का व्यवहार करे? वे भी स्वतन्त्र है, मनुष्य है।"[2]

इस कथा-संग्रह में 'जमादारिन' के अतिरिक्त अन्य किसी कहानी में उद्देश्य की स्पष्ट व्याप्ति नहीं है। लेखिका ने अपने मन के भावों अथवा जीवन के कुछ सामान्य घटना-खण्डों का इतिवृत्तात्मक शैली मे चित्रण मात्र किया है, फलतः अभिव्यंजना-पक्ष की दुर्बलता को प्रायः सर्वत्र लक्षित किया जा सकता है। उनकी भाषा में जटिलता के स्थान पर व्यावहारिकता और मुहावरों की विदग्धता तो है, किन्तु अशुद्ध शब्दो (धैर्यता, सौन्दर्यता, स्वरूपता, मौनता आदि)[3] और अशुद्ध वाक्यांशों (मजाक करनी प्रारम्भ की, भड़काए में आकर आदि)[4] के प्रयोग से अभिव्यंजना-प्रवाह निश्चय ही बाधित हुआ है। अन्ततः यह कहा जा सकता है कि प्रस्तुत संग्रह की आख्यायिकाएँ मर्मस्पर्शी नहीं बन सकी हैं, क्योंकि लेखिका में सूक्ष्म अन्तर्दृष्टि तथा समर्थ वर्णन-शैली का अभाव है।

१९. सुश्री पुष्पा महाजन

सुश्री पुष्पा महाजन की 'संघर्ष और शान्ति' शीर्षक कृति में निम्नलिखित पन्द्रह

१-२. पलकें, (अ) पृष्ठ १०, (आ) पृष्ठ २३

३-४. पलकें (अ) पृष्ठ ४१, ४७, ५२, ९५ (आ) पृष्ठ ८७, ९६

कहानियों को स्थान प्राप्त हुआ है—नव निर्माण, परित्यक्ता, उतार-चढ़ाव, मंजुला, मनोरंजन, अलका, सदेह, संघर्ष और शान्ति, देवरानी और जेठानी, एक पैसा, अनुपमा, विवशता, रिक्शावाला, पथ-निर्देश, बाईं ओर। ये कहानियाँ सामाजिक हैं और इनमें निम्नलिखित विषयों का समस्यामूलक चित्रण हुआ है—याचक वर्ग एवं श्रमजीवी वर्ग की दयनीय अवस्था, शोषक वर्ग की क्रूरता एवं हृदयहीनता, दाम्पत्य जीवन अथवा गृहस्थी के विभिन्न उतार-चढ़ाव, विधवा की आत्मनिर्भरता, दहेज-प्रथा-विरोध, शिक्षा-संस्थाओं में व्याप्त अराजकता, भारत-विभाजन के उपरान्त साम्प्रदायिक रक्तपात। आलोच्य कहानियों में कथानक सुगठित एवं सुव्यवस्थित हैं। 'देवरानी और जेठानी' शीर्षक कहानी में देवरानी-जेठानी के रागद्वेषमय चरित्रों एवं बाल-मनोविज्ञान के अंकन में लेखिका विशेष सफल रही हैं । 'संदेह' कहानी में मालकिन उर्मि द्वारा सेविका बुधिया पर साड़ी की चोरी का आरोप लगाने तथा उसके मिथ्या सिद्ध होने की घटना द्वारा अभिजात वर्ग का अच्छा उपहास किया गया है। सुखान्त कहानियों की अपेक्षा दुःखान्त कहानियों के संयोजन में लेखिका को अपेक्षाकृत अधिक सफलता मिली है। उन्होंने कहानियों के आरम्भ में शैली-वैविध्य की ओर विशेष ध्यान दिया है। विषय-वस्तु की दृष्टि से 'नव निर्माण', 'संदेह', 'एक पैसा', 'विवशता' तथा 'रिक्शावाला' शीर्षक कहानियों के पात्र शोषित वर्ग एवं शोषक वर्ग के प्रतीक-रूप में व्यक्त हुए है। शोषित पात्र प्रायः श्रमजीवी अथवा याचक हैं, जिन्हें जीवित रहने के लिए अभिजात वर्ग की डाँट-फटकार, उपेक्षा, अवहेलना, मार-धिक्कार सभी कुछ सहना पड़ता है। मध्य वर्ग एवं अभिजात वर्ग के अधिकांश पात्र मानवीय संवेदनाओं से शून्य है। शोषितों को पीड़ा पहुँचाना, उनकी विवशताओं से अनुचित लाभ उठाना, उन्हें दुत्कारना मानो उनका धर्म है। 'नव निर्माण' में सुधीर, 'संदेह', में उर्मिला और 'विवशता' में मास्टर साहब इसी कोटि के पात्र हैं। 'नव निर्माण' का कुमार उस वर्ग का होकर भी उससे पृथक् है, क्योंकि दीनों के प्रति दया एवं प्रेम उसके चरित्र की प्रमुख विशेषताएँ है।

पुष्पा जी ने स्त्री-चरित्रों मे पति-भक्ति, देश-प्रेम, स्वाभिमान, आत्मनिर्भरता आदि गुणों का समावेश किया है । 'परित्यक्ता' की नलिनी पतिपरायणा आदर्श नारी है। पति-त्यक्ता होने पर स्वयं जीविकोपार्जन करती है, किन्तु पति की स्मृति उसके अन्तस् में पूर्ववत् विद्यमान रहती है। 'उतार-चढ़ाव' की सुधा तथा 'सघर्ष और शान्ति' की सरला दृढ़ एव साहसी नारियाँ है, विधवा होने पर सम्बन्धियों के दुर्व्यवहार का वे उचित समाधान खोज पाती है और आत्मनिर्भर रहकर अपनी सन्तानों को योग्य बनाती हैं। 'मंजुला' की मंजुला दहेज-समस्या के विरोध में गृह-त्याग करती है और अन्त में बिना दहेज के ही विवाह करती है । 'अलका' की अलका अपनी स्वतन्त्र इच्छाओं में व्याघात उत्पन्न करनेवाली नौकरी को त्याग देती है। 'पथ-निर्देश' की मंजु अपने शहीद पति के आदर्शों में निष्ठा रखते हुए नर्स बनकर मानव-सेवा का लक्ष्य ग्रहण करती है और प्रत्येक प्रलोभन को ठुकरा देती है। लेखिका ने पुरुष पात्रों को भी प्रायः सहज मानवीय धरातल

से चित्रित किया है, जिनमें गुणों की अपेक्ष दुर्बलताएँ कहीं अधिक है। पत्नी की अपेक्षा पर-स्त्री में रुचि लेना, निर्दोष पत्नी का त्याग तथा द्वितीय विवाह, मद्यपान एवं जुए में धन का नाश करके पत्नी तथा बच्चों को पीड़ा पहुँचाना अधिकांश पुरुष-चरित्रों की प्रवृत्तियाँ हैं। 'नव निर्माण' में कुमार, 'पथ-निर्देश' में मंजु का पति आदि विरल पात्रों ने दया, देशभक्ति, मानव-सेवा आदि उच्च आदर्शों का स्पर्श किया है। इन कहानियों में देशकाल, पात्र एवं परिस्थिति के अनुरूप रुचिर संवादों की योजना की गई है। कथोपकथन पात्रों के व्यक्तित्व को सवाक् करने मे विशेष उपयोगी सिद्ध हुए है। पात्र एवं परिस्थिति के अनुरूप व्यंग्य, विनोद, स्नेह, रोष, क्षोभ, घृणा, तिरस्कार, ईर्ष्या, द्वेष आदि भावों की सफल अभिव्यक्ति हुई है। यद्यपि संवादों में पात्रानुकूल भाषा-वैविध्य के दर्शन नहीं होते, तथापि उनमें सरस एवं सजीव भाषा-शैली का प्रयोग हुआ है।

आलोच्य कहानियों में हिन्दू-परिवारों एवं समाज की निम्नलिखित विडम्बनाओं का चित्रण किया गया है—(अ) विधवाओं के प्रति सम्बन्धियो का दुर्व्यवहार, (आ) दाम्पत्य जीवन की समस्याएँ, यथा—पति द्वारा पत्नी की उपेक्षा, विश्वासघात, अनादर, परनारी-रमण आदि, (इ) सास अथवा जिठानी-देवरानी का कर्कश स्वभाव एवं कपट-नीति, (ई) भिक्षुक वर्ग की हीनावस्था तथा दाताओं की निष्ठुरता, (उ) अहर्निश परिश्रम करके भी श्रमजीवियों का अभावग्रस्त जीवन, (ऊ) दहेज-समस्या, (ए) शिक्षा-संस्थाओं में अधिकारी वर्ग तथा उनके चमचों को प्रसन्न रखने के लिए आत्म-हनन की समस्या। वस्तुतः इस संग्रह की कहानियो का लक्ष्य मानव को साहसपूर्वक परिस्थितियो से जूझने की प्रेरणा देना है। इस दृष्टि से 'संघर्ष और शान्ति' शीर्षक कहानी में नायिका सरला की यह उक्ति द्रष्टव्य है—"मनुष्य यदि परिस्थितियों से सघर्ष कर सके तो मनुष्य है। नही तो कीट से भी नीचतर है। जो दब जाये, उसे संसार दबाता है। अतः बढ़ो, अपनी समस्त शक्तियों को लेकर अपने पथ पर बढ़ो। तुम परिस्थितियों की दास नही, परिस्थितियाँ तुम्हारी दास हैं।"[1]

आलोच्य कहानियों मे तत्समबहुला भाषा को स्थान देकर भाषा-परिष्कार पर अधिक ध्यान दिया गया है। उक्त कथन के प्रमाण-रूप में 'अनुपमा' कहानी की ये पंक्तियाँ अवलोकनीय हैं—'संध्या का प्रशांत वातावरण। चिड़ियाँ झुरमुटों में चहक रही थी। अस्ताचलगामी सूर्य का निस्तेज प्रकाश प्रकृति को रंजित कर रहा था। संध्या रानी अपने सौन्दर्य पर इठला रही थी। नीरवता का साम्राज्य था। एक बड़ी कोठी के बाहर उद्यान में एक अनिंद्य सुन्दरी वृक्ष के तने का आधार लेकर, चित्र-लिखित प्रतिमा-सी खड़ी थी। विशालकाय नेत्रों में कोई निराशा और दो अश्रु-बिन्दु, मुख-मुद्रा आतुर और विपण्ण।"[2] लेखिका ने सरल शब्दों को भी समास तथा सन्धि की सहायता से जटिल-गम्भीर बनाने का प्रयास किया है। शरदावकाश, नियन्त्रणाधिकार, क्रोधा-

१. संघर्ष और शान्ति, पृष्ठ ९९
२. संघर्ष और शान्ति, पृष्ठ ११६

भिभूत, अस्ताचलगामी[1] आदि शब्द इसके प्रमाण हैं। इक्का-दुक्का, हक्की-बक्की, कपड़े-लत्ते आदि शब्द-युग्मो[2]; बहिनापा, पिछवाड़ा, चपतियाया, दिहाड़ी आदि देशज शब्दो[3] एवं 'दाल में कुछ काला है, 'दूसरों की जूतियाँ चाटती रहें, आदि प्रचलित मुहावरो[4] ने भाषा को पर्याप्त व्यावहारिक सौन्दर्य प्रदान किया है। अधिकांश कहानियों में चित्रात्मक एवं भावपूर्ण शैली का सौन्दर्य विशेषतः व्याप्त रहा है तथा वर्णनात्मक एवं नाटकीय शैली के अनुपातमय संयोग ने शैली में पर्याप्त सजीवता का संचार किया है।

२०. कुमारी रीता

कुमारी रीता के 'एक कली दो काँटे' शीर्षक कहानी-संग्रह में निम्नलिखित अट्ठारह कहानियों को स्थान प्राप्त हुआ है—अंधेरा उजाला, इन्सान या भेड़िया, वोट का हकदार कौन, विश्वास और धोखा, आत्महत्या, रात अंधेरी है, करुण गाथा, आग जो दिल में है, अभिनय, हमी तो थे, हम दोषी हैं, रास्ते का काँटा, गोदाम, निरुद्देश्य, सदावर्त के कीड़े, जुर्माना, परान्नंदुर्लभंलोकाने, राजू। ये कहानियाँ सामाजिक हैं और इनमें देशकाल का प्राधान्य है। प्रायः प्रत्येक कहानी में देश, समाज अथवा व्यक्तिविशेष (जो वस्तुतः समाज के एक विशिष्ट वर्ग का ही प्रतिनिधि होता है) के लिए तीव्र व्यंग्य अथवा विद्रूप का भाव निहित है। समग्र रूप से विचार करने पर इन कहानियों में *कथानक की दृष्टि से निम्नलिखित विशेषताएँ प्राप्त होती हैं*—(अ) उच्च वर्ग की हृदयहीनता, स्वार्थपरता तथा अन्य हेय प्रवृत्तियों का व्यंग्यपूर्ण चित्रण, (आ) शोषित सर्वहारा वर्ग के अभावों, वेदनाजन्य भावों एवं अन्य समस्याओं का करुण चित्रांकन, (इ) आर्थिक एवं सामाजिक वैषम्य के परिणामस्वरूप वर्तमान समाज में व्याप्त असंगतियाँ, (ई) भ्रष्टाचार, धोखाधड़ी, अन्याय, स्वार्थ आदि ऐसी व्यक्तिगत तथा वर्गगत प्रवृत्तियों का चित्रण, जो देश और समाज को नित्यप्रति पतन के गर्त्त की ओर उन्मुख कर रही हैं, (उ) पुरुष एवं नारी के समानाधिकारों के प्रति सचेत वर्तमान नारी की सजग चेतना का उद्बोधन।

जैसा कि उपर्युक्त विषय-विश्लेषण से स्पष्ट है, आलोच्य कहानियों में प्रायः प्रगतिवाद का प्रभाव रहा है। इनमें पात्र व्यक्ति-रूप में नहीं, अपितु समाजगत विशिष्ट वर्गों के प्रतीक-रूप में प्रस्तुत हुए हैं। यही कारण है कि अनेक कहानियों में लेखिका ने पात्रों के नामोल्लेख की भी आवश्यकता नहीं समझी, केवल उनकी प्रवृत्तियों का ही संकेत दिया है, जो उनके 'व्यक्ति' की अपेक्षा उनके वर्गगत चरित्र की द्योतिका है। उदाहरणार्थ

---

१. देखिये 'संघर्ष और शान्ति', पृष्ठ ४६, ६८, ६९, ११६
२. देखिये 'संघर्ष और शान्ति', पृष्ठ ९, २४, १०२
३. देखिये 'संघर्ष और शान्ति', पृष्ठ ८२, ८३, १३३
४. देखिये 'संघर्ष और शान्ति', पृष्ठ २४, ३३

'इन्सान या भेड़िया' कहानी में रमा और हेम जब भ्रमण करने निकलती हैं तब मार्ग में उनका सामना अनेक पुरुषों से होता है—हेम का पीछा करनेवाला आवारा लड़का, रेस्टोरेंट में उनके साथ बैठने की इच्छा करनेवाला पुरुष, सिनेमा के मुफ्त टिकट देने की बात कहनेवाला युवक, हँसने पर फब्तियाँ कसनेवाले सरदार जी, गांधी टोपीवाले सज्जन, दो साइकिल-सवार आदि। उक्त समस्त पात्र एक विशिष्ट पुरुष-वर्ग के प्रतिनिधि होकर प्रकट हुए है। इस वर्ग के पुरुष आवारा होते हैं और पराई नारी को आकृष्ट करना ही उनकी प्रमुख प्रवृत्ति होती है। जहाँ पात्रों का नामोल्लेख हुआ है वहाँ भी वे प्रायः अपने वर्ग के प्रतीक-रूप में प्रस्तुत हुए है। अधिकांश पात्र सर्वहारा वर्ग एवं अभिजात वर्ग की विषमताओं के द्योतक रहे है। 'गोदाम', 'निरुद्देश्य' तथा 'परान्नंदुर्लभंलोकाने' शीर्षक कहानियों में रेखाचित्रों की भाँति एक पात्र को केन्द्र बनाकर समस्त कथानक की सृष्टि हुई है, किन्तु वे पात्र भी समाज के विशिष्ट वर्गों की मनोवृत्ति को ही प्रकाश में लाते हैं।

आलोच्य लेखिका ने कतिपय कहानियों में नारी को उसके परम्परागत पराश्रयी रूप में ही व्यक्त किया है। 'अंधेरा उजाला', 'आत्महत्या', 'अभिनय', तथा 'राजू' में नारी को निरीह तथा परवश रूप में चित्रित किया गया है। किन्तु, 'आग जो दिल में है' तथा 'रास्ते का काँटा' की नायिकाएँ इस तथ्य की प्रमाण है कि उन्होंने वर्तमान नारी के विद्रोहपूर्ण व्यक्तित्व को भी उभारा है। ये नायिकाएँ पति को परमेश्वर मानकर पूजने-वाली नहीं हैं। यदि 'आग जो दिल में है' की नायिका का मन अपने काले तोंदियल गँवार मलिनवेषी पति की अपेक्षा किसी स्वच्छ श्वेत परिधानवाले नागरिक युवक के सम्पर्क में आने के लिए आतुर हो उठता है, तो इसे एकदम अस्वाभाविक क्यों माना जाए? इसी प्रकार 'रास्ते का काँटा' की शान्ति अपने कुव्यसनी पति की उपेक्षा सहकर घर की चहार-दीवारी में बन्द नहीं रह सकी और अपने लिये भी वैसा ही एक मार्ग अपना लिया तो क्या बुरा किया? आज की जागरूक नारी समानाधिकार चाहती है। समाज, धर्म अथवा मातृत्व के किसी भी बन्धन को स्वीकार करने के लिए वह प्रस्तुत नहीं है। कुमारी रीता की ऐसी नायिकाएँ श्रीमती सुमित्राकुमारी सिन्हा की कथा-नायिकाओं के समकक्ष समाज-विरोधी भावों का पोषण करती प्रतीत होती है।

कुमारी रीता ने कतिपय स्थलों पर वर्णनात्मक शैली में प्रत्यक्ष चरित्र-चित्रण किया है, किन्तु मुख्य रूप से परिस्थितियों के प्रति पात्रों की प्रतिक्रियाओं और उक्तियों में ही उनकी प्रवृत्तियों का प्रकाशन हुआ है। अपने कथानकों को वर्णनात्मक एकरूपता की नीरसता से बचाते हुए उन्होंने पात्र एवं प्रसंग के अनुरूप यत्र-तत्र नाटकीयता का आयोजन किया है, किन्तु 'आग जो दिल में है', 'निरुद्देश्य', 'सदावर्त के कीड़े' आदि अनेक वर्ण-नात्मक कहानियों में उक्त प्रवृत्ति अत्यन्त विरल रही है। पात्रों के कथोपकथन में वक्ताओं की मन-स्थिति के अनुरूप करुणा, सरलता, भावुकता, गर्व, दम्भ आदि भावों का यथा-प्रसंग समावेश हुआ है, किन्तु फिर भी यह उल्लेखनीय है कि लेखिका ने 'संवाद' तत्त्व की ओर अधिक ध्यान नहीं दिया। यही कारण है कि संवादों में उक्ति-वैचित्र्य, व्यंग्य,

तर्क-वितर्क आदि विशेषताओं का प्राय: अभाव रहा है। अनेकश: संवाद अनावश्यक एवं निरर्थक भी रहे हैं[1], मानो मात्र नाटकीयता की इच्छा से प्रेरित होकर ही समाविष्ट किये गए हों। इसी कारण संवादों में सुव्यवस्था की न्यूनता रही है।

वास्तविकता तो यह है कि लेखिका का ध्यान जितना देशकाल की ज्वलन्त समस्याओं को प्रस्तुत करने की ओर रहा है उतना अन्य किसी तत्त्व में केन्द्रित नहीं हुआ। उनकी कहानियों का उद्देश्य भी यही है कि समाज मे व्याप्त आर्थिक वैषम्य, वर्गभेद, निर्धनता, भ्रष्टाचार, नारी-समाज द्वारा परम्परागत दासता का खण्डन आदि समकालीन प्रचलित प्रवृत्तियों के प्रति पाठकों का ध्यान आकृष्ट किया जाए। देशकाल और उद्देश्य के प्रति वे इतनी पूर्वाग्रही है कि 'हमी तो थे' और 'हम दोषी हैं' में केवल इतिहास की विभिन्न घटनाओं का हवाला देकर मात्र शोषित वर्ग की वकालत की गई है।[2] कथानक का अंश इनमें तनिक भी नहीं है, फिर इन्हें किस आधार पर कहानियों की संज्ञा दी जाए ? अत: इन दोनों को प्रगतिवाद से प्रभावित लेख मानना ही उचित होगा।

भौतिक वातावरण के अतिरिक्त लेखिका ने यत्र-तत्र प्राकृतिक दृश्यों का भी चित्रण किया है। ऐसे चित्र प्राय: आलंकारिक शैली में उद्दीपनवत् अर्थात् दृश्यजगत्-सापेक्ष रूप में व्यक्त हुए हैं। यथा—"रात्रि किसी हत्यारे की आत्मा की भाँति कालिमामय थी। आकाश के तारागण असंख्य पुष्प की नाईं अपनी मधुरता और ज्योति को निरर्थक नष्ट कर रहे थे। रात्रि के उस निर्मूल साम्राज्य में 'मिल' का धुआँ चतुर्दिश विसर्जित होकर वायुमण्डल को विषाक्त कर रहा था।"[3] प्रकृति-चित्रों के अतिरिक्त अन्य स्थलों पर लेखिका ने प्राय: सरल, व्यावहारिक एवं सामान्य भाषा-शैली का प्रयोग किया है। उनकी भाषा लघुवाक्यगर्भित एवं सुव्यवस्थित तो है, किन्तु उसमें सरसता का प्राय: अभाव रहा है। यों लेखिका ने शैलीगत प्रवाह की ओर पर्याप्त ध्यान दिया है और उसमे वे सफल भी रही हैं।

२१. श्रीमती शकुन्तला देवी

स्वर्गीया श्रीमती शकुन्तला देवी बिहार की उदीयमाना लेखिका थीं, जिनकी मृत्यु सन् १९५६ मे केवल सोलह वर्ष की अल्पायु में हो गई थी। 'रूप और कला' शीर्षक कहानी-संग्रह में उनकी आठ सामाजिक कहानियाँ संकलित है—अर्थ और प्रतिष्ठा, भावुकता और दायित्व, पैसा और जिन्दगी, मन और तृप्ति, रूढ़ि और जीवन, वासना और प्यार, जीवन और जवानी, रूप और कला। इनमें नारी-जीवन की विविध परिस्थितियों का भावुकतापूर्वक चित्रण किया गया है, जिसके मूल में वैचारिकता तो है, किन्तु अनुभूति-

---

१. देखिये 'एक कली दो कांटे', पृष्ठ १२, ३४, ३७

२. देखिये 'एक कली दो कांटे', पृष्ठ ६५-७१

३. एक कली दो कांटे, पृष्ठ ५८

विस्तार अथवा समस्याओं का सम्यक् निर्वाह प्रायः नहीं हो पाया है। कहानी-कला की प्रौढ़ता की दृष्टि से इन रचनाओं की समीक्षा व्यर्थ होगी। इनका स्वागत भावुक हृदय के उद्गारों के रूप में ही किया जा सकता है। संग्रह की एकमात्र उल्लेखनीय कहानी 'रूढ़ि और जीवन' है. किन्तु इस कहानी मे भी उत्तरार्द्ध अधिक प्रभावशाली नहीं है। कथानायिका रमला नरोत्तम की द्वितीय पत्नी है, जो विवाह के पाँच वर्ष बाद ही विधवा हो गई थी तथा जिसे कालान्तर में रमेश के स्वार्थपूर्ण प्रेम की प्रतीक सन्तान के कारण लांछित होना पड़ा। लेखिका की अन्य कहानियों में दहेज-समस्या, वृद्ध-विवाह, वेश्यावृत्ति, परस्त्री के प्रति मानसिक व्यभिचार, वासनामूलक प्रेम, प्रेम-विवाह आदि का परिस्थिति-जन्य चित्रण हुआ है। ये समस्याएँ दूरव्यापी हैं, किन्तु लेखिका को घटना-निबन्ध में वांछित सफलता नही मिली है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि उन्होंने घटनाओं के माध्यम से चरित्र-निरूपण किया है, किन्तु वे दोनों मे से किसी के प्रति भी न्याय नहीं कर पाई हैं। उनकी कहानियों में समस्याओं का सम्यक् विकास तो हुआ ही नहीं है, चरमोत्कर्ष के जिज्ञासामूलक संघटन और समस्याओं के निदान के प्रति भी वे उदासीन रही हैं। फलतः उनके पात्रों में अंतर्द्वन्द्व और स्वाभाविक मनोविकास की खोज भी विशेप फल-दायी नही होगी। उनका उद्देश्य नारी-पात्रो की विवशताओं का चित्रण करना है, किन्तु सरिता, चित्रा, माधुरी, शीला आदि कथा-नायिकाओं ने परिस्थितियों से संघर्ष न करके जिस हृदय-दौर्बल्य का परिचय दिया है, उसकी सराहना नहीं की जा सकती।

आलोच्य लेखिका ने कथोपकथन की ओर वांछित ध्यान न देकर पात्रों की मनोवृत्तियों को वर्णनात्मक शैली मे प्रकट किया है। इसी कारण उनकी कहानियो में रोचकता और सजीवता का अन्तःप्रसार नही है। वस्तुतः उन्होने वातावरण की सजग अभिव्यक्ति अथवा तथ्य-निरूपण को प्राथमिकता दी है और इस तथ्य को भुला दिया है कि संवाद-योजना से वे अपने कथ्य में अधिक लालित्य ला सकती थी। यदि उन्होने कहीं कथोपकथन का यत्किंचित् आश्रय लिया भी है तो वे पात्रविशेष की उक्तियों में समकालीन देशकाल के विस्तृत निरूपण के लोभ का संवरण नहीं कर सकी है। 'अर्थ और प्रतिष्ठा' शीर्षक कहानी में सरिता के प्रति शैवालिनी की उक्ति इसी प्रकार की है, जिसमें उसने पुरुषों द्वारा महिला-समाज को उन्नति का अवसर न देने पर असन्तोष व्यक्त किया है।[1] 'रूढ़ि और जीवन' शीर्षक कथा में दो पथिकों के वार्त्तालाप में कन्या-विक्रय, बाल-विवाह एवं वृद्ध-विवाह की निन्दा से भी लेखिका की इसी प्रवृत्ति का बोध होता है।[2] तथापि यह स्वीकार करना होगा कि बिहार-समाज में प्रचलित समकालीन सामाजिक विषमताओं के प्रति लेखिका की दृष्टि अत्यन्त जागरूक रही है। समाज में सुनीति अथवा आदर्श की स्थापना उनके अन्तर्मन की कामना है, किन्तु इसके लिए उन्होंने यथार्थ को आदर्श के कोमल आवरण मे रखने की अपेक्षा स्वार्थी पुरुषों के प्रति

१-२. देखिये 'रूप और कला', (अ) पृष्ठ ५, (आ) पृष्ठ ३९-४१

पीड़िता नारी की विद्रोही भावनाओं को सहज मुखर रखा है।

शकुन्तला जी की कहानियों में अभिव्यंजना-पक्ष के तीन सोपान रहे है—कथागत भावुकता, चिन्तन और ओज की अभिव्यक्ति तदनुरूप शैली में ही की गई है। उनकी शैली में एक अनगढ़ स्वच्छन्द प्रवाह है, जिसमें मौलिक उपमानों (गेहूं-से लाल कपोल, चाँदनी-सी नरम कलाई),[1] प्रचलित मुहावरों (लकीर के फ़क़ीर, बात फेरना आदि),[2] प्रान्तीय युग्म शब्दों (अठान-कठान, फौंसी-फूंसी, आरजू-गरजू आदि),[3] सूक्तियों और चित्रभाषा का सहज वैविध्य है। किन्तु, व्याकरणिक अशुद्धियों की बहुलता के लिए लेखिका की प्रशंसा नहीं की जा सकती। इस प्रकार के चिन्त्य प्रयोगों में से कुछ ये है—(अ) "नसों के रक्त सूख गये"[4], (आ) "विष बुन्द टपक पड़ा"[5], (इ) "तीन चार चाँटें जड़ दी"[6], (ई) "कहाँ गया था तुम।"[7] तथापि, यदि हम इन अशुद्धयों के प्रति सहानुभूति रख सकें तो लेखिका की उपलब्धियों की सराहना की जा सकेगी, विशेषतः इसलिए कि इन कहानियों की रचना केवल पन्द्रह-सोलह वर्ष की आयु में की गई थी।

२२. श्रीमती शकुन्तला देवी शर्मा

श्रीमती शकुन्तला शर्मा ने 'अंजलि' (कविता-संग्रह) और 'हिन्दी-काव्य में सौन्दर्य-भावना' के उपरान्त 'चांद खो गया' शीर्षक कहानी-संग्रह की रचना की थी, जिसमें बारह कहानियाँ सकलित हैं। पुस्तकाकार प्रकाशित होने के पूर्व ये कहानियाँ विविध पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी थीं। विषय-वैविध्य की दृष्टि से इन्हें चार वर्गों में रखा जा सकता है—सामाजिक (पाती, भिक्षा, प्लावन, कन्याकुमारी, गतिहीन, फ़ैसला कल होगा), पौराणिक (देव-अदेव, वीथी-जाल, कर्म-मेखला), भावात्मक (दर्पण की कारा, चाँद खो गया) तथा ऐतिहासिक (फ्रांस का लाल फूल)। 'पाती' और 'कन्याकुमारी' शीर्षक सामाजिक कहानियाँ रेखाचित्र की शैली में लिखी गई हैं। इनमें क्रमशः पाती नाम्नी निर्धन कन्या के लेखिका के प्रति घनिष्ठ सौहार्द तथा कृष्णवेणी के अपने प्रवासी प्रिय के प्रति अनन्य अनुराग के भावपूर्ण चित्र अंकित किये गए हैं। 'भिक्षा' और 'प्लावन' में दो भिन्न कथानकों के द्वारा यह सिद्ध किया गया है कि रूप के आकर्षण और हार्दिक अनुराग में पर्याप्त भेद है : प्रिय अथवा प्रिया का पूर्ण प्रेम प्राप्त करने के लिए धन, दया अथवा गर्व की नहीं, अपितु अनुराग के सच्चे प्रतिदान की अपेक्षा रहती है। 'गतिहीन' में पत्नी का स्नेह बाँट लेनेवाले पुत्र सोमू के प्रति ईर्ष्यालु कुमारस्वामी की कुण्ठित भावनाओं का चित्रण किया गया है। 'फ़ैसला कल होगा' में ग़बन के अपराधी शम्भू के हृदय-

---

१-२. रूप और कला, पृष्ठ १,२

३. रूप और कला, पृष्ठ ३, ३१, ४१

४-५. रूप और कला, पृष्ठ ११, १३

६-७. रूप और कला, पृष्ठ ४६, ५८

परिवर्तन, अनुतापस्वरूप न्यायालय में अपने अपराध की स्पष्ट स्वीकारोक्ति आदि घटनाओं द्वारा यह निष्कर्षित किया गया है कि चोरी की अपेक्षा भिक्षा-वृत्ति श्रेयस्कर है, क्योंकि चोर वलपूर्वक पर-धन का अपहरण कर परपीड़न करता है और याचक दाता की दयावृत्ति जाग्रत करके उसे मिलकर उपभोग करने का आदी बनाता है।

'देव-अदेव', 'वीथी-जाल' तथा 'कर्म-मेखला' शीर्षक कहानियों में पौराणिक प्रसंगों के द्वारा वर्तमान मानव-समाज के लिए कल्याणकारी संदेश प्रस्तुत किये गए हैं। 'देव-अदेव' में समुद्र-मंथन और शिव द्वारा गरल-पान की चर्चा के उपरान्त शान्ति को 'अमृत' तथा विग्रह को 'कालकूट' की संज्ञा दी गई है। 'वीथी-जाल' में प्रजावत्सल भक्तराज प्रह्लाद द्वारा प्रजा के सुख-दुःख का परिचय पाने के लिए छद्मवेश में भ्रमण करने का वर्णन हुआ है। 'कर्म-मेखला' में कर्म, मेधा, वासना आदि का मानवीकरण करके सृष्टि के प्रारम्भ-काल से सम्बद्ध पौराणिक वृत्त का मनस्तत्त्वानुरूप सोद्देश्य चित्रण किया गया है। इसमें विधाता और सृष्टि के पुत्र कर्म द्वारा परिस्थितिवश वासना से परिचित होने, उसकी प्रेरणा से प्रलय के साधनों की खोज करने, इससे विष्ण्ण होकर वासना के स्थान पर मेधा को अपनाने की इच्छा करने और वासना द्वारा उन दोनों के संहार के लिए उद्धत होने की चर्चा की गई है।

'दर्पण की कारा' में पंखे से टकराकर चिड़िया की मृत्यु होने से विरही चिड़े की वेदना का भावपूर्ण चित्र अंकित किया गया है। 'चाँद खो गया' में सन्ध्या, उषा, रजनी, पूषा आदि प्रकृति-तत्त्वों का मानवीकरण करके भावपूर्ण शब्दों में यह निष्कर्षित किया गया है कि परिस्थितिजन्य वाधाओं के कारण प्रायः प्रेमियों का मिलन नहीं हो पाता। 'फ्रांस का लाल फूल' में नेपोलियन वोनापार्ट के सेंट हेलेना टापू में वन्दी होने और वन्दी-जीवन की यातनाओं को सहर्ष सहन करते हुए जीवन त्याग देने का ऐतिहासिक घटनानुरूप चित्रण किया गया है।

आलोच्य कहानियों में घटनाओं की अपेक्षा मनोभावों के विकास-क्रम पर अधिक वल दिया गया है। उद्देश्य की प्रमुखता के कारण प्रायः सभी कथानक प्रारम्भ, विकास, चरमोत्कर्ष और अन्त का एक निश्चित क्रम लिये हुए हैं। लेखिका ने इनमें पात्रों को तीन भिन्न वर्गों में स्थान दिया है—(अ) सामाजिक पात्र—पाती, कृष्णवेणी, जयदेव, विजना, संगीता, कुमारस्वामी आदि, (आ) पौराणिक-ऐतिहासिक पात्र—विधाता, विष्णु, शिव, पार्वती, प्रह्लाद, नेपोलियन आदि, (इ) प्रकृति एव मनस्तत्त्व सम्बन्धी पात्र—उषा, रजनी, दिवा, सन्ध्या, कर्म, मेधा, वासना आदि। उक्त वर्गीकरण से स्पष्ट है कि लेखिका ने वस्तुगत वैविध्य के अनुरूप पात्रों मे भी अनेकरूपता को स्थान दिया है। उन्होंने मानव-चरित्र की भाँति मानवेतर पात्रों को भी प्रकृत रूप में प्रस्तुत किया है और इन सभी प्रसंगों में भावुकता, स्नेह, ईर्ष्या आदि भावों का यथाप्रसंग सूक्ष्म-स्थूल रूपों में उल्लेख किया है। पात्रों के व्यक्तित्त्व पर लेखिका की भावुकता अथवा गम्भीर दार्शनिक व्यक्तित्व की छाप स्पष्टतः परिलक्षित की जा सकती है। वर्णन में विदग्धता और सरसता

लाने के लिए उन्होंने संक्षिप्त सारगर्भित संवादों की स्वाभाविक योजना की है। अधिकांश कहानियों में उनकी रुचि ऐसे संवादों की ओर रही है जिनमें जीवन एवं अध्यात्म सम्बन्धी गम्भीर सिद्धान्तों का समावेश है। 'देव-अदेव' में शिव और पार्वती, 'वीथी-जाल' में प्रह्लाद और कोढी, 'चाँद खो गया' में दिवा और दिवाकर तथा 'फ्रांस का लाल फूल' में नेपोलियन और गवर्नर के संवाद इसी प्रकार के हैं।[1] लेखिका का यह सजग प्रयत्न रहा है कि पात्रों के सवाद कथानक, चरित्र-चित्रण एवं उद्देश्य के विकास मे विशेप रूप से सहायक रहें।

आलोच्य कहानियों में पौराणिक, ऐतिहासिक और प्रकृति सम्बन्धी वातावरण की विपयानुरूप योजना की गई है। 'वीथी-जाल' मे प्रह्लाद द्वारा शासित प्रदेश की चार वीथियों—रत्नवीथी, रूपवीथी, तपवीथी, श्रमविथी—के निवासियों की जीवन-धारा का पुराणानुकूल विस्तृत वर्णन हुआ है।[2] 'पाती' में महादेवी के रेखाचित्रो की भाँति वातावरण का सरस-सजीव चित्रांकन हुआ है तथा पर्वतीय प्रदेश की प्राकृतिक सुपमा को मानो साकार कर दिया गया है।[3] 'देव-अदेव' और 'कर्म-मेखला' में ध्वसकारी प्रवृत्तियों की निन्दा करते हुए मानवतावाद और विश्वशांति की स्थापना पर बल दिया गया है। वस्तुतः लेखिका ने देशकाल को विगत, वर्तमान और भविष्य की दृष्टि से भलीभाँति सँजोया है। इसका कारण यह है कि उन्होंने प्रत्येक कहानी की रचना किसी न किसी उद्देश्य को लेकर की है। उन्होंने हिंसा, रूप-लिप्सा, विग्रह आदि कुप्रवृत्तियों के त्याग पर बल देते हुए सुप्रवृत्तियों के ग्रहण अथवा सत्यं, शिवं सुन्दरम् के निर्वाह का विविध प्रसंगों में सन्देश दिया है। 'फ्रांस का लाल फूल' में नेपोलियन बोनापार्ट ने अपने अन्तिम समय में पुत्र के प्रति कितना मार्मिक और प्रेरणादायी संदेश व्यक्त किया है—"मेरा विश्वास है कि वह जीवित रहा तो अवश्य ही राज्य करेगा। पर उस भावी राजा को मैं वता देना चाहता हूँ कि वह प्रेम और शान्ति से मनुष्यता की समृद्धि के लिए राज्य करे। और यह भी न भूले कि शक्ति के समस्त स्रोतों का मूल जनता है।[4]

विवेच्य कहानियों में तत्समबहुला शुद्ध साहित्यिक हिन्दी का प्रयोग किया गया है। समस्त-शब्दों (प्रलय-मुहूर्त, पर्वताकार, आदित्य-मंडल, सृष्टि-संकल्प आदि) के प्रचुर प्रयोग तथा सस्कृतगर्भित शब्दावली ने भापा-शैली को विपयानुरूप गुरु-गम्भीरता प्रदान की है। शैली में स्वभावतः वर्णनात्मकता का अंश अधिक है, किन्तु वर्णन की सजीवता ने उसे प्रायः चित्रात्मकता से विभूपित कर दिया है। उदाहरणार्थ पार्वत्य प्रकृति का भावात्मक शैली में निम्नलिखित सौन्दर्य-सजग चित्रण देखिये—"सन्ध्या लाजभरी नववधू-सी एक बार अरुण होकर क्षितिज के वक्ष में मुख छिपा चुकी थी और

---

१. देखिये 'चाँद खो गया', पृष्ठ ४५-४६, ६८-६६, ८२-८४, ६७-६६

२-३. देखिये 'चाँद खो गया', (अ) पृष्ठ ६१-६६, (आ) पृष्ठ ६-१०

४. चाँद खो गया, पृष्ठ ६६

वैसे ही मुख छिपाये-छिपाये तरु-शिखरों पर इधर-उधर जल्दी में अटक गए दुकूलों को धीरे-धीरे समेट रही थी। चारों ओर दूर-दूर छोटे-छोटे घरौंदे से लगनेवाले मकानों की ओर बढ़ती हुई घास काटनेवालियों की पंक्ति, चींटियों की कतार-सी घनी और पतली दिखाई पड़ रही थी और मैंने पहले-पहल देखा था पर्वत का यह मनोहर दृश्य।"[1]

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि श्रीमती शकुन्तला शर्मा का प्रस्तुत कहानी-संग्रह भावना और अभिव्यंजना दोनों की दृष्टि से पर्याप्त सफल रहा है। उनकी कहानियाँ उद्देश्यपरक होने पर भी वर्णन की स्थूलता के स्थान पर विशिष्ट उक्ति-भंगिमा लिये हुए हैं। नारी-लेखिकाओं की कहानियों में प्रायः जीवन की ससीम चर्चा रहती है—परिवार और निकटवर्ती परिवेश से आगे बढ़कर वे जीवन को इतिहास, दर्शन, मनोविज्ञान आदि के सन्दर्भ में सर्वांगीण अभिव्यक्ति नहीं दे पाती, किन्तु प्रस्तुत कहानी-संग्रह इसका अपवाद है।

२३. सुश्री इंदिरा 'नूपुर'

सुश्री इन्दिरा 'नूपुर' ने उपन्यासों के अतिरिक्त 'शैव्या के आँसू' शीर्षक कहानी-संग्रह की भी रचना की है, जिसमें निम्नलिखित बारह सामाजिक कहानियों को स्थान प्राप्त हुआ है—पृथ्वी और धुरी, बिंदिया काकी, मींड़, वापसी, शैव्या के आँसू, अपराध, बादल फट गये थे, ठर्रे की बोतल, पराजित, रिक्त बिन्दु, मोह का बन्धन, कागज का टुकड़ा। उक्त कहानियों मे मुख्य रूप से नारी-जीवन की समस्याओं का चित्रण हुआ है। अधिकांश कथाओं में पुरुष मात्र नारी के कष्टों के हेतु-रूप सिद्ध हुए हैं। पत्नी के अशिक्षित होने के कारण, पुत्र न होने के कारण अथवा अन्य किसी कारण से पूर्व-पत्नी के होते हुए भी दूसरा विवाह करना (मींड़, अपराध, मोह का बन्धन), पत्नी के स्नेह एवं कष्टों की उपेक्षा करके उसके प्रति कठोर व्यवहार करना (बादल फट गए थे, रिक्त बिन्दु), पत्नी के प्रेम में अविश्वास प्रकट करना (पराजित) आदि विभिन्न अन्यायपूर्ण कृत्यों द्वारा पुरुष पात्रों ने पात्राओं के अन्तस् को ठेस पहुँचाई है अथवा कतिपय आख्यायिकाओं में सामाजिक परिस्थितियाँ उनके कष्टों की मूल हेतु रही हैं (पृथ्वी और धुरी, बिंदिया काकी, ठर्रे की बोतल)। किन्तु, आलोच्य पात्राओं ने प्रतिकार-रूप में केवल अपनी उदात्त विशेषताओं का ही परिचय दिया है। भारतीय नारी के स्नेह, त्याग, कष्ट-सहिष्णुता, पति-परायणता आदि आदर्श गुणों को उभारने में आलोच्य लेखिका विशेष सचेष्ट रही हैं, किन्तु आदर्शवादिता की झोंक में पुरुष पात्रों के प्रति उन्होंने अनेकशः अन्याय का परिचय दिया है, जिसकी सराहना नही की जा सकती। पात्रों के भावों को मुखर अभिव्यक्ति प्रदान करते हुए उन्होंने परिस्थिति के अनुकूल प्रायः संक्षिप्त एवं रोचक कथोपकथन का संयोजन किया है। पात्राओं की उक्तियाँ अपेक्षाकृत अधिक मार्मिक एवं गरिमामयी बन सकी हैं।

---

१. चाँद खो गया, पृष्ठ ६

प्रस्तुत कहानियों में निम्नलिखित सामाजिक समस्याओं को स्थान प्राप्त हुआ है—पति द्वारा पत्नी के प्रति कठोर व्यवहार, दहेज-समस्या (पृथ्वी और धुरी, वापसी) तथा निर्धनता अथवा बेकारी का अभिशाप (ठर्रे की बोतल, काग़ज़ का टुकड़ा)। सुश्री इंदिरा को रानीखेत के प्राकृतिक सौन्दर्य के प्रति विशेष आकर्षण है। अपनी अनेक कहानियों (शैव्या के आँसू, रिक्त बिन्दु, कागज़ का टुकड़ा आदि) में उन्होंने रानीखेत की प्राकृतिक सुषमा की चर्चा की है। उदाहरणार्थ 'शैव्या के आँसू' कहानी से उद्धृत अधोलिखित पक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—"रानीखेत की सड़कें काफ़ी चौड़ी है। एक ओर ऊँचे-ऊँचे चीड़ के वृक्ष दिखाई पड़ते हैं और दूसरी ओर कहीं-कही ढाल और कही कही गड्ढे भी।"[1] इन कहानियों का उद्देश्य भारतीय नारी की गरिमा का उद्घोष करना है। कही पुत्री तथा भगिनी के रूप में, कहीं पत्नी के रूप में, कहीं प्रेमिका के रूप में और कही माता के रूप में प्रस्तुत गल्पों में भारतीय नारी के चरित्र को उत्कर्ष प्रदान किया गया है।

विवेच्य कथाओं में सरल एवं मुहावरेदार भाषा का प्रयोग हुआ है ('लेना एक न देना दो', 'वह रात पलकों में ही कटी')।[2] लेखिका की शैली चित्रात्मक, नाटकीय एवं भावानुकूल मार्मिक बन पड़ी है। अवसरानुकूल अलंकारों के समुचित प्रयोग ने अभिव्यंजना-पक्ष को अतिरिक्त सौष्ठव प्रदान किया है। उक्त विशेषताओं के उदाहरण-रूप में अधोलिखित पंक्तियाँ अवलोकनीय हैं—"अतीत के दिन उसकी पलकों में झूम उठे··· जानकी के साथ विताये हुए सुखद सहवास के वे कुछ दिन। उसे याद आया, जानकी सुन्दर थी, भोली और सुकुमार। रुनझुन भी अपनी माँ का स्वरूप लेकर ही संसार मे आई है। जब वह काम करते-करते थक जाती है, तब उसके दीप्त मुखमण्डल पर स्वेद बूँदें कमल की पंखुरियों पर हिमकण की भाँति चमकने लगती है।"[3]

२४. सुश्री मालती परूलकर

कुमारी मालती परूलकर, अब श्रीमती मालती सिरसीकर, ने 'तुम बड़ी पागल हो तथा अन्य कहानियाँ' शीर्षक कृति में पारिवारिक तथा रोमानी जीवन-धारा की ग्यारह कहानियों का समावेश किया है—नीड़ की ओर, विदा का उपहार, यात्रा का चाँद, विवाद से बढ़कर, पंकज, बन्धन की कड़ियाँ, तुम बड़ी पागल हो, मृगजल से दूर, विपरीत दिशा, कट्टी, स्नेह-सूत्र। लेखिका के शब्दों मे ये कहानियाँ कुछ व्यक्तियों की अनुभूत जीवन-घटनाओं पर आधृत हैं[4], फलत· इनमें अनुभूतिजन्य गाम्भीर्य की खोज निरर्थक न होगी।

'नीड़ की ओर' इस संग्रह की अत्यन्त सशक्त पारिवारिक कहानी है। इसमें एक

---

१. शैव्या के आँसू, पृष्ठ ६३
२. देखिये 'शैव्या के आँसू', पृष्ठ २१, २५
३. शैव्या के आँसू, पृष्ठ १०४
४. देखिये 'तुम बड़ी पागल हो', भूमिका, पृष्ठ ५

मद्यसेवी लेखक के जीवन का यथार्थवादी शैली में चित्रण किया गया है। पत्नी के प्रति दुर्व्यवहार उसके लिए साधारण बात थी, जिसके फलस्वरूप उसके पुत्र अजय और पुत्री नीलू के मन मे पिता के प्रति घृणा और माता के प्रति सहानुभूति के भाव रहने लगे। अन्त में बच्चों के पारस्परिक संवाद से अजय के पिता के मानसिक परिवर्तन का मार्मिक चित्रण किया गया है। 'कट्टो' शीर्षक कहानी की रचना 'पंचतन्त्र' तथा 'हितोपदेश' की भाँति उपदेशात्मक शैली में की गई है। कट्टो गिलहरी माता से छिपकर स्वर्गोपम देश की खोज में निकली तो गिद्ध द्वारा पकड़ ली गई, किन्तु संयोगवश उसके पंजे से छूटकर अपनी माता के पास जा गिरी और इस प्रकार उसकी जीवन-रक्षा हो गई। 'बन्धन की कड़ियाँ' में कवयित्री हेमा के पिता तथा पति द्वारा उसकी काव्य-प्रतिभा की ओर ध्यान न देना और फलत. उसकी मानसिक वेदना का चित्रण किया गया है। लेखिका ने अन्य कहानियों में वासनायुक्त अथवा वासना-मुक्त प्रेम की हर्षशोकमयी अनुभूतियों को अंकित किया है। 'यात्रा का चाँद' और 'तुम बड़ी पागल हो' रोमानी प्रेम-कथाएँ हैं जिनमें क्रमशः राघू और निर्मला तथा नवीन और नीमा के प्रेम, परिस्थितिजन्य भ्रम, मान-मनौवल आदि का चित्रण हुआ है। 'विदा का उपहार' तथा 'विवाद से बढ़कर' में कथा-नायकों की प्रेमविषयक कुण्ठाओं तथा मानसिक ग्रन्थियों की सहानुभूतिपूर्ण चर्चा की गई है। 'पंकज' और 'स्नेह-सूत्र' में क्रमशः दिनेश और गिरीश के जीवन को लेकर आदर्श-वादी कथानक प्रस्तुत किये गए हैं। दिनेश अपनी पत्नी चारु से एकनिष्ठ प्रेम करता है, किन्तु उसकी शारीरिक असमर्थता के कारण कभी-कभी वेश्याओं के यहाँ जाकर उप-भोग्या मे चारु के तन-मन का आरोप करके अपने मन को कुंठाओं से मुक्त रखता है। 'स्नेह-सूत्र' में नन्दा के प्रति गिरीश के अपार्थिव प्रेम का उल्लेख है। वह उसकी प्रेरणा से यश और मान प्राप्त करता है, फलतः उसके स्नेह में सहज अकृत्रिमता है। नन्दा और श्रीधर के विवाह से उसके मन में कोई कुंठा नहीं हुई, किन्तु श्रीधर के मन में गिरीश के प्रति निराधार शंका बनी रही और उसने सदैव उसका तिरस्कार ही किया। लेखिका ने कथानक के संघटन और विकास में सहजता का सर्वत्र ध्यान रखा है। कौतूहल की सृष्टि और समस्याओं के समुचित निर्वाह के प्रति भी वे सजग रही हैं।

सुश्री परूलकर ने अपनी कहानियों में पात्रों की संख्या सीमित रखी है और उनकी आन्तरिक प्रवृत्तियों को सुलझे हुए रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। नारीपात्रों की चरित्रगत विशेषताओं को व्यक्त करते समय उन्होंने भारतीय संस्कृति को लक्ष्य में रखकर उनमें स्नेह, ममता, प्रेम, औदार्य, सहानुभूति, करुणा, सहनशीलता आदि उदात्त गुणों का विशेष रूप मे समावेश किया है। 'नीड़ की ओर' में अजय की माता, 'विदा का-उपहार' में भाभी, 'यात्रा का चाँद' में निर्मल और 'पंकज' में मधुबाला का व्यक्तित्व इसी प्रकार का है। 'विपरीत दिशा, में मंजु तो सहनशीलता की साक्षात् प्रतिमा है। वैजू द्वारा सताने, शिकायत करने तथा पिटवाने पर भी वह 'नारी' शब्द की सार्थकता प्रकट करते हुए उसे सौहार्द तथा सहयोग ही अर्पित करती है। 'विवाद से बढ़कर' में किशन की

दम्भिनी तथा स्वार्थी पत्नी शारदा तथा उसकी कृतघ्न बहिन प्रेमा, जो भाई से लाभान्वित होकर भी उसकी निन्दा ही करती है, उपर्युक्त गुणों से रहित होने के कारण अपवादस्वरूप हैं, किन्तु कहानी में इनका स्थान अत्यन्त गौण है।

पुरुष पात्रों के चरित्र में लेखिका ने मुख्यतः सद्‌गुणों के विकास को ही लक्ष्य में रखा है। 'नीड़ की ओर' में अजय के पिता का मद्य-सेवन तथा पत्नी के प्रति दुर्व्यवहार किंचित् खटकता है, किन्तु बच्चों के वार्त्तालाप से वे शीघ्र ही संभल जाते हैं और पत्नी से क्षमा-याचना कर लेते हैं। इसी प्रकार 'विपरीत दिशा' मे वैजू का अपनी बाल-सहचरी मंजू के प्रति क्रूरतापूर्ण व्यवहार बाद मे सद्व्यवहार में परिणत हो जाता है। 'बन्धन की कड़ियाँ' में हेमा के पिता तथा पति उसकी काव्य-प्रतिभा का उचित मूल्याकन नही करते परिणामतः हेमा का मन कुंठित होकर रह जाता है। 'विदा का उपहार' तथा 'विवाद से बढ़कर' में लेखिका ने पात्रो (गोपाल तथा किशन) की मानसिक ग्रन्थियों का सहानुभुतिपूर्वक चित्रण किया है। 'मृगजल से दूर' शीर्षक कहानी में एक ओर विश्वास की देशभक्ति, सदाचरण और कार्य-संलग्नता का चित्रण है और दूसरी ओर स्वार्थी तथा विलासी धीरेन्द्र की मानो उससे तुलना की गई है। 'पकज' में दिनेश और 'स्नेह-सूत्र' में गिरीश ने संयम तथा एकनिष्ठ प्रेम का गौरवपूर्ण आदर्श प्रस्तुत किया है। स्पष्ट है कि लेखिका ने चरित्र-चित्रण में विविधता रखी है, किन्तु यह उल्लेखनीय है कि उन्होंने यथार्थ जगत् की सीमाओं का उल्लंघन कहीं भी नही किया। चरित्र-चित्रण के लिए संवादों, घटनाओं, मानस-मन्थन आदि परोक्ष शैलियों का आश्रय लेने के अतिरिक्त उन्होंने वर्णनात्मक शैली का भी प्रयोग किया है। उदाहरणार्थ 'विवाद से बढ़कर' में विद्या की चारित्रिक प्रवृत्तियों का विश्लेषण देखिए···

"विद्या में उसने एक नया गुण पाया—वह थी चरित्र की दृढ़ता और एक नैतिक शक्ति। वह जिस बात को सत्य समझती थी उसे करके छोड़ती थी। प्रतिष्ठा, कीर्ति-सम्मान या लोक-लाज का मोह उसे कभी असत्य की ओर न झुका सका था। उसका अपना नीतिशास्त्र था, जिसमे रूढ़ि और परम्पराओं की नही, बल्कि शुद्ध मानवता की आभा थी।"[१]

श्रीमती परूलकर की कहानियों में कथोपकथन की बहुत ही सजीव योजना हुई है—संक्षिप्त, भावपूर्ण, रोचक तथा मनोवैज्ञानिक संवाद उक्त कहानियों के लिए प्राणस्वरूप हैं। मनोवैज्ञानिक सौन्दर्य की दृष्टि से 'नीड़ की ओर' में अजय और नीलू का बालोचित वार्त्तालाप विशेषतः उल्लेखनीय है।[२] उनकी बातें इतनी मार्मिक हैं कि भाई-बहिन की आन्तरिक वेदना साकार होकर पाठक के आँसुओं को अनायास बरौनियों तक खींच लाती है। लेखिका ने अधिकांश कहानियों में प्रेमी-युगल के कथोपकथन का

१. तुम बड़ी पागल हो, पृष्ठ ६२
२. देखिये 'तुम बड़ी पागल हो,' पृष्ठ १५-१७

मार्मिक विधान किया है। उनकी कहानियों मे कथोपकथन पात्रों की चारित्रिक प्रवृत्तियों के अनुकूल उनके भाव-प्रकाशन में विशेष सहायक रहे हैं। यदि यह कहा जाए कि सुश्री पल्लकर की कहानियों का अधिकांश सौन्दर्य उनमें आयोजित वार्त्तालापों के कारण है, तो कोई अत्युक्ति न होगी।

प्रस्तुत कहानी-संग्रह में मुख्यतः परिस्थिति-सापेक्ष मानसिक वातावरण अथवा सहज पारिवारिक वातावरण का चित्रण हुआ है। 'पंकज' में वेश्या-जीवन की वेदना का चित्रण है तथा 'बन्धन की कड़ियाँ' में नारी के सामाजिक पारतन्त्र्य की ओर संकेत किया गया है। फिर भी, यह कथितव्य है कि आलोच्य कहानियों की समस्याएँ प्रायः व्यक्तिगत जीवन को लेकर है, उनका सामान्यीकरण करने से कोई लाभ नहीं। लेखिका ने बाह्य सामाजिक समस्याओं अथवा प्राकृतिक सौन्दर्य का चित्रण करने की अपेक्षा मानव-मन के रहस्यों का विश्लेषण करने की ओर अधिक ध्यान दिया है।

श्रीमती पल्लकर ने उद्देश्य का प्रत्यक्ष कथन न करके उसे प्रायः कथा के अंतर्गत व्यंजित रखा है। पारिवारिक सुख-दुःख के हर्ष-शोकमय चित्र अंकित करते हुए मानव-मन की तदनुरूप प्रतिक्रियाओं का चित्रण उनका मूल उद्देश्य है। उनकी कहानियों में उद्देश्य की दृष्टि से एकरूपता न होकर विविध कोण प्रस्तुत किये गए हैं, जिन्हें इस प्रकार निरूपित किया जा सकता है—(अ) गृहस्वामी द्वारा मद्यपान का परिवार के अन्य सदस्यों, विशेषतः बाल-हृदयों, पर कुप्रभाव ('नीड़ की ओर' कहानी में), (आ) अपनी पत्नी के अतिरिक्त किसी अन्य स्त्री से पावन स्नेह भी समाज की दृष्टि में दूषित माना जाता है ('विवाद से बढ़कर' कहानी मे), (इ) प्रेम-विवाह तब सफल हो सकता है जब उसकी आधार-शिला ऐहिक सुख भोग की अपेक्षा आत्मिक सरलता एवं विश्वास पर आधृत हो (मृग जल से दूर), (ई) परिस्थितियों के उतार-चढ़ाव से निर्धन धनी और धनी निर्धन बनते रहते हैं (विपरीत दशा) आदि।

इस कहानी-संग्रह में मुख्य रूप से व्यावहारिक तत्सम शब्दों और गौण रूप से प्रचलित उर्दू-शब्दों तथा प्रान्तीय शब्दो का प्रयोग किया गया है। वाक्य संक्षिप्त और प्रभावपूर्ण हैं, फलतः भाषा में सर्वत्र सहज सौन्दर्य व्याप्त रहा है। मुहावरों के प्रयोग की ओर लेखिका की विशेष प्रवृत्ति नही रही, यत्र-तत्र अत्यन्त सामान्य मुहावरों का व्यवहार किया गया है। वर्णनात्मक शैली और संवाद की सफल प्रयोक्ता होने के साथ-साथ उन्होंने कहीं-कहीं भावात्मक शैली का भी सौष्ठवपूर्वक प्रयोग किया है। उदाहरणार्थ 'यात्रा का चांद' शीर्षक कहानी की ये पंक्तियाँ देखिए—"निर्मला को लगा जैसे वह पुकार उठे—राधू ! राधू ! तू बंशी मत बजा। द्वापर में मुरारी ने राधा को जितना छला, उतना बहुत है राधू। तू मुझे मत छल, मेरे प्राणों में ज्वार उमड़ता है राधू। मैं तुमसे दूर कैसे रहूँ ? कब तक रहूँ ? मत बजा बंशी—यों ही तो तू मुझे रात-रात भर जगाता है।"[1]

---

१. तुम बड़ी पागल हो, पृष्ठ ३४

२५. श्रीमती शान्ति जोशी

श्रीमती शान्ति जोशी के कथा-संग्रह 'माटी की गन्ध' में बारह भावपूर्ण कहानियाँ हैं—अभिशाप, अनुभव का बोध, वह किसी की न थी, मौसी, प्रकृति का पुत्र, पिंचू, कालचक्र, चोर, डाक्टर भैया, धनलिप्सा, रामी, विलास। इन कहानियों में जीवन के सहज-सरल चित्र प्रस्तुत किये गए है, जिनके पीछे लोकानुभव का मर्म असन्दिग्ध है। यद्यपि उन्हें 'पिंचू', 'चोर' तथा 'डाक्टर भैया' में हास्य रस का निर्वाह करने में सफलता नहीं मिली है तथा 'रामी' में नायिका रामी के चरित्र का उपयुक्त निर्वाह नहीं हुआ है, तथापि अन्य कहानियों में उन्हें पर्याप्त सफलता मिली है। उनके कथा-शिल्प की उल्लेखनीय विशेषता यह है कि उन्होंने प्रायः किसी एक घटना अथवा चरित्र के स्पष्टीकरण पर विशेष बल दिया है। विभिन्न घटनाओं का ऊहापोह अथवा बहुसंख्यक चरित्रों के घात-प्रतिघात उनकी रचनाओं में दुर्लभ है, फलतः उनमें प्रभावान्विति की प्रक्रिया अत्यन्त स्वाभाविक रही है। उन्होंने परिस्थितियों और पात्रों की मनोदशाओं को प्रकट करने के लिए प्रायः रेखाचित्र की शैली का आधार लिया है। प्रायः प्रत्येक कहानी का आरम्भ पाठक की जिज्ञासा को दृष्टि में रखकर किया गया है और अधिकांश कहानियों के अन्त मे रोचकता तथा आकस्मिकता को स्थान दिया गया है। श्रीमती जोशी ने नारी की सामाजिक समस्याओं एवं तज्जन्य मानसिक कुंठाओं की संवेदनापूर्ण अभिव्यक्ति की है। 'अभिशाप' में कमला और लाजो, 'अनुभव का बोध' में पप्पी, 'वह किसी की न थी' में रूपा, 'पिंचू' में शीला और 'विलास' में इंदु के चरित्र-चित्रण में लेखिका ने नारी-मनोविज्ञान को निरन्तर ध्यान में रखा है। इसी प्रकार उन्होने पुरुषों के मनोभावों का भी सन्तुलित चित्रण किया है। उनके पात्र यथार्थ के निकट होने पर भी आदर्श से दूर नही है, फलतः चरित्र-चित्रण में एकांगी दृष्टिकोण का दोष नही आ पाया है। उन्होने चरित्र-चित्रण के लिए संवादों की बहुत कम योजना की है, तथापि इस दिशा में जो उक्तियाँ उपलब्ध हैं उनकी सहजता और सजीवता असन्दिग्ध है—'वह किसी की न थी' में रूपा की उक्तियाँ इसी प्रकार की है।[१]

आलोच्य लेखिका ने पात्रों की भावुक मनःस्थिति के चित्रण को प्राथमिकता दी है, किन्तु उन्होने प्रसंगानुसार देशकाल के निरूपण की ओर भी ध्यान दिया है। उदाहरणस्वरूप समाज की छिद्रान्वेषी प्रकृति, धन-लोलुप माता-पिता का संतान के प्रति कर्त्तव्य-पालन न करना, पुरुषों द्वारा अहम्मन्यता के फलस्वरूप नारी की उपेक्षा आदि समस्याओं को क्रमशः 'वह किसी की न थी', 'धनलिप्सा' और 'अनुभव का बोझ' शीर्षक कहानियो मे स्थान दिया गया है। देशकाल के प्रति उनकी जागरूकता इससे भी प्रमाणित है कि जीवन की अनुभूतियों का सहज चित्रण उनका प्रमुख लक्ष्य रहा है। यों तो उन्होंने जीवन के यथार्थ चित्र ही प्रस्तुत किये हैं, किन्तु उनमें आदर्श का भी उचित

१. देखिये 'माटी की गंध', पृष्ठ २६-२७, ३१

समन्वय मिलता है। नारी के चरित्र को उन्होंने प्रायः भारतीय संस्कृति के अनुरूप आदर्श धरातल पर प्रतिष्ठित किया है। लाजो, पप्पी, रूपा और इंदु ऐसी ही पात्राएँ हैं, जो 'स्व' को 'पर' के लिए मानकर पति अथवा प्रियतम के सुख के लिए अपने को मिटा देने को तन-मन से तत्पर हैं। इनमे से रूपा का चरित्र अधिक सफल है, क्योंकि पीड़ितों की सेवा ही उसके जीवन का लक्ष्य है।

श्रीमती जोशी ने बोलचाल की शब्दावली और प्रचलित मुहावरों को अपनाते हुए मुख्य बल इस बात पर दिया है कि उनकी भाषा तत्समबहुला और शुद्ध हो। 'असहनीयता' और 'असमंजसता' जैसे अशुद्ध प्रयोग[1] उनकी कहानियों में अधिक नहीं हैं। उनकी शैली मूलतः वर्णनात्मक है, किन्तु उसमें यथावसर चित्रात्मकता, आलंकारिकता एवं सूक्ति-वाक्यो को भी स्थान मिला है। उदाहरणार्थ 'प्रकृति का पुत्र' से ये पंक्तियाँ देखिए—"इस प्यास को बुझाने के लिए उसने प्रकृति की शरण ली। पर जिसका हृदय विशुद्ध प्राकृतिक रस से सिंचित ही न हुआ हो उसे प्रकृति कैसे मोहती ? प्रकृति के रंग-बिरंगे फूल उसे तितलियो की भाँति स्वच्छन्द उड़ान भरना न सिखा सके, इन्द्रधनुष प्रेयसी की सतरंगी साड़ी का स्मरण न दिला सका, हिम से आच्छादित गगनचुम्बी पहाड़ उसे प्रिय का संदेश नहीं दे सके।"[2] इस उक्ति मे प्रकृति के मर्मवेधी सौन्दर्य का अप्रत्यक्ष रूप में अच्छा उल्लेख हुआ है। लेखिका की अन्य कहानियों में भी भावुकता, गम्भीरता और अभिव्यंजना की स्वच्छता का ऐसा ही समाहार मिलता है।

२६. श्रीमती विमला रैना

स्वातन्त्र्योत्तर काल की हिन्दी-कहानी-लेखिकाओ में श्रीमती विमला रैना का महत्त्वपूर्ण स्थान है। उन्होने विभिन्न सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक समस्याओं को लेकर कहानी-रचना की है और यथास्थान उपयुक्त समाधान भी प्रस्तुत किए हैं। उनकी कहानियाँ 'बुझे दीप' में संकलित है, जिनका क्रम इस प्रकार है—सोते जागते सपने, चार दिन, सुहाग रेखा, अरे, काँटो की मुसीबत, कौन जाने, नई माँ, महक, बुझे दीप। यद्यपि उक्त संकलन का नामकरण अन्तिम कहानी के नाम पर हुआ है, तथापि यह संग्रह की सर्वश्रेष्ठ कहानी नहीं है।

प्रायः प्रत्येक कहानी में लेखिका ने जीवन के प्रति आशा, विश्वास तथा आस्था की स्थापना की है। 'सोते जागते सपने', 'चार दिन' तथा 'अरे' आत्मचिन्तन की शैली में प्रणीत एकपात्रीय कहानियाँ हैं। इनमें क्रमशः राधा, पचासवर्षीय वृद्ध तथा बीरु नामक पात्र मनःचिन्तन के माध्यम से अपने व्यक्तिगत जीवन तथा समस्याओ को व्यक्त करते हैं। उदाहरणार्थ 'सोते जागते सपने' की राधा कभी अपने पति राजेश को अधिक गौरवमय

---

१. देखिये 'माटी की गंध', पृष्ठ १००, १०८

२. माटी की गंध, पृष्ठ ४४

मानती है, और कभी अपने विवाह से पूर्व के प्रेमी राजेश के मित्र को; कभी अपने मन की दुर्बलता पर झुँझलाती है और कभी सोचती है कि उसका पूर्व-प्रेम पाप था, किन्तु अन्त में इस निर्णय पर पहुँचती है कि वह एक स्वप्न की भाँति था और स्वप्न कभी पाप नहीं होता। स्वप्न की स्मृति की भाँति उसकी स्मृति भी उसके व्यक्तित्व को मधुरता से भर देती है। इस प्रकार लेखिका ने व्यष्टि की समस्या के माध्यम से समष्टि की समस्या का समाधान प्रस्तुत किया है।

'सुहाग रेखा' तथा 'नई माँ' में क्रमशः सास-बहू तथा सौतेली माँ और सौतेले बच्चों के पारस्परिक सम्बन्ध पर विचार किया गया है। उक्त दोनों समस्याएँ हिन्दू-परिवारों की चिर-ज्वलन्त समस्याएँ हैं। 'सुहाग रेखा' की रम्मो ने सास को प्रसन्न करने की भरसक चेष्टा की, किन्तु वह सफल तभी हुई जब पुत्री की भाँति 'सास के प्रति स्नेह' का मार्ग अपनाया। 'नई माँ' की नायिका ने भी 'कर्त्तव्य' का भाव त्यागकर जब 'स्नेह' का आश्रय लिया तभी वह सौतेले बच्चों का हृदय जीत सकी। 'अरे', 'चार दिन' तथा 'महक' में विभिन्न प्रकार के कथानकों द्वारा यह दिखाया गया है कि वैवाहिक प्रेम में जो स्थैर्य एवं गाम्भीर्य होता है, वह विवाह के पूर्वकालीन प्रेम अथवा विवाहोत्तर पर-पुरुपासक्ति में सम्भव नहीं हो सकता। 'काँटों की मुसीबत' एक मनोवैज्ञानिक कहानी है, जिसमें आधुनिक सभ्यता के प्रति व्यंग्य है। 'कौन जाने' तथा 'बुझे दीप' में सामाजिक व्याघात से उत्पन्न व्यक्तिगत पीड़ाओं का चित्रण किया गया है। 'कौन जाने' की नायिका रेनु अपने पति श्याम के साथ पूर्ण सुखी थी, किन्तु विवाह के पूर्व उत्पन्न उसका अवैध पुत्र अनाथालय में पल रहा था। इसी आन्तरिक पीड़ा के प्रभाव में एक दिन उसने आत्मघात की शरण लेकर अपने पीड़ित जीवन का अन्त कर लिया। 'बुझे दीप' में एक दुर्घटना के फलस्वरूप गोपाल की पत्नी राधा तथा उसके छोटे भाई प्रान की एक-साथ मृत्यु हो गई। गोपाल की माता गोपाल का पुनर्विवाह करके उसे सुखी करना चाहती थी, जबकि प्रान की पत्नी वीना को विधवा होने के कारण खाने-पहनने की स्वच्छन्दता से भी वंचित कर दिया गया था। गोपाल ने स्पष्ट कह दिया कि जब तक वीना को सुखी नहीं बनाया जाएगा तब तक वह भी जीवन में उल्लास न पा सकेगा। इस प्रकार पुरुष एवं नारी को एक ही स्थिति मे डालकर लेखिका ने सामाजिक पक्षपात पर करारा व्यंग्य किया है।

श्रीमती रैना ने प्रायः भावुक एवं चिन्तनशील पात्रों की सृष्टि की है। वे व्यक्तिगत तथा सामाजिक समस्याओं को विवश भाव से स्वीकार नहीं करते, अपितु उनके प्रतिकार के लिए युक्तियों की खोज में लगे रहते हैं। 'बुझे दीप' का गोपाल, 'चार दिन' का नायक, 'सुहाग रेखा' की रम्मो तथा 'नई माँ' की सौतेली माँ इसी प्रकार के पात्र-पात्राएँ हैं। आदर, श्रद्धा और परिश्रम से भी जब रम्मो की सास प्रसन्न न हुई तो भी उसने हार न मानी और अन्त में सोच-विचार कर उसने यह उपाय खोजा कि वह पुत्री का स्नेह देकर ही सास का हृदय जीत सकेगी; कर्त्तव्य-भावना द्वारा नहीं। 'नई माँ'

कहानी में सौतेली माँ ने भी गहन चिन्तन के उपरान्त स्नेह द्वारा सौतेले बच्चों को वश में करने का उपाय खोज निकाला। 'बुझे दीप' 'की वीना और 'कौन जाने' की रेनु उक्त कथन की अपवाद हैं, क्योंकि ये विषम परिस्थितियों के आगे घबराकर हथियार डाल देती हैं। 'कौन जाने' का नायक श्याम आदर्श पात्र है, अपनी पत्नी के विवाह-पूर्व प्रेम में उसे कोई दोष प्रतीत नही होता। पत्नी के आत्मघात के उपरान्त वह उसके अवैध बच्चे को अनाथालय से लाकर पुत्रवत् अपना लेता है। 'बुझे दीप' का नायक गोपाल भी ऐसा ही आदर्श पात्र है, जो स्त्री और पुरुष को समता के धरातल पर देखने का इच्छुक है।

इन कहानियों में मुख्य रूप से पात्रों के कथोपकथन, चिन्तन तथा आचरण द्वारा उनकी चारित्रिक प्रवृत्तियों का प्रकाशन हुआ है। परिवार के विभिन्न सदस्यों के दैनिक वर्त्तालापों का सजीव एवं पात्रानुकूल विधान करने में लेखिका विशेष सफल रही है। उदाहरणार्थ 'सुहाग रेखा' में रम्मो की सास की अधोलिखित उक्ति अवलोकनीय है—

"दस मिनट भी न हुए होंगे, कि माँजी गरजने लगीं···'अरे, तू ही रह गई है मेरे मुँह मे कालिख पुतवाने को? वह दोनों कहाँ हैं? वह तो सदा नई-नवेली ही रहेगी। फिर चाची की ओर सकेत कर बोली—'क्यों री छोटी, तेरी महारानी कहाँ है? तू जो सुबह से शाम तक बेटे, बहू और उनके बच्चों पर हड्डियाँ तोड़े है, सो क्यों? बुलाना अपनी बहुओं को। ये कल की आई मेरे पाँव दाबे, और तेरी दो साल की मेम रंगरेलियाँ उड़ाये? अरे मेरी नही, तो तेरी ही कुछ खबर रखनी चाहिए उसे। ऐसा ही लाड़ करती गई, तो बे-नकेल की ऊँटनी बनकर रह जायगी।"

वर्तमान युग की कतिपय ज्वलन्त समस्याओं का चित्रण करके उनके लिए उपयुक्त समाधान प्रस्तुत करना आलोच्य कहानियों का लक्ष्य है। इन समस्याओं में सर्वप्रमुख है स्वच्छन्द प्रेम की समस्या। हमारा समाज ऐसे प्रेम को घृणा की दृष्टि से देखता है, फलतः व्यक्ति को घोर मानसिक यंत्रणा का भाजन बनना पड़ता है। लेखिका ने कुन्ती, शकुन्तला आदि पौराणिक पात्रों के उदाहरण देकर वर्तमान समाज में शंका की दृष्टि से देखे जानेवाले इन सम्बन्धों को सहज आधार प्रदान करने की चेष्टा की है।[१] उक्त समस्या का समाधान यही है कि समाज अपने दृष्टिकोण को उदार बनाये। विवाह के पूर्व जो प्रेम किया जाता है अथवा विवाह के बाद किसी सनक के कारण अथवा पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव से परपुरुष अथवा परस्त्री से जो मधुर वार्त्तालाप किया जाता है, उसमें वैवाहिक प्रेम-जैसा गाम्भीर्य एवं स्थैर्य नहीं होता। विवाह-पूर्व प्रेम को लेखिका ने 'स्वप्न' की संज्ञा दी है।[३] पाप-पुण्य की प्राचीर समाज ने स्वयं खड़ी की है, भारतीय संस्कृति उनका समर्थन नहीं करती। 'सुहाग रेखा' तथा 'नई माँ' कहानियों का लक्ष्य

---

१. बुझे दीप, पृष्ठ ३८
२. देखिये 'बुझे दीप', पृष्ठ ८८
३. देखिये 'बुझे दीप', पृष्ठ ८

यह सिद्ध करना है कि सास और बहू में अथवा सौतेली माँ और बच्चे में स्नेह द्वारा जो सहज सम्बन्ध स्थापित हो सकते हैं, कर्त्तव्य द्वारा प्रेरित कृत्रिम स्नेह तथा आदर से वैसा नहीं हो सकता। 'बुझे दीप' में विधवा की समस्या का सुन्दर समाधान प्रस्तुत किया गया है और विद्रोहात्मक स्वरों में समानाधिकार की माँग की गई है।

आलोच्य लेखिका की भाषा व्यावहारिक है। प्रचलित शब्दों का प्रचुर प्रयोग तथा संक्षिप्त एवं रोचक वाक्यावली उनकी भाषा की प्रमुख विशेषताएँ है। उक्त कथन के प्रमाणस्वरूप 'चार दिन' कहानी की निम्नस्थ पंक्तियाँ उद्धरणीय है—"बच्चो ने दुनिया देखी है। ज़माने का उतार-चढ़ाव देखा है। ऊँच-नीच की परख उनको है। अभी २२ वर्ष के ही हैं तो क्या। बहुत कुछ देखा, सुना और किया है जो हमने अभी तक न देखा, न सुना, न किया। और मंजिल की आखिरी सीढ़ियाँ सामने दिख रही हैं—थोड़ी ही जिन्दगी बाकी है। फिर स्वर्ग का दरवाजा खुल जायेगा और मैं उसमें हमेशा—हमेशा के लिए बन्द हो जाऊँगा।"[1] इस उद्धरण से प्रत्यक्ष है कि लघु वाक्यों के कारण लेखिका की शैली विशेष सशक्त हो उठी है। दुरूहता अथवा अस्पष्टता के दोष से वह सर्वथा मुक्त है। अथ से इति तक उसमें एकरूप सौन्दर्य के दर्शन होते हैं। कतिपय प्रसंगों में लेखिका ने सूक्ति शैली में मानव-मन के रहस्यों का विश्लेषण किया है। उदाहरणार्थ 'महक' कहानी की प्रस्तुत उक्ति उल्लेखनीय है—"न जाने ऐसा क्यों होता है कि जो कटु सत्य हम सुनना नहीं चाहते उसी को जानने के लिए बेताब हो जाते हैं।"[2]

आलंकारिक वाक्यावली के प्रयोग में श्रीमती रैना विशेष सिद्धहस्त है। उनकी उपमाओं में मौलिकता स्पष्टतः दर्शनीय है। उदाहरणार्थ 'सोते जागते सपने' तथा 'चार दिन' शीर्षक कहानियों से क्रमशः ये उदाहरण देखिए—(अ) "समय एक अजगर ऐसा श्लथ मन्थर हो रहा था,"[3] (अ) "उसकी आँखों में अनेक सुखद स्वप्न नील गगन के सफ़ेद बादलों के टुकड़ों की तरह तैरते हुए आ-जा रहे थे।"[4] कतिपय स्थलों पर लेखिका ने भाववाचक संज्ञाओं का मानवीकरण करके काव्यात्मक शैली का उदाहरण प्रस्तुत किया है। उदाहरणार्थ 'महक' कहानी से यह परिस्थिति-चित्र द्रष्टव्य है—"स्मृति अतीत की गोद में मुँह ढाँके पड़ी सोती रहती, पर कभी कभी अचानक ही रजनीगन्धा की महक का झोंका अश्विनी को पीछे छूटी हुई राहों पर ले जाता।"[5]

२७. सुश्री पद्मावती पटरथ

सुश्री पद्मावती पटरथ के 'मील के पत्थर' शीर्षक कहानी-संग्रह में बारह सामाजिक एवं पारिवारिक कहानियाँ संकलित हैं—रधिया, केसर, डाक्टर, गोपा, मिलते जाइए, दिल्ली मत आना, कौन किसका, चिता के फूल, जी रहे हैं, समझौता,

---

१-२-३-४. बुझे दीप, पृष्ठ ११, १०२, ३, २४
५. बुझे दीप, पृष्ठ १०६

काका जी, राम भरोसे। यह लेखिका का प्रथम कहानी-संग्रह है और इसकी अधिकांश कहानियाँ इसके पूर्व पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी थीं। इनमें से 'मिलते जाइए', 'काका जी', 'कौन किसका' और 'राम भरोसे' कथानक की दृष्टि से पुष्ट एवं सुनियोजित कहानियाँ है। किन्तु, अन्य कहानियों में घटना-क्रम विशृंखलित तथा अव्यवस्थित-सा प्रतीत होता है। 'रधिया', 'डाक्टर', 'केसर' और 'गोपा' शीर्षक कहानियों का प्रारम्भ पर्याप्त रोचकता एव स्पष्टता लिये है : विकास भी किसी सीमा तक सराहनीय है, किन्तु चरम सीमा तथा अन्त का निर्वाह लेखिका ने उचित रीति से नहीं किया। 'समझौता' भी ऐसी ही शिथिल रचना है, जिसके अध्ययन से पाठक को सन्तोष नहीं हो पाता। 'दिल्ली मत आना' तथा 'जी रहे हैं' शीर्षक कहानियों में कथानक का विकास पत्रों के माध्यम से हुआ है, किन्तु इनमें घटना-तत्त्व अत्यन्त संक्षिप्त है। 'दिल्ली मत आना' में एक प्रवासी पति ने पत्नी से दिल्ली न आने का आग्रह करते हुए पत्र लिखा है। 'जी रहे हैं' में जयन वर्मा ने अपनी बेकारी तथा पत्नी द्वारा नौकरी करने मे परस्पर कार्य-विपर्य्य का लेखा-जोखा देते हुए अपने मित्र धन्नू को जो पत्र लिखा है, उसमें हास्य रस का सफल निर्वाह हुआ है।

सुश्री पटरथ ने यथार्थ को महत्त्व देते हुए भी अनेक स्थानों पर आदर्श की प्रतिष्ठा की है। उनके कतिपय कथा-पात्र यदि सामाजिक एवं पारिवारिक परिस्थितियों के परिणाम-स्वरूप कुंठा और निराशायुक्त दीन जीवन बिताते है, तो रधिया, केसर, गोपा, मनजीत, शेखर आदि पात्र उक्त विकृतियों एवं कुंठाओं पर विजय पाकर तेजस्वी व्यक्तित्व का परिचय देते हैं। 'मिलते जाइये' में सुलेमान और इमदाद अली की चारित्रिक विशेषताओं को लेखिका ने अत्यन्त सहज एवं सरस ढंग से व्यक्त किया है। 'काका जी' मे काका और 'कौन किसका' में उमा की वृद्धा दादी का व्यक्तित्व भी अत्यन्त प्रभावपूर्ण बन पड़ा है। जब तक घर की बात चार जनों के सामने कह न ले तब तक वृद्धा दादी को चैन ही नहीं पड़ता। पात्रों की भाव-धारा को मुखरित करने और कथानक मे नाटकीयता लाने के लिए लेखिका ने सक्षिप्त एवं सारगर्भित संवादों की भी योजना की है। इस दृष्टि से 'रधिया' में रधिया और रमुआ के वार्त्तालापों में दाम्पत्य प्रेम की मधुर अभिव्यक्ति उल्लेखनीय है एवं 'मिलते जाइये' में कथा का विकास ही मुख्यतः सुलेमान और इमदाद अली के वार्त्तालाप द्वारा हुआ है। लेखिका ने इन कहानियों में विभिन्न सामाजिक समस्याओं का उल्लेख किया है। 'काका जी', 'कौन किसका' और 'जी रहे हैं' में बेकारी की समस्या की चर्चा है और 'समझौता' तथा 'राम भरोसे' मे दहेज प्रथा की ओर ध्यान आकृष्ट किया गया है। 'दिल्ली मत आना' मे दिल्ली में मकानों की तंगी तथा महँगाई के कारण जीवन-यापन की कठिनाई का उल्लेख किया गया है। 'डाक्टर' तथा 'मिलते जाइए' में भारत की परतन्त्रताकालीन सामाजिक-राजनीतिक स्थिति की चर्चा की गई है। 'डाक्टर' मे मुसलमानों की साम्प्रदायिक भावनाओं का उल्लेख है तथा

'मिलते जाइये' में सन् १९४२ के क्रान्तिकारी आन्दोलन का चित्रण है।' 'केसर' में लेखिका ने विधवा की पारिवारिक दुर्दशा का अंकन किया है। इन कहानियों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि पद्मावती जी ने अधिकांशतः यथार्थ और आदर्श का समन्वय करते हुए सामाजिक और पारिवारिक जीवन के सुखदुःखमय चित्र अंकित किये हैं : नग्न यथार्थ अथवा कोरे आदर्श की अभिव्यक्ति उनका उद्देश्य नहीं है।

विवेच्य कहानियों में सरल एवं व्यावहारिक भाषा का प्रयोग किया गया है। संवादों की भाषा पात्रानुकूल है, अतः अशिक्षित पात्रों की उक्तियों में वख़त, औगुन, कमती, खुपड़िया, उरभट 'औनधी आदि तद्भव शब्दों' को पर्याप्त स्थान दिया गया है। अशुद्ध शब्द (विड़ी)[3] और 'मैना ने बहुत चीखा चिल्लाया'[4] जैसे व्याकरण-विरुद्ध प्रयोग इस रचना में अधिक नहीं हैं। निष्कर्ष-रूप में यह ज्ञातव्य है कि सुश्री पटरथ की अधिकांश कहानियाँ भावना और कला की दृष्टि से सामान्य कोटि की हैं, तथापि 'मिलते जाइये', 'कौन किसका' आदि उत्कृष्ट कहानियाँ इस तथ्य की सूचक हैं कि लेखिका का भविष्य उज्ज्वल है। यथार्थ की अपेक्षा आदर्श की प्रतिष्ठा में उन्हें अधिक सफलता प्राप्त हुई है।

२८. सुश्री सीता

सीता जी ने प्रचलित भारतीय लोककथाओं के आधार पर 'भारत की लोककथाएँ' शीर्षक बृहद् ग्रन्थ की रचना की है। इसमें ४८७ पृष्ठ है और विभिन्न विषयक ६७ लोककथाएँ संकलित हैं—त्यौहार की कहानियाँ, भक्ति रस की कहानियाँ, प्रेम-कथाएँ, शिक्षाप्रद कहानियाँ, नीति-कथाएँ, बुद्धि की कहानियाँ, अद्‌भुत साहस की कहानियाँ, कला की महत्ता सम्बन्धी कथाएँ, सामाजिक कहानियाँ, भाग्य सम्बन्धी लोककथाएँ, काल्पनिक लोककथाएँ, चोरों और ठगों की लोककथाएँ, हास्य रस की लोककथाएँ, बाल कथाएँ, विविध विषयों पर लोककथाएँ। इस कृति के द्वारा उन्होने लोक-साहित्य के विकास में उल्लेखनीय योगदान किया है। इस संग्रह में अश्लील लोककथाओ को स्थान नही दिया गया और कहीं-कही सुसम्बद्धता एवं सहजता लाने के लिए यत्किंचित् परिवर्तन भी किये गए हैं। लेखिका ने हिन्दू-परिवारो में प्रचलित कथाओं को उनके व्यावहारिक रूप में ज्यों-का-त्यों प्रस्तुत करने का विशेष ध्यान रखा है। यह उल्लेखनीय है कि उन्होंने जिन कथाओं को ग्रहण किया है, वे प्रायः भारत के अशिक्षित स्त्री-वर्ग में प्रचलित है। जैसा कि प्राय. लोककथाओं में होता है, इनमें भी मानव-पात्रों के अतिरिक्त पशु-पक्षियों, देवी-देवताओं, राक्षसो, प्रकृति-तत्त्वों आदि को स्थान दिया गया है। लेखिका ने अनेक लोककथाओं को प्रारम्भ करने के पूर्व कहीं थोड़े और कही अधिक शब्दों मे सम्बद्ध कथावस्तु के

---

१. देखिये, 'मील के पत्थर' पृष्ठ ३१, ४९-५०

२-३-४. देखिये, 'मील के पत्थर' (अ) पृष्ठ १२, १३, १४, १५, १७, १८ (आ) पृष्ठ ३८, ३९ (इ) पृष्ठ ४२

विषय में कुछ आवश्यक सूत्र प्रस्तुत किये हैं उदाहरणार्थ 'कलाकार से ब्याह कराऊँगी' शीर्षक कहानी में उद्देश्य को व्यक्त करनेवाली प्रारम्भ की ये पंक्तियाँ देखिये—"कला की शक्ति अद्भुत है। बिना किसी गुण के आदमी का मोल नही।"[1] कतिपय कहानियों में ऐसी उक्तियाँ एक दोहे अथवा सूक्ति-वाक्य के रूप में प्रस्तुत की गई हैं। 'बेसनी सुपारी और हँसने फूल' तथा 'हार' शीर्षक कथाओं का आरम्भ इसी शैली में हुआ है।

लोककथाओं की सम्पूर्ण गरिमा उनके मौखिक रूप में सुरक्षित है। सामान्यतः मौखिक और लिखित भाषा में अन्तर हो ही जाता है, तथापि लेखिका ने संवाद की भाषा को प्रायः ज्यों का त्यों उद्धृत करने का प्रयत्न किया है। फलतः इसमें कथानक की स्वाभाविकता, वातावरण की स्पष्टता और पात्रानुकूल भाषा को सहज ही पाया जा सकता है। इसीलिए लेखिका ने तद्भव और देशज शब्दों एवं मुहावरों-लोकोक्तियों का भी प्रचुर प्रयोग किया है। उदाहरणार्थ 'लच्छो' शीर्षक कहानी की ये पंक्तियाँ देखिये—"लच्छो की बुढ़ौती का सहारा, अन्धी की लठिया, सुक्खन भी जब संसार से चल बसा तो लच्छो को लगा जैसे उसकी दुनिया खाक में मिल गई है। वह अधिक रो भी न सकी, क्योंकि थोड़ा मारा रोवे और ज्यादा मारा सोवे।"[2] अन्ततः यह कहा जा सकता है कि सुश्री सीता ने हिन्दी में लोकगीतों को संगृहीत करने की दिशा में प्रथम बार सुव्यवस्थित प्रयत्न किया है और उन्हें भावना और भाषा, दोनों ही को मूल के निकट रखने में सफलता मिली है।

२६. श्रीमती विपुला देवी

श्रीमती विपुला देवी ने अनेक ऐतिहासिक एवं सामाजिक कहानियों की रचना की है, जो समय-समय पर पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही है। संकलन-रूप में अब तक उनका केवल एक ग्रन्थ प्रकाशित हुआ है—'पूर्व का पंडित'। इसमें निम्नलिखित बारह कहानियाँ संकलित है—पूर्व का पंडित, विजन में पंछी बोला, और तब, मरण रे, वरदान, विशाल स्थान, शृंखला की खोई कड़ी, किन्नरी, जागृत स्वप्न, कहानी जो पूरी नहीं हुई, नेत्रोन्मीलन, पछतावा। उक्त कहानियों में सामाजिक कथा-सूत्रों का आश्रय अवश्य लिया गया है, किन्तु इनकी मूल ध्वनि दार्शनिक है। इनमें जीवन, मरण, आत्मा, कर्मफल, निष्ठा, प्रकृति, परलोक आदि विभिन्न दार्शनिक समस्याओं पर विचार किया गया है। इस दृष्टि से 'पूर्व का पंडित', 'विजन मे पंछी बोला', 'मरण रे', 'शृंखला की खोई कड़ी', 'जागृत स्वप्न', और 'पछतावा' शीर्षक कहानियाँ विशेषतः उल्लेखनीय है। 'मरण रे', 'विशाल स्थान', 'शृंखला की खोई कड़ी', 'किन्नरी' और 'जागृत स्वप्न' शीर्षक कहानियाँ रेखाचित्र की सीमा को स्पर्श करती प्रतीत होती है—उक्त प्रत्येक कहानी मे

---

१. भारत की लोककथाएँ, पृष्ठ २१६
२. भारत की लोककथाएँ, पृष्ठ १०६

किसी एक ऐसे पात्र की चर्चा की गई है, जिसकी प्रवृत्तियाँ सामान्य पात्रों से सर्वथा भिन्न हैं। इनकी एक उल्लेखनीय विशेषता यह है कि इनमें समाज, देश, परिस्थिति अथवा व्यक्तिविशेष के प्रति तीव्र व्यग्य का भाव निहित है। करुण रस के मार्मिक कथानक प्रस्तुत करने में लेखिका विशेष सिद्धहस्त है। 'औरतव' तथा 'मरण रे' शीर्षक कहानियाँ इसका प्रमाण हैं। फिर भी, यह स्वीकार करना पड़ेगा कि विपुला जी की कहानियो में भाव-तत्त्व की अपेक्षा चिन्तन-तत्त्व अथवा बौद्धिकता को विशेष महत्त्व प्राप्त हुआ है। विचार-तत्त्व को अत्यधिक महत्त्व देने से कुछ कहानियों के कथानक अस्पष्ट एवं नीरस रह गए हैं— 'पूर्व का पंडित', 'विजन में पंछी बोला', 'नेत्रोन्मीलन' आदि रचनाएँ ऐसी ही है।

विपुला जी अपनी कहानियों में सीमित पात्रों की सृष्टि करती हैं और प्रायः प्रत्येक कहानी में एक या कही दो पात्रों के चरित्रों का सांगोपांग विश्लेषण प्रस्तुत करते हुए अन्य पात्रों की केवल चर्चा अथवा नामोल्लेख ही करती हैं। उनकी कहानी का प्रमुख पात्र कुछ ऐसी अद्भुत चारित्रिक विशेषताएँ लिये होता है कि अनायास ही पाठक का ध्यान उसकी ओर आकर्षिक हो जाता है। 'पूर्व का पंडित' में पूर्व का रहस्यपूर्ण पंडित कभी लुप्त हो जाता है और कभी सहसा प्रकट होकर डॉ० हैमिल्टन की जिज्ञासाओं का समाधान करता है। 'विजन में पंछी बोला' की दीपा प्रेम को व्यर्थ समझकर प्रेमी की भावनाओं की उपेक्षा करती है, 'मरण रे' की मौसी कभी अपने क्रोधी पति के विरुद्ध शिकायत करती है और कभी उसके अहित की आशका से भयभीत होकर उसके निकट पहुँचने की आतुरता व्यक्त करती है, 'विशाल स्थान' का निरंजन एक कुशाग्र बुद्धि मेधावी युवक था, किन्तु परिस्थितियों की ठोकरें खाकर वह एक छँटे हुए अपराधी के रूप में परिणत हो जाता है। 'शृखला की खोई कड़ी' की अलका अत्यन्त भावुक एवं दुर्वलहृदया पात्रा है, 'किन्नरी' की किन्नरी रात-भर अकेली एक विशिष्ट गीत गाती हुई घूमती है, 'कहानी जो पूरी नहीं हुई' का सुधीर सबसे विचित्र है। वह स्वयं कष्टपूर्ण जीवन-यापन करता है, किन्तु संसार के अन्य व्यक्तियो के हितार्थ सतत प्रयत्नशील रहता है। वस्तुतः विपुला जी के कथा-पात्रों का व्यक्तित्व प्रायः दार्शनिक है और इसी कारण वे लोक-व्यवहार से भिन्न आचरण करते हुए प्रतीत होते है तथा क्रिया-कलाप की अपेक्षा चिन्तन में अधिक लीन रहते हैं।

प्रस्तुत कहानियों में कथोपकथन की योजना मुख्य रूप से कथानको को गति प्रदान करने के लिए की गई है। यही कारण है कि कहीं संवाद लघु रहे हैं और कहीं, जहाँ पात्र घटनाओं का विस्तृत वर्णन करते है, उक्तियाँ दीर्घ हो गई हैं। सामान्य वार्त्तालापों के अतिरिक्त इन कहानियों में दार्शनिक सम्भाषण भी है, जिनमें दर्शन सम्बन्धी तथ्यों का गम्भीर विश्लेपण किया गया है। इसके अतिरिक्त कतिपय संवादों में देशकाल सम्बन्धी तथ्यों की चर्चा हुई है। उदाहरणार्थ 'कहानी जो पूरी नहीं हुई' में सुधीर की वे उक्तियाँ द्रष्टव्य हैं, जिनमें काश्मीर के प्राकृतिक सौन्दर्य की प्रशंसा की गई

है।[1] इसी प्रकार 'जाग्रत स्वप्न' शीर्षक कहानी में बदलू पानवाले की उक्तियों में द्वितीय महायुद्ध के समय बढ़नेवाली महँगाई, टैक्स, कन्ट्रोल आदि की अनेकशः चर्चा हुई है।[2] आलोच्य कहानियों में देशकाल एवं वातावरण को विशेष प्राथमिकता प्राप्त हुई है। इस प्रसग में लेखिका ने प्रायः निम्नलिखित प्रवृत्तियों का समावेश किया है—

(अ) द्वितीय महायुद्ध के समय की तथा उसके तत्काल बाद की स्थिति—महँगाई, कन्ट्रोल, टिकाऊ वस्तुओं का अभाव, टैक्स-वृद्धि आदि।

(आ) भारत की स्वतन्त्रता-प्राप्ति, देश का विभाजन तथा अन्य सम्बद्ध राजनीतिक समस्याएँ, काश्मीर-समस्या, साम्प्रदायिक उत्पात आदि।

(इ) निर्धन, विवश, असहाय तथा अनाथ व्यक्तियों के प्रति समाज की संकीर्णता, दुर्व्यवहार, स्वार्थ-भाव, उपहास आदि।

(ई) कहानियों में वर्णित स्थलों के अवसरानूकूल प्राकृतिक सौन्दर्य की चर्चा।

विपुला जी ने प्रायः सर्वत्र राजनीतिक एवं सामाजिक स्थिति के चित्रण में व्यंग्यपूर्ण शब्दावली का आश्रय लिया है। उदाहरणार्थ 'किन्नरी' कहानी की अधोलिखित पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—"१५ अगस्त, १९४७ को अखंड भारत दो भागों में विभक्त हो गया और उसकी दो सरकारें बन गईं। पारस्परिक झगड़ों में हिन्दू और मुसलमानों के रक्त की नदियाँ इस देश में बह गईं, किन्तु मैं इन सारी बातों की ओर से निरपेक्ष रहा। सारे संसार के कूटनीतिज्ञों ने मिलकर, भारत की राजनैतिक गुत्थी सुलझाने के लिए यह हल खोज निकाला था, जिसे वे अपने देशों में लागू करने के लिए कभी तैयार न होते। किन्तु तब भी मेरी शान्ति अडिग रही।"[3]

'किन्नरी' कहानी के प्रारम्भ में लेखिका ने काश्मीर के आन्तरिक भागों तथा मार्गों, कपिश, हिन्दूकुश, कुंभा, गौरी आदि नदियो एवं चितराल, अफ़गानिस्तान आदि स्थानों का ऐतिहासिक परिचय देकर उनकी भौगोलिक स्थिति का विस्तार से वर्णन किया है।[4] इसी प्रकार 'कहानी जो पूरी नहीं हुई' में प्रासंगिक रूप से काश्मीर के प्राकृतिक एवं मानवीय सौन्दर्य की विशेष सराहना की गई है।[5] लेखिका की एक विशिष्ट प्रवृत्ति यह है कि वे अपनी कहानियो में प्रासंगिक रूप से कहीं व्यंग्य-रूप में, कही सामान्य सूचनात्मक रूप में और कहीं क्षोभ के रूप मे भारतीय रीतियों तथा प्रथाओं का उल्लेख करती हैं। उदाहरणार्थ अधोलिखित उद्धरण अवलोकनीय है—

(अ) "लेकिन हिन्दुस्तान में कोई बाहरी आदमी किसी रोगी के निकट

---

१. देखिये 'पूर्व का पंडित', पृष्ठ १३९-१४०
२. देखिये 'पूर्व का पंडित', पृष्ठ १२५-१२७, १२९-१३०
३. पूर्व का पंडित, पृष्ठ ११९
४. देखिये 'पूर्व का पंडित', पृष्ठ १०५-१०८
५. देखिये 'पूर्व का पंडित', पृष्ठ १३९-१४०

सम्बन्धियों से यह नहीं कह सकता कि रोगी उसे नहीं चाहता, भले ही बीमार तथा उनके सम्बन्धियों में चिरशत्रुता आजीवन रही हो।"[1]

(आ) "किन्तु कभी-कभी सारे आनन्द पर पानी फेरने के लिए यह विचार मन में आ ही जाता कि समय-गणना के हिसाब से, मेरी शशि अधिक तेजी से दैनिक एवं बौद्धिक प्रगति कर रही है और एक भारतीय पिता की सामाजिक एवं आर्थिक कठिनाइयों को देखते हुए यह बात किसी सुलक्षण की द्योतक नहीं है।"[2]

(इ) "यह भारत है, जहाँ झूठी बदनामी से तो अच्छी मृत्यु है।"[3]

आलोच्य कहानियों का लक्ष्य है—मानव जीवन के आन्तरिक एवं बाह्य संघर्षों के व्यंग्यपूर्ण अथवा दार्शनिक चित्र अंकित करना। लेखिका के अपने शब्दों, "मानव का अथक क्षय, उसका असीम स्नेह, सौहार्द, मानवता, उसका बाह्य तथा आन्तरिक द्वन्द्व, जीवन में सामंजस्य स्थापित करने के लिए उसके उठाये गए पग, संकीर्ण समझ तथा उसकी माँगों के प्रति व्यंग्य आदि इन कथाओं का विषय है।"[4] आदर्श की अपेक्षा उक्त आख्यायिकाओं में यथार्थ को अधिक महत्त्व दिया गया है। शिल्प की दृष्टि से ये कहानियाँ पर्याप्त सुगठित हैं। इनमें साहित्यिक एवं तत्समबहुला शब्दावली को स्थान प्राप्त हुआ है। 'बारह वर्ष बाद घूरे के भी दिन फिरते हैं', 'एक मछली तालाब गंदा करने के लिए बहुत है' आदि लोकोक्तियों[5] एवं 'मनुष्य में कमजोरियाँ है और वह अपने को उनका शिकार पाकर, मन को यह कहकर समझा लेता है कि दूसरे मूर्ख हैं' आदि सूक्ति-वाक्यों[6] ने भाषा-शैली को दार्शनिक कथानक के अनुरूप सजीव एवं प्रौढ़ रूप प्रदान किया है। लेखिका की शैली प्रवाहपूर्ण है और उसमें अनेकशः व्यक्ति अथवा परिस्थिति के प्रति व्यंग्य की तीव्रता विद्यमान है।[7] निष्कर्षस्वरूप यह स्पष्ट है कि विपुला जी की कहानियों मे दार्शनिक विचारधारा का आधिक्य रहता है। इसीलिए उन्होने पात्रों के आन्तरिक एवं बाह्य संघर्षों का गहन विश्लेपण किया है। कहीं-कहीं करुण, व्यंग्य एवं विचारों की प्रौढता से मन अनायास प्रभावित हो जाता है। भाषा-शैली की दृष्टि से भी उनकी कहानियाँ सुगठित, साहित्यिक, गम्भीर एवं प्रवाहपूर्ण हैं।

३०. श्रीमती कान्ता सिन्हा

श्रीमती कान्ता सिन्हा ने 'काँच का रास्ता' शीर्षक कहानी-संग्रह में मुस्कान, अभागिन, टेढ़ी-मेढी पगडडियाँ, गुण्डा, भ्रम, जेठानी जी, सोशल वर्कर, पेइंग गेस्ट, मौसी

१-२-३. 'पूर्व का पंडित', पृष्ठ ६, १५१, १६१
४. देखिये 'पूर्व का पंडित', अपनी बात
५. देखिये 'पूर्व का पंडित', पृष्ठ १३४, १३६
६. पूर्व का पंडित, पृष्ठ ६४
७. देखिये 'पूर्व का पंडित', पृष्ठ १२०-१२१

जी, विद्रोही, संध्या की, वापसी, अठारह वर्ष बाद और, काँच का रास्ता शीर्षक तेरह कहानियों को स्थान दिया है। उन्होंने इनमें सामाजिक और पारिवारिक कथानकों के माध्यम से व्यक्ति, जीवन और समाज के प्रति विभिन्न व्यंग्य-चित्र अंकित किये हैं। नारी की समस्याओं और भावनाओं को मूर्त रूप देने में लेखिका विशेष सफल रही है। प्राय सभी कहानियाँ संक्षिप्त एवं रोचक हैं और उनमें विषय की दृष्टि से अनेकरूपता विद्यमान है। 'जेठानी जी', 'सोशल वर्कर' और 'मौसी जी' शीर्षक कहानियाँ रेखाचित्र की शैली में लिखी गई हैं। 'अभागिन', 'टेढ़ी-मेढ़ी पगडंडियाँ, और 'अठारह वर्ष बाद' शीर्षक रचनाओं में नारी के प्रति पुरुष के विश्वासघात और कटु व्यवहार का चित्रण है। 'गुण्डा', 'भ्रम', 'विद्रोही' और 'काँच का रास्ता' मे आकस्मिक संयोग हृदय-परिवर्तन अथवा स्थिति-परिवर्तन की सहायता से जीवन के विभिन्न अभावग्रस्त चित्रों को सुखान्त रूप प्रदान किया गया है।

आलोच्य लेखिका ने समाज के विभिन्न क्षेत्रों से पात्रों का चयन किया है और उनकी विशेषताओं को मनोवैज्ञानिक रीति से उभारा है। 'मुस्कान', 'अभागिन', 'टेढ़ी-मेढ़ी पगडण्डियाँ', 'भ्रम', 'काँच का रास्ता' आदि कहानियों में नायकाओं की दृढ़ता, सरल विश्वास, विवशता, कुंठा, सहनशीलता, मातृत्व आदि का सफल अंकन हुआ है। 'जेठानी जी' मे जेठानी जी का और 'सोशल वर्कर' में दीवान जी का व्यंग्यपूर्ण चरित्रांकन किया गया है। अधिकांश कहानियों में पात्र व्यक्तिविशेष होते हुए भी समाज के विभिन्न वर्गों का प्रतिनिधित्व करते हैं। कथानक में स्पष्टता और गति लाने के लिए लेखिका ने संक्षिप्त एवं सारगर्भित कथोपकथन की योजना की है। इन संवादों ने कथानक के साथ-साथ चरित्र-विकास में विशेष योग दिया है।

प्रस्तुत कहानियो में समाज की विचार-संकीर्णता, स्वार्थपरता, अर्थ-लोलुपता और पुरुषों की नारी-जाति के प्रति हृदयहीनता के व्यंग्यपूर्ण चित्र अंकित हुए हैं, जिन्हें प्रत्यक्ष कथन के अतिरिक्त संवादों द्वारा भी व्यक्त किया गया है। समाज की इन विभिन्न परिस्थितियो के चित्रण में लेखिका ने देशकाल और उद्देश्य की भी यथोचित योजना की है। उन्होने पाठक को सामाजिक छिद्रों से सावधान करते हुए यह संदेश दिया है कि उसे परिस्थितिजन्य बाधाओं की अवहेलना करके आत्मनिर्भर बनना चाहिए।

श्रीमती कान्ता सिन्हा की भाषा सरल, साहित्यिक एवं मुहावरेदार है। शैलीगत प्रवाह एवं रोचकता का यह उदाहरण द्रष्टव्य है—"प्रतीची में उतरते हुए सूर्य की अंतिम और पीली किरणों का निष्प्रभ प्रकाश चम्बा की पहाड़ियों के—नदी के उस पारवाले—गांव के साथ अठखेलियाँ कर रहा था। अन्धकार अब भी सघन न हो पाया था। वन के पक्षी-दल बसेरा लेने की तैयारी कर रहे थे। नदी के किनारों के वृक्षों की फुनगियों पर सुन्दर-सुन्दर चिड़ियों का समूह झूला झूल रहा था और दूर, बहुत दूर नदी के किनारे,

एक कतार बाँधे, गाँव की सात-आठ स्त्रियाँ पानी भर रही थी।'"[1] अन्त में यह उल्लेखनीय है कि श्रीमती सिन्हा व्यंग्यपूर्ण लघु आख्यायिकाएँ लिखने में सफल रही है। इनमें भावविषयक रोचकता एवं सजीवता तो है ही, भाषा-शैली की प्रांजलता भी इनका सहज गुण है।

३१. सुश्री उषा प्रियम्वदा

सुश्री उषा प्रियम्वदा की कहानियाँ पत्र-पत्रिकाओं में प्रायः प्रकाशित होती रहती है, किन्तु कहानी-संकलन के रूप में अभी केवल 'ज़िन्दगी और गुलाब के फूल' का प्रकाशन हुआ है जिसमें निम्नलिखित बारह कहानियाँ संकलित हैं—पैरम्बुलेटर, मोहबन्ध, जाले, छुट्टी का दिन, कच्चे धागे, पूर्ति, कटीली छाँह, दो अँधेरे, चाँद चलता रहा, दृष्टि-दोष, वापसी, ज़िन्दगी के फूल। यद्यपि इस संकलन का नामकरण अन्तिम कहानी के शीर्षक के अनुसार किया गया है, तथापि यह उल्लेखनीय है कि प्रायः प्रत्येक कहानी में इस शीर्षक की छाया विद्यमान है। व्यक्ति अपने जीवन को सुखी बनाने के लिए अनेक कल्पनाएँ करता है जो गुलाब के फूल की भाँति सुन्दर और सरस होती हैं, "किन्तु प्रायः जीवन के यथार्थ की कठोर शिला से टकराकर वे चूर-चूर हो जाती है और व्यक्ति पीड़ा से सिसककर रह जाता है।" इस संग्रह की कहानियों में कल्पना पर यथार्थ की इसी विजय का दिग्दर्शन कराया गया है। उदाहरणार्थ 'पैरम्बुलेटर' की नायिका कालिन्दी अपने भावी शिशु के लिए सुन्दर पैरम्बुलेटर को उमंग-सहित खरीदती है, किन्तु उसकी कामना पूरी नही हो पाती, क्योंकि शिशु का जन्म होने पर आर्थिक अभावों के कारण उसकी ओषधि आदि के लिए पैरम्बुलेटर को बेचना पड़ता है। 'दो अँधेरे' में सुमित्रा, 'मोहबन्ध' में अचला, 'कच्चे धागे" में कुन्तल, 'दृष्टि-दोष' में मधुर आदि पात्र प्रेम-मार्ग की सफलता के मधुर स्वप्न देखते हैं, किन्तु प्रेमी अथवा प्रेमिका की अनिच्छा अथवा अपनी विवशताओं के कारण उनकी आकांक्षाएँ अतृप्त ही रह जाती हैं। 'जाले,' 'कटीली छाँह' और 'वापसी' में भी पात्रों की असफल कल्पनाओं और तज्जनित कुंठाओं के चित्र अंकित किये गए हैं। 'छुट्टी का दिन', 'पूर्ति' तथा 'चाँद चलता रहा' इस विषय मे अपवादस्वरूप है। 'छुट्टी का दिन' में नायिका माया की दिनचर्या का वर्णन है तथा अन्य दोनों कहानियों में यह व्यक्त किया गया है कि जीवन में होनेवाले कुछ आकस्मिक सयोग व्यक्ति की जीवन-दिशा को अथवा व्यक्तित्व को आमूल परिवर्तित कर देते हैं। सुश्री उषा प्रियम्वदा ने जो कथा-चित्र प्रस्तुत किये हैं। उनमें व्यक्ति की कुंठाओं, पीड़ाओं, अतृप्त आकांक्षाओ आदि को ही दृष्टि में रखा गया है। नारी होने पर भी सुखी और स्वस्थ गार्हस्थ्य जीवन के चित्र उनकी लेखनी से अंकित नही हुए, यह आश्चर्य की बात है। इसका कारण यह है कि वर्तमान युग में वैयक्तिक भावनाओं को सर्वोपरि महत्त्व देने की जो लहर-सी चल पड़ी है, वे इसमें बह गई हैं। फिर भी, वर्तमान जीवन की समस्याओं को चित्रित करने में उन्हे पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई है।

---

१. कांच का रास्ता, पृष्ठ ९

प्रियम्वदा जी की कहानियों का विकास मुख्य रूप से पात्रों की मानसिक भावनाओं के माध्यम से हुआ है। उनके पात्रों की वृत्तियाँ प्रायः अन्तर्मुखी हैं। उन्होंने वर्तमान नारी की जीवन-समस्याओं को विशेष आग्रह से चित्रित किया है और यह निष्कर्ष प्रस्तुत किया है कि आज की भारतीय नारी प्राचीन नारी की भाँति त्याग अथवा तप का जीवन व्यतीत न करके व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की सर्वाधिक आकांक्षा रखती है। इसीलिए माया (छुट्टी का दिन), तारा (पूर्ति) और सुमित्रा (दो अँधेरे) स्वतन्त्र रूप से अर्थोपार्जन करके यह समझती हैं कि अब उन्हें किसी पुरुष के आश्रय की आवश्यकता नहीं रही, किन्तु उस स्थिति में भी क्या वे प्रसन्न रह पाती हैं ? वे अपने मन में जिस रिक्तता और एकरसता का अनुभव करती हैं, लगभग वही दशा कौशल्या (दो अँधेरे) और चन्दा (दृष्टि-दोष) की है, क्योंकि वे विवाह करके भी इसलिए प्रसन्न नहीं रह पातीं कि पुरुष के सुख के लिए अपनी इच्छाओं का बलिदान उनके मानस में क्षोभ, कुंठा, खीझ और हीन भाव को जन्म देता है। वस्तुतः नारी-स्वातंत्र्य की दुहाई देकर वर्तमान युग ने नारी के साथ अन्याय ही किया है। पहले वह अपने आदर्शों की छाया में प्रत्येक स्थिति में सन्तुष्ट रहती थी और अपने उदात्त गुणों द्वारा श्रद्धा की पात्रा थी, किन्तु अब कोई भी स्थिति उसे अपने अनुकूल प्रतीत नहीं होती। किन्तु, आज 'सुसंस्कृत' नारी ('कंटीली छाँह' में इन्द्रा, 'वापसी' में गजाधर की पत्नी, आदि) पति की अपेक्षा अपने सुख को अधिक महत्त्व देती हैं। पुरुष पात्रों में परमेश्वरी (पैरम्बुलेटर) और नलिन (पूर्ति) के अतिरिक्त अन्य पात्र या तो स्वयं अपनी पत्नी अथवा प्रेमिका से विश्वासघात करते हैं या उनकी पत्नियाँ अथवा प्रेमिकाएँ परिस्थितिवश अथवा जानबूझकर उनकी उपेक्षा करती हैं अथवा विश्वासघात करती हैं। वस्तुतः आलोच्य लेखिका ने स्वस्थ एवं अनुकरणीय चरित्र प्रस्तुत न करके पात्र-पात्राओं की समस्याओं और भावनाओं के यथार्थवादी चित्र अंकित किए हैं, अतः उनके द्वारा किया गया चरित्र-चित्रण एकांगी माना जाएगा। पुरुष पात्रों की सृष्टि मानो नारियों के चरित्र-चित्रण के लिए ही हुई है, अतः किसी पात्र मे किसी उल्लेखनीय विशेषता के दर्शन नही होते।

श्रीमती प्रियम्वदा ने इन कथाओं में मुख्य रूप से पात्रों के चिन्तन-प्रवाह को व्यक्त किया है, किन्तु चरित्र-चित्रण में सुविधा के लिए पात्रों के मध्य भावों के आदान-प्रदान की भी रुचिर योजना की गई है। उन्होंने संवादो को सर्वत्र संक्षिप्त रखा है : तर्क-वितर्क अथवा विचार-विमर्श के लिए दीर्घ संवादों की योजना उन्होंने कहीं भी नहीं की। यद्यपि इस कृति में संवादों ने अन्य तत्त्वों के विकास में विशेष योग नही दिया है, तथापि यह उल्लेखनीय है कि कथोपकथन ने पात्रों के चरित्र को दोष की सीमा तक अन्तर्मुखी होने से बचा लिया है। संवादों की भाषा को पात्रानुकूल रखने की भावना से लेखिका ने अशिक्षित पात्रों की भाषा में तद्भव शब्दों का, और शिक्षित पात्रों की भाषा में अंग्रेजी-शब्दों का, बहुलता से प्रयोग किया है। कतिपय उक्तियो में तो अंग्रेजी-शब्दावली इतनी प्रमुख हो गई है कि लेखिका की इस प्रवृत्ति की सराहना नही की जा सकती। उदाहरणार्थ

'पूर्ति' कहानी में सुनीला की यह उक्ति देखिये—"बट तारा, यू हैव इम्प्रूव्ड, आई मीन, यू आर लुकिंग एज इफ़ —इफ़ —इफ़......।" [१]

नारी-जीवन का विश्लेषण करते हुए लेखिका ने वैवाहिक जीवन की समस्याओं का मनोविज्ञानानुसार चित्रण किया है। संघर्ष और अशांति के इस युग में व्यक्ति किसी भी स्थिति में अपने को संतुष्ट नही पाता, क्योंकि भौतिकवाद ने उसकी समस्त वृत्तियों को अपने में केन्द्रित कर लिया है। 'पर' के लिए बलिदान के भाव प्रायः लुप्त हो चुके हैं—नारी हो या पुरुष, जहाँ उसे अपनी स्वच्छन्दता में किसी भी बाधा का आभास हुआ, वही उसकी कुंठाएँ उभर आती हैं। स्वतन्त्र रूप में जीवन बिताने से मन में रिक्तता और अभाव का अनुभव होता है और विवाह-बन्धन में बँधने पर 'स्व' की भावना का त्याग असह्य हो उठता है। इसलिए इन कहानियो में यथार्थवाद की प्रधानता है। कल्पनाओं के प्रासाद बनाना मानव की सहज प्रवृत्ति है, किन्तु यथार्थ के रहते कल्पनाएँ प्रायः सफल नही होतीं—यही सिद्ध करने के लिए इनकी रचना की गई है।

आलोच्य कहानियों की भाषा विषयानुकूल सरल और व्यावहारिक है। वाक्य लघु एव सारगर्भित है—व्यर्थ के शब्दाडम्बर अथवा भावुकता से भाषा को कहीं भी बोझिल नही बनाया गया है। शैली रोचक एवं प्रभावपूर्ण है, जिसमें सर्वत्र सहजता का मृदु आकर्षण है। भाषा में सहजता लाने के लिए लेखिका ने तद्भव एवं विदेशी शब्दों का भी प्रचुर प्रयोग किया है। उदाहरणस्वरूप निम्नलिखित उक्ति का अध्ययन पर्याप्त होगा—"तारा की आँखों में चौंकापन था। बिना सोचे ही उसके दोनों हाथ बालों पर चले गए, उन्हे छूकर ठीक कर वह जल्दी से अँधेरे में ही वहाँ से चल पड़ी। उसके अभ्यस्त पैर चल रहे थे, पर उसे दिखाई नही दे रहा था। उसकी आँखों के आगे सब धुँधला-सा हो गया था। अपनी भावनाओं की तीव्रता ने उसे स्वयं ही दहला दिया था।"[२] वस्तुतः यह कहा जा सकता है कि प्रियम्वदा जी की कहानियों में युग की समस्याओं, सम्भावनाओं और आकांक्षाओं की मुखर अभिव्यक्ति रही है और शब्दाडम्बर-शून्य सहज अभिव्यंजना ने उसकी कहानियों को कृत्रिमता से मुक्त रखा है।

३२. सुश्री उषा

सुश्री उषा के 'फिर वसन्त आया' शीर्षक कहानी-संग्रह में निम्नलिखित बारह कहानियो को स्थान प्राप्त हुआ है—मेनका : रंभा : उर्वशी, दोस्त, आश्रिता, मान और हठ, नष्ट नीड़, पूर्ति, नई कोंपल, तूफ़ान के बाद, मुक्ता और शशि, अकेली राह, बिखरे तिनके : नया नीड़, फिर वसन्त आया। संकलन-रूप में प्रकाशित होने के पूर्व ये कहानियाँ 'सरिता' में स्थान पा चुकी थीं। इनमें पारिवारिक जीवन की सुख-दुःखमयी विविध अनुभूतियों के सहज चित्र अंकित किये गए हैं। मुख्य रूप से इन कहानियों में

१-२. जिन्दगी और गुलाब के फूल, पृष्ठ ७७, ६१

सफल अथवा असफल प्रेम की झाँकियों की अवतारणा हुई है और गौण रूप से निम्न-लिखित विषयों को स्थान मिला है—दाम्पत्य जीवन की नीरसता अथवा सरसता, विषम परिस्थितियों के कारण किसी अनाथ पात्र अथवा पात्रा की पराश्रयिता, अन्तर्जातीय विवाह और सामाजिक विरोध, माता-पिता के द्वारा सन्तान के लिए उपयुक्त जीवन-साथी की खोज में सफलता अथवा असफलता।

उषा जी ने अपने पात्रों को प्रायः पारिवारिक जीवन से चुना है, अतः स्वभावतः उनमें परिवार-सुलभ ईर्ष्या-द्वेष, स्नेह-सहानुभूति, घृणा-उपेक्षा, कटुता-मृदुता आदि भावनाओं की प्रसंगानुकूल अभिव्यक्ति हुई है। मध्यवित्त परिवारों में नारी को पुत्री, भगिनी, पत्नी, माता आदि विविध रूपों में जिन कटु और मधुर परिस्थितियों में से होकर गुज-रना पड़ता है, उनको दृष्टि में रखते हुए लेखिका ने प्रायः भारतीय नारी के सहज-स्वाभाविक चरित्र प्रस्तुत किये हैं। पुरुषों के चरित्र भी इसी प्रकार प्रसंगानुकूल रहे हैं। जिन पात्रों एवं पात्राओं को प्रेमी-प्रेमिका के रूप में चित्रित किया गया है, उनकी संवेदनाओं एवं कोमल-स्निग्ध भावनाओं के अंकन मे लेखिका को प्रायः सफलता मिली है। इस कथा-संग्रह में वर्णनात्मकता के क्रोड़ में नाटकीयता कथानकों का अभिन्न अंग रही है। संवादो को स्वतन्त्र रूप में आयोजित न करके लेखिका ने उन्हें प्रायः घट-नाओं अथवा पात्रों के कार्य-व्यापारों के मध्य प्रस्तुत किया है। उन्होने कथोपकथन को सजीवता एवं चित्रात्मकता से विभूषित करते हुए प्रायः वक्ता की मनःस्थिति एवं गतिविधियों के संकेत दिये है। यथा—

'माथे पर चंदन का टीका, भव्य, प्रभावशाली तिवारी जी ने पूछा, 'तुम्हारे माँ-बाप नही है ?'

सिर हिलाकर जताया—'नही'

'ठाकुर करनसिंह तुम्हारे कौन हैं ?'

मणि के पैर काँपे, और वह दीवार की टेक लेकर खड़ी हो गई, फुसफुसाकर कहा, 'कोई नहीं।'"[1]

प्रस्तुत कहानियों में हिन्दू-परिवारों में व्याप्त घरेलू वातावरण की सहज झाँकियाँ अंकित की गई हैं। परिवार के परिवेश में रहकर व्यक्ति को समय-समय पर जिन संघर्षों का सामना करना पड़ता है, उनको लेखिका ने सफलतापूर्वक चित्रित किया है। वैसे, इस दिशा में उनकी दृष्टि व्यापक समस्याओं की ओर न जाकर मुख्य रूप से प्रेम और विवाह तक ही सीमित रही है। वस्तुतः पारिवारिक झाँकियों के अंचल में प्रेम की करुण एवं मधुर अनुभूतियों को अभिव्यक्ति देना ही कहानी-लेखिका का लक्ष्य है। उद्देश्य की दिशा में अत्यधिक सजग रहने के कारण उन्होंने परिवार और समाज में व्याप्त अन्य अनेक कोणों की ओर प्रायः दृष्टिपात नही किया। उक्त तथ्य को प्रस्तुत कहानियों की

---

१. फिर वसन्त आया, पृष्ठ १२७

दुर्बलता कहिये अथवा सबलता, फिर भी कथानक में वर्णित भावों की मार्मिकता एवं प्रभावोत्पादकता निर्विवाद है। आलोच्य कहानियाँ वार्त्तालाप की सरल एवं सुबोध शैली में लिखी गई हैं। अनावश्यक शब्द-प्रवाह अथवा शैली-शैथिल्य का दोष कहीं दृष्टिगत नहीं होता। वर्णनात्मक एवं नाटकीय शैलियों के मिश्रित प्रयोग से लेखिका ने भाव-पक्ष के अनुरूप ही स्पष्ट एवं स्वच्छ अभिव्यंजना-शिल्प का विकास किया है। कुल मिलाकर उनकी कहानियाँ सहज, मार्मिक एवं हृदयस्पर्शी है।

३३. श्रीमती आशारानी 'अशु'

श्रीमती आशारानी के 'काश लहरे बोल पातीं' शीर्षक कहानी-संग्रह में ग्यारह कहानियाँ संकलित हैं, जिनके शीर्षक क्रमशः इस प्रकार हैं—काश लहरें बोल पातीं, मुस्कान का मूल्य, विश्वास की डोर, नई किरण, एक कप चाय, मृत्यु अवतरण, सभ्यता की पर्त्त, रेखा, प्रश्नचिह्न, सन्ध्या तारा, क्या शेष रहा। इनमें से प्रथम दो कहानियों में दो भिन्न कथानकों के द्वारा देश-भक्ति के भावों का पोषण किया गया है। 'काश लहरें बोल पातीं' का नायक मराठा सेनाध्यक्ष दामोदर पहले नर्त्तकी कल्याणी के रूप का उपासक था, किन्तु जब रूपगर्विता यशगर्विता कल्याणी ने उसकी उपेक्षा की तो उसने अपनी चित्तवृत्तियों को देश-सेवा में एकाग्र किया। 'मुस्कान का मूल्य' में सन् १८५७ की क्रान्ति का चित्रण करते हुए नर्त्तकी अजीज़न के देश के लिए आत्म-बलिदान का चित्रण किया गया है। शेष नौ कहानियों में व्यक्ति तथा समाज के दुर्भावों के विरुद्ध विद्रूपात्मक कथानक प्रस्तुत किये गए हैं। 'विश्वास की डोर' में रतन और छवि के स्नेह का दो कोणों से चित्रण किया गया है—रतन छवि को अपनी प्रेमिका समझता था, किन्तु छवि उसे भ्रातावत् मानती थी। समस्या का समाधान, छवि का अन्यत्र विवाह होने और उसके द्वारा रतन को समझाने के रूप में हुआ है। 'नई किरण' में वृद्धा रानी अस्पृश्यता की कट्टर समर्थिका थी, किन्तु उसकी पौत्री गंगी को मार्ग में तृषावेग से मूर्च्छित देखकर शिबू चमार ने पानी पिलाकर उसकी प्राण-रक्षा की। इस प्रकार उसने रानी की मान्यताओं पर तीखा प्रहार करके मानो नयी किरण प्रकट की।

'एक कप चाय' शीर्षक कहानी में लेखिका ने धनी नीना और निर्धन वीरेश की के माध्यम से यह सिद्ध किया है कि निर्धन का तुच्छ दान धनी के बहुल दान से अधिक महत्त्वपूर्ण है। निर्धन को दान का मूल्य चुकाने के लिए जीवन में अनेक अभावों का सामना करना होता है, किन्तु धनी की सुख-सुविधाओं में दान देने से तनिक भी अन्तर नहीं पड़ता। 'मृत्यु अवतरण' में सामाजिक वैषम्य की चर्चा करते हुए मृत्यु की अनिवार्यता प्रकट की गई है, क्योंकि प्रजापति ने मृत्यु का विधान मानव-हृदय की शान्ति के लिए ही किया था। 'सभ्यता की पर्त्त' में आधुनिक सभ्यता के खोखलेपन पर व्यंग्य किया गया है। कथानायक राजन की कुतिया रूबी को जो पुष्टिदायक भोजन मिलता था, वह उसके नौकर दीनू के लिए दुर्लभ था। राजन की पत्नी छह बच्चों की माता बनते-

बनते मुरझा चुकी थी, जबकि स्त्री को प्रसव के पूर्व ही टीका लगवा दिया जाता था, जिससे उसका सौन्दर्य अक्षत रहे। 'रेवा' में नायक राजेश द्वारा अपनी बीमार पत्नी रेवा से विश्वसघात करके उसकी सखी रजू से सम्बन्ध स्थापित करने और रेवा द्वारा उनके सुख की कामना से गृह-त्याग वर्णित है। 'प्रश्न चिह्न' में कृष्णवर्णा कुमारी के विवाह की समस्या और दहेज-समस्या का चित्रण करते हुए इन समस्याओं से पीड़ित कथानायिका गौरी द्वारा आत्महत्या का प्रयास करने और सुधीर द्वारा उसकी रक्षा करके उससे विवाह कर लेने की कथा को रोचक और विचारोत्तेजक शैली में प्रस्तुत किया गया है। इसमें वर और वधु के समान सामाजिक स्तर पर बल दिया गया है। 'सन्ध्या तारा' में नायिका रूपा का विजातीय मनु से विवाह न हो पाने और सजातीय विजय से विवाह होने पर कालान्तर में मनु द्वारा दिये गए प्रलोभनों को भारतीय नारी की गरिमा के अनुरूप अस्वीकार कर देने का वर्णन है। 'क्या शेष रहा' में सौतेली माता के सद्भावों को न पहचानने वाले परिवार के प्रति व्यंग्य किया गया है। कथानयिका लीला का अपने सौतेले पुत्र रंजन के प्रति सच्चा स्नेह था, किन्तु रंजना की दादी और उसके पिता के अविश्वास ने लीला को उससे दूर रहने को विवश कर दिया।

उपर्युक्त कहानियों में दामोदर, अजीजन, रेवा, सुधीर, लीला तथा रंजन के चरित्र विशेष मार्मिक बन पड़े हैं। 'काश लहरें बोल पातीं' और 'मुस्कान का मूल्य' में क्रमश: दामोदर तथा नाना साहब ऐतिहासिक पात्र हैं, किन्तु लेखिका ने चरित्र-चित्रण के लिए इतिहास की रेखाओं में कल्पना के सुन्दर रंग भरे हैं। लेखिका ने कुछ कहानियों में पात्रों के अन्तर्द्वन्द्व का सहज-सजीव चित्रण किया है। 'क्या शेष रहा' में लीला और रंजन की व्यक्तिगत कुंठाओं को अत्यन्त सफलता से उभारा गया है। पात्रों के भावों को स्पष्ट रूप से व्यक्त करने के लिए संक्षिप्त एवं सारगर्भित कथोपकथन की योजना की गई है। 'रेवा' शीर्षक कहानी में रेवा और राजेश के वार्त्तालाप में राजेश की चारित्रिक दुर्बलता और रेवा के प्रेम की महानता एव चारित्रिक दृढ़ता की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है।[1] वस्तुत: इस संग्रह की अधिकाश कहानियों में व्यक्ति और समाज पर व्यंग्य किये गए हैं, जिनमें देश-काल और उद्देश्य दोनो मुखर रहे हैं।

श्रीमती आशारानी की कहानियों की भाषा परिमार्जित और साहित्यिक है। उन्होने शैली में भावानुरूप सरलता अथवा गम्भीरता की उचित योजना की है। शैलीगत स्पष्टता, प्रवाह और गम्भीरता का यह उदाहरण द्रष्टव्य है—"स्त्री जब तक अलमारी में सुरक्षित पुस्तक के समान बन्द रहती है, तो मौन ही रहती है, पर एक बार खुल जाने पर खुलती ही चली जाती है।"[2] लेखिका ने 'क्या शेष रहा' की रचना पत्र-शैली में की है। इसमें रंजन ने लीला के प्रति, लीला ने अपनी सखी गीता के प्रति और रंजन के पिता ने लीला के प्रति

---

१. देखिये 'काश लहरें बोल पातीं', पृष्ठ ८४-९०
२. काश लहरें बोल पातीं, पृष्ठ ८५

पत्र लिखकर अपने-अपने भावों और कुंठाओं को भिन्न दृष्टियों से व्यक्त किया है, जिससे कहानी में विशिष्ट सजीवता आ गई है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि श्रीमती आशारानी में कहानी-लेखन के लिए अपेक्षित सूक्ष्म अन्तर्दृष्टि विद्यमान है और उनकी अधिकांश कहानियों में उसका सफल प्रतिफलन हुआ है। नारी होने के नाते उन्होंने नारी की परिस्थितियों, समस्याओं, भावनाओं और उसके गौरवपूर्ण आदर्श के सहज चित्र अंकित किये हैं। रूढ़िवादिता, छुआछूत, वर्तमान समाज की कृत्रिमता आदि को लेकर उन्होंने तीव्र व्यंग्य किए हैं और व्यक्ति की दुर्बलताओं का अंकन करते समय उनके कारणों का उचित विश्लेपण करके संवेदनप्रवणता का परिचय दिया है।

३४. श्रीमती सुमन कारलकर

श्रीमती सुमन कारलकर ने महाराष्ट्र-प्रदेश की होकर भी हिन्दी में कथा-रचना की है। इनके 'अधूरे चित्र' शीर्षक कहानी-संग्रह में दस कहानियों को स्थान मिला है— *अधूरे चित्र, अपने राज में, अपाहिजों की टोली, जीवन ज्योति, विदा, विद्या भवन, दोष किसका है* आदि। इन कहानियों में समाज की निम्नलिखित कुप्रवृत्तियों का चित्रांकन हुआ है—(अ) मुँह से संवेदना प्रकट करनेवाले, किन्तु व्यवहार में निर्धनों का गला काटनेवाले नेताओं की कुत्सित प्रवृत्ति, (आ) सामयिक अभावों का विस्मरण करके लाखों रुपये व्यय कराके यज्ञ करानेवाले साधुओं की रूढ़िवादी हठी प्रवृत्ति, (इ) आर्थिक वैषम्य के फलस्वरूप अभिजात वर्ग का दम्भ एवं अनाचार और पीड़ित-वर्ग के कष्ट, (ई) जातीय संकीर्णता, (उ) विधवाओं और सौतेली माताओं पर अकारण ही लांछन लगाने की हेय भावना, (ऊ) पतिता के उद्धारक को भाँति-भाँति की यन्त्रणा देकर लक्ष्य-भ्रष्ट करने की प्रवृत्ति आदि। उक्त कहानियों में पात्रों का प्रयास यही रहा है कि वे यथार्थ से संघर्ष करके आदर्श की स्थापना करें। कतिपय कहानियों में ऐसे पात्र अपने आदर्श में सफल रहे हैं और अन्यत्र उन्हें मुँह की खानी पड़ी है। आदर्श पात्रों में देवदत्त, विकास, श्याम, राधा, दीपक, जीवन, ज्योति, अशोक, चन्द्रा, शोभा, तारा, मोहन, उषा, विद्या तथा डॉक्टर के नाम उल्लेखनीय हैं। उक्त पात्रों ने कथानक के अनुरूप देशसेवा, ग्राम-सुधार, प्रेम की पावनता एवं एकनिष्ठता, पति-प्रेम, पतित पात्रों का उद्धार आदि विविध क्षेत्रों में अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत किये हैं। इनमें से तारा, डॉक्टर आदि कतिपय पात्र समाज की हृदयहीनता के शिकार होकर अपने लक्ष्य को पूर्ण करने के पूर्व ही समाप्त हो गये, किन्तु अन्य पात्रों ने समाज के विरोध को जीतकर आदर्श के जीवन्त उदाहरण स्थापित किये हैं। असत् पात्रों में ढोंगी वक्ता, लकीर के फ़कीर साधु, वासना के कीट तथा धन के गर्व में उन्मत्त सेठ, जातीय संकीर्णता से युक्त समाज के कर्णधार, नारी की निष्ठा की हत्या करनेवाला मुकुल, पुत्री एवं दामाद का जीवन विषाक्त बनानेवाली जमना आदि पात्र उल्लेखनीय हैं। इनमें से मुकुल, जमुना, प्रकाश आदि कतिपय

पात्र बाद में अनुताप करके अपने पूर्व-अपराधों का परिष्कार कर लेते हैं। लेखिका ने यह उचित ही किया है कि समाज के दुर्बल एवं सबल पक्षों का चित्रण करके दोनों प्रकार के पात्रों को प्रस्तुत किया है। इससे 'अशिव' एवं 'असुन्दर' के त्याग की सहज प्रेरणा प्राप्त होती है।

लेखिका ने संक्षिप्त एवं सारगर्भित संवाद-योजना द्वारा कथानकों में नाटकीय तादात्म्य की स्थापना की है। पात्रों की उक्तियों में उनके आन्तरिक मनोभावों का प्रकाशन तो हुआ ही है, यथाप्रसंग उनसे कथानक, चरित्र-चित्रण, देशकाल एवं उद्देश्य के विकास में भी योग प्राप्त होता रहा है। इन कहानियों में कथोपकथन सामयिक, सामाजिक एवं राजनीतिक परिस्थितियों के उल्लेख में सर्वाधिक सहायक रहे हैं। उदाहरणार्थ 'अधूरे चित्र' कहानी में भिखारिन एवं देवदत्त का यह वार्त्तालाप द्रष्टव्य है—

"आप घर छोड़कर कहाँ जा रहे हैं बाबूजी ?"

"भूदान-आन्दोलन मे सम्मिलित होने के लिए आज ही शाम को गाड़ी से रवाना होनेवाला हूँ। अपना शेष जीवन जनसेवा में ही बिताने का मैंने निश्चय किया है। आज से यह विश्व ही मेरा घर है।"

"भूदान यज्ञ ! हाँ सुना है। लेकिन बाबूजी, इससे क्या होगा ?" उसने उत्सुकता से प्रश्न किया।

"इससे जन साधारण का जीवन सुख-समृद्ध तथा समान बनेगा। अर्थ-संकट, बेकारी, निर्धनता और भुखमरी का सदा के लिए अन्त होगा। मंगलकारी सर्वोदय समाज का निर्माण होगा। शांति स्थापित होगी, इन्सान इन्सान बनेंगे और भारत में रामराज होगा। समझी।"[1]

प्रस्तुत कहानियों की रचना रूढ़ियों के पाश में बद्ध तथा अज्ञान के अन्धकार में लिप्त भारतवासियों के बौद्धिक, नैतिक एवं सामाजिक उत्थान की भावना से हुई है। फलतः इनमें देशकाल एवं उद्देश्य दोनों मुखर रहे हैं। कतिपय कहानियों के अन्त में लेखिका ने भाव-विह्वल होकर उद्देश्य-कथन भी किया है,[2] किन्तु इसके लिए उन्होंने पाठकों को सम्बोधित करने की प्रवृत्ति नहीं अपनाई है।

श्रीमती कारलकर ने सरल व्यावहारिक भाषा-शैली में कथा-रचना की है, किन्तु सरलता के आग्रहवश उन्होंने शब्दों के मूल रूप को हानि नहीं पहुँचाई है। उनके वाक्य संक्षिप्त तथा सरल हैं, अतः शैली भावानुरूप प्रसादगुणमयी एवं प्रभावपूर्ण है। शैली में चारुता लाने के लिए उन्होंने उसे मात्र वर्णनात्मक न रखकर यथास्थान नाटकीयता के समावेश की ओर भी ध्यान दिया है। उदाहरणार्थ 'अपने राज में' शीर्षक कहानी से यह परिस्थिति-चित्र देखिए—

---

१. अधूरे चित्र, पृष्ठ १६

२. देखिए 'अधूरे चित्र,, पृष्ठ ४७

"सब त्योहार, छुट्टियाँ और उन सबका आनन्द ये केवल महलों में समाये रहते हैं जहाँ दिन रात रुपये पैसों की मधुर झंकार से वातावरण गूँजता रहता है, झोपड़ियों में नहीं। वहाँ तो दिखाई देते हैं केवल आँसुओं के मोती और भूखे-प्यासे दिल की दर्द-भरी आहें।"[1] समाज के प्रति लेखिका के मन में गहन संवेदना व्याप्त है, अतः तदनुरूप वर्णन-प्रसंगों में उनकी भाषा-शैली भी वैसी ही मार्मिक एवं हृदयस्पर्शी हो गई है।

२५. सुश्री विजयलक्ष्मी गौर

सुश्री विजयलक्ष्मी गौर ने 'आँधी और तिनके' शीर्षक कहानी-संग्रह में बारह कहानियों का समावेश किया है, जो इस प्रकार हैं—रंजिता, रेणु और यश, उजाले का अन्धकार, अतीत, चित्रकार, आँधी और तिनके, दीवार, दो राहें, आगे बहुत आगे, एक पहेली, नया सूट शीला और रूबी, कहानी का अन्त। इन कहानियों मे एक ओर जीवन के रोमांस का चित्रण है, दूसरी ओर आर्थिक विषमताओं से पीड़ित निम्न-मध्यवर्गीय समाज की करुण कथा है और तीसरी ओर 'चित्रकार' एवं 'एक पहेली' मे मध्ययुगीन इतिहास से दो प्रेम-कथाएँ प्रस्तुत की गई हैं। प्रस्ततु संग्रह की सबसे सफल कहानी 'रंजिता' है, जिसमें समाज द्वारा उपेक्षिता निराश्रिता रंजिता ने अपने अन्तर्द्वन्द्व पर विजय पाकर मेहर के मुसलमान होने पर भी उसे मानवीय सहानुभूति से युक्त पाकर उससे विवाह कर लिया। इसमें कथानक के सभी सूत्र इतने सुचारु रूप में संयोजित है कि संग्रह की अन्य कहानियों में 'अतीत' और 'आँधी और तिनके' से ही इसकी तुलना की जा सकती है। 'अतीत' विचारप्रधान सामाजिक कहानी है, जिसमें जातीय संकीर्णताओं के फलस्वरूप महिम से विवाह न कर पानेवाली अविवाहिता शची की भाव-संवेदनाओं का आत्मकथन के रूप में चित्रण हुआ है। 'आँधी और तिनके' में डॉक्टर अमृत और दीपा के निश्छल प्रेम और परिस्थितिवश दीपा की मृत्यु का कारुणिक चित्रण है। प्रस्तुत संग्रह में कथानक की दृष्टि से ये तीन कहानियाँ ही सशक्त है। अन्य कहानियों में या तो कथा-वृत्त अत्यधिक संक्षिप्त है अथवा उनमें भावुकता की अतिशयता है अथवा लेखिका ने उनमें चरमोत्कर्ष एवं अन्त की सुचारु योजना नहीं की है। 'दीवार', 'आगे बहुत आगे' और 'एक पहेली' की रचना लघुकथाओं के रूप में की गई है, किन्तु इनमें कथा-तत्त्व का सम्यक् निर्वाह नहीं हो पाया है। 'रेणु और यश' एवं 'कहानी का अन्त' परस्पर-पूरक कथाएँ हैं, अतः इन दोनों को पृथक्-पृथक् न लिखकर एक में ही समाविष्ट कर दिया जाता तो अधिक अच्छा रहता।

सुश्री विजयलक्ष्मी ने कथा-योजना की अपेक्षा चरित्र-चित्रण में अधिक सफलता प्राप्त की है। मेहर और डॉक्टर अमृत के अतिरिक्त 'चित्रकार' शीर्षक कहानी में कीर्ति-वर्धन को भी आदर्शवादी नायक के रूप में प्रस्तुत किया गया है। 'रेणु और यश' मे यश

१ अधूरे चित्र, पृष्ठ ३०

का दृष्टिकोण यथार्थवादी रहा है, क्योंकि रेणु के प्रति उसकी भावनाओं में प्रेम की अपेक्षा वासना की अधिकता है। नारी-पात्रों में 'अतीत' में शोभा का व्यक्तित्व भी इसी प्रकार वासनाप्रधान है। लेखिका को रंजिता के अन्तर्द्वन्द्व और आदर्शों का चित्रण करने में सर्वाधिक सफलता प्राप्त हुई है। 'आँधी और तिनके' में दीपा और 'दो राहें' में रत्ना के व्यक्तित्व को भी अन्तर्द्वन्द्व के माध्यम से दीप्ति प्रदान की गई है। लेखिका ने चरित्र-विकास में कथोपकथन के साहाय्य को भी प्रायः दृष्टिपथ में रखा है : 'अतीत' और 'नया सूट शीशा और शची' ऐसी ही कहानियाँ हैं, जिनमें संवाद-योजना की अपेक्षा आत्म-चिन्तन अथवा प्रत्यक्ष कथन की शैली का आधार लिया गया है। आलोच्य कहानियों में अधिकांश कथोपकथन या तो समाजव्यापी आर्थिक वैषम्य से सम्बद्ध हैं अथवा पात्रों ने प्रेम के भावुकतापूर्ण उद्गारों को व्यक्त किया है। उदाहरणार्थ 'चित्रकार' में कीर्तिवर्धन के प्रति सुलेखा की यह उक्ति देखिये—"आज तक मैं नहीं समझ पायी चित्रकार कि तुम स्वयं चित्र हो अथवा चित्रकार? तुम इतने गम्भीर, इतने सुन्दर इतने आकर्षक और इतने प्यारे क्यों हो, चित्रकार?"[1]

आलोच्य कहानी-संग्रह में अधिकांश कहानियाँ सामाजिक हैं, जिनमें समकालीन देशकाल की अभिव्यक्ति के प्रति जागरूक दृष्टि का परिचय दिया गया है। लेखिका ने जीविकोपार्जन करनेवाली महिलाओं की समस्याओं के चित्रण को प्राथमिकता दी है। रंजिता, रेणु, शची, दीपा, रत्ना आदि के माध्यम से उन्होंने ऐसी नारियों की जीवन-चर्या के विविध रूपों को पृथक्-पृथक् निरूपित किया है। इन्हें एक स्थान पर एकत्रित कर देने पर लेखिका के दृष्टिकोण को समझना कठिन न होगा। शिक्षिता नारी केवल अर्थोपार्जन के लिए कर्म-क्षेत्र में भाग नहीं लेती, अपितु उसका एक उद्देश्य व्यक्तित्व का विकास भी होता है। रत्ना का निम्नलिखित आत्मसंवाद इसी तथ्य का बोधक है—"अनूप से उसे प्यार है। मगर अपना व्यक्तिगत अस्तित्व भी महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। क्या पुरुष का प्यार नारी को इतने महँगे मूल्य पर ही मिलता है? कुछ बनने के सपने जो यह बचपन से देखती आयी थी, क्या उन्हें मिटा देना पड़ेगा?"[2] 'रंजिता' शीर्षक कहानी में लेखिका ने देश-विभाजन के फलस्वरूप उत्पन्न परिस्थितियों का सजीव वर्णन किया है। यद्यपि इस संग्रह की दो कहानियाँ—चित्रकार, एक पहेली—मध्ययुगीन इतिहास से सम्बद्ध हैं, तथापि लेखिका ने ऐतिहासिक देशकाल का निरूपण न करके इनमें प्रेम-कथाओं को ही स्थान दिया है। वस्तुतः इन कहानियों की रचना का उद्देश्य मानववाद को उभारना है, जिसका पल्लवन यथार्थ और आदर्श की सीमा-रेखाओं के मध्य में हुआ है। इस प्रकार लेखिका ने देशकाल को उद्देश्य की अभिव्यक्ति में सहायक रखा है और यही कारण है कि इन कहानियों में आर्थिक विषमताओं का चित्रण भी व्यापक रूप में हुआ है।

---

१. आँधी और तिनके, पृष्ठ ५२
२. आँधी और तिनके, पृष्ठ ७९

सुश्री विजयलक्ष्मी की कहानियाँ भाषा-शैली की दृष्टि से भी पर्याप्त प्रबुद्ध है अर्थात् उनमें शाब्दिक विकृतियों और वाक्य-विन्यास की असंगतियों को स्थान नही मिला है। उनकी अधिकांश कहानियों में भावुकता और चिन्तन का अन्तर्मिश्रण है, जिसके फलस्वरूप शैली में सरलता और गम्भीरता का स्वाभाविक प्रवाह रहा है। लेखिका ने कृत्रिम अथवा सायास शब्द-योजना नही की है, फलतः मानव-व्यवहारों तथा परिस्थितियों के स्वाभाविक चित्रांकन में उन्हें यथोचित सफलता मिली है। उदाहरणार्थ 'उजाले का अन्धकार' में वातावरण की यह सजल अभिव्यक्ति देखिए—"मधुआ की गीली डबडबाई उदास नज़र अफ़सर की लाल-लाल आँखो से टकराई। फिर उसके पीछे खड़े सिपाहियों को उसने देखा—फिर उसकी नजर लौटकर हथेली पर रखे तांबे और पीतल के उन टुकड़ों पर आकर ठहर गयी जो सत्य, न्याय और मनुष्यता जैसी अमूल्य चीज़ों को भी खरीदने की शक्ति रखते हैं।"[1]

३६. श्रीमती रत्ना थापा

श्रीमती रत्ना थापा ने 'सुख दुःख' शीर्षक कहानी-संग्रह में 'जीवन के सुख-दुःख और क्रन्दन-पीड़न से उत्पन्न नाना प्रतिक्रियाओं की विश्लेषक' ग्यारह मौलिक कहानियाँ प्रस्तुत की हैं, जिनका क्रम इस प्रकार है—सुख-दुःख, दो फूल, विदा, जीवन की भूल, अर्चना, निष्प्राण प्रतिमा, कर्त्तव्य, तिरंगा, बलिदान, दो आँसू और स्मृति का पुरस्कार। उक्त आख्यायिकाओं मे निम्नलिखित विषयों को स्थान दिया गया है—(अ) सास का वधु के प्रति निर्मम व्यवहार (सुख-दुःख, कर्त्तव्य), (आ) पति अथवा प्रियतम का पत्नी अथवा प्रेयसी के प्रति विश्वासघात तथा पति अथवा प्रिय के मार्ग को निष्कंटक बनाने के लिये नारी का मूक बलिदान (विदा, जीवन की भूल, अर्चना, निष्प्राण प्रतिमा) (इ) सामाजिक बाधा अथवा प्रिय के रोष से पीड़ित नारी का घुल-घुलकर प्राणोत्सर्ग (दो फूल, दो आँसू), (ई) नारी द्वारा पुरुष को देश-भक्ति की प्रेरणा देना तथा स्वयं भी उसी पथ में अपने को न्यौछावर कर देना (तिरंगा, बलिदान, स्मृति का पुरस्कार)। स्पष्ट है कि इन कहानियों में विषय की दृष्टि से प्रायः पारिवारिक जीवन से प्रेरणा ली गई है। लेखिका ने अपनी जीवन-घटनाओं अथवा निकटवर्ती समाज से ही विषयों का चयन किया है। इसके लिए विश्व-व्यापी समस्याओं का आधार उन्होने नहीं लिया। उनके पति श्री रामसिह थापा कैप्टेन रहे है, अतः प्रस्तुत संग्रह की प्रायः प्रत्येक कहानी मे नायक को सेना में भर्ती होते, युद्ध करते, कैप्टेन बनते अथवा महावीरचक्र-जैसे पदक प्राप्त करते दिखाया गया है। लेखिका ने घटनाओं को प्रायः स्थूल वर्णनात्मक शैली में प्रस्तुत किया है: उनके चयन अथवा संयोजन मे सूक्ष्म अन्तर्दृष्टि के दर्शन दुर्लभ है। प्रायः सभी आख्यायिकाएँ दुःखान्त है तथा अधिकांश में नायिका की मृत्यु और नायक

---

१. आंधी और तिनके, पृष्ठ ३२

के अनुताप का मर्मवेधी चित्रण हुआ है।

विवेच्य कहानियों मे नायकों की अपेक्षा नायिकाओं के चरित्र-चित्रण पर विशेष ध्यान दिया गया है। पति अथवा प्रियतम के प्रति एकनिष्ठ प्रेम, पति के सुख-सन्तोष तथा यश के लिए 'स्व' का उत्सर्ग, देशभक्ति के मार्ग में नायक की प्रेरणा-शक्ति बनकर उन्हें गौरवान्वित करना आदि उक्त पात्राओं की उल्लेखनीय विशेषताएँ हैं। नायिकाओं के अतिरिक्त गौण पात्राएँ भी हैं, जिनमें से कुछ का कहानी में अत्यन्त सामान्य योगदान है तथा कुछ—'विदा' की जरीना तथा 'जीवन की भूल' की मरियम की भाँति —खल नायिकाएँ हैं, जो विवाहित होते हुए भी पर-पुरुषों को अपने वासना-जाल में आबद्ध कर बन ऐंठती हैं और उनकी पत्नियों को पीड़ा पहुँचाती हैं। आलोच्य कहानियों में पुरुष पात्र प्रायः परिस्थितियों के प्रवाह में बह जानेवाले दुर्बल-चरित्र प्राणी हैं, जो कुसंगति में पड़कर साध्वी पत्नियो तथा प्रेयसियों की उपेक्षा करते हैं और उनके आत्मघात के हेतु बनते हैं। 'निष्प्राण प्रतिमा' का राजन, 'बलिदान' का राजीव, 'स्मृति का पुरस्कार' का सुनील आदि कथानायक देश-भक्ति की दिशा में स्तुत्य कार्य करते हैं, किन्तु इसका श्रेय अधिकतर उन्हें प्रेरणा देनेवाली नायिकाओं को दिया गया है। लेखिका ने पात्रों के सुख-दुःख, ईर्ष्या-द्वेष, आवेग-उद्वेग, प्रेम-श्रद्धा आदि परिस्थितिजन्य भावों को उनके कथोपकथन मेंसफलतापूर्वक मुखरित किया है। ये संवाद कथानक, चरित्र-चित्रण एवं देशकाल के विकास में विशेष सारगर्भित सिद्ध हुए हैं। 'विदा', 'अर्चना' तथा 'बलिदान' शीर्षक कहानियों का तो प्रारम्भ ही वार्त्तालाप से हुआ है।

श्रीमती रत्ना थापा ने व्यक्तिगत एवं पारिवारिक समस्याओं के अतिरिक्त भारत की समकालीन राजनीतिक घटनाओं की भी चर्चा की है। 'तिरंगा' कहानी मे एक ओर गोआ के सत्याग्रह की चर्चा की गई है और दूसरी ओर देश की भाषा-समस्या पर विचार-विमर्श है।[1] इसी प्रकार 'बलिदान' में असम के नागा-विद्रोह का विस्तृत वर्णन किया गया है।[2] प्रायः लेखिकाओं ने राजनीतिक समस्याओं की ओर बहुत कम ध्यान दिया है, अतः श्रीमती थापा का उक्त प्रयास निश्चय ही प्रशंसनीय है। भारतीय नारी के आदर्श चरित्र का गान करते हुए नारियों की ओर से पुरुषो को साहस, वीरता तथा देशभक्ति की प्रेरणा दिलाना इन कहानियों का मुख्य लक्ष्य है और किसी सीमा तक लेखिका को इसमे सफलता की उपलब्धि भी हुई है। किन्तु, पूर्वाग्रही दृष्टिकोण एवं स्थूल वर्णनात्मक पद्धति के कारण भावक की चेतना का इनसे अभेद साधारणीकरण सम्भव न हो सकेगा।

प्रस्तुत कहानियों में सरल भाषा, लघु वाक्यों एवं मुहावरों की विदग्धता का उचित ध्यान रखा गया है। 'दीवारों के भी कान होते हैं', 'जूतियाँ चाटना' आदि

१-२. देखिये, 'सुख-दुःख' पृष्ठ ७८, ८४-८५

मुहावरों[1] के अतिरिक्त लेखिका ने कतिपय मुहावरों का स्वेच्छा से रूपान्तर भी किया है। 'खून का घूंट पीकर रहना' के स्थान पर 'नीम का घूंट पीकर रह जाना', 'आड़े हाथों लिया' की अपेक्षा 'लम्बे हाथों लिया' आदि प्रयोग[2] उक्त कथन के प्रमाण है। लेखिका की शैली में वर्णनात्मकता, चित्रात्मकता एवं नाटकीयता का यथाप्रसंग समावेश हुआ है। सारांश यह कि श्रीमती थापा ने अपनी कहानियों में सुख-दु:ख के परिस्थिति-प्रेरक चित्र अंकित किये हैं। सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक प्रसंगों की अपेक्षा स्थूल घटनाओं को प्रश्रय देने के कारण इनका महत्त्व अधिक नहीं है। फिर भी सामयिक राजनीतिक प्रसंगों को स्थान देने के कारण इन्हें भुलाया नहीं जा सकता। साहस, वीरत्व एवं चरित्र की उच्चता का संदेश देने के कारण भी इन कहानियों का महत्त्व अक्षुण्ण है।

३७. सुश्री अणिमा सिंह

सुश्री अणिमा सिंह ने 'नारी' शीर्षक कथा-संग्रह की रचना की है, जो निम्नलिखित आठ लघु गल्पों का संकलन है—फ़ैशनेबल बीवी, बुभुक्षित हृदय, साधारण भूल, वह नारी थी, दीवार, विमाता, रोमांस और सुन्दरता। इनमें नारी-हृदय के संवेदनशील पक्षों का मार्मिक चित्रण किया गया है। 'वह नारी थी' मे प्रेयसी की गरिमा का उल्लेख है, तो 'बुभुक्षित हृदय', 'दीवार' तथा 'विमाता' में नारी के मातृत्व से सम्बद्ध तीन करुण चित्र प्रस्तुत किये गए हैं। 'फ़ैशनेबल बीवी' और 'रोमांस' में लेखिका ने नारी के कर्त्तव्य-भ्रष्ट होने के परिस्थिति-सापेक्ष चित्र अंकित किये हैं, किन्तु नारी-जाति के प्रति पूर्वाग्रह से प्रेरित होकर उन्होंने उक्त कहानियो के पुरुष पात्रों को इसके लिये दोषी ठहराया है। उदाहरणार्थ 'फ़ैशनेबल बीवी' की राधा सरल एवं पतिपरायणा नारी थी, किन्तु जब उसके पति मुकुल ने आधुनिकता के चक्कर में पड़कर उसे फ़ैशनेबल बनने को प्रेरित किया तो वह इस दिशा में इतनी प्रगतिशील बन गई कि एक दिन पति को त्यागकर लुई नामक विदेशी युवक के साथ फ्रांस चली गई। इसी प्रकार 'रोमांस' की किरण अश्लील पुस्तकों तथा भद्दे चित्रों में रुचि रखनेवाले पिता से प्रभावित होकर कुमार्ग की ओर प्रेरित हुई। 'साधारण भूल' और 'सुन्दरता' में पुरुष पात्रों को दाम्पत्य जीवन की मधुरता में विष घोलते और फलत: नारी पात्राओं को मृत्यु का ग्रास बनते दिखाया गया है। इस प्रकार लेखिका ने प्रस्तुत कहानियों में पुरुषों के चरित्रांकन की ओर समुचित ध्यान नहीं दिया। उनके चरित्र नारी की चरित्राभिव्यक्ति में साधनरूप होकर प्रकट हुए है। पुरुषों की उपेक्षा करना तथा सभी दुर्घटनाओं के लिए उन्ही को उत्तरदायी ठहराकर नारी के प्रति पाठकों की सहानुभूति को अखण्ड रखने का प्रयत्न करना पुरुष के प्रति लेखिका के अन्याय का सूचक है। यथार्थ का विस्मरण करके

---

१. सुख-दु:ख, पृष्ठ २९-३६
२. सुख-दु:ख, पृष्ठ ३२, ४२

पूर्वाग्रह-प्रेरित आदर्श (वह भी एकांगी) की स्थापना भी तो उचित नहीं।

मणिमा सिंह ने इन कहानियों में विवरणात्मक शैली को अत्यधिक प्रश्रय दिया है। फलतः इनमें संवाद-तत्त्व को विशेष स्थान प्राप्त नहीं हुआ। 'फ़ैशनेबल बीबी', 'बुभुक्षित हृदय' तथा 'रोमांस' में कोई भी स्थल ऐसा नहीं है जहाँ प्रत्यक्ष रूप से पात्रों के मध्य सम्भाषण हुआ हो। शेष गल्पों में यत्र-तत्र पात्रों के संक्षिप्त वार्त्तालाप अथवा एकपात्रीय उक्तियों के दर्शन होते हैं, जिनमें कथानक अथवा चरित्र-चित्रण को सामान्य नाटकीय अभिव्यक्ति प्राप्त हुई है। इसी प्रकार इन कहानियों में किसी व्यापक सामाजिक समस्या का भी उल्लेख नहीं हुआ, अपितु नारी-जीवन की कतिपय पुरुष-सापेक्ष समस्याओं को स्थान प्राप्त हुआ है। नारी स्वभावतः स्नेह, ममता, त्याग, विश्वास एवं पावनता की प्रतिमूर्ति है, किन्तु पुरुष अथवा समाज उसे लक्ष्य-भ्रष्ट करता है (फ़ैशनेबल बीबी, रोमांस), किसी पुरुष से पावन सम्पर्क रहने पर भी उस पर लांछन लगाता है (बुभुक्षित हृदय, सुन्दरता), उसके हृदय को परखे बिना ही उस पर पूर्वाग्रहपूर्ण विचारों को लागू करके उसके प्रति अन्याय करता है (विमाता), पति-रूप में उस पर अन्यायपूर्ण शासन करना चाहता है (साधारण भूल) तथा प्रियतम के रूप में उसके प्रति प्रतारणा करता है (वह नारी थी)। किन्तु, नारी फिर भी अपनी गरिमा में महान् है; वह केवल स्नेह और आत्म-बलिदान ही जानती है। परिस्थिति-चित्रण के अन्तर्गत लेखिका ने मुख्यतः नारी-जीवन की समस्याओं को व्यक्त किया है। प्राकृतिक वातावरण की दृष्टि से 'वह नारी थी' कहानी के आरम्भ में ग्रीष्म ऋतु के प्रभाव से आकुल प्रकृति का आलंकारिक एवं चित्रात्मक वर्णन द्रष्टव्य है।[1] वस्तुतः नारी-जाति के गौरव का उन्मुक्त चित्रण इन कहानियों का एकमात्र लक्ष्य रहा है। इस ओर अत्यधिक जागरूकता होने के कारण ही लेखिका ने नारी की दुर्बलताओं के प्रति भी पाठकों की संवेदना अर्जित करने का प्रयास किया है।

प्रस्तुत कहानियों में सरल एवं व्यावहारिक भाषा तथा प्रवाहपूर्ण वर्णनात्मक शैली को स्थान प्राप्त हुआ है। 'पति की सारी आशा पर उसने पानी फेर दिये', 'स्टेशन मास्टर की आफिस है', 'घर में उपहारों की ढेर लगने लगी', 'किरण के रुपयों पर मौज उड़ाया जाने लगा' आदि वाक्य[2] व्याकरण की दृष्टि से सर्वथा अशुद्ध हैं। ऐसे वाक्यों ने भाषा के प्रवाह को पर्याप्त क्षीण किया है, किन्तु लघु एवं सुगठित वाक्यों ने भाषा में सजीवता का संचार करके उक्त दोष का किसी सीमा तक परिमार्जन भी किया है। वर्णनात्मक अथवा विवरणात्मक शैली की अपेक्षा यदि लेखिका ने नाटकीयता की ओर किंचित् अधिक ध्यान दिया होता, तो उक्त कहानियाँ अपेक्षाकृत सजीव एवं प्रभावपूर्ण हो सकती थीं।

---

१. देखिये 'नारी', पृष्ठ २४

२. नारी, पृष्ठ ३, ८, ५४, ५५

३८. सुश्री कृष्णा सोबती

सुश्री कृष्णा सोबती ने 'डार से बिछुड़ी' उपन्यास के अतिरिक्त कुछ कहानियाँ भी लिखी हैं, जो समय-समय पर पत्रिकाओं में स्थान पाती रही हैं, किन्तु सग्रह-रूप में अभी वे प्रकाशित नहीं हुई। यहाँ उनकी 'तिन पहाड़' शीर्षक लम्बी कहानी की समीक्षा की जा रही है, जो हिन्दी की नई कहानियों में बहुचर्चित है।[1] जैसा कि इस कहानी के शीर्षक से भी व्यजित है, इसमें तीन प्रमुख पात्र हैं—जया, श्री और तपन। जया श्री की माता की पालिता पुत्री थी, जिसे उन्होंने श्री के आग्रह और अपने हृदय की पूर्ण सहमति से भावी पुत्रवधु के पद पर प्रतिष्ठित कर लिया था। श्री जब पढ़ने के लिए विदेश गया तो गौरांग सहपाठिनी एडना पर विमुग्ध होकर अपने अतीत का गौरव न रख सका और उससे विवाह कर लिया। माता और जया पर मानों वेदना का पहाड़ टूट पड़ा। अपनी व्यथा को लिये-दिये जया दार्जिलिंग की ओर चल पड़ी जहाँ उसे तपन मिला, जो एक सुन्दर और भावुक युवक था। जया की झर-झर झरती पीड़ा ने उसे इतना आकृष्ट किया कि वह अपनी प्रेयसी एवं वाग्दत्ता पुत्तुल को भूलकर उत्तरोत्तर उसी के अनुराग में रंगता गया। उधर जब एडना को लेकर श्री घर लौटा तो माँ ने उसके प्रति पूर्ण उपेक्षा दिखाई, एडना को अपने घर नहीं आने दिया और श्री से आग्रह किया कि दार्जिलिंग जाकर जया को लौटा लाए। दार्जिलिंग में एडना के पिता रौस भी रहते थे। संयोगवश जया और तपन से उनका परिचय भी हो चुका था। एडना को लेकर श्री दार्जिलिंग पहुँचा, किन्तु जया ने उसे क्षमा करना तथा उसके साथ लौटना अस्वीकार कर दिया। तपन के प्रति उसके अपनत्व को देखकर श्री को ईर्ष्या हुई, किन्तु बात वहीं तक रही, क्योंकि अगले दिन जया ने अकेले घूमने जाकर पुल से छलाँग लगा दी और इस प्रकार सब समस्याओं का अन्त हो गया।

आलोच्य लेखिका ने अपने भावुक व्यक्तित्व के अनुरूप पात्रों को भी भाव-विह्वलता के धरातल से चित्रित किया है। तपन, श्री, जया तीनों पात्र विवेकपूर्ण होते हुए भी अपनी भावनाओ के आवेग के सम्मुख विवश हैं और न चाहकर भी उसी दिशा मे बहते है जिस ओर उनकी भावना उन्हें प्रेरित करती है। माँ, रौस, एडना आदि गौण पात्रो की भी यही दशा है। मानवीय अनुभूतियों के भाव-संकुल चित्रण में लेखिका विशेष सफल रही है। पात्रों के सूक्ष्म कार्य-व्यापारों और उनके मूर्त्त एव अमूर्त्त स्पन्दनों का रागात्मक रूप प्रस्तुत करना उन्हे विशेष प्रिय है। यद्यपि लेखिका ने पात्रों की गतिविधियो में ही उनके मनोभावो को मूर्त कर देने का प्रयास किया है, तथापि कहीं-कही संक्षिप्त सवाद-योजना भी की है। पात्रों की उक्तियों को उनके कार्य-व्यापार के मध्य में ही चरितार्थ किया गया है, जिससे वे अत्यन्त सजीव हो उठी हैं। एक उदाहरण द्रष्टव्य है—

---

१. देखिये 'हिन्दी लेखिकाओं की प्रतिनिधि कहानियाँ', पृष्ठ ६१-१००

"रात सोने से पहले श्री माँ के पास आए। पैताने बैठ माँ के पाँव छू लिए तो वह मन ही मन खुश हुई।

श्री माँ को देखते रहे, तब अनुनय के स्वर में बोले—

"जो कहने जाता हूँ माँ, सो तो तुम पहले से ही जानती हो।"

माँ लेटी-लेटी उठ बैठीं।

"इस माथे में इतनी समझ कहाँ है कानू···"

श्री कुछ कहने से पहले जैसे माँ का मन तौलते रहे, फिर अधिकार भरे कण्ठ में कहा—"बुआ माँ के ससुराल की इस दूर पार की लड़की को पाल-पोस बड़ा किया है तुमने पर क्या इसी से इसे दूसरे घर ब्याह दोगी···।"

बेटे ने मानो आधा युद्ध जीत लिया।

माँ घड़ी भर लड़के को देखती रहीं तब बोलीं—'जिसे आँचल से लगाए रही हूँ, उसे कितना चाहती हूँ, यह तो कहना नहीं होगा, पर एक बात तो कह, यह बात तेरे मन में आई कब ?"

श्री इस बार डरे नहीं। अधिकारपूर्वक कहा—"माँ ऐसी बात क्या एक दिन में सोची जाती होगी।"

माँ जैसे जानती ही थी कि बेटा यही कहेगा। हँसी। हँसती चली कि आशीर्वाद बरसाती हो।'[1]

प्रस्तुत कहानी में दार्जिलिंग की प्रकृति-श्री का सुन्दर चित्रण हुआ है। लेखिका ने अपनी विशिष्ट काव्यात्मक शैली में प्राकृतिक दृश्यों की अत्यन्त रम्य अवतारणा की है। यथा—"अंबर से बादलों की पातें फैल-फैल धुन्ध बनने लगीं। नीचे के गहरे खड्ड धुन्ध के असीम आंचल में खो गए। ऊपर के पहाड़ तक धुंधलकी बाँहों में सो गए।"[2]

सुश्री सोबती की अपनी विशेष भाषा-शैली है जो उन्हें अन्य सबसे पृथक् करती है। एकवचन के स्थान पर बहुवचन का प्रयोग (यथा—तपन सोए नहीं,[3] बाहों से घिरी जया खड़ी रहीं[4]); उफाड़, बताशिया, रँझाती धूप, अनझपी दीठ, उजियारी झील[5] आदि विशिष्ट शब्द-चयन उनकी भाषा की विशेषताएँ हैं। इनके अतिरिक्त क्रियाओं के विशिष्ट प्रयोगों से भी लेखिका ने शैली में आकर्षण की सृष्टि की है। यथा—

"सुनकर वह कुछ कहने जाती थीं कि सहसा आँखों पर हाथ रख लिया और व्याकुल सी भरवि कण्ठ यही दोहराती चलीं—"जिसे सचमुच में ही बीत जाना है आज वही दिन है—वही दिन है—"

---

१. हिन्दी लेखिकाओं की प्रतिनिधि कहानियाँ, पृष्ठ ८३-८४

२. हिन्दी लेखिकाओं की प्रतिनिधि कहानियां पृष्ठ ६३

३-४. देखिये 'हिन्दी लेखिकाओं की प्रतिनिधि कहानियां', पृष्ठ ६८, ७१

५. देखिये 'हिन्दी लेखिकाओं की प्रतिनिधि कहानियाँ, पृष्ठ ६२, ६४, ६८, ६६

इस बार तपन नहीं, तपन के सामने जया सिर झुकाये बैठी थीं और किसी अदीखते दर्द के आगे रह-रह सिर धुनती थीं।"[1]

सारांश यह कि सुश्री कृष्णा सोबती ने हिन्दी-व्याकरण की उपेक्षा करके अपनी भाषा के लिए कुछ शब्दों को स्वेच्छा से विकृत किया है। ऐसा करने में उनका लक्ष्य यही है कि भाषा-शैली में काव्यात्मकता एवं लयात्मकता के संयोग से विशेष माधुर्य एवं आकर्षण का समावेश किया जाए। यह सत्य है कि लेखिका अपने लक्ष्य में किसी सीमा तक सफल रही हैं, किन्तु अनेकशः शब्दाडम्बर में भावगत सहज सौन्दर्य दब-सा गया है। उनकी कहानियों में भाव-सौन्दर्य की अपेक्षा शैली-सौन्दर्य प्रमुख लक्ष्य बन गया है, जो निश्चय ही कथा के क्षेत्र में गुण नहीं है।

मूल्यांकन

पूर्ववर्ती लेखिकाओं की भाँति स्वातंत्र्योत्तर युग की लेखिकाओं ने भी मुख्य रूप से सामाजिक कहानियों की रचना की है। इन कहानियो के प्रमुख विषय ये है— (अ) प्रेम के सफल अथवा असफल चित्र, (आ) दाम्पत्य जीवन की मधुर एवं कटु अनुभूतियाँ, (इ) पारिवारिक जीवन के विविध दृश्य, (ई) दलित एवं शोषित वर्ग की पीड़ा। इस युग की लेखिकाओं ने जिन सामाजिक समस्याओं का निरूपण किया है, उनमें से अधिकांश प्रायः रूढ़िप्राप्त है। यथा—वेश्या-जीवन, विधवा-जीवन की यन्त्रणाएँ, दहेज-प्रथा, पूंजीपतियों द्वारा सर्वहारा वर्ग का शोषण, पति अथवा प्रेमी की स्वार्थपरता, प्रवंचिता नारियों की आत्मपीड़ा, अछूतोद्धार की समस्या, समाज की विचार-संकीर्णता, स्वार्थपरता, अर्थ-लोलुपता आदि। कुछ समस्याएँ ऐसी भी है जो इसी युग की देन है। उदाहरणार्थ उषा प्रियंवदा ने अपनी अनेक कहानियों में यह दिखाया है कि नारी-स्वातंत्र्य की वर्तमानकालीन प्रेरणा से अनेक नारियाँ स्वतन्त्र जीविकोपार्जन करके समझती हैं कि उन्हें अब कुछ नही चाहिये अर्थात् वे प्रसन्न है, किन्तु मानसिक रूप से अशान्त रहती हैं···कोई अभाव उन्हें कचोटता है। रजनी पनिकर ने भी अपनी कहानियों में नारी की इसी मानसिक हलचल को मुखरित किया है। इस युग की एक अन्य देन है—विवाहिता नारी का परपुरुष के प्रति प्रेम अथवा मानसिक व्यभिचार, जिसका चित्रण सुमित्रकुमारी सिनहा ने अपनी कहानियो में किया था। इस काल की अन्य लेखिकाओं में मालती डिंडा की नायिकाएँ इसी प्रकार की है। श्रीमती विमला रैना ने विवाह-पूर्व के प्रेम को पाप नहीं माना है तथा शकुन्तला, कुन्ती आदि पौराणिक नायिकाओं के उदाहरण देकर ऐसे प्रेम का समर्थन किया है। यह दृष्टिकोण बदलती हुई समाज-व्यवस्था का परिणाम है।

सामाजिक कहानियों के अतिरिक्त इस युग में राजनीतिक, पौराणिक, ऐतिहा-

---

१. हिन्दी लेखिकाओं की प्रतिनिधि कहानियाँ, पृष्ठ ७२

सिक, भावपूर्ण, प्रतीकात्मक आदि विभिन्न विषयक कहानियों की रचना की गई है। राजनीतिक कहानियों की रचना प्रायः दो रूपों में हुई है—(अ) वे कहानियाँ जिनमें स्वतन्त्रता-पूर्व काल के भारत की इन परिस्थितियों की चर्चा की गई है—सत्याग्रह आन्दोलन, क्रान्तिकारी दल, पुलिस का दमन-चक्र आदि, (आ) वे कहानियाँ जिनमें समकालीन अथवा आसन्नभूतकालीन राजनीतिक स्थिति का चित्रण है, जैसे—शरणार्थी-समस्या, भारत-विभाजन के अवसर पर साम्प्रदायिक रक्तपात आदि। उदाहरणार्थ लीला अवस्थी की 'नई आँधी' और 'परिवर्तन' शीर्षक कहानियों में शरणार्थी-समस्या का चित्रण है, सत्यवती भैया की 'जीवन का प्रश्न' कहानी में शरणार्थी कन्याओं की निराश्रयिता की चर्चा है और हीरादेवी चतुर्वेदी के 'उलझी लड़ियाँ' शीर्षक कथा-संग्रह की अनेक कहानियाँ इसी समस्या को लेकर लिखी गई है। सुश्री इन्दुमती ने 'उखड़े विरवे' शीर्षक कहानी-संग्रह मे स्वतन्त्रता की परवर्ती विभीषिकाओं का चित्रण किया है, जिनकी ओर हमारे नेताओं और साहित्यकारो का ध्यान ही नहीं गया। उदाहरणार्थ साम्प्रदायिक विद्वेष ने पीड़ितों को उनके प्रियजनों से ही विलग नहीं किया, अपितु गर्भस्थ शिशुओं को भी अपंग बना दिया। रत्ना थापा की 'तिरंगा' कहानी में गोआ के सत्याग्रह की चर्चा है और देश की भाषा-समस्या पर विचार किया गया है। इन्ही की 'बलिदान' कहानी में असम के नागा-विद्रोह का विस्तृत वर्णन है। इसी प्रकार सुमन कारलकर की कहानियों मे आधुनिक नेताओं और साधुओं पर व्यंग्य किये गए हैं और कुछ कहानियों में भूदान-आन्दोलन की भी चर्चा है। कहने का तात्पर्य यह है कि यद्यपि अधिकांश कहानी-लेखिकाएँ समाज एवं परिवार के चित्रण की ओर ही उन्मुख रहीं, तथापि सामूहिक रूप से विवेचन करने पर यह स्पष्ट है कि इस काल की कहानियाँ युगीन प्रभाव से अछूती नहीं रहीं। अनेक लेखिकाओं ने देशव्यापी महँगाई, निर्धनता, बेकारी आदि का भी उल्लेख किया है। उदाहरणार्थ पद्मावती पटरथ की कहानियाँ देशकालप्रधान हैं; उन्होंने दिल्ली में मकानों की तंगी तथा बेकारी की अनेकशः चर्चा की है।

इस काल मे ऐतिहासिक एवं पौराणिक कहानियाँ भी लिखी गई है। उदाहरण-स्वरूप शकुन्तला शर्मा की 'फ्रांस का लाल फूल' कहानी में नैपोलियन बोनापार्ट के जीवन के अन्तिम भाग की कथा है। मालती ढिंडा ने 'हसीन ख्वाब' और 'अंजुमन' शीर्षक ऐतिहासिक कहानियाँ लिखी है। इन कहानियों में इतिहास एवं कल्पना का सुन्दर सामंजस्य है और साथ ही सरसता एवं प्रवाह है। पौराणिक कहानी-लेखन में शकुन्तला शर्मा का नाम उल्लेनीय है। इनकी 'देव अदेव', 'बीथी जाल' तथा 'कर्म मेखला' शीर्षक कहानियों में विधाता, विष्णु, प्रह्लाद आदि पौराणिक पात्र एवं घटनाएं हैं। किरणकुमारी गुप्ता की 'नारी' कहानी भी पौराणिक है। इसमें श्रद्धा और मनु की भावपूर्ण कथा दी गई है। उषा माधवी सक्सेना, सावित्री सिंह 'किरण' तथा शकुन्तला शर्मा की कुछ कहानियों में प्राकृतिक पदार्थों के मानवीकरण द्वारा प्रतीकात्मक शैली अपनाई गई है। शकुन्तला शर्मा एवं विपुला देवी ने दार्शनिक कहानियाँ भी लिखी हैं। इसी प्रकार सुश्री सीता ने लोक-

कथाओं को लेकर कहानियों की रचना की है।

इस युग में चरित्र-चित्रण के क्षेत्र में अनेक नवीन शैलियों का उदय हुआ है। अधिकांश लेखिकाओं ने स्थूल कार्य-व्यापारों का वर्णन न करके मानसिक विश्लेपण अथवा मनोवैज्ञानिक चित्रण की ओर ध्यान दिया है। व्यक्ति एवं समाज के सघर्ष से उत्पन्न व्यक्तिगत कुंठाओं एवं पीड़ाओं को कहानियों में मुख्य स्थान मिला है। वर्तमान कहानियों में मानसिक ऊहापोह पर विशेप बल रहता है। श्रीमती तारा पोतदार की कहानियाँ इसका उदाहरण हैं। आत्मचिन्तन की प्रवृत्ति अथवा चेतना-प्रवाह-पद्धति भी इस युग की कहानियों की मौलिक विशेपता है। ऐसी कहानियों में पात्रों की सख्या सीमित होती गई और प्रत्यक्ष-चित्रण की प्रणाली को बहुत-कुछ त्याग दिया गया। इन लेखिकाओं ने पात्रों की बहिरंग प्रवृत्तियों की अपेक्षा उनके मनःकोणो का सूक्ष्मातिसूक्ष्म विश्लेपण किया है। यद्यपि पूर्ववर्ती लेखिकाओं की भाँति इस युग में स्त्री-चरित्रों को अपेक्षाकृत प्राथमिकता दी गई है, किन्तु इस युग की स्त्रियाँ पहले की भाँति केवल भारतीयता में आवृत्त दब्बू नारियाँ नही है। अन्याय होते देखकर वे विद्रोह भी कर बैठती हैं। सत्यवती भैया, लीला अवस्थी, कुमारी रीता आदि लेखिकाओं ने पात्राओं का चुनाव इसी दृष्टिकोण से किया है। यह प्रवृत्ति युग-चेतना का ही परिणाम है। यह उल्लेखनीय है कि इस काल की अधिकांश कहानियाँ व्यक्ति के धरातल से लिखी गई है। उनमें सोद्देश्यता भी है, किन्तु अनुभूति चेतना अधिक है। लेखिकाओं ने प्रायः यथार्थवादी चित्रण पर बल दिया है। उनकी कहानियो में आदर्श के सकेत यत्र-तत्र है, किन्तु दृष्टान्त-रूप में आदर्श प्रायः प्रस्तुत नही हुए। अधिकांश लेखिकाओ की आन्तरिक भावना एक-सी है। प्रायः सभी में सामाजिक कुरीतियो, अन्धविश्वासों, धार्मिक आडम्बरों आदि के सुधार का आग्रह है, दुःखदग्ध मानवता के प्रति संवेदना है, पीड़ित-व्यथित वर्ग के प्रति करुणा है तथा पतितों के उत्थान की प्रबल आकांक्षा है।

शिल्प की दृष्टि से इन कहानियों में मुख्यतः एकरूपता है—घटना-संयोग, सुव्यवस्थित कथानक, लघु अथवा दीर्घ वार्त्तालापों की सरल शैली, उक्ति-वैचित्र्य और हास-परिहासपूर्ण व्यंग्यात्मक प्रकरण अधिकांश कहानी-लेखिकाओं में प्रायः एक-जैसे आग्रह के साथ विद्यमान है। व्याकरण सम्बन्धी अशुद्धियाँ मुख्यतः उन्हीं लेखिकाओं की कहानियों में हैं, जो अहिन्दीभाषी है। वर्णन-शैली की दृष्टि से लेखिकाओं ने आत्मकथन एवं अन्य पुरुष दोनों प्रकार की शैलियों का प्रयोग किया है। कौशल्या अश्क की 'निम्मो' कहानी पत्र-शैली में लिखित है। इसी प्रकार आशा रानी 'अशु' की 'क्या शेष रहा' कहानी भी पत्र-शैली में है। सारांश यह कि आलोच्य युग में कहानी-लेखिकाओं का ध्यान परम्परा के अनुसरण की अपेक्षा नवीन प्रवृत्तियों को अपनाने की ओर रहा है।

●

तृतीय प्रकरण

स्वातंत्र्योत्तर युग की प्रमुख उपन्यास-लेखिकाएँ

स्वातंत्र्योत्तर युग में कहानी-लेखन की भाँति उपन्यास-लेखन के क्षेत्र मे भी महिलाओं ने जागरूक दृष्टि का परिचय दिया है। प्रस्तुत प्रकरण में इस युग की मुख्य उपन्यास-लेखिकाओं के कृतित्व की समीक्षा की जायेगी, जिन्हें निम्नलिखित क्रम के अन्तर्गत रखा गया है—रजनी पनिकर, वसन्तप्रभा, कृष्णा सोबती, लीला अवस्थी, चन्द्रकिरण सोनरेक्सा, अन्नपूर्णा तांगड़ी, विमल वेद। इस क्रम-निर्धारण में लेखिकाओं के उपन्यासों के प्रकाशन-काल को दृष्टि में रखा गया है।

श्रीमती रजनी पनिकर

वर्तमान युग की उपन्यास-लेखिकाओं में श्रीमती पनिकर का अग्रणी स्थान है। उन्होंने सात उपन्यासों की रचना की है, जो प्रकाशन-क्रम के अनुसार इस प्रकार हैं—ठोकर, पानी की दीवार, मोम के मोती, प्यासे बादल, जाड़े की धूप, काली लड़की, एक लड़की : दो रूप। ये सभी उपन्यास सामाजिक हैं और इनकी रचना मुख्यतः नारी-जीवन की समस्याओं को लेकर की गई है। इनमें लेखिका ने समकालीन समाज का विश्लेषण तो किया ही है, उनकी प्रवृति नारी की भावनाओं के मनोवैज्ञानिक विश्लेषण की ओर विशेषतः रही है।

१. ठोकर

श्रीमती रजनी पनिकर ने विवाह के पूर्व रजनी नायर के नाम से 'ठोकर' शीर्षक सामाजिक उपन्यास की रचना की थी। इसमें शिक्षित मध्यवर्गीय समाज में विकास पानेवाले स्वच्छन्द वातावरण एवं उसमें साँस लेनेवाले पात्रों के कार्य-व्यापार को मूर्त रूप प्रदान किया गया है। मृणाल और उसकी सखी जूही समस्त कथानक का केन्द्र रही हैं। मृणाल अपने रूप तथा धन पर अत्यधिक गर्व करनेवाली वस्तुवादी नारी है। अपने पिता के मुंशी के पुत्र वसन्त को पहले वह हीन दृष्टि से देखती थी, किन्तु जब उसे वसन्त के प्रति जूही के आकर्षण का आभास हुआ तब वह ईर्ष्यावश वसन्त को अपनी ओर आकृष्ट करने में प्रयत्नशील हो गई। अपने समाज-सेवी अग्रज अटल और जूही का प्रेम भी उसे सह्य नहीं हुआ, अतः उसने शरणार्थी कन्या नीलिमा से अटल के विवाह का प्रयास

किया। किन्तु, उसकी कोई भी इच्छा पूर्ण न हो सकी। प्रिंस कोमल—जिन्हें वह अपने लिए चाहती थी—नीलिमा के हो गये, अटल और जूही में विकर्षण न हो सका और एक दिन उसे मद्यपान करते देखकर वसन्त ने भी उससे विवाह करना अस्वीकार कर दिया। इस प्रकार रूप और धन के गर्व में मृणाल ने जैसे कभी वसन्त तथा जूही को ठुकराया था, वैसे ही परिस्थितियों ने उसका अहं चूर्ण करके उसे आघात पहुँचाये। प्रस्तुत कथानक में मध्यवर्गीय समाज का जो स्वच्छन्द चित्र अंकित किया गया है, उसे यथार्थवादी शैली का उत्तम उदाहरण माना जा सकता है। १०२ पृष्ठों के इस लघु उपन्यास में गौण कथाओं के लिए अवकाश न था, अतः लेखिका ने इस दिशा में प्रयत्न न करके उचित ही किया है, अन्यथा वे मुख्य कथा के साथ न्याय न कर पाती। कथानक का एक सीमित वृत्त में बन्द रहना दोष हो सकता था, किन्तु वर्णन-शैली की सक्षमता तथा मनोवैज्ञानिक विश्लेषण ने उक्त दोष का पर्याप्त सीमा तक मार्जन कर दिया है।

'ठोकर' में चरित्र-चित्रण का तत्त्व सर्वोपरि है, घटनाएँ उसकी छाया मे विकसित हुई हैं। इसमें छह पात्र हैं—अटल, वसन्त, प्रिंस कोमल, मृणाल, जूही तथा नीलिमा। मृणाल के मनःविकास का सूक्ष्म विश्लेषण प्रस्तुत करने में लेखिका को विशेष सफलता मिली है। ईर्ष्या, दम्भ, अहं, क्रूरता आदि दुर्गुणों ने उसके व्यक्तित्व को इस सीमा तक आच्छादित किया है कि उसके नारी-सुलभ कोमल भाव सर्वथा दब गए हैं। इसके विपरीत जूही असुन्दर एवं दरिद्र होते हुए भी अपने सम्पर्क में आनेवाले प्रत्येक व्यक्ति को प्रभावित करती है, क्योंकि ममता, भावुकता, कृतज्ञता, कला-प्रेम, तर्क-पटुता, सेवा, त्याग आदि गुण उसमें कूट-कूटकर भरे हैं। इस प्रसंग में लेखिका द्वारा उनके चरित्र की यह तुलना द्रष्टव्य है—"मिनी यदि प्रेमिका की तरह थी, तो जूही करुणामयी थी। जूही कभी भी किसी को स्नेह और ममता दिये बिना नही रह सकती थी।"[1] मृणाल के विपरीत उसका भाई अटल उदार एवं कोमल-हृदय है। आधुनिक युवकों की भाँति वह बाह्य सौन्दर्य अथवा धन को महत्त्व नहीं देता, अपितु आन्तरिक गुणों का आदर करता है। इसी कारण बहिन की इच्छा के विरुद्ध भी वह जूही को पत्नी-रूप में पाने का प्रयास करता है। वसन्त, नीलिमा, प्रिंस कोमल आदि पात्रों की विशेषताओं को लेखिका ने अत्यन्त सीमित रूप में व्यक्त किया है, जिनमें वसन्त का संगीत-कौशल और नीलिमा की मृदुल एवं नम्र प्रकृति उल्लेखनीय है। उक्त सभी पात्र मध्यवर्गीय शिक्षित समाज से सम्बद्ध हैं, इसी कारण नारी एवं पुरुष-पात्र स्वच्छन्द रूप से मिलते है, सम्भाषण करते हैं तथा अपने जीवन-साथी का स्वयं ही चुनाव करते हैं।

श्रीमती पनिकर ने प्रस्तुत उपन्यास में वर्णन-विवरण-शैली की अपेक्षा संवाद-योजना के माध्यम के कथानक का विकास किया है। पात्रों की चारित्रिक प्रवृत्तियों के प्रकाशन में भी संवादों का योग सराहनीय है। उदाहरणार्थ उपन्यास के प्रारम्भ में वसन्त के

---

1. ठोकर, पृष्ठ ३१

विषय में मृणाल तथा जूही के वार्तालाप में मृणाल की दम्भी, अविवेकी तथा स्वार्थपूर्ण प्रवृत्तियों का तथा जूही की की नम्रता, विवेकशीलता आदि विशेषताओं का सहज तुलनात्मक परिचय प्राप्त होता है।[१] परिस्थिति-वैविध्य के अनुरूप पात्रों की उक्तियों मे भी विविध प्रसगों का समावेश मिलता है। उदाहरणार्थ वसन्त के प्रति मृणाल के प्रारम्भिक संवाद तिरस्कार एवं अवहेलना के सूचक हैं,[२] किन्तु वाद की उक्तियों मे, जब उसने ईर्ष्यावश वसन्त को अपनी ओर आकर्षित करने का निश्चय कर लिया था, उसके प्रति प्रेम एवं प्रशंसा के भाव हैं।[३] जूही के प्रति अटल की उक्तियाँ विशेष भावपूर्ण एवं मार्मिक बन पड़ी है।[४] लेखिका ने संवादों में यथाप्रसंग उक्ति-वैचित्र्य, वाग्वैदग्ध्य तथा तर्कशीलता को भी स्थान दिया है।

'ठोकर' में समकालीन सामाजिक प्रवृत्तियों का प्रत्यक्ष-दर्शन-जनित चित्रण हुआ है, जिसके विषय में श्री राहुल सांकृत्यायन की यह उक्ति द्रष्टव्य है—"रजनी को आधुनिक ढंग के शिक्षित मध्यवर्गीय समाज का बहुत घनिष्ठ परिचय है, परिचय क्या वह उसी वातावरण में पैदा हुई और पली।—रजनी ने उसी समाज तथा उसके स्वच्छन्द वातावरण में अपनी कथा के पात्रों के अभिनय का चित्रण किया है।"[५] किन्तु, यह कहना अनुचित न होगा कि मृणाल के चरित्र में लेखिका ने 'यथार्थ' को अत्यधिक प्रश्रय देने के कारण कलाकार के आदर्श का विस्मरण कर दिया है। यद्यपि आधुनिक उच्च-मध्यवर्गीय परिवारों में मृणाल-जैसे वस्तुवादी दम्भी नारी-चरित्र दुष्प्राप्य नहीं हैं, तथापि साहित्य मे ऐसे पात्रों की सृष्टि श्लाघ्य नहीं कही जा सकेगी; और उसे मद्यपान करते दिखाकर[६] तो लेखिका ने पाठक की यत्किंचित् शेष संवेदना का भी अन्त कर डाला है। यह उपन्यास सन् १९४९ में प्रकाशित हुआ था, जबकि देश की सर्वाधिक ज्वलन्त समस्या पाकिस्तान से आये हुए शरणार्थियों के पुनर्वास की समस्या थी। समाज-सुधारक अटल के संवादों में इसकी यत्र-तत्र चर्चा करके[७] लेखिका ने युग-धर्म का उचित निर्वाह किया है। शरणार्थियों के प्रति वे सर्वत्र समाज-सेविका-जैसी संवेदना से प्रेरित रही है।

प्रस्तुत उपन्यास में लेखिका की दृष्टि निम्नलिखित उद्देश्यों पर केन्द्रित रही है—(अ) शिक्षित मध्यवर्गीय समाज के स्वच्छन्द वातावरण का चित्रण, (आ) भारतीय संस्कारों की प्रतीक ममतामयी नारी एवं पाश्चात्य वस्तुवाद को प्रश्रय देनेवाली स्वार्थपरा नारी के चरित्रों का तुलनात्मक मूल्यांकन, (इ) नारी-मनोविज्ञान का परि-

---

१. ठोकर, पृष्ठ १
२. ठोकर, पृष्ठ १, ७
३-४. देखिये 'ठोकर', (अ) पृष्ठ ४६-४७, १०२, (आ) पृष्ठ ८१-८२, १००-१०१
५. ठोकर, प्रस्तावना से उद्धृत
६. देखिये 'ठोकर', पृष्ठ ९८
७. देखिये 'ठोकर', पृष्ठ ४२, ९०

स्थिति-सापेक्ष सूक्ष्म विश्लेषण; तथा (ई) जीवन के यथार्थ पर आदर्श की विजय का निरूपण। मृणाल तथा जूही उक्त उद्देश्यों की अभिव्यक्ति में केन्द्ररूपा हैं। मृणाल के चरित्र द्वारा यह अभिव्यंजित है कि वस्तुवादी नारी किस प्रकार अपने उदात्त गुणों को तिलांजलि दे देती है और ईर्ष्यावश अपनी सजातीय नारी को ही ठोकर मारने के लिए व्यग्र रहती है। इसी प्रकार जूही के चरित्र में भी नारी-मनोविज्ञान की विविधताओं को ध्यान में रखा गया है।

श्रीमती पनिकर ने 'ठोकर' में प्रायः सरल एवं संक्षिप्त वाक्य-विन्यास पर बल दिया है। 'करेला फिर नीम चढ़ा', 'आसमान से गिरना', 'साँप छुछुन्दर की-सी गति', 'अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारना' आदि मुहावरों[1] के यथाप्रसंग प्रयोग से भाषा का व्यावहारिक स्वरूप निखर उठा है। 'जूही का मन आगे ही भरा हुआ था', 'क्या आगे हम कम हैं' आदि वाक्यों[2] मे 'आगे' का 'पहले' के अर्थ में अशुद्ध प्रयोग हुआ है। 'मैंने तुम्हें क्या पूछा है'[3] जैसे वाक्यों मे सर्वनामों का अशुद्ध प्रयोग भी चिन्तनीय है। लेखिका की शैली में नाटकीय सजीवता सर्वत्र अवलोकनीय है। वर्णनात्मक प्रसंग भी स्वाभाविक, संक्षिप्त एव मार्मिक हैं। उषादेवी मित्रा की भाँति उन्होंने पात्रों के व्यक्तित्व का चित्रण करने के लिए 'मालोपमा' और 'उदाहरण' नामक अलंकारों का प्रायः प्रयोग किया है। उदाहरणस्वरूप ये उक्तियाँ देखिए—

(अ) "जूही वह तो ठीक जूही की तरह कोमल, ओस की तरह ठडी हवा की तरह सुखकर थी।"[4]

(अ) "सूर्य की एक किरण कहीं से आकर प्रिन्स के मुख पर मँडराने लगी। मिनी ने सरसरी दृष्टि से उस ओर देखा जैसे कोई मेले में बिकनेवाले बाँके घोड़े को देखता है।"[5]

२. पानी की दीवार

'पानी की दीवार' श्रीमती रजनी पनिकर का सफल मनोवैज्ञानिक उपन्यास है, जिसके विषय में श्री भगवतीचरण वर्मा की यह उक्ति उल्लेखनीय है—"मुझे इस स्वस्थ और सुन्दर मनोवैज्ञानिक उपन्यास को पढ़कर प्रसन्नता के साथ-साथ सतोष भी हुआ कि हिन्दी-साहित्य की चेतना वास्तविक साहित्यिक सृजन के प्रति सजग है।"[6] इस

---

१. ठोकर, पृष्ठ ४५, ५७, ५८, ५६
२. ठोकर, पृष्ठ ३८, ५७
३. ठोकर, पृष्ठ ६
४. ठोकर, पृष्ठ १५
५. ठोकर, पृष्ठ ३३
६. पानी की दीवार, भूमिका, पृष्ठ ७

उपन्यास का कथानक संक्षिप्त है और इसकी रचना नायिका नीना की आत्मकथा के रूप में हुई है। नीना और उसके बालसहचर राजकुमार का पारस्परिक प्रेम, राजकुमार का उच्च शिक्षा के लिए विदेश जाना, नीना का शिमला-कॉलेज में चित्रकला की शिक्षिका नियुक्त होना और कॉलेज के कार्यवाहक प्रधानाध्यापक दिलीप चौधरी का उसके प्रति आकर्षण इस उपन्यास के कथावृत्त के पूर्व-पक्ष को स्पष्ट करनेवाली घटनाएँ हैं। वस्तुत: उपन्यास की प्रमुख कथा नीना और दिलीप से ही सम्बद्ध है—राजकुमार के व्यक्तित्व और नीना से उसके सम्पर्क की घटनाएँ नीना के संस्मरणों के रूप में चित्रित हैं। दिलीप चौधरी एकान्तप्रिय व्यक्ति हैं, किन्तु उनकी पत्नी करुणा जीवन में आमोद-प्रमोद को आवश्यक मानती है, अत: पति-पत्नी में बाह्य रूप से सौहार्द होने पर भी मानसिक निकटता का अभाव है। इसीलिए एक ओर दिलीप नीना के सौन्दर्य और स्वभाव से प्रभावित हुआ और दूसरी ओर उसके व्यक्तित्व ने नीना को भी प्रभावित किया। यद्यपि दिलीप की पत्नी करुणा और अपने बालसहचर राजकुमार की स्मृतियों ने उसे मर्यादा में रहने को विवश किया, किन्तु फिर भी दिलीप का सम्पर्क उसके मानस में नित्य नूतन संघर्ष की सृष्टि करता रहा। इस मानसिक संघर्ष की प्रतिक्रिया अप्रिय हो सकती थी, किन्तु शिमला-कॉलेज में नीना की नियुक्ति के दो मास उपरान्त ही राजकुमार के विदेश से लौट आने और उक्त कॉलेज के प्रधानाचार्य के पद पर नियुक्त होने से दिलीप ने त्याग-पत्र दे दिया और इस प्रकार नीना के मानसिक संघर्ष की समाप्ति हो गई। कथानक का यह मर्यादापूर्ण अन्त पाठकों को रुचिकर ही प्रतीत होगा, इसमें कोई सन्देह नहीं है। सामान्यत: मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में जिन समाज-विरोधी भावनाओं की अभिव्यक्ति रहती है, श्रीमती पनिकर ने उसे प्रश्रय न देकर शिवत्व का स्वस्थ दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है। कथानक में जिज्ञासा, रोचकता, स्वाभाविकता आदि गुणों के निर्वाह और संरक्षण में उन्हें यथोचित सफलता प्राप्त हुई है।

'पानी की दीवार' में नीना एवं दिलीप प्रमुख पात्र हैं। राजकुमार के व्यक्तित्व को उभरने का उतना अवसर लेखिका ने नहीं दिया। उसके स्वभावादि का यत्किंचित् परिचय तभी प्राप्त होता है जब नीना अपनी परिस्थितियों की गम्भीरता और जटिलता पर विचार करते समय उसका स्मरण करती है। दिलीप की पत्नी करुणा और उसके भाई केशव की विशिष्ट चारित्रिक प्रवृत्तियों के प्रति पाठक अनायास ही आकर्षण का अनुभव करता है। करुणा का चरित्र इसलिए विशेष मार्मिक है कि वह पति को पर-स्त्री के प्रति आकृष्ट होते देखकर सामान्य स्त्रियों की भाँति झगड़ती नहीं अपितु मौन रहकर सहन करती है—केवल केशव ही उसके मन के भेद को जान पाता है। लेखिका ने केशव के चरित्र को विशेष अभिव्यक्ति नहीं दी है, तथापि उसका विनोदप्रिय व्यक्तित्व पाठक को सहज ही प्रभावित कर लेता है। वस्तुत: इस उपन्यास में नीना के मानसिक संघर्ष की अभिव्यक्ति प्रमुख है। दिलीप के मन में भी नीना के सम्पर्क में आने पर द्वन्द्व का आविर्भाव होता है, किन्तु प्रत्यक्ष रूप में चित्रित न होने के कारण उसके प्रति पाठक की

संवेदना जागृत नहीं हो पाती। कहीं-कही लेखिका ने पात्रों की चारित्रिक प्रवृत्तियो की तुलना भी की है। उदाहरणार्थ नीना की इस उक्ति में दिलीप और राज की तुलना देखिए—"यह क्या हुआ दिलीप को—वह मेरे इतने निकट क्यो आना चाहता है, इसकी पत्नी है, और वच्ची है, मेरे पास राज है, मैं भी तो इसके अत्यन्त निकट जाना चाहती हूँ, राज और दिलीप दोनो मे कितनी समानता है। दिलीप राज से कोमल है। स्वभाव में भी, और व्यवहार में भी।"[1] नीना की विचारधारा प्रायः आत्मचिन्तन के रूप में व्यक्त हुई है, किन्तु अन्य पात्रों का व्यक्तित्व उनके संवादों मे भी प्रतिफलित हुआ है। इस दृष्टि से करुणा और नीना के सवाद विशेषतः उल्लेख्य है—करुणा की उक्तियो में उसकी विवशता और वेदना को मानो मूर्त रूप मिल गया है।[2]

इस उपन्यास में वाह्य वातावरण की अपेक्षा मानसिक प्रतिक्रियाओं के चित्रण पर अधिक वल दिया गया है, फिर भी लेखिका ने शिमला के प्राकृतिक सौन्दर्य का प्रसग-वश अनेक स्थानो पर चित्रण किया है। उदाहरणस्वरूप यह उक्ति देखिए—"इन्हीं खुली खिड़कियों में से मैं दिन को उजले-काले वादल देखा करती हूँ। दूर-सुदूर आकाश से मिले हुए भूरे पहाड़, जो सुना है वरसात मे हरे-भरे लगते है। साथ ही देखती हूँ रेल की सड़क, वल खाती हुई, पहाड़ो का कलेजा चीरती हुई स्टेशन के पास आकर समाप्त हो जाती है।"[3] शिमला के प्रकृति-चित्रों के अतिरिक्त उन्होंने वहाँ के जन-जीवन का भी रोचक वर्णन किया है। पहाड़ी पुरुषों और स्त्रियों की वेशभूषा और स्वभावादि का उल्लेख करने के अतिरिक्त उन्होने पर्यटकों, कुलियों आदि की प्रवृत्तियों की भी प्रसगानुरूप चर्चा की है। शरणार्थी होने के नाते श्रीमती पनिकर ने अपने उपन्यासों में प्रायः भारत-विभाजन की प्रासंगिक रूप मे चर्चा की है। प्रस्तुत उपन्यास की यह उक्ति भी ऐसी ही है—"विभाजन के वाद पंजावी सभ्यता में धरती-आकाश का अन्तर आ गया है।"[4] इस उपन्यास में लेखिका का उद्दिष्ट जीवन का विश्लेषण करना है। इसके लिए उन्होंने पात्रों के अन्तर्द्वन्द्व और परिस्थितियों के घात-प्रतिघात की समुचित योजना की है, किन्तु द्वन्द्वमूलक अमर्यादित चित्र प्रस्तुत करने की ओर उनकी प्रवृत्ति नही रही है। मानसिक जगत् के आरोह-अवरोह का चित्रण करने के प्रसग में वे वाह्य जगत् के प्रति सर्वथा उदासीन नही रही है। निर्धन वर्ग के प्रति उनके मन में गहन संवेदना है, जो समय-समय पर व्यक्त होती रही है। ग्यारह वर्ष के भिखारी वालक की दयनीय स्थिति, रिक्शावालों के प्रति अभिजातवर्गीय व्यक्तियों का अन्याय, तिब्वती कुलियों की निर्धनता आदि के प्रति नीना की सहानुभूतिपूर्ण विचारधारा इस कथन का प्रमाण है।"[5]

श्रीमती पनिकर ने इस उपन्यास में व्यावहारिक भाषा-शैली को स्थान दिया है।

---

१. पानी की दीवार, पृष्ठ ६३-६४
२-३. देखिये 'पानी की दीवार', (अ) पृष्ठ ८९-९२, १४६-१४७ (आ) पृष्ठ १०
४-५. देखिये 'पानी की दीवार', (अ) पृष्ठ ४१, (आ) पृष्ठ ३३, ८०, १४३

इसीलिए उनकी भाषा में कहीं-कहीं पंजाबी-शब्दावली का प्रभाव भी लक्षित किया जा सकता है। 'प्याली मुँह को लगाई ही थी'[1] जैसे वाक्यों का प्रयोग इसका उदाहरण है। इस उपन्यास की शैली मुख्य रूप से वर्णनप्रधान है, किन्तु उसे व्यंग्य शैली एवं सूक्ति-मयी शब्दावली के द्वारा गम्भीर और प्रभावपूर्ण बनाया गया है। सूक्ति शैली का एक उद्धरण अवलोकनीय है—"अहम् गुण न होते हुए भी कई बार हमें विषम परिस्थितियों से बचा लेता है, क्योंकि वह हमारे रहस्य नहीं खुलने देता।"[2]

हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यासों की शृंखला मे 'पानी की दीवार' का महत्त्व-पूर्ण स्थान है। कथावस्तु का संक्षेप इस उपन्यास की दुर्बलता है, किन्तु स्वस्थ मनो-वैज्ञानिक चरित्र-चित्रण ने उक्त दोष का पर्याप्त सीमा तक मार्जन कर दिया है। दिलीप के अहं को 'पानी की दीवार' की सज्ञा दी गई है, जो ठोस प्रतीत होने पर भी नीना के सम्पर्क से तरल बन जाती है। वैसे, यदि शीर्षक का सम्बन्ध नीना के जीवन से रहता तो अपेक्षाकृत अधिक उपयुक्त होता। यह उपन्यास अत्यन्त रोचक है, और यही इसकी सफलता की मुख्य कसौटी है। डॉ० प्रतापनारायण टंडन के शब्दों मे, 'उपन्यास आत्म-चरितात्मक शैली में लिखा गया है, जिसके फलस्वरूप उसकी प्रभावात्मकता में वृद्धि हो गई है।"[3] हम इससे सहमत हैं।

३. मोम के मोती

प्रस्तुत उपन्यास मे एक तेजस्विनी युवती माया की जीवन-कथा अंकित है, जो अपने परिवार के आर्थिक कष्टो के कारण सेठ धनपति की विज्ञापन-फर्म में नौकरी करने को विवश हुई। उसकी कार्य-पटुता ने सेठ जी के व्यापार को बहुत उन्नत किया और परिणामस्वरूप उसकी आय भी बढ़ती गई। इतना होते हुए भी माया प्रसन्न न थी, क्योंकि अपने हृदय के उच्छ्वासों को दबाकर उसे कृत्रिम जीवन व्यतीत करना पड़ता था। उसके जीवन में तीन पुरुष आए—पहला था उसका बाल्य साथी कैलाश, जिसने माया के पिता की आज्ञा मानकर कायरतापूर्वक अन्यत्र विवाह कर लिया। दूसरा व्यक्ति था कवि मधुकर, जो अपने मन की शान्ति के लिए माया के प्रेम का आश्रय खोजता था, किन्तु समय-समय पर सेठ धनपति को लेकर उसका अपमान कर बैठता था और उसे धन-लोलुप समझकर व्यंग्य करता था। उसकी इस प्रवृत्ति से पीड़ित होकर माया ने उससे सम्बन्ध-विच्छेद करके विवाह के विचार को त्याग दिया। तीसरा व्यक्ति था राजन, जो एक श्रमिक स्त्री से सेठ धनपति का अवैध पुत्र था। उसकी सौम्य प्रकृति और समाज-सुधार की प्रवृत्ति माया की प्रवृति के समकक्ष थी। अन्त में राजन ने उसे पत्नी-रूप में ग्रहण करके उसके समस्त कष्टों का अन्त कर दिया।

१-२. देखिये 'पानी की दीवार', (अ) पृष्ठ ५१, (आ) पृष्ठ ७४

३. हिन्दी उपन्यास का उद्भव और विकास, पृष्ठ २८४

उक्त प्रमुख कथानक के अतिरिक्त मेजर कबाड़, मधुकर के भाई सुधाकर, चम्पा, विन्दिया, ऐलिस, विमला आदि विभिन्न पात्रों की जीवन-घटनाओं का प्रासंगिक उल्लेख हुआ है जिनसे पुरुष की नारी के प्रति कामुकता, छल, भ्रमर-वृत्ति, विश्वासघात, स्वार्थ आदि विभिन्न कुरूपताओं का भण्डाफोड़ किया गया है। उपर्युक्त सभी पात्र-पात्राएँ मित्र, सखी, दासी आदि किसी-न-किसी रूप में माया के साथ सम्बद्ध हैं। अतः कहना न होगा कि प्रासंगिक कथाएँ मूल कथा के पार्श्व मे विकसित हुई है। सुधाकर ने माया की भगिनीतुल्या धनी सखी कला से प्रेम-विवाह किया, किन्तु बाद में नारी-आश्रम से चम्पा को लेकर भाग गया। बाद में माया की प्रेरणा से वह पुनः कला के संसर्ग मे आ गया। इसी प्रकार अन्य प्रासंगिक कथाएँ भी पुरुष की हृदयहीनता का पर्दाफाश करती प्रतीत होती हैं। श्रीमती पनिकर की यह सामान्य प्रवृत्ति है कि वे अपने उपन्यासों मे प्रासंगिक लघुकथाओं को अत्यधिक प्रश्रय देती है। सभी प्रासगिक कथाओं का उद्देश्य लगभग समान है, अतः उनका संख्या-विस्तार कई बार पाठक के मस्तिष्क पर भार-स्वरूप बन जाता है।

प्रस्तुत उपन्यास को यदि हम चरित्रप्रधान रचना कहें तो अनुचित न होगा। इसमें अनेक पात्र है, जिन्हें हम सुविधा के लिए दो वर्गो में विभक्त कर सकते हैं—पुरुष पात्र तथा नारी पात्र। पुरुष पात्रों में सेठ धनपति, मेजर कबाड़, मधुकर, कैलाश, जान, सुधाकर तथा राजन उल्लेखनीय हैं। राजन के अतिरिक्त सब पुरुष पात्रों को लेखिका ने एक ही साँचे में ढालकर तैयार किया है। स्वार्थ-पूर्ति तथा नारी के प्रति विश्वासघात इनकी प्रमुख विशेषताएँ है। सेठ धनपति पत्नी तथा बच्चों के होते हुए भी अपने सम्पर्क में आनेवाली मातहत नारियो के साथ अवैध सम्बन्ध स्थापित करते हैं। अपने धन के बल पर वे माया का सतीत्व लेना चाहते हैं, किन्तु सफल न होने पर झुँझलाते हैं। मेजर कबाड़ अपनी विवाहिता पत्नी ज्योत्स्ना को अपढ़ कहकर त्याग देते है और माया, अनीता आदि रमणियों से सम्पर्क बढ़ाना चाहते है। माया के शब्दों में, "कबाड़ पुरुषो की उस नीच श्रेणी का कीटाणु है, जो रोग फैलाने में कोई क़सर नही छोड़ते।"[1]

मधुकर सेठ धनपति तथा कबाड़ का किंचित् रूपान्तर है जो भावना के लोक में रहता है, किन्तु माया की भावनाओ को समझने का यत्न नहीं करता। कैलाश ने पिता के भय से माया को न अपनाकर कायरता का परिचय दिया है। सुधाकर ने पत्नी कला के होते हुए भी चम्पा के प्रसग में जिस 'नवीनता' की चाह को व्यक्त किया है, वह भी अपने आप में एक सशक्त व्यंग्य है। राजन के अतिरिक्त प्रायः अन्य सभी पात्रो ने ऐसी ही चारित्रिक दुर्बलताओं का परिचय दिया है। माया की सेविका विन्दिया का पति एक मेहतरानी को लेकर भाग जाता है। जान भी ऐसा ही पात्र है, जो एलिस के बच्चे का

---

१. मोम के मोती, पृष्ठ १५०

पिता बनकर भी उससे विवाह नहीं करता। इस प्रकार लेखिका ने पुरुषों की कामुकता और अनुत्तरदायित्व का खुलकर विरोध किया है। श्री कैलाश कल्पित के एक प्रश्न के उत्तर में श्रीमती पनिकर ने इस सम्बन्ध में अपने विचारों को इन शब्दों में व्यक्त किया था—"पुरुष प्रत्येक महिला को अपनी पत्नी के रूप में देखने की प्रवृत्ति छोड़ दे। यह एक ऐसी भावना है जो अच्छे-अच्छे साहित्यकारो और विचारकों में भी पाई जाती है। वे एक बार उसे अपने व्यक्तित्व के आगे झुकाने का प्रयास अवश्य करते है। इस प्रवृत्ति का निवारण पुरुष वर्ग से होना ही चाहिए।"[1] 'मोम के मोती' में लेखिका ने इसी धारणा को मूर्त रूप दिया है।

नारी पात्रो में सबसे सबल व्यक्तित्व माया का है। पुरुष की शोषण-प्रवृत्ति के विरुद्ध वह मोर्चा लेती-सी प्रतीत होती है। मधुकर-जैसे अहंकारी पुरुषों को भी उसका सहारा लेना पड़ता है। सेठ धनपति के मन में सदैव यह विचार कसकता रहा कि "माया अभी तक अछूती है।"[2] माया के इस सशक्त चरित्र ने राजन-जैसे पारखी के मन को मुग्ध कर लिया। माया की सखी कला तथा एलिस ममतामयी नारियाँ हैं जो पुरुष को केवल निश्छल प्रेम ही समर्पित करती हैं। चम्पा का चरित्र अत्यन्त मनोवैज्ञानिक है। वह पति द्वारा त्यक्ता है। कला का स्नेह पाकर वह उसकी अनुपस्थिति में उसी के पति सुधाकर के साथ भाग जाती है। लेखिका ने इस काण्ड मे चम्पा की अपेक्षा सुधाकर को अधिक दोषी ठहराया है। चम्पा की इस पतित वृत्ति का कारण उसकी परिस्थितियों को बताया गया है। माया की सेविका बिन्दिया अपने निम्न वर्ग के अनुरूप पुरुष की विशेष चिन्ता नहीं करती। पति मेहतरानी को लेकर भाग जाता है तो वह उसे पुनः पाना चाहती है, किन्तु बाद में स्वय भी किसी अन्य पुरुष से विवाह कर लेती है।

श्रीमती पनिकर ने परिस्थिति, संवाद आदि परोक्ष शैलियो के अतिरिक्त प्रत्यक्ष शैली में भी पात्रो की विशेषताओं को व्यक्त किया है। उदाहरणार्थ मधुकर का चरित्र देखिये—"मधुकर का मुख चिन्तित था। गौर वर्ण जैसे काला पड़ गया था। उसके विचार संकीर्ण थे। मर्यादा की भावना, साधारण लोगों से बढकर थी। कवि होने से वह संवेदनशील भी था।"[3] लेखिका ने पुरुषों में प्रायः दोष ही छाँटे हैं जबकि स्त्रियों मे प्रायः गुणो का विकास दिखाया है। चरित्र-चित्रण की यह रीति पक्षपातपूर्ण तथा एकांगी है। यद्यपि यह सत्य है कि कई प्रसंगों में लेखिका का दृष्टिकोण सही हो सकता है, किन्तु उसे हम सार्वभौमिक तथा सार्वकालिक नही मान सकते। हाँ, यह निर्विवाद है कि उन्हें नारी पात्रो के मनोविज्ञान का सूक्ष्म ज्ञान है।

श्रीमती पनिकर पात्रों के पारस्परिक वार्तालाप का विधान करने मे विशेष पटु

---

१ साहित्य साधिकाएँ (कैलाश कल्पित), पृष्ठ १०८
२. मोम के मोती, पृष्ठ १२१
३. मोम के मोती, पृष्ठ ११३

हैं। किस स्थिति में कौन-सा पात्र किस प्रकार की उक्ति कह सकता है, इसका उन्हें उपयुक्त बोध है। यही कारण है कि पूर्व-विवेचित उनकी अन्य कृतियों की भाँति प्रस्तुत उपन्यास में भी रोचक, संक्षिप्त एवं प्रभावपूर्ण संवादों का समावेश हुआ है। उदाहरण के लिए मधुकर तथा माया का वार्त्तालाप द्रष्टव्य है—

"तुम मायाविनी हो।"
"आप उस पर मोहित हैं।"
"बड़ा दम्भ है।"
"नहीं, अन्तर्दृष्टि है।"
"यह भी दम्भ है।"
"नहीं, विवेक है।"[1]

उक्त संवाद संक्षिप्त होते हुए भी नाटकीय रोचकता से पूर्ण हैं। व्यंग्य के पुट ने माया की उक्तियों को विशेष प्रभावपूर्ण बना दिया है। इसी प्रकार मेजर कबाड़ से बातें करते हुए भी माया की उक्तियों में व्यंग्य का भाव विशेष प्रबल रहा है।[2] यह उल्लेखनीय है कि लेखिका ने कथानक को गति देने में संवादों का विशेष आश्रय नहीं लिया, किन्तु पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं के प्रकाशन में तथा समकालीन सामाजिक स्थिति की अभिव्यक्ति में उनके कथोपकथन विशेष रूप से योग-दान देते हैं।

'मोम के मोती' मे मुख्य रूप से 'कामकाजी स्त्रियों की समस्या को ग्रहण किया गया है। माया के शब्दों में, "आज हमारे समाज की व्यवस्था बदल गई है। पहले एक पुरुष परिवार भर की नारियों का भार अपने ऊपर ले लेता था। आज अपना पति भी भार लेने को तैयार नही। भाई हो, तो वह भी मुँह चुराता है।"[3] पुरुष की इसी कर्त्तव्य-विमुखता के कारण नारी को नौकरी करनी पड़ती है। परिवार के भरण-पोषण का भार भी कहीं-कहीं आज नारी के कन्धों पर आ पड़ा है। नारी उसका साहस से निर्वाह करना चाहती है, किन्तु इसके परिणाम उसके पक्ष में अच्छे नही होते। "लगातार नौकरी करने से नारी-जीवन की आत्मसत्ता जाती रहती है। नारी-हृदय की कोमल वृत्तियों का विनाश हो जाता है। दिन-रात अफ़सरों की खुशामद और ऑफ़िस के सहकर्मियों की त्रुटियाँ पकड़ने की धुन में रहते रहते मन की कोमल भावनाएँ दग्ध हो जाती हैं। यहाँ तक कि आफ़िस के क्षुद्र घेरे से दूर पहुँचनेवाली दृष्टि भी बिल्कुल क्षीण पड़ जाती है।"[4] किन्तु, पुरुष-समाज को इससे क्या? वह तो नारी को अपनी स्वार्थपूर्ति का साधन मात्र समझता

---

१. मोम के मोती, पृष्ठ ४४
२. देखिये 'मोम के मोती', पृष्ठ ६६
३. मोम के मोती, पृष्ठ ९२
४. मोम के मोती, पृष्ठ ९४

है। सेठ धनपति तथा मेजर कवाड़-जैसे पुरुष माया-जैसी कामकाजी स्त्रियों को अपनी भोग्या समझते हैं। मधुकर-जैसे पुरुष आवश्यकता पड़ने पर उसका सम्बल लेने दौड़ते हैं और वैसे "काफी हाऊस में, रेस्तरां में, बैठकर वह माया-जैसी नारियों की आलोचना करता है। उनके चरित्र पर लांछन लगाता है।"[1] इस प्रकार प्रत्यक्ष है कि श्रीमती पनिकर ने बदली हुई सामाजिक व्यवस्था में नारी की विडम्बना का मूल कारण पुरुष को माना है। 'कामकाजी' स्त्रियों को कितनी सामाजिक लांछना सहनी पड़ती है, इसका भी अनेकशः उल्लेख हुआ है। माया सेठ धनपति की नौकरी करके भी अपने सतीत्व को सुरक्षित रखती है, किन्तु दुनिया की दृष्टि में उसकी संज्ञा 'सेठ धनपति की रखैल' के अतिरिक्त और कुछ नही। नारी-जाति के लिए यह कितना भयंकर अभिशाप है कि वह सम्मानपूर्वक जीविकोपार्जन भी नहीं कर पाती।

श्रीमती पनिकर ने इस उपन्यास मे माया की विचारधारा के माध्यम से श्रमिक वर्ग के जीवन की विडम्बनाओं का भी मार्मिक उल्लेख किया है। यथा—श्रमिकों द्वारा अपनी कमाई शराब, सिगरेट तथा सिनेमा मे फूंकना, उनकी पत्नियो का अपनी कमाई से घर का खर्चा चलाना, पेट भर खाने को तरसना, रुग्णावस्था में पतियों द्वारा उपेक्षा आदि।[2] दूसरी ओर कला और सुधाकर की व्याह-पार्टी के वर्णन के माध्यम से अभिजात वर्ग के जीवन की भी व्यंग्यपूर्ण झलक दिखाई गई है। यथा—महिलाओं द्वारा आभूषणों तथा मूल्यवान् वस्त्रो से शृंगार, सिविल अफसरों की पत्नियों तथा फ़ौजी अफ़सरों की पत्नियों का अपने पृथक् गुट में खड़े होकर एक-दूसरे गुट की स्त्रियों की आलोचना करना, स्त्रियों द्वारा मद्यपान, पुरुषों के साथ निर्लज्ज नृत्य आदि।[3] प्रकृति-चित्रण की अपेक्षा लेखिका को मानव-प्रकृति के विश्लेषण का अधिक चाव है। फिर भी प्रस्तुत कृति मे कला द्वारा माया को लिखे गए पत्रो में काश्मीर की सुषमा के वर्णन के लिए लेखिका ने पर्याप्त अवकाश निकाल लिया है। वहाँ के पुष्पों, पर्वतों, वृक्षों, स्रोतों आदि की छवि का मोहक वर्णन किया है।[4]

'मोम के मोती' में वर्तमान नागरिक सभ्यता का व्यंग्यपूर्ण चित्र अंकित किया गया है। माया आर्थिक अभाव से विवश होकर अपनी जीविका कमाने निकली थी, किन्तु नागरिक जीवन ने उसकी आकांक्षाओं मे अत्यधिक वृद्धि की और वह अपने परिवार के सदस्यों के लिए ऐश्वर्य के साधन जुटाने के नये हथकंडे सीखने लगी—कृत्रिमता का वह अभिनय उसे करना पड़ता, जिसके लिए उसकी आत्मा उसे कोंचती रहती। अन्त में 'मोम के मोती' के सदृश कृत्रिम जीवन की उस पर क्या प्रतिक्रिया हुई, यह द्रष्टव्य है—

---

१. मोम के मोती, पृष्ठ ११२
२-३. देखिये 'मोम के मोती', पृष्ठ ५०,५६-५६
४. देखिये 'मोम के मोती', पृष्ठ ७१-७२

"माया को शहर के जीवन, इसके दाँव पेचों से घृणा हो गई थी। काश ! उस समय उसे सेठ धनपति का ऋण न देना होता तो वह गाँव के उन्मुक्त वातावरण में चली जाती। चाहे उसे गाँव में जाकर केवल लड़कियों को पढ़ाना पड़ता, वहाँ इतने रुपये भी न मिलते। रुपये की अब उसे अधिक चिन्ता भी न थी। रुपया, कीमती साड़ियाँ, आभूषण उसे लगता था, जैसे जी का जंजाल है। घर पर रहनेवाली स्त्रियाँ सोचती हैं काश उनके पास नौकरी होती। वे भी अपनी नौकरीपेशा बहिनों की तरह स्वच्छन्द होती। माया बहुत-सी महिलाओं के सम्पर्क मे आई है, जिनकी ऐसी इच्छा है, कि वे भी काम करे। वे अपने निजी व्यक्तित्व का विकास चाहती है, अपने निजत्व का विकास चाहती है, अपने निजत्व को बँटाना चाहती है। वह नही जानती यह सब झूठ है, मिथ्या भावना है। इस जीवन की शोभा और आब मोम के मोतियों की तरह है, जो देखने में अतीव सुन्दर लगते हैं। व्यवहार में लाने से पता चल जाता है, उनमें कुछ भी नहीं, वह पिघलकर मोम की तरह बन जाते हैं।"[1]

आलोच्य कृति के शीर्षक में उपन्यास के उद्देश्य को सार-रूप मे समाहित कर दिया गया है। लेखिका की दृष्टि में 'कामकाजी' नारी की समस्या को जटिल बनानेवाला पुरुष समाज है, जो नारी को केवल भोग्या समझकर उससे सम्पर्क रखता है और अपनी इच्छा-पूर्ति में बाधा देखकर झुंझला उठता है, नारी का उपहास करता है, उसे लांछित करता है। इस दिशा में लेखिका का दृष्टिकोण एकांगी तथा पक्षपातपूर्ण है, इसमें कोई सन्देह नही।

श्रीमती पनिकर ने अन्य उपन्यासों की भाँति 'मोम के मोती' में भी मुहावरेदार प्रवाहपूर्ण भाषा का प्रयोग किया है। उर्दू-शब्दों के अतिरिक्त उन्होंने अंग्रेजी के प्रचलित शब्दों का भी अनेक स्थलों पर प्रयोग किया है। उपन्यास की शैली प्रसादगुणमयी, मनोविश्लेषणात्मक तथा व्यंग्यपूर्ण है। ऐसे स्थलों पर लेखिका के भाव-बोध और अभिव्यंजना-कौशल का अच्छा समाहार हुआ है। उदाहरणार्थ यह उक्ति देखिए—"माया उसके मुख पर आनेवाले भावान्तर को देख रही थी। वह यह समझती है कि मधुकर इस समय यह चाहता है कि माया उससे पूछे, 'क्या बात है, तुम इतने चिन्तित क्यों हो ?' यह भी पुरुष का एक रूप है, मुँह उठाये चले आते है कि नारी इन्हें स्नेह से दुलारे, पुचकारे। शायद ऐसे व्यक्ति जीवन भर बच्चे बने रहते हैं। यदि नारी से बात करते भी हैं तो खीझकर, व्यंग्य कर, जैसे उसके सिर पर एहसान कर रहे हों।"[2]

४. प्यासे बादल

इस उपन्यास मे कोठियों में रहनेवाले उच्च मध्यम वर्ग और सड़कों के किनारे

---

१. मोम के मोती, पृष्ठ १६१
२. मोम के मोती, पृष्ठ ११३

तथा पुल के नीचे जीवन व्यतीत करनेवाले भिखारी वर्ग के स्तर-वैषम्य का तुलनात्मक चित्रण करते हुए रोज़शीला के जीवन एवं चरित्र द्वारा यह संकेत दिया गया है कि यदि समाज का कोढ़ समझे जानेवाले लोगों के साथ सहानुभूति एवं आदर का व्यवहार किया जाए तो वे भी यथार्थ शब्दों में 'मानव' बन सकते हैं। उपन्यास का कथानक नगर की एक उच्च अट्टालिका से प्रारम्भ होता है, जिसमें उच्च मध्य वर्ग का प्रतिनिधि जयन्त और उसका परिवार रहता है—उसका छोटा तथा अपाहिज भाई बलराज, चचेरी बहिन कान्ता, वह स्वयं, नौकर-चाकर और एक कुत्ता टामी। तभी टामी की प्लेट से भोजन चुरानेवाली रोज़शीला कथा में प्रविष्ट होती है। वह पुल के नीचे झोंपड़ी में रहनेवाली एक निराश्रिता है। उसकी माता किसी धनी घराने में आया थी, वहीं रहकर उसने पुत्री को एक अच्छी पाठशाला में शिक्षा दिलाई थी, किन्तु दुर्भाग्यवश माता और पुत्री को निकाल दिया गया और रोज़शीला मैट्रिक तक पढ़कर भी परीक्षा न दे सकी। माता की मृत्यु के बाद वह सर्वथा निराश्रिता थी। जयन्त ने उसे आश्रय दिया और उसका सच्चा प्रेम एवं सहानुभूति पाकर वह शीघ्र ही एक सुसंस्कृता रमणी बन गई। जयन्त उससे विवाह भी करना चाहता था, किन्तु उसके समझाने पर जयन्त ने सामाजिक मर्यादा का निर्वाह करते हुए अपनी वाग्दत्ता बेला से विवाह कर लिया। 'जया' को जन्म देते ही दुर्बल बेला की मृत्यु हो गई। अब पुनः शीला और जयन्त के प्रेम को विवाह में परिणत होने का सुअवसर मिला, किन्तु बलराज का क्रोध एवं ईर्ष्या बाधक सिद्ध हुई। उसे सुखी करने के लिए जयन्त ने उसका तथा जया का भार शीला पर छोड़कर विदेश-भ्रमण का कार्यक्रम बनाया; और यहीं पर कथानक का अन्त हो जाता है।

'प्यासे बादल' का कथानक प्रायः एक वर्ष की घटनाओं का विस्तार है। लेखिका ने कथानक को सहज एवं मार्मिक रीति से विकसित किया है। उसमे रोचकता है; और है सहजता का अपूर्व माधुर्य। जिन समस्याओं को उक्त कथानक में मुखरित किया गया है, वे नितान्त मौलिक हैं और उनके समाधान की दिशा में जो संकेत प्रस्तुत किये गए हैं उनमें 'मर्यादा' का सर्वत्र ध्यान रखा गया है। कथानक का आधार स्वार्थ न होकर सहानुभूति और त्याग है। उपन्यास में पात्रों का चरित्र-विकास अत्यन्त सहज एवं मनोवैज्ञानिक रीति से हुआ है। जयन्त के घर जाने के पूर्व कथानायिका रोज़शीला अपने स्वार्थ को विशेष महत्त्व देती है, क्योंकि जिन परिस्थितियों में वह पली थी, वहाँ उसे कटुता, तिक्तता एव स्वार्थ के ही दर्शन हुए थे। जयन्त द्वारा प्रेम एवं सद्भावना पाकर उसके हृदय के अनुदात्त भाव परिष्कृत होकर कोमलता एवं त्याग में परिणत हो जाते हैं। उसे जयन्त का वह सच्चा प्रेम प्राप्त होता है, जो कान्ता और बेला भी नहीं पा सकीं। किन्तु, अभावग्रस्त होने पर भी वरदान-रूप में प्राप्त हुए प्रेम को शीला त्याग देती है—जयन्त की सामाजिक मर्यादा एवं प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए। पुल के नीचे जीवन-यापन करनेवाले अभावग्रस्त वर्ग की प्रतिनिधि 'वह' धनी की गर्वीली पुत्री बेला एवं स्वच्छन्द प्रकृति की कान्ता से कितनी ऊँची है! परेश और कान्ता अनेक प्रयास

करके भी उसके चरित्र को पतन की ओर ले जाने में असफल रहते हैं।

जयन्त उपन्यास का नायक है। रोजशीला तथा कान्ता को आश्रय देने में उसकी उदारता व्यक्त हुई है तथा अपाहिज भाई के लिए स्नेह उसका अप्रतिम गुण है। इसके अतिरिक्त रोजशीला की प्रेरणा से भी उसकी आत्मा में बीज-रूप में निहित गुणों का विकास होता है—वेला से प्रेम न होने पर भी वह उससे इसलिए विवाह करता है क्योंकि शीला द्वारा समझाने पर वह सामाजिक मर्यादा से उद्भूत कर्त्तव्य-भावना को महत्त्व देने लगता है। इस प्रकार जयन्त की अधिकांश विशेषताएँ शीला के चरित्र द्वारा प्रेरित रही हैं। उपन्यास के अन्य पात्रों में कान्ता के चरित्र द्वारा लेखिका ने वर्तमान नारी-वर्ग के एक समस्यामूलक रूप को अभिव्यक्ति दी है। स्वतन्त्र जीविकोपार्जन करने-वाली कन्याएँ बड़ी आयु में विवाह करना स्वीकार करती हैं; किन्तु विवाह के पश्चात् पति से सामंजस्य रखना उनके लिए कठिन हो जाता है, क्योंकि उनके विचार परिपक्व हो जाते हैं और वे 'झुकती' नहीं। प्रायः परिणाम यह होता है कि वे पति से पृथक् रहती हैं, किन्तु सुख तब भी नहीं मिलता। ऐसी अवस्था में तलाक होते हैं, किन्तु लेखिका ने कान्ता को परिस्थिति-विवश होकर पति के समीप पुनः लौटने की स्थिति का चित्रण करके उक्त समस्या का मर्यादापूर्ण समाधान प्रस्तुत किया है।

श्रीमती पनिकर ने बलराज, वेला, परेश आदि अन्य पात्रों को एक ओर वर्ग-विशेष के प्रतीक-रूप में प्रस्तुत किया है और दूसरी ओर व्यक्ति-वैचित्र्य के अनुसार उनकी विशेषताओं को भी उभारा है। वे मनोवैज्ञानिक एवं वर्गानुकूल चरित्र-चित्रण में विशेष सफल रही हैं। विशेषतः रोजशीला की विशेषताओं का उठान अत्यन्त स्वाभाविक गति से हुआ है। उसके चरित्र की मार्मिकता एवं आदर्श प्रवृत्तियाँ स्वतः ही पाठक को आकृष्ट कर लेती हैं। उसके संवादों में उसकी चारित्रिक दृढ़ता की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है। उदाहरणार्थ जयन्त के प्रति यह उक्ति देखिए—"आप समझते हैं कि भरपेट रोटी पाकर मेरा दिमाग आसमान पर चढ़ गया है। ऐसी बात नहीं है जयन्त बाबू। लोभ का, मोह का, कर्त्तव्य के सामने झुकना आसान नहीं है। मेरे हृदय का ज्वालामुखी हृदय के भीतर भले ही मुझे झुलस दे, परन्तु कर्त्तव्य तो यही था कि आप जैसा अब करने जा रहे हैं वैसा ही करते।"[1] इसी भाँति अन्य पात्रों के संवादों में भी उनकी मानसिक कुंठा, वेदना, अन्तर्द्वन्द्व, कृतज्ञता आदि भावनाएँ सर्वथा मूर्तिमान् रही हैं।

श्रीमती रजनी पनिकर अपने चतुर्दिक् वातावरण के प्रति अत्यन्त जागरूक रही हैं और उन्होंने अपने कथा-साहित्य में वर्तमान समाज की नितान्त ज्वलन्त समस्याओं को स्थान दिया है। उच्च मध्य वर्ग की समस्याएँ उनके उपन्यासों का प्रिय विषय हैं। आलोच्य उपन्यास में 'जयन्त का घर' ऐसे ही वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है। यद्यपि जयन्त लखपति नहीं है, तथापि उनके घर में सुखपूर्ण जीवन-यापन के सर्व साधन सुलभ हैं।

---

१. प्यासे बादल, पृष्ठ १६५

उनके कुत्ते को जैसा पौष्टिक एवं रुचिकर भोजन सुलभ है, उससे निम्न वर्ग के लोग जीवन भर वंचित रहते हैं। लेखिका ने रोजशीला के प्रति जयन्त की सहृदयता का चित्रण करके वर्ग-वैषम्य को दूर करने की आवश्यकता का आदर्श प्रतिपादन किया है। कान्ता के चरित्र के माध्यम से स्वच्छन्द विचारोंवाली वर्तमान नारी को यह शिक्षा दी गई है कि भौतिक तृष्णाओं के आवेग में पति और गृहस्थी की उपेक्षा करना उचित नहीं है। परेश वर्तमान काल के पथभ्रष्ट युवक वर्ग का प्रतिनिधि है और उसका चरित्र इस बात का प्रमाण है कि ऐसे युवकों का भविष्य उज्ज्वल नहीं होता। दूसरी ओर, धनी परिवार की युवतियों का जीवन कितना कृत्रिम, अकर्मण्य एवं खोखला है, इसका परिचय लेखिका ने बेला के चरित्र से दिया है। उदाहरणस्वरूप यह व्यंग्यपूर्ण चित्र द्रष्टव्य है—"आखिर बेला में क्या कमी है? सीनियर कैम्ब्रिज की परीक्षा में फ़ेल हो गई है तो क्या? उसे कौन-सी नौकरी करनी है? एक सफल पत्नी में जितने गुण होने चाहिएँ, वे सब बेला में हैं। वह खूबसूरती से मुस्करा सकती है, जिस व्यक्ति के सामने मुस्करा रही हो वह चाहे उस मुस्कराहट के योग्य हो या न हो। वह सुन्दर कपड़े और गहने पहन सकती है। बढ़िया 'मेकअप' इस्तेमाल करने के सब तरीके जानती है। ब्रिज खेल सकती है। पार्टी में बैठकर बड़ी से बड़ी गप्प हांक सकती है। नौकरों को डांटना भी जानती है।"[१]

श्रीमती पनिकर ने रोजशीला के परिस्थिति-प्रेरित चरित्र-विकास द्वारा यह सिद्ध किया है कि यदि समाज के कोढ़ समझे जानेवाले पात्रों के साथ सरल एवं सहज व्यवहार किया जाय तो वे भी समाज के प्रतिष्ठित सदस्य बन सकते हैं। अभाव, क्षुधा एवं वेदना की पृष्ठभूमि में विकसित होने से ऐसे पात्रों का व्यक्तित्व बड़े घर के पात्रों की अपेक्षा अधिक स्पृहणीय एवं उज्ज्वल होता है। उपर्युक्त उद्देश्य की अभिव्यंजना के लिये ही 'प्यासे बादल' की रचना हुई है और कहना न होगा कि जयन्त के घर आने के पूर्व से जयन्त के आश्रय में आने के बाद तक की घटनाओं की छाया में रोजशीला के चरित्र का जो मनोवैज्ञानिक सहज विकास-क्रम एवं रुचि-परिवर्तन लेखिका ने चित्रित किया है, उसमें उन्हें आशातीत सफलता प्राप्त हुई है। उद्देश्य-पूर्ति की दिशा में यह उनकी सराहनीय उपलब्धि है।

रजनी जी ने अपने अन्य उपन्यासों की भाँति 'प्यासे बादल' में भी व्यावहारिक भाषा-शैली का प्रयोग किया है। इसमें वाक्य लघु तथा सुव्यवस्थित हैं और नाटकीय तारतम्य ने शैली को और भी अधिक सजीवता प्रदान की है। "प्रेम नारी के लिए सौभाग्य होता है। उसके जीवन की महत्त्वपूर्ण घटना होती है।"[२] आदि वाक्यों ने अभिव्यंजना-पक्ष में यथोचित गाम्भीर्य का समावेश किया है। लेखिका की शैली में एक विशेष प्रवाह है

---

१. प्यासे बादल, पृष्ठ २२७
२. प्यासे बादल, पृष्ठ १५३

और साथ ही भावों को वहन करने की अनुकूलता भी लक्षित होती है। पात्रों के मनोभावों का विश्लेषण अथवा चित्रण करते समय उनकी शैली विशेष मार्मिक हो उठी है। प्रस्तुत कथन के प्रमाणस्वरूप जयन्त की भावधारा द्रष्टव्य है—"शीला को देखते ही उसके अन्तस्तल मे एक वेदना-सी क्यों करवट लेती है ? जाने शीला में ऐसा क्या है ? वह जानता है कि उसके लिए ऐसा करना उचित नहीं है। एक बार उसके मन में आया भी कि जाने किस-किस ने शीला के शरीर को छुआ होगा। परन्तु उससे क्या ? मूर्ति जब बनती है, तो न जाने कितने हाथों से निकलती है, कोई गढ़ता है, कोई तराशता है, परन्तु जब उसकी प्रतिष्ठा कर दी जाती है, तो पुजारी अपने बच्चों से भी कहता है कि वह स्वच्छ हुए बिना मूर्ति को न छुएँ।"[3] श्रीमती पनिकर ने अपनी भाषा अथवा शैली की सज्जा की ओर ध्यान न देकर अच्छा ही किया है, अन्यथा इस उपन्यास में जो सहज प्रभावोत्पादकता है, वह दुर्लभ होती। कृत्रिम शब्दाडम्बर अभिव्यंजना-पक्ष के सहज सौन्दर्य को क्षीण ही करता है।

५. जाड़े की धूप

श्रीमती रजनी पनिकर ने 'जाड़े की धूप' शीर्षक समस्याप्रधान सामाजिक उपन्यास की रचना १०३ पृष्ठों में की है। इसका प्रत्येक परिच्छेद पत्रों के रूप में लिखा गया है, जो उपन्यास की नायिका भारती द्वारा अपने प्रेमी अजय के प्रति लिखित हैं। भारती पवन की पत्नी है और टीपू नामक पंचवर्षीय बालक की माता है, किन्तु पवन से अनबन होने के कारण उसका दाम्पत्य जीवन विशेष मधुर नही रह पाता। तभी उसके जीवन में अजय का प्रवेश होता है, किन्तु उसके भारतीय संस्कार पति को तलाक देकर अजय को अपनाने मे हिचकिचाते हैं। सम्भव था कि यह झिझक धीरे-धीरे समाप्त हो जाती, किन्तु इसके पूर्व ही उसे ज्ञात हो गया कि अजय का प्रेम अभिनय मात्र था। वास्तव मे वह एक कहानी-लेखक था और भारती से निकटता प्राप्त करके अपनी किसी कहानी के लिए अनुभूतियाँ एकत्र कर रहा था। कहानी पूर्ण होते ही वह उसे बेचने के लिए किसी अभिनेत्री के साथ बम्बई चला गया। भारती को अपने छले जाने पर बहुत दुःख हुआ, किन्तु पवन ने सब कुछ जानकर भी उससे समझौता कर लिया। भारती ने नौकरी से त्यागपत्र दे दिया और निर्धन तथा अशिक्षित बालकों को शिक्षा देकर उनके जीवन-सुधार को अपने जीवन का लक्ष्य बना लिया।

उक्त आधिकारिक कथा के अतिरिक्त भारती की बुआ की पुत्री मालती की जीवन-गाथा इस उपन्यास की मुख्य गौण कथा है, जो मुख्य कथा के पार्श्व मे विकसित हुई है। मालती का विवाह धनी वर से हुआ, किन्तु उसे जीवन का वास्तविक सुख प्राप्त न हो सका, क्योंकि उसके पति कुव्यसनी थे और उन्हें धन का अतिशय गर्व था। उपन्यास में प्रसंगवश

१. प्यासे बादल, पृष्ठ ४६

अन्य गौण कथाओं का समावेश भी हुआ है। चीन के दार्शनिक की कथा और लाला जी, जिनके घर भारती ट्यूशन पढ़ाने जाती थी, के परिवार की कथा इसके उदाहरण हैं। पत्र-शैली में लिखित होने के कारण इस उपन्यास की अधिकांश कथा भारती के पत्रों में उसकी भावनाओं, समस्याओं और विवशताओं की अभिव्यक्ति से सम्बद्ध है। कथानक में घटनाओं का विशेष प्रसार न होकर वर्णन का सहज मनोवैज्ञानिक प्रवाह है। अतः इनमें रोचकता, मार्मिकता आदि गुण सर्वत्र द्रष्टव्य है। 'मोम के मोती' की भाँति इस उपन्यास का कथानक भी आदर्शोन्मुख है। इसीलिए प्रारम्भ में भारती को अजय के प्रेम में व्यस्त दिखाकर मृग-मारीचिका में भटकाया गया है और बाद में अजय के प्रेम की निस्सारता सिद्ध करते हुए भारती को पुनः दाम्पत्य जीवन में समन्वय स्थापित करने के लिए प्रयत्न-शील दिखाया गया है।

श्रीमती पनिकर के अन्य उपन्यासों की भाँति 'जाड़े की धूप' में भी चरित्र-चित्रण की प्रमुखता रही है—घटनाओं का आयोजन भी चारित्रिक सौष्ठव की दृष्टि से हुआ है। पुरुष पात्रों की अपेक्षा नारी पात्रों की समस्याओं और भावनाओं के चित्रण में लेखिका को विशेष सफलता मिली है। भारती और मालती दोनों ऐसी पात्राएँ हैं, जो विवाहित जीवन में सुखी नहीं है। भारती अपेक्षाकृत भावुक है, इसी कारण वह 'अजय' के वाग्जाल में बह जाती है। फिर भी, कर्त्तव्य के प्रति सचेत होने के कारण वह अपना गृह त्यागकर पूर्णतः अजय की नहीं बन पाती। मालती अपने क्रोधी तथा गर्वीले पति की प्रकृति से राहत पाने का एक अन्य सुविधाजनक उपाय खोज निकालती है—वह यह, कि अपने पुत्र और पुत्री को लेकर ही व्यस्त रहती है, पति से कम-से-कम सम्बन्ध रखती है। उपन्यास की अन्य पात्राओं में लाला जी की पत्नी का अपने ड्राइवर के चाचा से प्रेम है, उनकी पुत्री का ड्राइवर से प्रेम है, पवन की माँ पुत्रवधु का शोषण करके स्वयं पौष्टिक भोजन लेती हैं—और ये सब पात्राएँ न केवल चारित्रिक वैविध्य को प्रकट करती है, अपितु उनकी प्रवृत्तियाँ स्वयं में अनोखा विद्रूप प्रस्तुत करती है।

पुरुष पात्रों में अजय और पवन का स्थान मुख्य है। अजय का व्यक्तित्व कपटपूर्ण है—कलाकार होने के कारण वह जैसा चाहे अभिनय कर लेता है; और उसके 'किताबी व्यक्तित्व' पर मुग्ध होकर भारती पवन से विमुख हो जाती है। पवन का व्यक्तित्व विशेष श्रद्धेय तो नहीं, किन्तु उसमें अजय की भाँति कोई दुराव नहीं है, क्योंकि वह अपनी दुर्बलताओं को गुप्त रखने की आवश्यकता नही समझता। बाद में भारती ने स्वयं स्वीकार किया कि उसका पति अजय से कहीं महान्, कहीं ऊँचा है। श्री चन्द्रगुप्त विद्यालंकार ने इस उपन्यास की समीक्षा करते हुए यह मत व्यक्त किया है कि लेखिका ने अजय के चरित्र को उभारने की ओर सम्यक् रूप से ध्यान नहीं दिया है—"इस उपन्यास का विषय ऐसा है, जिसे वासना से बचाकर रखना बहुत कठिन था। पर लेखिका इस बात में पूरी तरह सफल हुई है कि 'जाड़े की धूप' कहीं भी वासनापूर्ण नहीं बनने पाया। भारती की उन दिनों की मनोदशा का अच्छा मनोवैज्ञानिक चित्रण इस उपन्यास

मे है, पर अजय के चरित्र और मनोविज्ञान पर बहुत कम प्रकाश डाला गया है। मेरी राय से यही इस रचना की सबसे बड़ी कमज़ोरी है।"[१] चन्द्रगुप्त जी का सुझाव निश्चय ही अच्छा है, किन्तु ऐसा होने पर लेखिका द्वारा निरूपित समस्या का आधार ही खण्डित हो जाता। उपन्यास में कथानक के चुनाव की अपेक्षा उसके निर्वाह का प्रश्न अधिक महत्त्वपूर्ण होता है; और इस दृष्टि से यह उपन्यास निश्चय ही सशक्त रचना है।

उपन्यास के अन्य पात्रों में भारती का अफ़सर मलकानी भी उल्लेखनीय है, जो अधीनस्थ महिलाओं से सम्पर्क बढ़ाने में सचेष्ट रहने के कारण अपने वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है। मालती का पति उन धनी पुरुषो का प्रतीक है, जो धन के गर्व मे चूर रहकर पत्नी से केवल दैहिक सम्बन्ध रखते है, उसकी भावनाओं का मूल्य नही जानते, नौकरो के रहते हुए भी उसे अपनी सेवा में लीन देखना चाहते हैं आदि। अन्य पात्र-पात्राओं की भाँति लेखिका ने मालती के पति की विशेषताओं का उल्लेख करते समय भी प्रसंगवश पुरुषो की मनोवैज्ञानिक प्रवृत्तियों की ओर संकेत किया है। उदाहरणार्थ उसकी वासना-पूर्ण दृष्टि के विषय में लेखिका की यह उक्ति देखिए—"पुरुष की दृष्टि में नारी का केवल एक ही मूल्य है, उसका शरीर, उसका सौन्दर्य। आजकल का प्रगति-प्रेमी पुरुष किसी भी नारी से बात करता है तो कुछ ऐसा असभ्य भाव लिये हुए कि वह नारी उन क्षणों के लिए उसकी पत्नी के समान होती है।"[२] इस उपन्यास में पात्रों का चरित्र-चित्रण मुख्यतः चेतना-प्रवाह-पद्धति के अनुसार हुआ है, अत. इसमें कथोपकथन के माध्यम से पात्रों के विचारों का आदान-प्रदान बहुत कम स्थलों पर है। ऐसे संवाद लघु तथा सारगर्भित हैं और प्रायः कथानक तथा चरित्र की अभिव्यक्ति में सहायक रहे है।

'जाड़े की धूप' में लेखिका ने विवाहित स्त्री द्वारा पर-पुरुष से प्रेम की समस्या को स्थान दिया है। आज की शिक्षित नारी प्राचीन अशिक्षित नारियों की भाँति पति की प्रत्येक उचित-अनुचित बात नहीं सह पाती और परिणाम होता है—मानसिक अशान्ति! पर-पुरुष का कृत्रिम प्रेम इस आघात को सहलाकर मानो नारी को एक नया मार्ग सुझाता है—पति को तलाक देकर प्रेमी से विवाह करने का मार्ग—किन्तु क्या वह एक सफल उपाय है? लेखिका को इसमें विश्वास नही, क्योंकि मनोवैज्ञानिक दृष्टि से सब पुरुष एक-से हैं, पहले नारी को मिथ्या आश्वासन देंगे और विवाह के बाद क्रूरता का व्यवहार करेंगे।[3] यही सिद्ध करने के लिए उन्होंने अजय के कपटपूर्ण प्रेम का रहस्य प्रकट करके उक्त समस्या को आदर्शवादी ढंग से सुलझाया है। पुरुष और नारी की प्रवृत्तियों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करते हुए लेखिका ने ऐसी अनेक उक्तियाँ प्रस्तुत की हैं, जिन

---

१. आजकल, अक्तूबर, १९५८, पृष्ठ ५२
२. जाड़े की धूप, पृष्ठ ७०
३. देखिए 'जाड़े की धूप', पृष्ठ ५६

देशकाल और उद्देश्य दोनों की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है। उदाहरणार्थ ये अवतरण द्रष्टव्य हैं—

(अ) "तुम कहोगे कि आजकल तुम बहुत लड़कियों को, खासकर विख्यापित लड़कियों को, जिनमें विवाहित, अविवाहित दोनों ही शामिल हैं, दिल्ली की, बम्बई की और कलकत्ते की सड़कों पर अपनी अस्मत बेचते हुए देखते हो। लेखक हो न, कभी मौका मिले तो उनसे जाकर उनके दिल का हाल भी पूछना। नारी स्वेच्छा से शरीर तब देती है, जब जीवन की कोई अन्य आवश्यकता उसे वैसा करने पर विवश करती है।"[1]

(आ) "आजकल पचास प्रतिशत विवाह जीवन-सम्बन्ध न रहकर बस आँख-मिचौनी का खेल भर रह गए हैं।"[2]

इस उपन्यास की भाषा लेखिका के अन्य उपन्यासों की भाँति रोचक एवं प्रभावपूर्ण है। सरल तत्सम शब्दों, तद्भव शब्दों, उर्दू के प्रचलित शब्दों और मुहावरे-लोकोक्तियों के प्रयोग द्वारा भाषा में व्यावहारिकता का निर्वाह करने के अतिरिक्त उन्होंने शैली में मर्मस्पर्शिता और भावमयता की ओर भी यथोचित ध्यान दिया है। उदाहरणार्थ निम्नलिखित उक्ति में गद्यकाव्य-जैसी भावात्मकता देखिए—"मैं अँधियारे में अपना स्नेह-दीप जगाये बैठी रहूँ, प्रतीक्षा करती रहूँ, तुम आओ और मैं तुम्हें पहचान न पाऊँ, जब पहचानूँ तो पा न सकूँ। विडम्बना!"[3] अनेक प्रसंगों में लेखिका ने बड़ी मौलिक उपमाएँ जुटाई हैं, जिससे उनके लोक-दर्शन की व्यापकता का बोध होता है। यथा—"जो बात प्रकृति में नहीं उसको करना नाक पर बोतल टिकाकर चलने से कम नहीं होता।"[4] लेखिका ने भारती के मनोभावों को व्यक्त करने के प्रसंग में अनेक स्थानों पर मनोवैज्ञानिक सूक्ति-वाक्यों का भी प्रयोग किया है। यथा—"बाहर की शीतलता भीतर की वेदना को सहलाती नहीं, सुलगा देती है।"[5] अतः यह कहा जा सकता है कि चरित्र-विश्लेषण की सजगता और समस्याओं की प्रखरता की भाँति लेखिका को अभिव्यंजना की सहजता में भी सराहनीय सफलता मिली है।

६. काली लड़की

इस लघु उपन्यास में एक काली लड़की के पारिवारिक वातावरण और उसकी प्रतिक्रियाओं का मनोवैज्ञानिक रीति से चित्रण किया गया है। कथानक की सोद्देश्यता और मौलिकता के प्रति लेखिका का अतिशय आग्रह है, जिसे कथा-नायिका रानी के शब्दों में इस प्रकार व्यक्त किया गया है—"किसी उपन्यास में किसी काली लड़की की समस्या का वर्णन नहीं किया गया था, किसी ने भी काली लड़की को उपन्यास की हीरोइन

१–२–३. जाड़े की धूप, पृष्ठ ५८, ८७, ८

४–५. जाड़े की धूप, पृष्ठ २८, ४१

नहीं बनाया था।...बंकिमचन्द्र ने अन्धी लड़की ले ली। रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने गूंगी लड़की को चित्रित किया, परन्तु दोनों में से किसी ने भी यह आवश्यक न समझा कि किसी काली लड़की को भी हीरोइन बनाएँ।"[1]

कथा-नायिका रानी की आधिकारिक कथा के अतिरिक्त लेखिका ने इस उपन्यास में दो प्रासंगिक कथाएँ रखी हैं। इनमे से सुन्दरी की कथा मुख्य प्रासंगिक कथा है और टंडन-परिवार की कथा गौण प्रासंगिक वृत्त है। सुन्दरी को लेखिका ने रखैल के रूप में रहनेवाली आधुनिक वेश्या के रूप में चित्रित किया है, जो समाज की दृष्टि मे कुमारी होने का ढोंग रचती है। टंडन-परिवार में आर्थिक साधनों के सीमित होने पर भी वर्तमान समाज की अपव्यय की प्रवृत्ति (नौकर, गवर्नेस, फ़ैशन आदि के प्रति मोह) को साकार किया गया है।

लेखिका ने काली लड़की रानी को त्रस्त सन्तान का प्रतीक माना है। पिता तथा नौकरानी चांदी के अतिरिक्त सब उसकी उपेक्षा करते है, अतः किशोरावस्था से ही उसके हृदय में कुंठा बस जाती है। अपनी बहिन कावेरी के पति कमल द्वारा उपेक्षा होने पर उसका मन और भी व्यथित हो जाता है। अपनी सखी सुन्दरी और कमल बाबू के अवैध सम्बन्ध, सुन्दरी और कावेरी द्वारा सिगरेट पीना आदि बातों से उसे नई सभ्यता से घृणा हो जाती है। बहिन कावेरी के साथ मसूरी जाने पर कावेरी और कमल के मित्र धीरेन्द्र के घुले-मिले व्यवहार ने भी उसके मन को ठेस पहुँचाई। उधर कावेरी ने अपने पति के साथ उसके सम्बन्धों पर मिथ्या सन्देह करके उसे और चांदी को घर से निकाल दिया। वह कुछ दिन सुन्दरी के साथ रही तथा उसके निष्कपट सरल व्यवहार पर मुग्ध होकर कमल उसके प्रेम-बन्धन में बँध गए। उधर कावेरी कमल का बहुत-सा धन बटोरकर माता और धीरेन्द्र के साथ विदेश चली गयी। माता ने पति का त्याग करके विदेश में धनी विधुर से विवाह कर लिया, अतः रानी के पिता लखनऊ का मकान रानी को देकर अपने गुरु के आश्रम में चले गए तथा रानी और कमल वही रहने लगे।

प्रस्तुत उपन्यास में नारी और पुरुष की भावनाओ का सूक्ष्म चित्रण किया गया है। पुरुषों द्वारा स्वयं स्वेच्छाचारी होने पर भी दूसरों की निन्दा करना[2], आधुनिक माताओं द्वारा अपनी सुन्दरी पुत्रियों के बल पर स्वार्थ-साधन करना[3], पूंजीपतियों द्वारा मात्र स्वार्थ-साधन के लिये बड़े लोगों को भोज देना[4], आर्थिक व्यवस्था खोखली होने पर भी धनियों द्वारा पुरानी शान का दिखावा करना[5] आदि तथ्यों को लेखिका ने मर्मस्पर्शी रूप में प्रकट किया है। वस्तुतः उन्होंने वर्गगत चरित्र प्रस्तुत किये है—रानी, कावेरी, सुन्दरी, कमल, कावेरी की माता आदि सभी पात्र वर्गगत है। रानी के माध्यम से उपेक्षित काली लड़कियों की विचारधारा, प्रतिक्रिया, हीन भाव, विद्रोह आदि का मार्मिक

---

१. काली लड़की, पृष्ठ ६१

२-३-४-५. देखिए 'काली लड़की', पृष्ठ ११०, १२१, ५७-५८, ८६

चित्रण किया गया है। कावेरी सुन्दर, हठी, स्वाभिमानिनी और प्रेम की अपेक्षा धन को महत्त्व देनेवाली युवती है। धन का विविध रीतियों से दुरुपयोग करनेवाला कमल भी आधुनिक धनी युवकों की दुष्प्रवृत्तियों का प्रतिनिधित्व करता है। लेखिका ने जो भी विकृत चरित्र प्रस्तुत किये हैं, उनके दोषों के कारण भी अवश्य व्यक्त किये हैं। उन दोषों का मूल स्रोत है—वर्तमान सभ्यता और पश्चिम का अन्धानुकरण। काली लड़की के लिए मातृत्व का स्नेह-स्रोत इसीलिए सुलभ नहीं रहता कि वर्तमान सभ्यता केवल बाह्य सौंदर्य का मूल्य आँकती है। कमल के दोषों का मूल कारण भी स्नेह का अभाव ही है—उसकी माता तो धन-सम्पत्ति को अधिक महत्त्व देती ही थीं, दुर्भाग्य से पत्नी कावेरी और सास भी वैसी ही मिली। अतः यदि वह सुन्दरी और प्रेमा-जैसी स्त्रियों के साहचर्य और मद्यपान द्वारा मन बहलाता रहा तो इसमें उसकी अपेक्षा उसके वातावरण को ही दोष देना होगा। इसी प्रकार रानी भी माता की उपेक्षा और बहिन के दुर्व्यवहार के कारण ही विद्रोहिणी बनी। रानी के प्रति उसकी सेविका चांदी के ममत्व के द्वारा सम्भवतः यह सिद्ध किया गया है कि वर्तमान सभ्यता से अप्रभावित हृदयों में अब भी वही स्नेह है, जो भारतीय नारी का आभूषण रहा है। रानी के प्रति उसकी माँ का द्वेष अति की सीमा तक पहुँच गया है, जिसका आभास स्वयं लेखिका को भी है—"बीसवीं सदी में अपनी सगी माँ ऐसी भी हो सकती है, शायद बहुतों को विश्वास नहीं आएगा।"[1]

प्रस्तुत उपन्यास में कथोपकथन की अपेक्षा रानी के भावों और विचारों के विश्लेषण पर अधिक ध्यान दिया गया है, तथापि ऐसे संवादों का अभाव नहीं है जो कथानक के विकास और पात्रों के मनोभावों को स्पष्ट करने में सहायक रहे हैं। लेखिका ने कथोपकथन में मनोविज्ञान को उचित स्थान दिया है। उदाहरणार्थ कावेरी का चरित्र-चित्रण देखिये—

"मैंने डरते-डरते पूछा था, 'दीदी, ब्याह में दूल्हा की मोटरें ही देखी जाती हैं ?'

"हाँ, और क्या ! उसका सोना और रुपया भी देखने में कोई हर्ज नहीं।"[2]

वैवाहिक जीवन की घटनाओं से यह सिद्ध भी हो गया कि कावेरी की दृष्टि में पति की अपेक्षा उसके धन का ही अधिक मूल्य था। रानी के पिता की उक्तियों में रानी के प्रति स्नेह और उदारता की अभिव्यक्ति हुई है।[3] सुन्दरी और प्रेमा के संवाद उनकी विकृत मनोवृत्तियों के परिचायक हैं।[4] रानी के गुणों पर मुग्ध कमल की उक्तियाँ भावपूर्ण हैं, जिनमें रानी के प्रति स्नेह तथा आदर का भाव है।[5] लेखिका ने प्रायः संक्षिप्त संवादों की योजना की है, किन्तु कहीं-कहीं भावुकतावश कथित उक्तियाँ दीर्घ हो गई हैं। कमल द्वारा अपनी

---

१. काली लड़की, पृष्ठ ११८

२. काली लड़की, पृष्ठ ६

३-४. देखिये 'काली लड़की' (अ) पृष्ठ २२, (आ) पृष्ठ ३२-३३, ३८-३६

५. देखिये 'काली लड़की', पृष्ठ १२७, १३६-१३७, १४५

दुष्प्रवृत्तियों की चर्चा इसी प्रकार की है।[1] आलोच्य संवादों की भाषा पात्रानुकूल न होकर एकरूप है। लेखिका ने संवादों मे तर्क-पद्धति को न अपनाकर प्रायः उन्हें मनोविज्ञान-सम्मत सहज रूप में प्रस्तुत किया है, जो निश्चय ही एक गुण है।

लेखिका के अन्य उपन्यासों की भाँति प्रस्तुत कृति में भी अनेकशः युग की समकालीन प्रवृत्तियो की प्रसंगानुकूल चर्चा हुई है। कतिपय स्थलों पर स्थिति का सामान्य परिचयात्मक उल्लेख हुआ है, किन्तु अधिकांशतः व्यंग्योक्तिपूर्ण अभिव्यक्ति को प्रश्रय दिया गया है। पूर्वोक्त कथन के प्रमाणस्वरूप यह उक्ति द्रष्टव्य है—"१९५४ मे दिल्ली में लड़कियों को भी नौकरी मिलनी उतनी ही मुश्किल थी जितनी शायद १९३१ मे लडकों को। शिक्षित लड़कियों की संख्या इतनी हो गई थी कि मामूली-सी नौकरी के लिए बीसियों लड़कियों की अर्जियाँ आती। दूसरी लड़कियों की अर्जियो के साथ मेरी अर्जी भी प्रायः रद्दी की टोकरी मे फेंक दी जाती, क्योंकि मेरे पास कोई सिफारिश नही थी।"[2] व्यंग्यपूर्ण उक्तियों के उदाहरणस्वरूप अधोलिखित उद्धरण अवलोकनीय है—

(अ) "घर से बाहर निकलना ही एक ऐसा अन्तर है जो दीदी को पुराने जमाने की स्त्रियों से अलग करता है। पहले भी नारी की यही समस्या थी कि वह सन्तान को जन्म देती थी, पुरुष उसके शरीर से अधिक उसके व्यक्तित्व को महत्त्व नही देता था। नारी की यह समस्या अभी तक ज्यों-की-त्यों ही बनी है।"[3]

(आ) "मुझे माँ के दिल्ली आने से आश्चर्य नही हुआ। माँ की बड़ी बेटी सुन्दर है। विवाह के बाजार में उसकी अच्छी कीमत मिली है। माँ यदि अपना एक-मंजिला मकान लखनऊ-जैसे छोटे नगर में छोड़कर दिल्ली आ गयी हैं तो उसमे किसी के हैरान होने की कोई बात ही नही। दिल्ली में मैंने देखा है कि जिन स्त्रियों की सुन्दर लड़कियाँ हैं, सुन्दर न भी हों, लड़की चुस्त और जवान होनी चाहिए, उतने से भी काम चल जाता है।"[4]

इस प्रकार स्पष्ट है कि प्रस्तुत उपन्यास मे आधुनिक सभ्यता पर अनेक छीटे कसे गये हैं। सुन्दरी और कमल बाबू तथा कावेरी और धीरेन्द्र के मध्य अवैध सम्बन्ध, सुन्दरी और कावेरी द्वारा सिगरेट पीना, आधुनिक माताओं द्वारा अपनी सुन्दरी पुत्रियों के बल पर स्वार्थ-साधन आदि तथ्यों को पढ़कर वर्तमान सभ्यता के प्रति घृणा हो जाती है। कई बार लेखिका इन स्थितियों के प्रति व्यंग्य करने में इतनी तन्मय हो जाती हैं कि किंचित् काल के लिए मुख्य कथानक का विस्मरण कर उसी का वर्णन करती रहती हैं। लवली कोर्ट में वर्तमान कवियों एवं कवयित्रियों के खोखले एवं घृणित रूप का वर्णन[5], सम्पन्न

---

१. देखिये 'काली लड़की', पृष्ठ १४४
२. काली लड़की, पृष्ठ ११५
३-४. काली लड़की, पृष्ठ ९२, १२०
५. काली लड़की, पृष्ठ ३५-४२

मध्यवर्गीय तथा उच्चवर्गीय पूंजीपति समाज के स्वार्थपूर्ण जीवन का विस्तृत उल्लेख' आदि प्रसंग ऐसे ही हैं।

एक काली लड़की की विषम परिस्थितियों एवं तज्जन्य कुंठित अस्तित्व का मनोवैज्ञानिक चित्रण आलोच्य कृति का उद्देश्य है। लेखिका की हार्दिक कामना यह है कि इस कृति के प्रभाव से समाज में रानी-जैसी काली लड़कियों का जीवन विषमय न हो, "उनके अभिभावक और माता पिता उनकी यातना का अनुमान लगा पाएं।"[१] इस उपन्यास का द्वितीय प्रमुख उद्देश्य नई सभ्यता की निस्सारता को व्यक्त करना है। वस्तुतः नई सभ्यता ही वर्तमान समस्याओं की जन्मदात्री है। उससे पृथक् रहकर ही भारतीय युवक-युवतियाँ तथा उनके अभिभावक मानसिक शान्ति पा सकते हैं, क्योंकि यह सभ्यता उन्हें भौतिकता की ओर उन्मुख करती है। पाश्चात्य सभ्यता का अन्धानुकरण करके जो नई संस्कृति विकसित हो रही है, वह भारत की प्रेमावृत परिवार-व्यवस्था को विच्छिन्न ही कर सकती है, कुछ 'उत्कृष्ट' की आशा उससे व्यर्थ है। इस विषय में रानी की अधोलिखित उक्ति द्रष्टव्य है—'मुझे धीरे-धीरे इस नयी सभ्यता और इस नए रहन-सहन से चिढ़ हो गयी, क्योंकि इसने सुखी परिवार तोड़ डाले थे। मुझे लगता कि कमल बाबू का परिवार भी टूट रहा था। मेरे माता-पिता का परिवार तो टूट ही गया था। नई सभ्यता और नये ढंग के रहन-सहन ने माँ को चकाचौंध में डाल दिया था।"[२] वस्तुतः 'काली लड़की' की विडम्बनाओं का स्रोत भी यही सभ्यता है, जो केवल वाह्य सौन्दर्य का मूल्य आँकती है। इसी कारण रानी को माता का सहज स्नेह सुलभ नहीं हो पाता और इसी कारण कमल बाबू प्रारम्भ में उसकी उपेक्षा करते हैं। सेविका चांदी इसीलिए रानी से अपार स्नेह करती है, कि उस अशिक्षिता के पास वर्तमान सभ्यता से अप्रभावित स्नेहपूर्ण हृदय विद्यमान है।

लेखिका के अन्य उपन्यासों की भाँति प्रस्तुत कृति में भी सरल एवं प्रवाहपूर्ण भाषा-शैली का प्रयोग हुआ है। 'मेरे मन के अन्धेरे में उजाला हो गया,'[४] 'इन छह वर्षों में उन्होंने मुझसे सीधे मुँह बात तक न की थी'[५] आदि प्रसंगानुकूल मुहावरों के अतिरिक्त अवसरानुकूल सूक्तियों ने भी भाषा-शैली में सजीवता का संचार किया है। यथा— "चरित्रहीन मनुष्यों की कोई विशेष श्रेणी नहीं होती। वे भी सज्जन पुरुषों की तरह, कलाकारों की तरह अपनी व्यक्तिगत विशेषताओं द्वारा ही इस संसार में खड़े होने का स्थान पाते हैं।"[६] इस उपन्यास की शैली की सर्वाधिक मुखर विशेषता यह है कि इसमें अधिकांशतः व्यंग्यपूर्ण शब्दावली की सृष्टि की गई है। उदाहरणार्थ रानी की माँ के विषय में

---

१. काली लड़की, पृष्ठ ५६-५९
२. काली लड़की, भूमिका, पृष्ठ 'ख'
३. काली लड़की, पृष्ठ १२४
४-५-६. काली लड़की, पृष्ठ ४४, ७८, ५१

ये छोटे कितने तीखे हैं—"आज जब मैं उस जीवन को बहुत पीछे छोड़ चुकी हूँ तो सोचती हूँ कि मेरी माँ ने कौन-सा अनर्थ कर दिया, यदि वह जमाई के घर आकर रहने लगी थी ? छोटे-से बैंक का, कम वेतन पानेवाला पति, यदि उन्हें चालीस वर्ष की अवस्था में लखनऊ में बाँधकर नहीं रख सका तो इसमें भी उस बेचारी का क्या दोष ? पच्चीस वर्ष उन्होंने ऐसे पति के साथ निभाये थे। अब उनके नीरस जीवन में ज़रा-सी सरसता आ गई थी। दूसरों को बुरा लगने का कारण ?"[1] उपन्यास की भाषा आडम्बरशून्य सहजता से अनुप्राणित है। कहीं-कहीं शैली के स्वाभाविक प्रवाह मे अनायास ही नूतन उपमाओं का समावेश हुआ है। यथा—"मेरा विवेक सदैव 'लैम्प पोस्ट' की तरह मार्ग दिखलाता रहता था।"[2] लेखिका के अन्य उपन्यासों की भाँति यह कृति भी चेतना-प्रवाह-पद्धति में लिखी गई है। नायिका रानी के आत्मकथन के माध्यम से सम्पूर्ण कथा का विकास हुआ है, जिससे शैली में सर्वत्र मौलिकता की छाप विद्यमान है।

७. एक लड़की : दो रूप

इस उपन्यास में वर्तमान परिस्थितियों के संसर्ग में नारी-संस्कारों और विवशताओं का अन्तर्द्वन्द्व चित्रित किया गया है। उपन्यास की नायिका माला निम्न-मध्यम-वर्गीय परिवार की कन्या है। दहेज कम होने के कारण उसका विवाह निश्चित होकर भी सम्पन्न न हो सका। अतः घर की आर्थिक दशा सुधारने के लिए वह सेठ कनौडिया की निजी सचिव के पद पर कार्य करने लगी। सेठ जी के सम्पर्क से उसे धन का अभाव तो न रहा, किन्तु कभी कभी उसे ऐसे इच्छा-विरुद्ध कार्य करने पड़ते थे, जिनसे उसकी मानसिक शान्ति प्रायः भंग हो जाती थी। जब कभी वह नौकरी छोडने का विचार करती थी तब न केवल उसके अर्थ-लोभी पिता, अपितु उसके अपने अन्तर में निहित महत्त्वाकांक्षिणी 'माला' इसमें बाधक रहती थी। उसके एकाकी जीवन मे उसका पुरुष-मित्र राजू, जो एक उच्च अफसर था, समय समय पर सरसता भरता रहता था। वह विवाहित था, घर में पत्नी के संकेतों पर नाचता था और बाहर माला से मन-बहलाव करता था। माला के पिता को कारावास का दंड मिला, क्योंकि वे कनौडिया को नकली आभूषणों पर मुलम्मा चढ़ाने में सहयोग देते थे। उन्होंने ग्लानिवश आत्महत्या कर ली और इस घटना से व्यथित होकर माला ने भी सेठ जी की नौकरी से त्याग-पत्र दे दिया तथा मुहल्ले के बच्चों को शुल्क लेकर शिक्षा देने लगी। राजू की स्वार्थपरता से भी वह अब तक अवगत हो चुकी थी, अतः उसने उससे भी सम्पर्क न रखा। माला के अतिरिक्त कथानक में गौण रूप मे उसकी सखियों—अचला और उमा—के जीवन पर भी प्रकाश डाला गया है। मदन नामक युवक ने अचला से विश्वासघात किया, किन्तु माला के भाई रवि ने उससे विवाह करके उसके जीवन को नष्ट होने से बचा लिया। उमा का पति अमित शिथिल चरित्रवाला

१-२. काली लड़की, पृष्ठ १२१, ५४

पत्रकार था, अतः वह भी दुःखी रहती थी।

आलोच्य कथानक में आद्योपान्त माला के मानसिक अन्तर्द्वन्द्व का अंकन हुआ है। माला के दो रूप हैं—एक उसका विवेकशील रूप, जो उसे तृष्णाओं से विमुख रहने का सन्देश देता है और दूसरा उसका महत्त्वाकांक्षी रूप, जो उसे आर्थिक प्रलोभनों की ओर प्रेरित करता है। इस द्वितीय रूप को लेखिका ने 'गुड़िया' की संज्ञा दी है और उसके भावों का मनोवैज्ञानिक रीति से सुन्दर विश्लेषण किया है। इस प्रसंग में उन्होंने समाज के उच्च वर्ग और मध्यम वर्ग के कतिपय विशिष्ट रूपों का चित्रण करते हुए आधुनिक सभ्यता पर अनेक स्थलों पर मार्मिक व्यंग्य किए हैं। माला अपनी विवशताओं के कारण छली गई, तो अचला अपनी निरीहता के कारण मदन-जैसे लम्पट के जाल में फँसी। विवाहित पात्राओं के व्यक्तित्व को लेखिका ने अपेक्षाकृत सबल रूप में प्रस्तुत किया है। राजू और कनौडिया की पत्नियाँ पतियों पर शासन करती हैं, किन्तु माला की माता की स्थिति अपेक्षाकृत दयनीय है, क्योंकि वह निम्नमध्यम वर्ग की गृहिणी है। उसका पति कोई काम नहीं करता, अतः वह सिलाई-कढ़ाई करके कुछ उपार्जन करती है, किन्तु पुत्री की कमाई खाकर उसे बहुत मानसिक पीड़ा होती है।

पुरुष पात्रों में राजू मुख्य है, क्योंकि वह नायिका माला का प्रेमी है। घर में पत्नी का शासन माननेवाले और बाहर माला से मन बहलानेवाले राजू के माध्यम से लेखिका ने आधुनिक विवाहित युवकों की स्वार्थपरक भावनाओं तथा द्विविध व्यक्तित्व पर करारा व्यंग्य किया है। राजू की भाँति विश्वासघातक मदन, धन के बल पर माला की आत्मा को क्रय करनेवाले सेठ कनौडिया, माला के अर्थ-लोभी पिता आदि अन्य पुरुष पात्र भी पाठक की सहानुभूति प्राप्त नहीं कर पाते। माला का अनुज रवि ऐसी कुरूपताओं से मुक्त है—पिता के अर्थ-लोभ का विरोध करके और परिस्थितियों से प्रताड़ित अचला को अपनाकर उसने इसी का प्रमाण दिया है। लेखिका ने चरित्र-चित्रण के लिए प्रत्यक्ष और परोक्ष, दोनों प्रणालियों को अपनाया है। उनकी एक उल्लेखनीय प्रवृत्ति यह है कि किसी पात्र अथवा पात्रा की विशेषताओं की चर्चा करते समय उन्होंने प्रायः पुरुष अथवा नारी की जातिगत विशेषताओं का भी विश्लेषण किया है। उदाहरणार्थ ये उक्तियाँ देखिए—

(अ) "वाह रे पुरुष! कोई नारी थोड़ी-सी प्रशंसा दे, थोड़ा-सा महत्त्व दे, तो पुरुष को लगता है कि वह उसे चाहती है।"[1]

(आ) "औरत की यह भूख जाने क्यों बढ़ गई है कि वह नायिका बने। गृहिणी बनकर भी वह सुखी नहीं। मानो पति का प्यार तो उसे मिलना ही चाहिए था, उसका अधिकार था, परन्तु दस-पाँच का और भी मिल जाए तो क्या बुरा है।"[2]

---

१. एक लड़की : दो रूप, पृष्ठ ४७
२. एक लड़की : दो रूप, पृष्ठ ५३

श्रीमती पनिकर ने इस उपन्यास में कथानक को माला के मानसिक चिन्तन के रूप में व्यक्त किया है, फलतः इसमें कथोपकथन के लिए बहुत कम अवकाश रहा है। लेखिका ने मुख्य रूप से माला के वाह्य व्यक्तित्व और उसके आन्तर व्यक्तित्व (गुड़िया) के संवाद प्रस्तुत किए है, जो आत्मचिन्तन का ही दूसरा रूप है। इन संवादों में अतर्द्वन्द्व की बड़ी सजीव अभिव्यक्ति हुई है। ऐसी उक्तियों में 'गुड़िया' द्वारा माला को आर्थिक प्रलोभनों की ओर उन्मुख करने का विशेषतः उल्लेख हुआ है।[1] इसके अतिरिक्त लेखिका ने राजू, माला आदि अन्य पात्रों के वार्त्तालाप भी कहीं कहीं प्रस्तुत किए हैं। उन्होंने संवादों को संक्षिप्त एवं सारगर्भित रखने की ओर भी पर्याप्त ध्यान दिया है।

इस उपन्यास मे वर्तमान समाज के वातावरण और समस्याओ के चित्रण पर विशेष ध्यान दिया गया है। वर्तमान युग उत्तरोत्तर भौतिकता की ओर प्रगति करता जा रहा है, फलतः इस युग में 'अर्थ' और 'काम' की समस्याएँ सर्वप्रमुख हो गई हैं। लेखिका ने उपन्यास के प्रारम्भ में ही 'अर्थ' की उपासना पर व्यंग्य करते हुए कहा है—"आजकल देवता भी पुष्पमाला की बजाय नोटों की माला पसन्द करते है। पुष्पों की क्या कीमत? फूलों का क्या मोल?"[2] यही कारण है कि रवि-जैसे एक-दो पात्रो को छोड़कर इस उपन्यास के अधिकांश पात्र अर्थ-लिप्सा से ग्रस्त हैं। सेठ कनौडिया नकली आभूषणों को फैक्ट्री के स्वामी होकर भी जेल से बाहर रहे और माला के पिता को उनका साथ देने मात्र से कारावास मिला—यह 'अर्थ' की महत्ता के कारण ही सम्भव हुआ। काम सम्बन्धी समस्याओं की अभिव्यक्ति इस उपन्यास में अनेक स्थलों पर हुई है। नारी अपने मन से चाहे समता की दुहाई देती रहे, किन्तु वास्तव में वह आदिम युग की भाँति पुरुष की भोग्या मात्र है: "कम-से-कम पुरुष की दृष्टि उसे इससे अधिक कभी नहीं देखती।"[3] नई रोशनी का युवक केवल पत्नी से ही तुष्ट नहीं होता, अपितु घर से बाहर किसी प्रेमिका के संसर्ग की भी कामना करता है। 'अर्थ' और 'काम' के इस युग में केवल वही व्यक्ति तुष्ट रह सकता है जो आदर्शों का गला घोंट सके, अपने संस्कारों को भुला दे और केवल भौतिकता में रमण करे। उपन्यास की नायिका माला वैसा न कर सकी, फलतः उसका जीवन अशान्त बन गया। 'काम' ने उसे राजू की ओर प्रेरित किया और 'अर्थ' ने सेठ कनौडिया की ओर, किन्तु जब सच्चा सुख कहीं भी प्राप्त न हुआ तो उसने महत्त्वाकांक्षाओं को तिलाजलि देकर सरल जीवन को स्वीकार किया। समकालीन ज्वलन्त समस्याओं के इस विश्लेषण में लेखिका ने देशकाल के अतिरिक्त कृति के उद्देश्य को भी मुखरित किया है। उनका उद्देश्य यह सिद्ध करना है कि धन-लिप्सा मानव को सत्पथ से विचलित कर देती है, अतः तृष्णा का त्याग करके इच्छाओं पर नियन्त्रण रखना चाहिए।

---

१. देखिए 'एक लड़की : दो रूप', पृष्ठ ४०-४१

२. एक लड़की : दो रूप, पृष्ठ ५

३. एक लड़की : दो रूप, पृष्ठ ६५

आलोच्च कृति की रचना सरल साहित्यिक भाषा में हुई है। नाजुक, सलूक, इन्तजाम, मोहताज आदि उर्दू-शब्दों[1]; स्टडी, प्रोफ़ाइल, कल्चर्ड आदि अंग्रेजी-शब्दों[2], 'पल्ले नहीं पड़ा', हाथी के दाँत ऐसे ही होते हैं' आदि मुहावरों[3] और अनेकानेक सूक्ति-वाक्यों के यथास्थान प्रयोग से भाषा में सजीवता आ गई है। इस उपन्यास की शैली की सर्वाधिक उल्लेखनीय विशेषता है—व्यंग्य के सजीव छींटे, जो पाठक को सहज ही आकृष्ट कर लेते हैं। उदाहरणार्थ वर्तमान सभ्यता पर मार्मिक व्यंग्य देखिए—मातहत भी वही कल्चर्ड है जो अपने अफ़सर की पत्नी के साथ शापिंग करने जा सकता है। अफ़सर कहीं दौरे पर हो तो पत्नी को घुमाने-फिराने भी ले जाता है और सैकण्ड शो सिनेमा भी दिखलाता है। कल्चर्ड पत्नी की यही परिभाषा है कि पति की अनुपस्थिति में वह कभी भी घर में भोजन करने के लिए तैयार न हो। वह पति के मित्रों के साथ—नहीं तो अपने मित्रों के साथ—केवल होटल में खाए।"[4]

इस उपन्यास की रचना नायिका के आत्मविश्लेषण के रूप में हुई है और यह प्रकट किया गया है कि माला अपनी जीवन-कथा को उपन्यास के रूप में लिख रही है। फलतः इसके परिच्छेदों को सर्वत्र 'उपन्यास' कहा गया है और विविध स्थलों पर लेखिका की ओर से इस प्रकार की टिप्पणियाँ प्रस्तुत की गई हैं—(अ) "लिखते-लिखते जैसे माला हाँफ गई"[5], (आ) "माला इतना ही लिख पाई थी कि उसकी सखी, एक समय की सहपाठिनी और अब पड़ोसिन, उमा आ गई।"[6] लेखिका ने अपनी ओर से कम कहा है, और माला की ओर से अधिक। यह शैली नवीन होने पर भी कहीं कहीं अस्वाभाविक प्रतीत होती है।

निष्कर्ष

श्रीमती रजनी पनिकर की उपन्यास-कला के विषय में श्री चन्द्रगुप्त विद्यालंकार द्वारा 'प्यासे बादल' की समीक्षा के प्रसंग में प्रस्तुत किया गया यह निष्कर्ष द्रष्टव्य है—"श्रीमती रजनी पनिकर के सभी उपन्यास लघु उपन्यास की श्रेणी में आते हैं, वे सब नारी के सम्बन्ध में हैं और उनके किसी भी उपन्यास में गुथीलापन या उलझन नहीं, अपितु एक सहज-स्वाभाविक प्रवाह है। यों सभी उपन्यासों मे नारी जीवन के पृथक् पृथक् पहलू या समस्याएँ ली गई है, अपने पात्रों के प्रति लेखिका की संवेदना और प्रतिपाद्य विषय पर लेखिका के अधिकार की बात सभी रचनाओं में लगभग समान रूप से प्राप्त होती है।"[7] लेखिका के मन में कुछ सामाजिक आदर्श हैं, जिनसे भटकनेवाले पात्रों

१. देखिये 'एक लड़की : दो रूप', पृष्ठ ५, ७, ११, १५
२. देखिये 'एक लड़की : दो रूप' पृष्ठ २६, ३३, ४३
३. देखिये 'एक लड़की : दो रूप', पृष्ठ २५, ५०
४-५-६. एक लड़की : दो रूप, पृष्ठ ४३, १२, १५-१६
७. हिन्दी कथा-साहित्य में पंजाब का अनुदान (चन्द्रगुप्त विद्यालंकार), पृष्ठ ३२

की प्रवृत्तियों का चित्रण तिक्त व्यंग्य शैली में हुआ है—विषय का इतिवृत्तात्मक उल्लेख-मात्र उन्होंने नहीं किया है। उन्होंने मानव-मन के विविध पहलुओं की व्याख्या की है तथा नारी की विवशताओं और इसके लिए उत्तरदायी पात्रों की स्वार्थपरता के सफल चित्र अंकित किए हैं। चेतना-प्रवाह-पद्धति अथवा मानसिक चिन्तन के माध्यम से पात्रों के अन्तर्द्वन्द्व को चित्रित करना ही लेखिका की मुख्य शैली है। पात्रों का अपने परिवेश से संघर्ष इस शैली का प्रेरणा-स्रोत है। इसके फलस्वरूप उनके उपन्यासों में संवाद कम आए हैं, किन्तु इससे वर्णन-रूढ़ियों को भी प्रोत्साहन नहीं मिला है, जिसका कारण है मनोविश्लेषण की गम्भीरता। नई सभ्यता को अपनाने का मोह जिस स्वार्थपरता, आर्थिक तृष्णा और मुक्त प्रेम-सम्बन्धों को जन्म देता है उसकी ओर से न तो उन्होंने आँखें ही मूँदी हैं और न ही उसे प्रोत्साहन दिया है—यथार्थ को अस्वीकार करने के पूर्व उसका विश्लेषण तो होना ही चाहिए और यही उन्होंने किया भी है। इस सम्बन्ध में उनके विचारों का अनुशीलन अप्रासंगिक न होगा—"उपन्यास लिखते समय मुझे केवल इस बात का ख्याल रहता है कि मैं कोई ऐसा पात्र पेश न करूँ जो जाना-पहचाना न हो। कोई ऐसी घटना भी न चित्रित करूँ, जो अस्वाभाविक लगे। आदर्श का ढोंग रचने का मेरा उद्देश्य नहीं। एक पात्र एक परिस्थिति में जीवन में जैसा व्यवहार करेगा, वैसा ही दिखलाने का प्रयत्न करती हूँ। मेरे पात्र देवता नहीं, केवल मानवों-जैसा व्यवहार करते हैं।"[1]

---

१. आजकल, जनवरी १९।

श्रीमती वसन्त प्रभा

श्रीमती वसन्त प्रभा ने 'साँझ के साथी' और 'अधूरी तस्वीर' शीर्षक सामाजिक उपन्यासो की रचना की है, जिनमें वर्तमान सामाजिक विषमताओं और पारिवारिक उलझनो का चित्रण हुआ है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में कोरे आदर्शवाद की महत्ता नही रह गई है, अतः इन उपन्यासों में पारिवारिक मर्यादाओं को यथार्थ के माध्यम से उभारा गया है।

१. साँझ के साथी

श्रीमती वसन्त प्रभा ने 'साँझ के साथी' में एक मध्यवर्गीय परिवार का चित्रण किया है। कथानक इस प्रकार है—मातृहीन मोहन अपनी भाभी सुखदेवी के कठोर नियन्त्रण में पलकर बड़ा हुआ। भाभी के भय से उसके पिता और भाई भी उसकी सुख-सुविधाओं की ओर ध्यान न दे पाते थे। धन-लोलुप सुखदेवी ने उसका विवाह एक धनिक की इकलौती पुत्री क्षयरोगिणी कमला से कर दिया, जो शीघ्र ही चल बसी। भाभी की कुटिल नीति से विरक्त होकर मोहन परिवार से पृथक् रहने लगा। प्रौढ़ावस्था में उसने विधवा अनाथा लीला को जीवन-संगिनी बनाकर जीवन के एकाकीपन को दूर करना चाहा। भारत-विभाजन के उपरान्त जब मोहन और लीला दिल्ली आ गए तब कोई और ठौर-ठिकाना न होने से भाई-भाभी और उनके बच्चे भी उसी के पास रहने लगे। भाभी के कटु तथा व्यंग्यपूर्ण वचनों से पीड़ित होकर एक दिन प्रसविनी लीला ने दीवार से सिर फोड़कर आत्मघात कर लिया और मोहन अपने नन्हे पुत्र के साथ पुनः एकाकी रह गया। लीला को लेखिका ने मोहन के लिए 'साँझ के साथी' की संज्ञा दी है। समस्त कथानक मे सुखदेवी की कूटनीति एवं स्वार्थपरता का जाल-सा फैला हुआ है। उक्त मुख्य कथा के अतिरिक्त मोहन की पहली पत्नी कमला की मौसी पुष्पावती और पश्चिमी सभ्यता से प्रभावित उनकी कन्याओं, लीला की नानी, भाभी, उसके पूर्व पति की चाची आदि गौण पात्राओं की जीवन-घटनाओं को भी कथानक में आंशिक रूप से स्थान प्राप्त हुआ है। प्रस्तुत कथानक में लेखिका की दृष्टि घरेलू दृश्यों तक ही सीमित रही है, किन्तु सुख देवी के त्रिया-चरित्र अथवा उनके द्वारा आयोजित नित्य-नूतन-कुटिल युक्तियों के फलस्वरूप कथानक में अरोचकता अथवा एकरसता नही आने पाई है।

आलोच्य कृति में सर्वाधिक सजीव चरित्र सुखदेवी का ही है। वह अपनी कुटिल

बुद्धि का अपने स्वार्थ के लिए नित्य नये रूपों में प्रयोग करती हुई एक विशिष्ट नारी-वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है। उसकी गूढ़ चालों को कुछ समझते हुए और कुछ न समझते हुए भी उसके पति, ननदें, श्वसुर, देवर सब उसके व्यक्तित्व से प्रभावित होते हैं। मोहन के जीवन को भीतर से विषाक्त बनाते हुए भी वह ऊपर से ऐसा व्यवहार करती है कि वह कई बार सोचता है—"भाभी जबान की कितनी भी कड़वी क्यों न हों, फिर भी दिल से बुरी नहीं हैं।"[1] अन्य नारी पात्राओं में लीला का संयत गम्भीर व्यक्तित्व एवं मोहन के प्रति अनन्य अनुराग सराहनीय है। मोहन की बहिनों (पार्वती, यमुना, गंगा) का भ्रातृ प्रेम भी उल्लेखनीय है। पुष्पावती और उनकी दोनों पुत्रियों के माध्यम से लेखिका ने पाश्चात्य सभ्यता का अन्धानुकरण करनेवाली नारियों के प्रति सफल व्यंग्य किया है। लेखिका ने पुरुष-पात्रों को नारी के समक्ष दब्बू एवं निरीह रूप में चित्रित किया है। मोहन के पिता और भाई वास्तविकता से अवगत होकर भी सुखदेवी का खुलकर विरोध नहीं कर पाते। मोहन भी मौन रहकर भाभी के सब अत्याचार सहता है—लीला की मृत्यु के बाद ही प्रथम बार उसने भाई और उसकी भाभी को गृह-त्याग का आदेश देकर अपनी आन्तरिक घृणा को व्यक्त किया है। वस्तुतः सुखदेवी का व्यक्तित्व प्रस्तुत कृति में इतना सबल रहता है कि अन्य सभी के व्यक्तित्व उसके नीचे दब गए हैं। इस उपन्यास में लेखिका ने प्रत्यक्ष कथन की अपेक्षा परोक्ष साधनों से पात्रों की विशेषताओं को व्यक्त किया है। इस दिशा में भी घटना-योजना की अपेक्षा पात्रों के सम्भाषणों में उनकी आन्तरिक प्रवृत्तियों की सर्वाधिक अभिव्यक्ति हुई है। उदाहरणार्थ सुखदेवी की उक्तियों में सर्वत्र उसकी वाक्चातुरी, कूटनीति, स्वार्थपरता, ईर्ष्या आदि भावनाओं का प्रत्यक्षीकरण हुआ है। इसमें कोई संदेह नहीं कि लेखिका ने संवादों की योजना पात्रों और परिस्थितियों को ध्यान में रखकर की है।

'साँझ के साथी' में पारिवारिक जीवन के उतार-चढ़ाव, सुख-दुःख, आशा-निराशा, छल-कपट आदि के चित्रण द्वारा घरेलू वातावरण की सहज अवतारणा की गई है। लेखिका ने यत्र-तत्र प्रासंगिक रूप में समकालीन राजनीतिक और सामाजिक स्थिति का भी उल्लेख किया है। उदाहरणस्वरूप यह उक्ति देखिए—"पंजाब का बँटवारा हो रहा था। लोग आपस में एक-दूसरे के दुश्मन हो रहे थे। चारों ओर जहाँ देखने को मिलता वही धुआँ-ही-धुआँ दिखाई देने लगा। झूठे कर्त्तव्य की आड़ में धर्म और ईमान जल रहा था।"[2] इस उपन्यास में लेखिका का उद्देश्य यह अंकित करना रहा है कि नारी अपने कुटिल रूप में कितनी भयंकर एवं स्वार्थपूर्ण हो सकती है। एक ओर वह कमला-जैसी मृदुल एवं निरीह और लीला-जैसी कर्मठ एवं सुशीला होती है तो दूसरी ओर सुखदेवी-जैसी कटु-हृदया नारियों का भी अभाव नहीं है, जो दूसरों के मार्ग में काँटे बिछाकर अपना उल्लू

---

१. साँझ के साथी, पृष्ठ २०५
२. साँझ के साथी, पृष्ठ १९५

सीधा करती हैं और स्वार्थपूर्ति के उपरान्त सम्बन्धियों को दूध की मक्खी की भाँति त्याग देती हैं।

प्रस्तुत उपन्यास की भाषा व्यावहारिक हिन्दी है—इसमें तत्सम शब्दों की अपेक्षा तद्भव तथा देशज शब्दों का प्रयोग अधिक मात्रा में हुआ है। बेगाना, लिहाज़, इन्तजार, कदर, गुस्ताखी, काफ़ूर आदि उर्दू-शब्दों[१] का भी प्रचुर प्रयोग हुआ है। 'भाभी कच्ची गोलियाँ खेलना नहीं सीखी', 'गंगा को काटो तो खून नहीं', 'नाक कटी जा रही है', 'तिल रखने के लिए भी उसमें स्थान नहीं है' आदि मुहावरों[२] के समुचित प्रयोग ने भाषा-गत व्यावहारिकता में वृद्धि की है। किन्तु, कतिपय स्थलों पर अशुद्ध वाक्य-प्रयोग चिन्त-नीय है। यथा—(अ) 'वे आप लोगों ने ही तो दूर करनी है,'[३] (आ) 'वह मैले कपड़े उठाकर धोने लग पड़ी।'[४] लेखिका की वर्णन-शैली सरल एवं प्रवाहपूर्ण है। उन्होंने यत्र-तत्र चित्र शैली के अतिरिक्त आलंकारिक शब्दावली का भी सफल प्रयोग किया है। कहीं-कहीं उन्होंने सूक्ति-वाक्यों द्वारा अपने अभिप्राय की पुष्टि की है। यथा—"आदमी जब चलने-फिरने योग्य होता है तो उसके भीतर अहं का भाव बना रहता है। परन्तु इसके विपरीत चारपाई पर पड़ते ही यह अहं लोप हो जाता है।"[५] यह कहना उचित होगा कि उन्होंने कथानक की रुचिर स्वाभाविकता को शैली में भी अक्षुण्ण रखा है।

२. अधूरी तस्वीर

श्रीमती बसन्त प्रभा के 'अधूरी तस्वीर' शीर्षक सामाजिक उपन्यास में भावा-वेग को मुख्य स्थान मिला है। इस विषय में उनकी यह उक्ति पठनीय है—"अधूरी तस्वीर को मैं उपन्यास कह सकती हूँ, इसे मैं कविता भी कह सकती हूँ, क्योंकि इसमें मेरे मन का संगीत है, मेरे अन्तर की संवेदना है।"[६] इस उपन्यास का कथानक अत्यन्त संक्षिप्त है—लेखिका उपयुक्त कथानक की खोज में निकलीं तो उन्हें नई दिल्ली के एक होटल के कमरे में रमा द्वारा लिखे बीस पत्र प्राप्त हुए। रमा के पति विज्ञान की साधना में लीन रहने के कारण पत्नी की ओर उचित ध्यान न दे पाते थे, अतः एक दिन क्रुद्ध होकर उसने पति-गृह त्याग दिया। उक्त पत्रों में उसने अपने विगत जीवन की सुख-दुःखमयी स्मृतियों के अतिरिक्त गृह-त्याग के बाद की अनुभूतियों पर भी प्रकाश डाला था। रमा को अपने कृत्य पर लज्जा थी, और पति के प्रति श्रद्धा। वह इन पत्रों को पति के पास भेजकर समझौता करना चाहती थी, किन्तु एक दिन उन्हें सुधा के साथ नृत्य करते और मद्यपान करते देखकर उसने यह विचार त्याग दिया। पत्रों के बण्डल

१. साँझ के साथी, पृष्ठ १०, ११, १२, १५, १९, २५
२. साँझ के साथी, पृष्ठ १८, १९, २१, १४२
३-४-५. साँझ के साथी, पृष्ठ ५५, १७७, २३
६. अधूरी तस्वीर, दो शब्द

को होटल के कमरे की अल्मारी में ही छोड़कर वह अपनी पीड़ा को समेटे अन्यत्र चली गई।

उपर्युक्त लघु कथानक को एक निश्चित आकार देने के लिए प्रेमा (रमा की सखी), सुजाता (रमा की बहिन), विजय (रमा का प्रेमी) सिनहा साहब (रमा का पड़ोसी), फातिमा, सईदा, सत्या आदि पात्र-पात्राओं (जो रमा के गृह-त्याग के बाद उसके सम्पर्क में आए) की जीवन-घटनाओं का रमा की अनुभूतियों के संसर्ग में आंशिक उल्लेख किया गया है। रमा जिन स्थानों पर ठहरी, उनके वातावरण का चित्रण करके भी लेखिका ने उपन्यास के कथानक का विकास किया है। इस प्रकार उन्होंने इस रचना में एक लम्बी पत्र-कथा को उपन्यास का रूप दिया है और नायिका रमा के मनोभावों का भावपूर्ण चित्रांकन करके उसके व्यक्तित्व को 'पूर्णता' के साथ उभारने का प्रयत्न किया है। उसकी मानसिक पीड़ा की एक झलक द्रष्टव्य है—"काश कि मेरी जिन्दगी मायके में ही कट रही होती। काश मैं बूढ़ी होकर भी कुमारी रह जाती, ताकि प्रियतम के घर जाने के साथ खत्म तो न होती। सोचती हूँ, तुम्हारे साथ रहकर मैंने क्या पाया? मैं तुम्हारी प्रेयसी भी बनी। मैंने पत्नीत्व को भी निभाया, मालकिन बनकर तुम्हारे घर की व्यवस्था भी की। पर इतना सब करके भी मेरा जीवन रोता ही रह गया।"[1] अपने गृह-त्याग के लिए कभी वह अपने पति राज को दोषी ठहराती है, कभी अपने को और कभी परिस्थितियों को। अपने प्रति सहानुभूति रखनेवाले विजय के प्रति उसका आकर्षण उसके गौरव को क्षीण करता है, किन्तु मनोविज्ञान की दृष्टि से यह ठीक ही है। उसके अतिरिक्त उपन्यास में प्रभा, सुजाता, सत्या, सईदा आदि अन्य नारी-पात्र भी है, जिनके चरित्रों में ममत्व, सौहार्द, सहानुभूति आदि सद्गुणो का समावेश है।

पुरुष-पात्रों में राज, सुजाता के पति डॉक्टर साहब, विजय तथा सिनहा साहब उल्लेखनीय हैं। राज महान् वैज्ञानिक है, किन्तु नारी-मनोविज्ञान को समझने का प्रयास नहीं करता। जब तक वह विज्ञान की साधना मे लीन रहा तब तक तो उसके द्वारा पत्नी की उपेक्षा क्षम्य है, किन्तु सिद्धि-लाभ होने पर जब वह पत्नी को न लाकर सुधा के साथ विलासपूर्ण जीवन व्यतीत करता है तब पाठक के मन में श्रद्धा नहीं रहती। रमा के प्रति डॉक्टर साहब का सद्भाव उनकी चरित्र-गरिमा का परिचायक है। राज को त्यागने के उपरान्त विजय के सौम्य व्यक्तित्व और लच्छेदार बातों ने रमा को आकर्षित किया, किन्तु जब उसे लोक-निन्दा की भट्टी में झोककर विजय स्वयं पल्ला झाड़कर एक ओर हो जाता है तब उसकी स्वार्थपरता और कृत्रिम व्यक्तित्व की पोल खुल जाती है। सिनहा साहब वासना-पूर्ति की आकांक्षा से लेखक होने का बहाना लेकर रमा के जीवन मे प्रविष्ट हुए, किन्तु उसके वेदनामय गम्भीर व्यक्तित्व ने उनके जीवन की दिशा परिवर्तित कर दी और वे लज्जावश रमा के सम्पर्क से दूर चले गए। रमा के अतिरिक्त

---

१. अधूरी तस्वीर, पृष्ठ ५१

उपन्यास के अन्य सभी पात्र गौण हैं। उनके जीवन का उतना ही अंश उद्घाटित किया गया है, जितना रमा के चरित्र-विकास में सहायक रह गया है, अतः सभी गौण पात्रों का चरित्र अपूर्ण-सा प्रतीत होता है। पत्र-शैली में लिखित होने के कारण इस उपन्यास में कथोपकथन के लिए विशेष अवकाश नहीं रहा। यत्र-तत्र जिन विरल उक्तियों की आयोजना हुई है, वे कथानक को गति देने और पात्रों के भावों को सुन्दर रूप प्रदान करने में उपयोगी हैं। फातिमा, सत्या, नर्मदा आदि अन्य गौण पात्राओं की प्रासंगिक कथाएं मुख्यतः संवाद-तत्त्व के माध्यम से विकसित हुई हैं।

पति-गृह का त्याग करने पर रमा को परिस्थितिवश विभिन्न नगरों एवं ग्रामों में रहने का अवसर प्राप्त हुआ, अतः अपने पत्रों में उसने उन स्थानों की विशेषताओं, वहाँ के निवासियों के रहन-सहन आदि का मनोयोग से वर्णन किया है। पहले वह अपनी सखी प्रेमा के साथ किसी नगर की गंदी गली में रही जहाँ धोबी, लुहार, चमार आदि निम्न वर्ग के व्यक्ति रहते थे। वहाँ पति जब चाहता पत्नी को बुरी तरह पीटता, प्रतिवेशियों के लिए ये सामान्य दृश्य थे, अतः कोई भी बीच-बचाव न करता। पिटनेवाली स्त्री भी इसे स्वाभाविक समझती थी।[1] इसके बाद रमा अध्यापिका के रूप में एक गाँव में रही। पाँचवें पत्र से लेकर नवें पत्र तक उस ग्राम के रीति-रिवाजों, प्राकृतिक शोभा, रहन-सहन, दरिद्रता, धार्मिक प्रवृत्ति आदि का सजीव चित्रांकन हुआ है। दसवें पत्र में रेल-यात्रा के अवसर पर रमा के सहयात्री जाट-परिवारों की विशेषताओं का रोचक उल्लेख हुआ है।[2] इसके उपरान्त अपनी बहिन सुजाता के ग्राम में जाने पर वहाँ के वातावरण का भी रमा ने विस्तार से वर्णन किया है। किसानों की व्यावहारिक बुद्धि, हीर भाई की कब्र के मेले पर अपनी मुराद पूरी करने जाना, पर्व के दिन नदी-स्नान करना, भूत-प्रेतों के प्रति अन्धविश्वास[3] आदि का वर्णन इस प्रसंग में उल्लेखनीय है। उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि इस उपन्यास में वातावरण की प्रधानता है।

रमा की अन्तर्मुखी वृत्तियों का मनोवैज्ञानिक अंकन इस कृति का मुख्य लक्ष्य है। गोस्वामी तुलसीदास की मान्यता 'जिमि स्वतन्त्र होई बिगरहि नारी' के अनुसार लेखिका का भी यही मत है कि यदि पति स्त्री पर अंकुश रखे तो उसे पथ-भ्रष्ट होने से बचा सकता है। इस प्रसंग में रमा की यह भावात्मक उक्ति पठनीय है—"राज, मैं मानती हूँ कि स्त्री के ऊपर किसी का अधिकार इसलिए होना जरूरी है कि वह बिना किसी अधिकारी के किसी भी समय उद्दण्ड हो सकती है। उस रात मैंने स्पष्ट अनुभव किया कि मुझे पाकर अगर तुमने मुझ पर अपना अधिकार दिखाया होता तो मैं किसी कारण से भी तुम्हारे घर की देहरी को लांघने की कोशिश न करती, और न करती वह

१-२. देखिये 'अधूरी तस्वीर', पृष्ठ १८-२०, ७६-७९

३. देखिये 'अधूरी तस्वीर', पृष्ठ ९८, १०१, १२८, १२२

सब कुछ जो करना मेरे लिए उचित न था।"[1] रमा के माध्यम से नारी-जीवन का चित्रांकन करने के अतिरिक्त समकालीन जन-जीवन की अभिव्यक्ति भी लेखिका का उद्दिष्ट है।

"अधूरी तस्वीर' में सरल, भावपूर्ण और प्रवाहमयी भाषा-शैली का प्रयोग हुआ है। फुर्सत, मशगूल, हैरान, महसूस; जुदाई आदि उर्दू-शब्दों और प्रसंगानुरूप प्रयुक्त मुहावरों ने भाषा में सजीवता का संचार किया है। भावना की आवेगपूर्ण स्थिति के कारण इसकी शैली में प्रायः गद्यकाव्य की-सी लयात्मकता का समावेश रहा है। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि भावुकता, अनुभूति-प्रवणता और वाक्य-विन्यास की सहजता इस रचना के उल्लेखनीय गुण है।

निष्कर्ष

श्रीमती वसन्त प्रभा ने अपने दोनों उपन्यासों का प्रारम्भ कथानक के अन्तिम विन्दुओं से किया है और शेष घटनाओं को प्रायः पृष्ठभूमि के रूप में वर्णित किया है। उन्होंने इन उपन्यासों की रचना दो भिन्न शैलियों में की है, जिससे इनमें नीरस एकरसता नहीं आ पाई है। 'साँझ के साथी' में पात्रों की वहिर्मुखी प्रवृत्तियों एवं घटनाओं के विविध उतार-चढ़ावों को प्रश्रय दिया गया है, जबकि 'अधूरी तस्वीर' में नायिका के पत्र-रूप चेतना प्रवाह में समस्त कथानक का विकास हुआ है। 'साँझ के साथी' में एक खल सदस्या के प्रभाव में विकसित होनेवाले सम्मिलित परिवार की विडम्बनाएँ प्रमुख विषय है, तो 'अधूरी तस्वीर' में विश्रृंखल दाम्पत्य जीवन की संवेदनात्मक चेतना सर्वाधिक मुखर रही है। दोनों उपन्यासों मे चरित्र-चित्रण की दृष्टि से पात्र-वैविध्य की ओर अधिक ध्यान दिया गया है। 'साँझ के साथी' में घटनाओं के आरोह-अवरोह पर विशेष वल दिया गया है, जबकि 'अधूरी तस्वीर' में वातावरण की प्रधानता रही है। अभिव्यंजना-पक्ष की दृष्टि से दोनों उपन्यासों में एक-जैसी व्यावहारिक एवं प्रवाहपूर्ण भाषा-शैली के दर्शन होते है। लेखिका ने सामाजिक परिप्रेक्ष्य के चित्रण के लिए कटुता अथवा व्यंग्य की अपेक्षा मुख्यतः सहज वर्णन को अपनाया है, जिससे उपन्यासों मे स्वाभाविकता वनी रही है।

सुश्री कृष्णा सोवती

सुश्री कृष्णा सोवती ने 'डार से विछुड़ी' शीर्षक प्रसिद्ध लघु आंचलिक उपन्यास की रचना की है। 'ग्यारह सपनों का देश' शीर्षक उपन्यास के दस सहयोगी लेखकों में से भी वे एक है।[1] यहाँ उनकी उपन्यास-कला का मूल्यांकन 'डार से विछुड़ी' के आधार पर किया जाएगा। इस उपन्यास में एक भोली और अल्हड़ नवयुवती की जीवन-कथा अंकित की गई है, जिसे अपनी माता के पाप के परिणामस्वरूप अनेक कष्ट सहन करने पड़े। अपने परिवार की शाखा से वह एसी वियुक्त हुई कि न संगी, न साथी, न कोई आश्रय। रह-रहकर सोचती कि कव शाखा से पुनः भेंट होगी और, परिस्थितियों के घात-प्रतिघात के उपरान्त, अन्त में यह सुयोग उसके जीवन में आ ही गया। श्री चन्द्रगुप्त विद्यालंकार के शब्दों में—"संभवतः पंजाव की किसी पुरानी लोकगाथा या किंवदन्ती के आधार पर इस आंचलिक लघु उपन्यास की रचना की गई है।"[2]

कथानायिका पाशो की माता ने शेख जाति के एक भद्र सज्जन को स्वेच्छा से पति-रूप मे ग्रहण कर अपने क्षत्रिय भाइयों के जाति-गौरव का अपमान किया, जिसका परिणाम भोगना पड़ा भोली पाशो को। उसके प्रत्येक क्रियाकलाप को मामा, मामी और नाना शंका की दृष्टि से देखते, उस पर व्यंग्य करते। इस कड़े नियन्त्रण तथा मार-पीट से घबराकर एक दिन वह छतें पार करती हुई रात्रि के समय अपनी माता की हवेली में जा पहुँची। उसके मामाओं की क्रूरता के भय से शेख जी ने अपने एक विश्वस्त व्यक्ति के द्वारा उसे अपने मित्र दीवान जी के घर पहुँचा दिया। दीवान जी आयु की दृष्टि से तो पाशो से वहुत वड़े थे, किन्तु पति-रूप मे उनके प्रेम तथा आदर से सन्तुष्ट हो वह पुष्प की भाँति खिल उठी। दीवान जी की मौसी के लाड़-चाव ने उसके सुख में और भी वृद्धि की, किन्तु जव एक पुत्र के पिता वनते ही दीवान जी चल वसे, तो पाशो पर दुःख का पहाड़ टूट पड़ा। दीवान जी के रिश्ते के भाई वरकत ने उसका सतीत्व नष्ट कर उसे एक लाला के हाथ चुपके से वेच दिया। मौसी उस समय वाहर गई हुई थी, अतः वरकत ने सरलता से यह काम पूरा कर लिया। लाला जी ने उसे अपने तीन पुत्रों की पत्नी तथा घर की लौंडी के रूप में खरीदा था। उनका मँझला पुत्र उससे विशेष प्रेम करता था। वह अंग्रेजों

---

१. देखिए 'ग्यारह सपनों का देश' (सम्पादक—लक्ष्मीचन्द्र जैन), पृष्ठ १९१-२०६
२. आजकल, मई १९६०, पृष्ठ ४३

से युद्ध करने सेना के साथ गया, तो पाशो को भी वलपूर्वक घोड़े पर बैठाकर साथ ले गया। युद्ध में उसकी मृत्यु के बाद जब पाशो पुनः निराश्रित हो गई तो मूर्च्छितावस्था में मलिक राजाओं का वंशज उसे अपने घर ले आया और वहिन की भाँति माना । युद्ध में उसके मरने के उपरान्त वह पकड़कर फिरंगी की कचहरी में लाई गई जहाँ से उसका अपना भाई, शेख जी का पुत्र, उसे पहचानकर पुनः घर ले आया। दीवान जी की मौसी तथा अपना मुन्ना भी उसे वहीं पर मिल गए।

प्रस्तुत उपन्यास में लाला जी तथा मलिक राजा के परिवार की कथाए प्रासंगिक हैं, किन्तु नायिका के जीवन से सम्बद्ध होने के कारण उनका मूल कथानक से विशेष सम्बन्ध रहा है। लेखिका ने यह स्पष्ट नही किया कि पाशो की माता जब शेख की पत्नी वनी तो पहले विधवा थी अथवा सधवा। कथानक की दृष्टि से यह उपन्यास निश्चय ही रोचक वन पड़ा है। लेखिका द्वारा अपनाया गया कथा-वृत्त व्यापक लोक-जीवन को समेटे हुए है, किन्तु लेखिका के मन में उपन्यास के संक्षिप्त आकार का कुछ ऐसा मोह रहा है कि कही-कही घटनाओं के आरोह-अवरोह में सम्यक् तारतम्य लक्षित नही होता। फिर भी, इस उपन्यास की सबसे वड़ी विशेषता यह है कि इसमें पंजाव के अंचल विशेष की वहुत ही सजीव अभिव्यक्ति मिलती है। इसमें मानव-जगत् की विविध प्रवृत्तियों को लक्ष्य में रखकर विभिन्न स्वभाव के पात्रों को प्रश्रय दिया गया है, किन्तु यह उल्लेखनीय है कि लेखिका ने पात्रों की केवल उन्ही चारित्रिक विशेषताओं की अभिव्यक्ति की है, जो कथानक के विकास में आवश्यक थी। इसी कारण उनके पात्रों के चरित्र के केवल कुछ अंश पाठको के समक्ष प्रत्यक्ष हुए हैं। कथानायिका पाशो के चरित्र को तनिक विस्तार से अंकित किया गया है। उसका भोलापन, यौवनजनित सरसता तथा अल्हड़ता ; अपने भाई, पति तथा पति की मौसी के लिए उसका अगाध प्रेम और आदर; क्रूर नियति के थपेड़ों को वहन करने की सहनशीलता आदि विशेपताएँ उसके चरित्र का प्रमुख अंग रही है।

सत्पात्रों में शेख जी, दीवान जी, पाशो के भाई, दीवान जी की मौसी तथा मलिक राजा के चरित्र उल्लेखनीय है। अपनों तथा परायों के प्रति इनमें विशेष ममत्व तथा दया का भाव सजग रहा है। भ्रातृजाया पाशो का विक्रय करनेवाले वरकत दीवान, उनकी अत्याचारी माता, पाशो का क्रय करके उसे दासी वनाकर रखनेवाले लाला जी तथा उनका मंझला पुत्र, जो पाशो की इच्छा के विरुद्ध उसे अपनी वासना-पूर्ति तथा सेवा के लिए वाध्य करता रहा, असत् पात्र हैं। पाशो के मामा-मामी तथा नानी के पाशो पर घोर अत्याचार तथा कड़ा नियन्त्रण देखकर उन्हें भी असत् पात्रों की कोटि में रखा जा सकता था, किन्तु लेखिका ने पाशो की माँ की चरित्रहीनता को कारण-रूप में प्रस्तुत करके उनके प्रति पाठकों के क्षोभ को पर्याप्त सीमा तक कम कर दिया है।

विवेच्य लेखिका की सामान्य प्रवृत्ति है कि वे प्रत्येक पुरुष पात्र की किसी वृद्धा सम्वन्धिनी को अवश्य प्रस्तुत करती हैं। दीवान जी की मौसी, वरकत दीवान की माँ तथा मलिक राजा की वड़ी माँ के चरित्र इसके प्रमाण हैं । ये वृद्धाएँ अपने

पुत्र अथवा पुत्रवत् सम्बन्धी के चरित्र को अपने संवादों द्वारा स्पष्ट करती है तथा शुभ अथवा अशुभ कर्मों में पूर्ण योग देती हैं। उदाहरणार्थ पाशो की नानी के शब्दों में पाशो की माँ का चरित्र द्रष्टव्य है—"उस मुँह उसका नाम न लूँ बिटिया, उसी की करनी तुझे भरनी थी। तेरे दोनों मामू उसे कितना मानते थे, यह लोक-जहान जानता है, पर वह नासहोनी तो घर-भर का मुँह काला कर गई।"[1] प्रस्तुत उपन्यास में स्वाभाविक तथा पात्रानुकूल वार्त्तालापों की योजना की गई है। पंजाबियों के स्वभाव के अनुकूल कहीं संवाद अत्यन्त मधुर तथा हृदयस्पर्शी हैं और कहीं तीखे। फिर भी यह निर्विवाद है कि समस्त कथोपकथनों में पात्रों के मनोविज्ञान को ध्यान में रखा गया है। प्रमाणस्वरूप पाशो तथा उसके भाई के स्नेहिल संवाद उल्लेखनीय हैं—

"बहना, जी न बुरा करो। बड़े कोट से लौटती बार तुम्हें मिलने आऊँगा।"

रोते-रोते ठिठक गई।

"इतनी दूर काहे जाना है वीर जी ?"

वीर पहले झिझके, फिर समझाकर बोले—"बहना, बड़ा नगर ठहरा, वहाँ तो आना-जाना लगा ही रहता है।"

पहले संभली, फिर ध्यान कहीं जा भटका। साँस रोके पूछा—"कहीं लड़ाई तो नहीं छिड़ी वीर जी ?"

वीर कुछ कहना न चाहते थे, फिर योद्धाओं-सा मुस्कराकर बोले—"बहन हमारी लड़ाई से डरने लगी।"

"न-न वीर जी उस ओर न मुख करना, वैरियों के बीच न पड़ना।"

वीर ने मेरे कन्धे पर हाथ रखा।

"बहना, शेखों का लड़का हूँ तो क्या माँ तो खत्राणी है।"

सब समझ गई। हाथ पकड़ वीर का, अर्ज की—"स्वास-स्वास वीर की घोड़ी की राह तकती रहूँगी, इस बहन को बिसरा न देना।"[2]

उपर्युक्त पंक्तियों से प्रत्यक्ष है कि विवेच्य लेखिका ने संवादरत पात्रों के हाव-भाव, गतिविधि आदि की ओर भी साथ-साथ इंगित किया है। इससे वार्त्तालापों की स्वाभाविकता में और भी वृद्धि हुई है। मधुर तथा रसपूर्ण संवादों के अतिरिक्त प्रसंगानुकूल कटु-तिक्त संवादों की भी बड़ी सहज अभिव्यक्ति हुई है। दीवान जी की मौसी तथा बरकत की माँ के परस्पर वार्त्तालाप ऐसे ही हैं।[3] वार्त्तालाप-योजना न केवल पात्रों के चरित्र-चित्रण में ही सहायक रही है, अपितु कथानक के विकास में भी उपयोगी सिद्ध हुई है। वास्तव में प्रस्तुत कृति के संवाद लघु तथा सारगर्भित हैं। उदाहरणार्थ

---

१. डार से बिछुड़ी, पृष्ठ ११

२. डार से बिछुड़ी, पृष्ठ ५२-५३

३. देखिए 'डार से बिछुड़ी', पृष्ठ ६७

मलिक राजा की गढ़ी में पाशो के पूछने पर कि उस गढ़ी पर किसकी सरदारी है, राजा की सेविका सारी प्राचीन कथा सुनाती है।[1] सुष्ठु संवादों ने प्रस्तुत उपन्यास को चल-चित्र की-सी नाटकीयता प्रदान की है।

प्रस्तुत उपन्यास में पुराने पंजाब के सीमान्त जीवन की पृष्ठभूमि प्रस्तुत की गई है। पंजाबी परिवारों के रीति-रिवाजों के कतिपय चित्र इसमें अंकित किये गए हैं। प्रथम चित्र पाशो के मामा के घर का है जहाँ जाति-गर्व तथा सामाजिक मर्यादा के समक्ष व्यक्ति को तुच्छ समझा जाता है। पाशो की माता ने नीच जाति के शेख को अपना लिया, इस कारण पाशो को उठते-बैठते सदा डाँट-फटकार पड़ती थी। उसकी अल्हड़ता में उन्हें बनाव-शृंगार तथा चरित्र-भ्रष्टता की गन्ध आती थी। दूसरा चित्र दीवान-परिवार का है, जहाँ पाशो के बड़े सुखमय दिन बीते। लेखिका ने करवा चौथ के व्रत का बड़े मनोयोग से वर्णन किया है।[2] बरकत दीवान ने विधवा पाशो को लाला जी के घर बेच दिया। लाला-परिवार की रीति सबसे अद्‌भुत थी। लाला के तीन पुत्रों के लिए पाशो ही एक-मात्र पत्नी थी। कालान्तर में युद्ध में लाला के मँझले पुत्र की मृत्यु के बाद पाशो मलिक राजाओं के वंशज के घर पहुँची। मलिक राजा की वृद्धा सेविका ने पाशो के समक्ष विस्तार से राजा के पूर्वजों की कथा सुनाते हुए उनके वंश के रीति-रिवाजों की चर्चा की है।[3] उपन्यास के उत्तरार्ध में सिक्खों तथा फिरंगियों के युद्ध का चित्रण किया गया है। सिक्ख वीरों ने बड़ी वीरता से युद्ध किया, किन्तु फिरंगियों की शक्तिशाली सेना के सामने वे विजयी न हो सके। वीरों की मृत्यु के उपरान्त उनके परिवार की स्त्रियों को अंग्रेज किस प्रकार पकड़कर ले गए, उनके घरों को किस प्रकार निर्दयता से आग लगाई[4] आदि दृश्यों का कथात्मक चित्रण करके लेखिका ने इतिहास और कल्पना का मार्मिक समन्वय किया है।

आलोच्य उपन्यास में एक भावनात्मक सामाजिक कथानक के माध्यम से यह दिखाया गया है कि किस प्रकार कई बार माता-पिता की करनी का फल उनकी सन्तानों को भोगना पड़ता है। यौवन की अल्हड़ता युवकों और युवतियों को विवेकहीन बना देती है और एक बार मन विचलित हुआ नहीं कि सारा जीवन नष्ट हो जाता है। एक तो अपनी माता के विश्वासघात के कारण पाशो के मामू पहले ही उस पर कड़ा नियन्त्रण रखते थे और जब पाशो के यौवन की अल्हड़ता ने उसे करीमू के सामने मुस्कराने तथा रूमाल देने की प्रेरणा दी, तो मामाओं ने पाशो की हत्या की योजना बना ली। किसी प्रकार पाशो उनके विचारों से अवगत होकर भाग निकली, किन्तु उसका जीवन सुखी न रह सका। उसे वृद्ध दीवान पति-रूप में प्राप्त हुए। उनकी मृत्यु के बाद तो उसे बांदी तक का कार्य करना पड़ा। रह-रहकर उसके मन में यही विचार आता—"नानी झूठ न कहती थी—एक बार का थिरका पाँव जिन्दगानी धूल में मिला देगा। सच होके निकली

---

१. डार से बिछुड़ी, पृष्ठ १०२-१०४

२-३-४. देखिए 'डार से बिछुड़ी', पृष्ठ ४३-४४, १०२-१०५, ११२-११६

नानी की वाक्-वाणी।"[1] इस प्रकार पाशो के जीवन द्वारा लेखिका ने चारित्रिक पतन के दुष्परिणामों पर प्रकाश डालने का उद्देश्य रखा है, किन्तु पाशो की माता के सुखी जीवन-चित्रण के कारण लेखिका उक्त उद्देश्य में विशेष सफल न हो सकी। पाशो की माता का पैर फिसला तो उसे शेख-जैसा सज्जन पति तथा सुख-ऐश्वर्य का भोग मिला। ऐसे में पाशो के कष्ट केवल संयोग का ही परिणाम प्रतीत होते हैं।

प्रस्तुत उपन्यास की रचना पंजाबी-मिश्रित हिन्दी में हुई है। परांदा, भौंडे, गर्कजाने, लिशकारा, सयाले, मिट्ठड़ी आदि शब्दों[2] के अतिरिक्त पंजाबी वाक्यावली का भी प्रचुर मात्रा में प्रयोग किया गया है। यथा—

(अ) "लीड़े उतार पानी डालने को पाटी पर बैठी कि अपनी चिट्टी दूध देही पर सूजे रिसते मार के चित्तेरे देखती रह गई।"[3]

(आ) "न···न···बीबी रानी, लड़कियोंवाले काम नहीं। गोद में तेरी लाल पड़े, तू क्यों ऐसे काम करे।"[4]

(इ) "अँखियाँ घिर आई और खड़ी-खड़ी खुशी में काँपने लगी। वारी उन राहों से जिन पर से मेरा राजा वीर इस ड्योढ़ी पहुँचा है। वारी इस सुलच्छी घड़ी जिसने यह मीठी खबर सुनाई।"[5]

शैली को सजीव तथा प्रभावोत्पादक बनाने के लिए पंजाबी तथा हिन्दी के प्रचलित मुहावरों का प्रचुर प्रयोग किया गया है। यथा—

(अ) "भली कही राजयाँ, इस चलते पानी का ठौर कहाँ?"[6]

(आ) "भरी-भरी अँखियों डोर बाँध घड़े कुएँ में सरका दिए।"[7]

(इ) "हाय री, जात की किरली शहतीरों से गलबहियाँ। जरा फिर से तो कहना।"[8]

सुश्री सोबती की शैली माधुर्य गुण से ओतप्रोत है। उसमें भावना का आवेग अजस्र रूप से प्रवाहित होता प्रतीत होता है। केवल 'डार से बिछुड़ी' में ही नहीं, अपितु 'ग्यारह सपनों का देश' के अपने कथांशों में भी उन्होंने इसी शैलीगत विशिष्टता का परिचय दिया है। यथा—'प्यार की सब कथा, सब व्यथा शेष कर मीनल नर्सिंग होम की सीढ़ियाँ उतरी तो न मन सिहरा, न पाँव काँपे। शान्त हो गयी, स्वच्छ हो गयी देह, धुले कपड़े-सी अड़ी-अड़ी, कड़ी-कड़ी। सादी सफेद साड़ी में लिपटी अपने पुराने सतरंगी स्पर्श को जैसे नर्सिंग होम में छोड़ आयी। वह अवश-सी थकन, वह रोहित को पुकार-पुकार अपने

---

१. डार से बिछुड़ी, पृष्ठ ११७

२. डार से बिछुड़ी, पृष्ठ ८, १०, १६, २५, ४१, १०७

३-४. डार से बिछुड़ी, पृष्ठ २५, ४१

५. डार से बिछुड़ी, पृष्ठ ४४

६-७-८. डार से बिछुड़ी, पृष्ठ १३, १४, ६३

आलोड़न के पल, वह मोह की मोहनी—सब रीत गए। सब बीत गए।"[1]

निष्कर्ष

निष्कर्ष-रूप में यह ज्ञातव्य है कि सुश्री कृष्णा सोवती उत्कर्ष काल की उदीयमान उपन्यास-लेखिका हैं। आंचलिक उपन्यासों का प्रणयन करके उन्होंने लेखिकाओं द्वारा लिखे गए कथा-साहित्य में एक अभाव की पूर्ति की है। उनकी शैली में जो भाषागत विभिन्नता है, जो सरसता एवं मधुरताजन्य आकर्षण है वह सहज ही पाठक को प्रभावित कर लेता है। परिमाण में अल्प होने पर भी उनके कथा-साहित्य ने इतनी शीघ्र जैसी लोकप्रियता प्राप्त कर ली है, वह इस बात की सूचक है कि पाठकों ने एक प्रगतिशील लेखिका की सक्रिय प्रतिभा का उचित मूल्यांकन किया है। लेखिका में मौलिक सृजन की प्रतिभा है और लेखनी में विशेष बल है। यद्यपि कलात्मक सज्जा के आग्रह में अनेकशः भाव-पक्ष का सहज सौन्दर्य उभर नहीं पाया है, तथापि इसमे सन्देह नहीं कि उनकी सक्षम अभिव्यक्ति एवं चित्रमयी भाषा ने उक्त अभाव की किसी सीमा तक पूर्ति की है।

---

१. ग्यारह सपनों का देश, पृष्ठ २०१

सुश्री लीला अवस्थी

सुश्री लीला अवस्थी ने 'दो राहें', 'बिखरे काँटे' और 'बदरवा बरसन आये' शीर्षक तीन सामाजिक उपन्यासों की रचना की है। इनमें व्यक्ति एवं परिस्थितियों का संघर्ष दिखाकर अन्त में व्यक्ति को सर्वजयी सिद्ध किया गया है। लेखिका ने प्रायः कथानकों को सोद्देश्य रखा है और घटनाओं की परिणति सुखान्त में की है। इनमें से प्रथम दो उपन्यासों में उनकी लेखन-कला अपेक्षाकृत प्रौढ़ रूप में व्यक्त हुई है तथा 'दो राहें' को उनकी प्रतिनिधि रचना माना जा सकता है।

१. दो राहें

इस उपन्यास में समाज के अभिजात वर्ग एवं निम्न मध्यम वर्ग का तुलनात्मक चित्रांकन किया गया है। कैप्टन रघुनाथ का परिवार कथानक का मुख्य केन्द्र है, जिसके सदस्य हैं—कैप्टन रघुनाथ, उनकी पत्नी हेमा, उनके काका, और उनकी दो पुत्रियाँ रूबी तथा बेबी। हिंडन की बाढ़ के अवसर पर चारवर्षीया बेबी नदी में बहकर माता-पिता से विलग हो गई और एक निस्सन्तान हैडमास्टर चन्द्रप्रकाश के घर में 'गौरी' नाम से पलने लगी। एक दुर्घटना के परिणामस्वरूप चन्द्रप्रकाश असमय ही कालकवलित हो गए और निर्धनता एवं संयोग ने उनकी विधवा पत्नी जानकी को रघुनाथ के घर सेविका बना दिया। एक दिन एक कमरा साफ़ करते समय नन्हीं गौरी का चित्र मिल जाने पर जानकी समझ गई कि उसकी गौरी वस्तुतः कैप्टन की बेबी है, किन्तु उसके ममत्व ने उसे सत्योद्घाटन से रोक लिया और गौरी आया की पुत्री के रूप में रहकर उस परिवार की सेवा करती रही। जानकी के पावन संरक्षण में रहकर गौरी ने उच्च विचारों को प्राप्त किया और दशम कक्षा में प्रथम श्रेणी प्राप्त की। उधर रूबी अश्लील पत्रिकाओं तथा विनोद, जानी आदि प्रेमियों के चक्कर में रहकर सीनियर कैम्ब्रिज में असफल हो गई। काका को बीमारी में 'बेबी···बेबी' रटते देख जानकी दयार्द्र हो उठी और उनके स्वस्थ होने पर गौरी की वास्तविकता का रहस्योद्घाटन कर स्वयं गाँव में अपनी ननद के पास चली गई। गौरी एक विदुषी एवं सच्चरित्रा बालिका थी। कैप्टन रघुनाथ ने उसका विवाह प्रोफ़ेसर कैलाश से किया। उधर रूबी को विनोद से गर्भ रह गया तो उसने आत्महत्या का विचार किया, किन्तु उसके हिन्दी-अध्यापक कुंजीलाल ने उसे पत्नी-रूप में ग्रहण कर उसे तथा कैप्टन दम्पत्ति को उबार लिया।

इस प्रकार चन्द्रप्रकाश तथा उसके परिवार की कथा प्रासंगिक होते हुए भी मुख्य कथा के विकास में अत्यधिक सहयोगी रही है। उपन्यास का शीर्षक 'दो राहें' उसी से सार्थक है, क्योंकि कैप्टन रघुनाथ का परिवार अभिजात वर्ग का प्रतीक है और चन्द्रप्रकाश का परिवार मध्यम वर्ग के निर्धन परिवारों का प्रतिनिधित्व करता है। गौरी के माध्यम से लेखिका ने दोनों का संयोग कराते हुए दो तुलनात्मक दृश्य-चित्रों की अवतारणा की है और इस बिन्दु पर अपना ध्यान इस सीमा तक केन्द्रित किया है कि कथानक की समस्त घटनाएँ केवल उसी एक साँचे में ढलकर रह गई हैं। इससे कथानक मे एकरूपता तो आ सकी है, किन्तु लेखिका का दृष्टिकोण कुछ सीमित-सा हो गया है।

आलोच्य कृति में कथानक के अनुरूप दो प्रकार के पात्रों को स्थान प्राप्त हुआ है—(अ) मध्यम वर्ग के पात्र, (आ) अभिजात वर्ग के पात्र। चन्द्रप्रकाश, जानकी, राधा (चन्द्रप्रकाश की बहिन), गौरी तथा कुजीलाल प्रथम प्रकार के पात्र है। उनमे सदाचरण, सद्भाव, परस्पर सहयोग आदि सद्गुण कूट-कूटकर भरे हैं। दुर्गुण है तो केवल यही कि जानकी और राधा-जैसी अशिक्षित महिलाएँ स्त्री-शिक्षा को व्यर्थ मानकर गौरी को विशेष उत्साह से पढ़ाना नही चाहतीं, किन्तु घर-गृहस्थी, आचार-व्यवहार आदि की उपयोगी शिक्षा वे स्वय ही उसे देती हैं। पूँजीपति वर्ग में लेखिका ने दो प्रकार के पात्रों को प्रस्तुत किया है। एक ओर है कैप्टन रघुनाथ और उनकी फ़ैशनप्रिय पुत्री रूबी जो पूर्णत: पाश्चात्य सभ्यता के रग मे रगे है और दूसरी ओर हैं हेमा और काका जो धन के पंख लगाकर स्वच्छन्द गगन में उड़ना पसन्द नही करते, अपितु भारतीयता के सद्गुणों के पक्षपाती है। लेखिका ने कुछ पात्रों का चरित्र तुलनात्मक रूप में अंकित किया है। रूबी और गौरी के व्यक्तित्व इस प्रसंग में प्रमाण हैं। यथा—"गौरी रोज सुबह उठकर और रात को सोते समय हाथ जोड़कर भगवान से सफलता के लिए प्रार्थना करती। रूबी सोने से पहले और सवेरे उठकर सबसे पहले जानी का प्रेमपत्र पढ़ती। गौरी अपना समय पढ़ाई के सम्बन्ध में सोचने मे व्यतीत करती, रूबी जानी के।"[1] कुंजीलाल और विनोद का चरित्र भी इसी प्रकार तुलनात्मक रूप में चित्रित किया गया है।

विवेच्य कृति में प्राय: दो प्रकार के संवादों को स्थान प्राप्त हुआ है—(अ) सामान्य सम्भाषण, जो यथाप्रसंग कथानक एवं चरित्र-चित्रण के विकास में सहायक सिद्ध हुए हैं, (आ) तर्कपूर्ण वार्त्तालाप, जिनमें दोनों पक्ष अपनी प्रबल युक्तियाँ प्रस्तुत करते है और अन्त तक हार-जीत का निर्णय नही हो पाता। प्रथम प्रकार के कथोपकथन आलोच्य कृति में सर्वत्र द्रष्टव्य हैं। द्वितीय प्रकार के कथोपकथन में कैप्टन और काका के वे वार्त्तालाप उल्लेखनीय हैं जिनमें रघुनाथ नागरिक सभ्यता के सद्गुणों और ग्राम्य वातावरण के दोषों की चर्चा करता है और काका ग्राम्य वातावरण के सद्गुणों के समक्ष

---

१. दो राहें, पृष्ठ ७३

नागरिक कृत्रिमता का उपहास करते हैं।[1] इसी प्रकार एक अन्य स्थल पर काका और रूवी के तर्कपूर्ण संवाद है, जिनमें काका रूवी को पाश्चात्य वेशभूषा के अन्धानुकरण के त्याग का तर्कपूर्ण उपदेश देते हैं और वह झुंझलाती हुई उनके तर्क काटकर अपने पक्ष में युक्तियाँ देती है।[2] उक्त दोनों प्रकार के कथोपकथन रोचक एवं सजीव बन पड़े हैं। तर्कपूर्ण संवाद भी अधिक दीर्घ नहीं हैं, बौद्धिकता के अतिरिक्त उनमें भावात्मक युक्तियों का भी समावेश है। आलोच्य संवाद प्रायः पात्रानुकूल हैं, यथा—गौरी की उक्तियाँ नम्रतापूर्ण हैं तो रूवी की अहंकारपूर्ण, विनोद के कथन प्रायः कृत्रिम हैं तो काका के विवेकपूर्ण। इसी प्रकार जानकी, राधा, कुंजीलाल आदि पात्रों की भावाभिव्यक्ति उनकी प्रवृत्तियों के अनुरूप रही है।

लीला जी ने प्रस्तुत कृति में देशकाल सम्बन्धी विविध दृश्यों का चित्रण किया है। प्रारम्भ मे हिंडन नदी की बाढ़ से चन्दोली ग्राम की दुर्दशा का भयानक दृश्य अंकित है। इस प्रसंग में ग्रामवासियों के अन्धविश्वास का कितना सहज चित्र लेखिका ने अंकित किया है—"एक घना पीपल का पेड़ था, आसपास के ग्रामवासियों का विश्वास था कि जो उस पेड़ को देखेगा उसके घर में दो-चार रोज में कुछ बुरा अवश्य होगा।"[3] रघुनाथ के परिवार को केन्द्र बनाकर लेखिका ने पाश्चात्य सभ्यता की कृत्रिमता एवं खोखलेपन के विविध दृश्य अंकित किये हैं। हैडमास्टर चन्द्रप्रकाश के परिवार का चित्रण वर्तमान समाज का दूसरा रूप है, जो प्राचीन भारतीय संस्कृति का अनुगामी है। ईश्वरोपासना, पति-पत्नी के मध्य दृढ़ अनुराग, दीनों पर दया, दूसरों के दुःख में सहायता आदि इस परिवार के प्रमुख गुण हैं। वस्तुतः लेखिका ने उपन्यास की रचना इस उद्देश्य को सम्मुख रखकर की है—वर्तमान समाज में निर्धन और धनी दो वर्ग हैं, "दोनों के बीच विषमता की खाई है और उपन्यास का उद्देश्य इस खाई को भरने का प्रयत्न है।"[4]

'दो राहें' की रचना सरल और मुहावरेदार भाषा में हुई है। लेखिका ने देशज शब्दों तथा अनुप्रासात्मक शब्द-युग्मों (बाँस-बल्ली, घास-फूस, पाली-पोसी)[5] के प्रयोग द्वारा भी भाषा को व्यावहारिक सजीवता प्रदान की है। उनकी शैली मुख्यतः वर्णनात्मक है, जो यथाप्रसंग तुलनात्मक, व्यंग्यात्मक अथवा चित्रात्मक रूप धारण करती रही है। लेखिका ने भाषा-शैली को प्रभावपूर्ण बनाने के लिए उसका अनेकशः अलंकरण किया है। यथा—"जैसे तारों भरा नभ बिना चन्द्रमा के सुनसान लगता है, उसी तरह चन्द्रप्रकाश का परिवार चन्द्रप्रकाश के अभाव में सुनसान लग रहा था।"[6]

१. देखिये 'दो राहें', पृष्ठ ५-८
२. देखिये 'दो राहें', पृष्ठ ६६-६७
३. दो राहें, पृष्ठ ३
४. देखिये 'दो राहें', निवेदन
५. देखिये 'दो राहें', पृष्ठ ८, ८, ४६
६. दो राहें, पृष्ठ ४४

२. बिखरे काँटे

सुश्री लीला अवस्थी का 'बिखरे काँटे' शीर्षक सामाजिक उपन्यास १३८ पृष्ठों की संक्षिप्त रचना है। इसमें विक्रम और नलिनी नामक दो भाई-बहिनों की जीवन-कथा है, जिन्होंने पितृहीनता, निर्धनता, बेकारी आदि विपरीत परिस्थितियों में पिस-कर समाज के हाथों अनेक कष्ट सहे। बाद में दुर्दैव ने उन्हें माता की छाया से भी वंचित कर दिया, किन्तु वे दोनों धैर्यपूर्वक समस्त कष्टों का सामना करते रहे, अन्ततः विमुख परिस्थितियाँ स्वतः पराभूत हो गईं। विक्रम को नौकरी मिल गई, फलतः नलिनी का बाधित शिक्षा-क्रम पुनः चालू हो गया। विक्रम ने जाति-भेद के संकीर्ण विचारों को दूर करके दिलीप चटर्जी नामक एक बंगाली युवक, जो नलिनी के कॉलेज में मनोविज्ञान का योग्य प्रोफेसर था और जिसे वह मन-ही-मन अपना आराध्य मान चुकी थी, से उसका विवाह पक्का कर दिया। बहिन और बहनोई के आग्रह से विक्रम ने भी श्यामा नाम्नी सुन्दर युवती से अपने विवाह की स्वीकृति दे दी।

इस प्रकार कथानक को सुखान्त रूप देते हुए लेखिका ने विक्रम और नलिनी को विशेष कर्मठ एवं आदर्श पात्रों के रूप में प्रस्तुत किया है। उपन्यास के अन्य पात्रों को 'सत्' एवं 'असत्' की श्रेणी मे रखा जा सकता है। दिलीप चटर्जी, पारो (नलिनी की सखी), मोहन (विक्रम का मित्र) आदि पात्र प्रथम वर्ग के है। अन्य अनेक श्लाघनीय गुणों के अतिरिक्त मुख्य पात्रों के प्रति निःस्वार्थ सदाचरण इनकी उल्लेखनीय विशेषता है। असत् पात्रों में विक्रम के चाचा-चाची, पीपलवाली गली के पंडित जी (जो वृद्ध होते हुए भी धन के बल पर नलिनी के चाचा-चाची को अपनी ओर मिलाकर युवती नलिनी से विवाह करने के इच्छुक थे), मोहन का अनुज अखिल (जो अपने नीच सहपाठी कैलाश सिंह के बहकावे में आकर नलिनी से घृणित सम्बन्ध स्थापित करने चला था), कैलाश सिंह आदि पात्र द्वितीय श्रेणी के हैं। अन्य दुर्गुणों के अतिरिक्त इनका सर्वोपरि दुर्गुण यही है कि ये विक्रम और नलिनी के सरल जीवन में कुटिलता के कंटक बिखेरने की चेष्टा करते हैं। प्रायः इन पात्रों को लेखिका ने अन्त में सुधरते, अनुताप करते अथवा ईश्वर द्वारा दण्डित होते दिखाया है। वैसे, उक्त दोनों वर्गों के पात्र मुख्य पात्रों के चरित्र-विकास में सहयोगी रहे है और मात्र इसी उद्देश्य से उपन्यास में उनका प्रवेश कराया गया है।

लेखिका ने कथानक को नाटकीयता से विभूषित करते हुए रुचिर संवादो की योजना की है। इन सम्भाषणों की उल्लेखनीय विशेषता यह है कि ये अत्यन्त लघु हैं, प्रायः एक ही पंक्ति के, और भाव एवं भाषा दोनों की दृष्टि से वक्ता की प्रवृत्तियों के अनुरूप हैं। उदाहरणार्थ पारो एवं कुन्ती भाभी निम्नलिखित व्यावहारिक शब्दावली में सम्भाषण करती हैं—(अ) "भाई की खैर-खबर पूछने कैसे नही आई",[1] (आ) "तुझे

---

१. बिखरे काँटे, पृष्ठ ३७,

अच्छा लगे या बुरा, मैं नहीं जाने की।"[1] महाराष्ट्रीय रिक्शावाला मराठी-मिश्रित हिन्दी में अपनी बात कहता है—"तुमने बुलाया है मेरे को करके, रहने-खाने कू क्या? एक सिंगल-गिंगल पी के चिवड़ा खाना और मस्त रेक्शा में सोना।"[2] इसी प्रकार कैलाश सिंह कहीं-कहीं अपनी मातृभाषा पंजाबी मे भाव व्यक्त करता है।[3]

प्रस्तुत उपन्यास में लेखिका ने देश और समाज में रेंगते कीड़ों की ओर दृष्टिपात किया है। दहेज-प्रथा के कारण निर्धन घर की कन्या के विवाह में कठिनाई; जाति-पाँति के बन्धन के कारण बेमेल विवाह; वृद्ध-विवाह के कारण युवती विधवाओं की संख्या में वृद्धि; बेकारी, जातिगत भेदभाव एवं प्रान्तीय सकीर्णता आदि देश एवं समाज मे निहित कुरूपताओं की ओर लेखिका ने अनेकशः व्यंग्य एवं करुणापूर्ण संकेत किये हैं।[4] प्रसंगानुकूल वातावरण के चित्रण में लेखिका विशेष कुशल है। विवाह के घर मे होनेवाली धूमधाम, गाना-बजाना,[5] कॉलेज में उपद्रवी छात्रों का शरारत से भरा आचरण[6] आदि दृश्यो के सहज अवतरण उक्त कथन के प्रमाण हैं। समाज की जर्जर मान्यताओं पर कटु प्रहार करना आलोच्य कृति का उद्देश्य है और लेखिका ने इसमें आदर्शोन्मुख यथार्थ का चित्रण करते हुए पाठकों को नव उद्बोधन का संदेश दिया है।

सुश्री लीला अवस्थी ने अपने अन्य उपन्यासों की भाँति प्रस्तुत कृति में भी प्रायः व्यावहारिक शब्दावली को स्थान दिया है। प्रसंगानुकूल मुहावरो के प्रयोग ने भाषा को पर्याप्त सजीवता प्रदान की है। यथा—"सुनते-सुनते कान पकते जा रहे थे",[7] "भाई की इकलौती बेटी को वह जान-बूझकर कुएँ में ढकेल रहा है"[8], "दूल्हे के सामने नाक नहीं रगड़नी पड़ती"[9] आदि। शैली में वर्णनात्मकता एवं नाटकीयता का सुन्दर सामंजस्य है। प्रायः वर्णन-शैली में प्रवाह है, किन्तु कतिपय स्थलों पर किसी पात्र की दीर्घ विचारधारा के कारण कथानक के सहज प्रवाह में व्याघात उत्पन्न हो गया है। उदाहरणार्थ नलिनी के विवाह को लेकर विक्रम का वह दीर्घकालीन चिन्तन-प्रवाह उल्लेखनीय है, जिसमें वह भूत, वर्तमान और भविष्यत् को लेकर कितनी ही व्यक्तिगत एवं सामाजिक बातों पर विचार करता रहता है।[10] कुल मिलाकर लेखिका की भाषा-शैली सरल, सरस एवं प्रवाहपूर्ण है।

३. बदरवा बरसन आए

डॉ० लीला अवस्थी विरचित 'बदरवा बरसन आए' १४४ पृष्ठों का लघु सामा-

१-२. बिखरे काँटे, पृष्ठ ३८, ६४-६५
३-४. देखिये 'बिखरे काँटे', (अ) पृष्ठ ८०, (आ) पृष्ठ ४४-५०, ६१
५-६. देखिये 'बिखरे काँटे', पृष्ठ ३४, ७७
७-८-९. देखिये 'बिखरे काँटे', पृष्ठ ३२, ३३, ३५
१०. देखिये 'बिखरे काँटे', पृष्ठ ४३-५०

जिक उपन्यास है। इसमें लेखिका ने समाज एवं दुर्भाग्य द्वारा प्रताड़ित कुछ भावुक पात्रों को केन्द्र में रखकर एक प्रेम-कथानक की सृष्टि की है, जिसमें शृंगार रस के संयोग एवं विप्रलम्भ दोनों पक्षों का विस्तार से वर्णन किया गया है। कथानक का प्रारम्भ गौतम और सलमा के प्रथम परिचय से हुआ है। गौतम एक कुमारी कन्या का पुत्र था, जो एक सेठ की वासना का शिकार बनकर समाज में कलंकित जीवन-यापन कर मृत्यु को गोद में शान्ति पा चुकी थी और सलमा एक वेश्या की पुत्री थी, जिसने प्रसिद्ध ख्यालिये मास्टर अमर से विवाह रचाकर गृहस्थ बनकर रहने के स्वप्न संजोये थे, किन्तु समाज की भर्त्सना से आतंकित अमर ने एक वर्ष बाद ही सलमा का परित्याग कर दिया। समाज के अपमान एवं तिरस्कार से व्यथित गौतम एवं सलमा गरीबों के मुहल्ले में कमरे किराए पर लेकर रहने लगे। समदुःखभोगी एवं संगीत-मर्मज्ञ होने के नाते दोनों में परिचय बढ़ा और परस्पर भाई-बहिन का पावन नाता स्थापित हो गया। सलमा की एक प्रिय शिष्या करुणा उसके घर संगीत की शिक्षा प्राप्त करने के लिए आकर रही, तो गौतम और करुणा में प्रेम-सम्बन्ध का विकास हुआ। किन्तु, धनी परिवार की इकलौती पुत्री करुणा का विवाह एक धनी-मानी परिवार में हुआ, जहाँ वह गौतम की स्मृति के कारण प्रसन्न न रह सकी। विवाह के बाद करुणा जब गौतम से मिलने आई तो एक बार भावुकता के आवेश मे वे तन-मन से एक हो गए। इस कृत्य की आकस्मिकता ने दोनों को इतना स्तब्ध कर दिया कि करुणा अगले दिन ससुराल लौट गई और गौतम घर छोड़कर अन्यत्र चला गया। इसके उपरान्त गौतम की उस्ताद रवि से भेंट, उनके द्वारा उसे एक लाख की सम्पत्ति की प्राप्ति, उस्ताद की मृत्यु के उपरान्त उनकी इच्छा के अनुसार उस राशि से एक संगीत-स्कूल की स्थापना, सलमा को भी वहीं संगीत-शिक्षिका के रूप में बुलाना, उधर करुणा का मरते समय अपने से उत्पन्न गौतम के पुत्र अजित को गौतम के नाम एक पत्र देकर भेज देना, गौतम का अपने संगीत-विशारद आत्मज को पाकर तृप्त हो जाना आदि अनेक घटनाओं का विस्तार से वर्णन किया गया है।

आलोच्य कथानक में घटना-बाहुल्य है किन्तु रोचकता एवं सजीवता का अभाव रहा है, क्योंकि घटनाएँ क्रमबद्ध एवं सुचारु रूप से नियोजित नहीं हैं। कथानक प्रायः मन्द-मन्थर गति से एकरसता के साथ विकसित हुआ है, फलतः अनेकशः पाठक ऊब उठता है। घटनाओं में न तीव्रता है, न क्षिप्रता और न वाछित आकस्मिकता। फिर सुगठन आता भी कहाँ से ? जो दोष कथानक में है, प्रायः वही चरित्र-चित्रण में भी है। प्रायः सभी मुख्य पात्र-पात्राएँ भावुकता से अनुप्राणित रहे है। सभी पात्रों की विशेषताएँ अथ से इति तक एकरूप हैं, न कोई उल्लेखनीय उतार है न चढ़ाव, न स्खलन न उन्नयन। लेखिका ने प्रायः सभी पात्र-पात्राओं को दया, उदारता, सहृदयता आदि सद्गुणों से विभूषित किया है। सलमा का पति अमर, गौतम का जन्मदाता सेठ और करुणा का कुव्यसनी पति उक्त विशेषताओं के अपवाद माने जा सकते हैं, किन्तु उनका उल्लेख या तो पृष्ठ-

भूमि के रूप में हुआ है या मुख्य पात्रों के प्रसंग में सोद्देश्य हुआ है।

इस उपन्यास के अधिकांश संवाद या तो दार्शनिक हैं अथवा नीतिमूलक। यथा—"कलाकार को धन का लालच नहीं करना चाहिये"[1], "अपनी आत्मा की तुष्टि को सर्वोपरि समझकर केवल थोड़े में सन्तोष करना चाहिये"[2], "सांसारिक निन्दा की ओर से कान बन्द कर लेने चाहियें"[3] आदि। करुणा और गौतम के संवाद प्रायः प्रेमपूर्ण एवं रसभीने हैं, गौतम और सलमा के वार्तालाप पारस्परिक आत्मीयता एवं स्नेह-भाव के द्योतक हैं; और करुणा के सास-ससुर की उक्तियाँ प्राय वधु के दुःखपूर्ण जीवन की चिन्ता को लिए है। इसी प्रकार विभिन्न घटनाओं एवं पात्रो के प्रसग में तदनुरूप विविधरूपी संवादो का विधान हुआ है। यह हर्ष का विषय है कि कथानक एवं चरित्र-चित्रण की भाँति संवाद उतनी एकरूपता एव नीरसता से दूषित नही हैं।

लेखिका द्वारा चित्रित देशकाल के उदाहरणस्वरूप पात्रों की वे उक्तियाँ प्रस्तुत की जा सकती हैं जिनमें उन्होने समाज के अन्याय तथा हृदयहीनता के प्रति विष उगला है।[4] प्रासगिक रूप से उच्च वर्ग की निष्ठुरता, अत्याचार, दम्भ आदि कुप्रवृत्तियों की भी चर्चा हुई है। फिर भी आलोच्य लेखिका ने प्रस्तुत सन्दर्भ में केवल रूढ़िगत परम्परा का पिष्टपेषण किया है—समकालीन समाज की ज्वलन्त प्रवृत्तियोंके प्रति उन्होंने उदासीनता का ही परिचय दिया है। जैसा कि कथानक से स्पष्ट है, अपने संगीत-ज्ञान की छाया में एक करुण प्रेम-कथानक की सृष्टि ही लेखिका का लक्ष्य था, जिससे प्रेरित होकर वे प्रस्तुत उपन्यास के प्रणयन में प्रवृत्त हुईं। यों उद्देश्य अपने आप मे कुछ बुरा नही था, किन्तु लेखिका उसका उचित निर्वाह नहीं कर पायी। अथ से इति तक संगीत की ही चर्चा करते रहना या बलपूर्वक दो भिन्न वर्गों के पात्रों में प्रेम-सम्बन्ध की स्थापना करके पूर्व-निश्चित कथा-सूत्रों के आधार पर उसे दुखान्त रूप दे देने मात्र से ही तो लेखिका के कर्त्तव्य की इतिश्री नही हो गई। यदि वे किंचित् साधना करतीं, जैसी कि उन्होने अपने अन्य उपन्यासों में की है, तो निश्चय ही उक्त उद्देश्य के अभिव्यंजनार्थ एक सुगठित एवं सजीव उपन्यास प्रस्तुत कर सकती थी।

विवेच्य उपन्यास की भाषा प्रायः परिष्कृत, मुहावरेदार एवं सूक्तिगर्भित है। उदाहरणस्वरूप ये वाक्य देखिए—"मेरे नाम पर मिट्टी न उछालिए"[5], "मैंने बहू को सदा सिर आँखों पर रखा है"[6], "जलते हृदय मे जब सहानुभूति का घी पड़ता है तब वह धधककर जल उठता है"[7] आदि। यों लेखिका ने यत्र-तत्र अंग्रेजी और उर्दू के प्रचलित शब्दों का भी प्रयोग करने मे संकोच नहीं किया है और भाषा की सजीवता की दृष्टि से यह अच्छा ही है, किन्तु मुख्य रूप से उन्होने तत्सम-बहुला हिन्दी को ही स्थान

१-२-३. देखिये 'बदरवा बरसन आए', पृष्ठ २१, २३, ८

४. देखिये 'बदरवा बरसन आए', पृष्ठ ६-८, १०, ३१

५-६-७. देखिये 'बदरवा बरसन आए', पृष्ठ ७६, ७६, ६३

दिया है। जहाँ तक शैली का प्रश्न है; उपन्यास में मुख्य रूप से वर्णनात्मक, अथवा यों कहिए कि विवरणात्मक, और गौण रूप से नाटकीय शैली का संयोग रहा है। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि आलोच्य कृति उतनी प्रभावपूर्ण नहीं बन सकी, जिसके कारण-रूप तथ्य पहले ही व्यक्त किये जा चुके हैं।

निष्कर्ष

उक्त उपन्यासों के अध्ययन से स्पष्ट है कि इनमें परिस्थिति-प्रताड़ित पात्रों के जीवन संघर्षों का चित्रण किया गया है। जब तक व्यक्ति समाज से भय खाता है, उसके बनाए विधि-निषेधों के आगे सिर झुकाकर चलता है, तब तक आक्रान्ता उसे और भी पददलित करते रहते हैं। किन्तु, जब वह संघर्षों से जूझने को कमर कस लेता है तो विषमताएँ स्वतः पराभूत हो जाती हैं। लेखिका के तीनों उपन्यासों में यही सन्देश व्यंजित है। इस सम्बन्ध में डॉ० त्रिभुवनसिंह की उक्ति द्रष्टव्य है—"कुमारी लीला अवस्थी के दो सामाजिक उपन्यास 'दो राहें' और 'बिखरे काँटे' मुख्यतः नारी वर्ग की यथार्थ जीवनचर्या प्रस्तुत करते हैं। लेखिका द्वारा प्रस्तुत किये गए चित्र इसलिए विश्वसनीय हैं कि उसने उन्हें निकट से देखा और स्वयं उनका अनुभव किया है।"[1] वस्तुतः लेखिका ने यथार्थ की कटुता अथवा तिक्तता एवं आदर्श की पावनता के तुलनात्मक चित्रण में विशेष रुचि ली है और कथानक, पात्रों एवं वातावरण को जीवन-दर्शन के आलोक में संयोजित किया है।

---

१. हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद, पृष्ठ ४९६

श्रीमती चन्द्रकिरण सौनरेक्सा

श्रीमती चन्द्रकिरण सौनरेक्सा ने 'आदमखोर' शीर्षक कहानी-संग्रह के अतिरिक्त 'चंदन चाँदनी' शीर्षक सामाजिक उपन्यास का प्रणयन भी किया है। इसमें मध्यम वर्ग के निम्नस्तरीय परिवारोंके अन्तरिम जीवन की सफल झाँकी चित्रित की गई है। श्रीमती रजनी पनिकर ने जहाँ अपने उपन्यासों में उच्च मध्यम वर्ग की समस्याओं को व्यक्त किया है, वहाँ श्रीमती सौनरेक्सा ने इस उपन्यास में निम्न मध्यम वर्ग की ज्वलन्त समस्याओं को स्थान दिया है। रोचकता की दृष्टि से भी यह उपन्यास आद्योपान्त पठनीय है। इसका मुख्य केन्द्र कथा-नायिका गरिमा है, जो एक निम्न मध्यवर्गीय परिवार की शीलवती कन्या है। कन्या के साँवले रंग के दण्डस्वरूप अपनी सीमा से अधिक दहेज न जुटा पाने के कारण माता-पिता २३ वर्ष की होने तक भी उसका विवाह नहीं कर पाये। इस बीच उन्होंने गिरीश नामक एक युवक से बात पक्की की थी, किन्तु साँवली तथा सादी गरिमा की अपेक्षा उसने उसकी गोरी एवं चंचल प्रकृति की छोटी बहिन प्रतिमा को पत्नी बनाना पसन्द किया। गरिमा ने एम० ए० करके अपनी सखी शान्ता की सहायता से विद्यालय में नौकरी कर ली और इस प्रकार दरिद्र घर मे जीवन की सुविधाएँ जुटाने का प्रयास किया। शान्ता के माध्यम से उसका परिचय नायक राज से हुआ, जिसे रंगमंच की स्थापना करने और नाटक अभिनीत करने में विशेष रुचि थी। दोनों ने एक-दूसरे को पसन्द किया और माता-पिता के विरोध की उपेक्षा करके विवाह-बन्धन में बँध गए। ससुराल के निर्धनताजन्य अभावों को मिटाने के लिए गरिमा ने एक कार्यालय में कार्य करना प्रारम्भ कर दिया। धन पाकर राज के माता-पिता का विरोध दूर होता गया, किन्तु राज अपने अहं तथा बेकारी के कारण गरिमा से रुष्ट हो गया और गृह त्यागकर अपने भाई-भाभी के पास नौकरी खोजने चला गया। विरहावस्था में राज मुक्ता नाम की विलासिनी नारी की उच्छृंखलता का खिलौना बना और गरिमा अपने साहब की विलासी वृत्ति का शिकार होने से बाल-बाल बची। दोनों की आन्तरिक दृढ़ता ने उनके चरित्रों की रक्षा की और वे पुनः मान, रोष आदि छोड़कर तन-मन से एकाकार हो गए।

गरिमा तथा राज की जीवन-गाथा आलोच्य कथानक की प्रमुख कथा है। गरिमा की सखी शान्ता की कथा गौण है और मुख्य कथा में विशेष सहयोगिनी रही है। २७५ पृष्ठों के इस बृहद् उपन्यास में घटनाएँ अधिक नहीं हैं; और यह लेखिका का विशेष गुण है कि अल्प घटनाओं को अत्यन्त सुनियोजित एवं स्वाभाविक गति से विकसित करके

उन्होंने कथानक को रोचक तथा सुगठित रूप प्रदान किया है। मध्यवर्गीय परिवार में नित्य सम्मुख आनेवाली छोटी-बड़ी समस्याओं पर लेखिका ने बड़ी सूक्ष्म दृष्टि रखी है और उन्हें इस कुशलता से कथानक में गुम्फित किया है कि उनके कथा-शिल्प की प्रशंसा किये बिना नहीं रहा जाता।

चरित्र-चित्रण की दृष्टि से विश्लेषण करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि आलोच्य लेखिका पात्रों को स्वाभाविक रूप में प्रस्तुत करने में सिद्धहस्त है। पाठक पात्रों के व्यक्तित्व में डूब-सा जाता है और अनेकशः उसके मन में यह भ्रम उत्पन्न होता है कि वह काल्पनिक पात्रों की अपेक्षा वास्तविक व्यक्तियों के सम्पर्क से गुजर रहा है। नायिका गरिमा का व्यक्तित्व अत्यन्त स्वस्थ एवं सबल है। एम० ए० तक शिक्षा पाकर वह आधुनिकाओं की भाँति प्रगल्भा अथवा निर्लज्जा नहीं बन जाती, अपितु माता-पिता, सास-ससुर, पति आदि गुरुजनों के प्रति सेवा एवं आदर का भाव रखती है। किन्तु, अन्याय सहन करना अथवा पर्दा आदि अनावश्यक रूढ़ियों से चिपके रहना उसे सह्य नहीं है। ऐसी स्थितियों का वह डटकर विरोध करती है तथा अपने सौजन्य एवं चारित्रिक गरिमा से परिस्थितियों को अनुकूल बना लेती है। शान्ता के चरित्र-चित्रण में भी लेखिका विशेष सफल रही हैं। दुनिया उसे चरित्रहीना समझती है, और वह है भी, किन्तु इसके पीछे वेदना और परिस्थिति की विवशताओं का जो इतिहास है उसके प्रकाश में पाठक उससे घृणा नहीं कर पाता। अपनी दुखिया माता तथा भाई-बहिनों के पालन-पोषणार्थ उसने वृद्ध, किन्तु धनी वकील को अपना जीवन-संगी बना लिया और उसके प्रति कभी विश्वासघात नहीं किया। विवाह के पूर्व उसने जो यह मूलमंत्र अपनाया था—'रोटी खाओ घी शक्कर से, दुनिया जीतो मक्कर से'—यह परिस्थितियों की विवशता ही तो थी। उसके प्रति पाठक की पूर्ण संवेदना है। घृणा की पात्र शान्ता नहीं, मुक्ता है जो राज को विवाहित जानकर भी वासना का जाल फैलाती है। नायक राज यद्यपि उच्च चरित्र का व्यक्ति है, तथापि बेकारी के कारण उसके मन में 'कमाऊ पत्नी' के विरुद्ध कुछ कुंठाएँ घर कर जाती हैं और उसका चोट खाया 'अहं' उसे गरिमा को पीडा पहुँचाने की प्रेरणा देता है। उसमें नायकोचित साहस एवं दृढ़ता का अभाव है। इसीलिए वह पिता का खुलकर विरोध नहीं कर पाता और अपने आदर्शों का गला घोंटने को बाध्य होता है। एक ओर वह नारी की शिक्षा तथा प्रगति का समर्थक है तो दूसरी ओर मध्यकालीन संस्कारों की जंग-लगी बेड़ियों से भी उसे मोह है। लेखिका ने पुरुष पात्रों को अपेक्षाकृत निम्न स्तर पर प्रस्थापित किया है। गरिमा को ठुकराकर प्रतिमा से विवाह करनेवाला गिरीश जब विवाह के उपरान्त बड़ी साली गरिमा से प्रेम-याचना करता है तो अनायास ही पाठक को उससे घृणा हो जाती है। शान्ता के साथ विश्वासघात करनेवाला उसका प्रेमी जेम्स भी इसी श्रेणी का है। गरिमा के माता-पिता तथा राज के परिवार के सदस्य मध्यम वर्ग के वे सामान्य पात्र हैं जिनसे हमारा नित्यप्रति का सम्पर्क रहता है। लेखिका ने उक्त पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं को उपन्यास में अत्यन्त स्वाभाविकता के साथ उतारा है। गरिमा की जेठानी

की गर्वीली चितवन, बात-बात में ताना मारने की प्रवृत्ति, पति के अधिक कमाने पर गर्व आदि प्रवृत्तियाँ अत्यन्त सजीवता से चित्रित की गई हैं। बाह्य परिस्थितियों की प्रतिक्रिया में पात्रों की मानसिक विचारधारा के विभिन्नरूपी उतार-चढ़ाव का भी लेखिका ने मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है। विवाह के बाद परस्पर मनमुटाव होने पर राज एवं गरिमा की मानसिक स्थितियों का चित्रण उक्त कथन का प्रमाण है।[1]

आलोच्य लेखिका ने पात्रों के मध्य वार्त्तालाप का विधान करते समय उनकी रुचि, संस्कार, भावना, विचारधारा तथा बाह्य स्थिति को लक्ष्य में रखा है। यही कारण है कि इस उपन्यास में अत्यन्त स्वाभाविक एवं सजीव कथोपकथन के दर्शन होते हैं। इसके अतिरिक्त संवादों में यत्र-तत्र वाग्वैदग्ध्य का भी समावेश हुआ है। इस प्रसंग में राज और गरिमा के प्रेम तथा मान से युक्त वार्त्तालाप उल्लेखनीय हैं।[2] गरिमा की सास तथा जेठानी की उक्तियाँ इतनी सजीव हैं कि उनका साकार चित्र नेत्रों में उभर आता है। गरिमा की निरीह देवरानी ललिता के पास जब कोई सूती साड़ी न रही तो वह चुपके से रेशमी साड़ी पहनकर रसोई में काम करने लगी, जिस पर सास और गरिमा की जेठानी ने जो हंगामा मचाया, वह द्रष्टव्य है—

"सास ने बुड़बुड़ाकर कहा—'जाने देह मे काँटे लगे हैं, जो इतनी जल्दी धोतियाँ फाड़ डालती है। सबको बराबर कपड़ा आता है, पर छोटी को सदा यही भींकना रहता है।'

जिठानी ने पिन्टू के छोड़े लड्डू और मठरियों को मुँह में भरे हुए ही दालान मे बैठे हुए टीप लगाई—'वही साल में चार धोतियाँ मुझे मिलती हैं। मै तो उनमें से मोटीवाली धोतियाँ मरी पहनती ही नहीं हूँ। वह भी तो मैंने अबकी राज लल्ला के ब्याह मे नायन और कहारिन को दे दी थी।'

गरिमा से चुप नहीं रहा गया, धीरे से उत्तर दिया—'भाभी, तुम्हें अपने मायके से भी तो बहुत कपड़ा मिलता है।'

'तो? उसमें किसी को जलन क्यों हो?' भाभी का स्वर प्रखर हुआ—"मायका तो सभी के है। फिर जिसकी जितनी बिसात हो, उसे उसी ढंग से पहिनना चाहिये। जब रसोई चौके में रेशम, मखमल पहना जाएगा तो आने-जाने, तीज-त्योहार पर आप ही चिथड़े लटकेंगे। बदनामी किसकी होगी? ससुर जेठ की।"[3]

आलोच्य उपन्यास में भारतीय निम्न मध्य वर्ग की छोटी-बड़ी विभिन्न समस्याओं का चित्रण हुआ है, जिनमें से अधिकांश समस्याओं के मूल में प्राचीन एवं अर्वाचीन विचारधाराओं का संघर्ष रहा है। इनमें सबसे उग्र है दहेज की समस्या, जिसके कारण युवती

---

१. देखिये 'चंदन चाँदनी', पृष्ठ २४०, २५२, २५३
२. देखिये 'चंदन चाँदनी', पृष्ठ १२६-१२७, १३४-१३६
३. चंदन चाँदनी, पृष्ठ १४१

कन्या का पिता निराशा के अन्ध कूप में गिर जाता है, जहाँ से उबरना सहज नहीं। यह समस्या गरिमा के पिता और श्वसुर (ननद शीला का विवाह करते समय) दोनों के समक्ष उपस्थित हुई और उन्होने अत्यन्त कठिनाई से कन्या-ऋण से मुक्ति पाई। एक अन्य कटु समस्या, जो मध्य वर्ग को बहुधा चिन्तित किये रहती है, बेकारी की समस्या है। राज और उसके भाई देव के समक्ष बहुत दिनों तक यह समस्या रही। इसी से सम्बद्ध अन्य कठिनाइयाँ हैं— (अ) सम्मिलित परिवार मे बेकार सदस्य तथा उसकी पत्नी का सब की सेवा करने पर भी निरादर पाना और कमाऊ पति की पत्नी का निठल्ली रहकर भी सब पर रौब गाँठना और गुरुजनों का आदर भी पाना, (आ) दरिद्रता तथा अभावों का जीवन व्यतीत करना, किन्तु सड़े-गले संस्कारो के फलस्वरूप शिक्षिता कन्याओं एवं वधुओ को नौकरी न करने देना, (इ) पर्दा-प्रथा, जाति भेद आदि पूर्व-मान्यताओं का कट्टरता से पालन आदि। वर्तमान समय में परिस्थितियाँ परिवर्तित हो चुकी हैं, किन्तु मध्यवर्गीय परिवारो में आदर्शो की वही पुरानी परम्परा चली आ रही है। लेखिका ने अनेकशः प्राचीन और अर्वाचीन स्थितियों की तुलना की है। यथा——

(अ) "उसने सोचा—अन्यथा घर में ही बन्द रहकर वह कैसे दिन काटेगी ? न जाने पहले की लड़कियाँ कैसे रह पाती थी। परन्तु पहले घरों मे काम कितना होता था ? गाय-भैंस, गोबर, कण्डे, दही विलोना, चक्की पीसना, पानी भरना और समय बचने पर व्रत, अनुष्ठानों, मुण्डन-जनेउवों की तैयारी करना तथा एक-दूसर के घर की आलोचना करना——पूजन, कथा भागवत और मन्दिर भी काफ़ी समय घेर लेते थे——पर अब कलों का पानी है, मशीन का पिसा आटा है। गाय-भैंस पालना हाथी रखने के बराबर महँगा है। महँगाई ने व्रत, अनुष्ठानों और विवाहों के भोज-समारोहों को संक्षिप्त कर दिया आर लड़कियाँ पढ़-पढ़कर संसार के अन्य विषयों में भी रुचि लेने लगी हैं।"[1]

(आ) "आज वीर पूजा का युग नही है। तलवार द्वारा शौर्य दिखाकर पत्नियाँ जीतने का युग भी नही है। आज तो पति के पौरुष और योग्यता का एकमात्र माप है, उसके सम्पत्ति उपार्जन की क्षमता।"[2]

गरिमा की ससुराल के वातावरण एवं रीति-नीतियों का चित्रण सामान्य स्तर के मध्यवर्गीय परिवार के अनुकूल ही किया गया है।[3] वातावरण के अंकन में श्रीमती सौनरेक्सा सिद्धहस्त हैं। पारिवारिक चित्रों के अतिरिक्त स्कूल, कार्यालय, स्टेज आदि सार्वजनिक स्थलों के दृश्यों एवं रीति-नीतियों का भी यथार्थ अंकन प्रस्तुत किया गया है। उन्होंने रूढ़िग्रस्त जीवन-मूल्यों की निरर्थकता सिद्ध करते हुए सशक्त एवं परिस्थित्यानुकूल भावों की सुप्रतिष्ठा के उद्देश्य से विवेच्य उपन्यास की रचना की है। देश की स्वतन्त्रता से नव प्रकाश की जो किरणें प्रस्फुटित हुई हैं उनका प्रभाव प्रायः उच्च मध्यम वर्ग तथा अभि-

---

१-२. चंदन चाँदनी, पृष्ठ १४६, ७३-१७४

३. चंदन चाँदनी, पृष्ठ ११२-११५

जात वर्ग में दृष्टिगत हुआ है। निम्न मध्य वर्ग अभी तक अपने जड़ संस्कारों में आबद्ध है। दहेज-प्रथा, बेकारी की समस्या, जातीय भेद-भाव, पर्दा-प्रथा, छुआछूत की बीमारी अभी तक उक्त वर्ग में गहरी जड़ जमाये हैं। नया रक्त इन जर्जर तथा शोषक प्रथाओं को सहन नहीं कर पाता और परिणाम होता है संघर्ष—प्राचीन और अर्वाचीन विचार-धाराओं में द्वन्द्व। लेखिका का मत है कि अपने अधिकारों की रक्षा के लिए यह संघर्ष अनिवार्य है। इसी भावना को मूर्त रूप देने के लिए उन्होंने गरिमा और ललिता का सृजन दिया है जो परिवर्तित सामाजिक व्यवस्था और नए मूल्यों की सजीव प्रतिमाएँ हैं। गरिमा की अपनी देवरानी ललिता से कही गई निम्नलिखित उक्तियाँ कितनी क्रान्तिकारी हैं—

"गरिमा ने उसके गाल में ठुनका देकर कहा—"देखती रह मैं इस घर से घूँघट प्रथा समाप्त करके ही रहूँगी।"

"तुम बड़ी विकट हो जीजी।"

"विकट की इसमें क्या बात है। जीने की साधारण सुविधाओं के लिए भी हमें यह क्यों सोचना पड़े कि बुढ़ऊ लुढ़क जाएँ तो हम अपने मन की निकालेंगे। या पति के साथ अन्य स्थान पर बदली हो जाय तो हम इस प्रकार मौज करेंगे? वह समय लद गया जब बहुओं के शोषण पर सारा परिवार पाँव पर पाँव रखकर फूली-फूली खाता था।"[1]

अपनी कहानियों की भाँति श्रीमती सौनरेक्सा ने इस उपन्यास में भी सरल तथा साहित्यिक हिन्दी का प्रयोग किया है। 'दाई से पेट क्या छिपाना है', 'न नव मन तेल होगा न राधा नाचेगी' आदि मुहावरे-लोकोक्तियों का प्रसंगानुकूल प्रचुर प्रयोग हुआ है, जिससे भाषा की सजीवता में वृद्धि हुई है। उपन्यास की शैली रोचक तथा प्रभावपूर्ण है। यत्र-तत्र चुटीली व्यंग्यपूर्ण शब्दावली ने शैली को विशेष सौष्ठव प्रदान किया है। उदाहरणार्थ निम्नलिखित पंक्तियाँ उद्धरणीय हैं—"संसार में मनुष्य सबकी आलोचना सुन सकता है पर अपने विरुद्ध पत्नी की आलोचना नहीं। भारतीय पति तो आज भी पत्नी को मात्र अपना ही ग्रामोफोन समझना चाहता है जो केवल उसी के गाये रेकार्ड बजा सकती है।"[2] लघुवाक्यगर्भित भाषा शैली में लेखिका ने वर्णन की विशेष गरिमा को प्रकट किया है। यत्र-तत्र कथितव्य की पुष्टि के लिए उन्होंने लघु सूक्ति-वाक्यों का आश्रय भी लिया है। "अभावों के दिवस व्यक्ति के मन की आर्द्रता सुखा देते हैं"[3], "क्रोध से विवेक कुंठित हो जाता है"[4] आदि वाक्य इसके प्रमाण हैं। कतिपय स्थलों पर सूक्ष्म भावों की तुलना स्थूल दृश्यों से की गई है। यथा—"उनका मन साबुन की गीली बट्टी की भाँति बार बार गरिमा की गोद में गिरने को फिसलता था।"[5] इन उक्तियों से स्पष्ट है कि लेखिका ने उपन्यास को

---

१. चंदन चाँदनी, पृष्ठ १२४

२. चंदन चाँदनी, पृष्ठ २०६

३-४. चंदन चाँदनी, पृष्ठ १७०, १७३

५. चंदन चाँदनी, पृष्ठ २४७

भाषा-शैली की दृष्टि से सजाने-सँवारने की ओर यथोचित ध्यान दिया है।

निष्कर्ष

श्रीमती चन्द्रकिरण सौनरेक्सा ने 'चंदन चाँदनी' के रूप मे हिन्दी-साहित्य को अमूल्य भेंट दी है। प्रायः उपन्यास-लेखिकाओ ने अपनी कृतियों में सब तत्त्वों पर समान रूप से ध्यान नही दिया, किन्तु विवेच्य लेखिका के प्रस्तुत उपन्यास में सभी तत्त्वों का सुन्दर प्रतिफलन हुआ है। सजीव पात्रो की सृष्टि करने में वे शरत्चन्द्र के समकक्ष ठहरती हैं, तो सरल एवं प्रभावपूर्ण भाषा-शैली में मुंशी प्रेमचन्द से टक्कर लेती प्रतीत होती है। पारिवारिक वातावरण का जितना सफल अंकन उनकी लेखनी से हुआ, वैसा कथा-साहित्य में बहुत कम मिलता है। समाज के निम्न मध्य वर्ग की समस्याओं पर सर्वांगीण रूप से विचार करने की दृष्टि से भी यह कृति अनुपम है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वातावरण का सोद्देश्य चित्रण होने पर भी इसमें कथानक की सरसता और अभिव्यंजना की प्रांजलता का मणि-कांचन-संयोग है।

कुमारी अन्नपूर्णा तांगड़ी

कुमारी अन्नपूर्णा हिन्दी-संस्कृत की विदुषी हैं तथा लखनऊ में एक शिक्षा-संस्थान की प्रधानाचार्या हैं। उन्होंने चार मौलिक सामाजिक उपन्यासों की रचना की है, जिनका क्रम इस प्रकार है—निर्धनता का अभिशाप, चिता की धूल, मिलनाहुति, विजयिनी। इनमें से प्रथम तीन रचनाओं का प्रकाशन-काल सन् १९६१ है, जिससे यह संभावना की जा सकती है कि लेखिका ने इनमें तुलनात्मक सामंजस्य रखने की चेष्टा की है। उनकी उपन्यास-कला के मूल्यांकन के लिए प्रत्येक कृति की स्वतन्त्र समीक्षा उचित होगी।

१. निर्धनता का अभिशाप

इस उपन्यास में निर्धनता की समस्या को लेकर एक दुखान्त सामाजिक कथानक प्रस्तुत किया गया है। धनी-मानी ज़मींदार पं० कैलाशनाथ का पुत्र मोहन अपने ग्राम के निर्धन अध्यापक पं० रामनाथ की पुत्री मीरा से प्रेम करता था। वह उससे विवाह के स्वप्न देखने लगा तो ज़मींदार ने कुपित होकर उसे संपत्ति से वंचित करके गृह-त्याग का आदेश दे दिया। मोहन ने मीरा को प्राप्त करने के दृढ़ संकल्प के साथ गृह त्याग दिया और नगर में रहकर विद्याध्ययन करने लगा, किन्तु मरणासन्न पिता की जीवन-रक्षा के लिए उसे उनके आग्रहवश धनिक-पुत्री सरस्वती को जीवन-संगिनी बनाना पड़ा। मीरा ने मोहन की विवशता के औचित्य को स्वीकार कर उसके बलिदान की प्रशंसा की और आजन्म ब्रह्मचर्य-व्रत लेकर अपने भाई अतुल की स्नेह-छाया में जीवन-यापन का निश्चय किया। मोहन तथा अतुल द्वारा खोले गए कृषक-संघ में अहर्निश परिश्रमपूर्वक कार्य करके वह एक वर्ष बाद यक्ष्मा से पीड़ित हो काल-कवलित हो गई। मोहन उसे खोकर मानो पागल हो उठा। सरस्वती ने ईर्ष्या-रहित भाव से उसकी भरसक सेवा की, किन्तु वह प्रायः मीरा की स्मृति में लीन रहकर उन्मत्त की भाँति जीवन व्यतीत करता था। लेखिका ने इस संक्षिप्त कथानक को ही २६६ पृष्ठों में विस्तार से वर्णित किया है। प्रत्येक स्थिति अथवा घटना का इतने विस्तार से वर्णन किया गया है कि पाठकों को अनुमान लगाने की कहीं भी आवश्यकता नहीं पड़ती। लेखिका ने किसी प्रासंगिक कथा की योजना नहीं की, जिससे कथा-विकास में वांछित प्रौढ़ता नहीं आ पाई। कैलाशनाथ और रामनाथ के परिवारों के चित्रण द्वारा उन्होंने निर्धन वर्ग तथा अभिजात वर्ग के आर्थिक और सामाजिक

वैषम्य की तुलना की है। मोहन तथा मीरा का परिणय इस वैषम्य को नष्ट करनेवाली औषधि हो सकता था, किन्तु लेखिका ने ऐसा न करके मानो यह चेतावनी दी है कि सामाजिक वैषम्य को दूर करना सरल नहीं है।

प्रस्तुत उपन्यास में निर्धन वर्ग और अभिजात वर्ग के पात्रों की चारित्रिक प्रवृत्तियों को तुलनात्मक रूप मे प्रस्तुत किया गया है। पं० कैलासनाथ अपने वर्ग के अनुरूप हठी, दम्भी तथा रूढ़िवादी है और पं० रामनाथ सन्तोषी, विवेकशील, कर्मठ तथा स्वाभिमानी अध्यापक हैं। कैलासनाथ धन के लिए अपने पुत्र के अरमानों की बलि चढ़ा देते हैं और रामनाथ अपनी पुत्री के प्रेम की रक्षा के लिए जमीदार तथा उसके कारिंदे मनोहर से भी भय नहीं खाते। मोहन निर्दयी पिता का सदय पुत्र है—कृषकों की शोषण से रक्षा करना उसका मुख्य धर्म है और मीरा के प्रति दृढ संकलपयुक्त प्रेम उसके चरित्र की उल्लेखनीय विशेषता है। पं० रामनाथ का पुत्र अतुल भी कर्मठ तथा परोपकारी युवक है। बहिन के सुख के लिए उसकी कार्य-तत्परता तथा त्याग अनुपम हैं। ज़मीदार के कारिन्दे मनोहर की अत्याचारी प्रवृत्ति वर्गगत विशेषता की द्योतक है।

मीरा उपन्यास की नायिका है। उसका स्नेहपूर्ण व्यक्तित्व तथा एकनिष्ठ प्रेम सहज प्रशंसनीय गुण है। उसकी सखियाँ—जमीदार की पुत्रियाँ रजनी और नीला—उदार तथा स्नेही होते हुए भी अर्थ-दम्भ मे अपने पिता की कुछ छाप लिये हैं। फिर भी, नारी होने के नाते उनका मन पिता की भाँति कठोर नही है और वे अन्ततः मोहन तथा मीरा के विवाह के लिए सहमत हो जाती हैं। मीरा की माता गंगा स्नेहवत्सला और उदार-हृदया है। ज़मीदार की पत्नी श्यामा निर्धनो के प्रति सहानुभूतिशील तथा पति-परायणा है। उदाहरणार्थ कैलासनाथ और श्यामा की चारित्रिक प्रवृत्तियों की तुलना द्रष्टव्य है—"ज़मींदार साहब तो रुक्ष स्वाभाव के थे, किन्तु उनकी पत्नी श्यामा अपनी परोपकार-वृत्ति, उदारता, धर्मशीलता तथा स्नेही स्वभाव के कारण सम्पूर्ण ग्राम में प्रसिद्ध थी। प्रत्येक ग्रामवासी माता के सदृश उनका आदर करता था। जहाँ एक ओर पं० कैलासनाथ की भ्रकुटियाँ देखकर सारा ग्राम भय से काँप जाता था, और उनके सम्मुख न पड़ने का यत्न करता था, वही दूसरी ओर सारे ग्रामवासी कोई भी आपत्ति पड़ने पर दौड़कर अपनी मातास्वरूपा श्यामा की शरण मे जाते थे।"[1]

सुश्री अन्नपूर्णा ने पात्रों के मनोविश्लेपण की ओर यथोचित ध्यान दिया है। तथापि यह उल्लेखनीय है कि उनके पात्र यथार्थ का विश्लेपण करने की अपेक्षा आदर्श की ओर विशेपतः उन्मुख है। इस उपन्यास के पात्रों के विषय में प्रो० गुरुदत्त सोलंकी की यह उक्ति पठनीय है—"उपन्यास मे जो भी आदर्शवाद है, उस पर भारतीय सात्त्विकता की गहरी छाप है। पात्रों के चरित्र मे कही-कही भावुकता की अतिरंजना होते हुए

---

१. निर्धनता का अभिशाप, पृष्ठ ६

भी आस्था का स्वर उभरकर आता है।"[1] चरित्र-चित्रण में सुविधा के लिए सजीव तथा स्वाभाविक वार्त्तालापों की योजना में भी वे सिद्धहस्त है पात्रों के संवाद प्रायः उनके बौद्धिक स्तर के अनुकूल हैं। प्रारम्भिक परिच्छेद में मीरा, नीला तथा रजनी के वार्त्तालापों में वाल-मनोविज्ञान का विशेष समावेश इसका प्रमाण है।[2] संवादों के माध्यम से उद्देश्य पर भी प्रकाश डाला गया है।

प्रस्तुत उपन्यास में आर्थिक विषमताओं से उत्पन्न सामाजिक समस्याओं का चित्रण किया गया है। जाति-भेद, दहेज-प्रथा, जमींदारी-प्रथा आदि परम्पराओं ने भारतीय समाज को खोखला बना रखा है। अभिजात वर्ग के सदस्य निर्धनों का आर्थिक शोषण करके धन को विलास मे उड़ा देते हैं, फलतः निर्धन वर्ग को अनेक असुविधाओं का सामना करना पड़ता है। मीरा की मृत्यु पर, अतुल के शब्दों में, लेखिका का आक्रोश मानो साकार हो उठा है—"इस निर्मम समाज ने—इस अत्याचारी दहेज-रूपी दानव ने—इन पुरानी परम्पराओं ने—इस असमय में ही हमारी कली-सी कोमल भगिनी को कवलित कर लिया। आज धन की पिपासा शान्त हो गई। आज ऊँच-नीच की दीवारें, धनी-निर्धन की मर्यादा और बढ़ गई मेरी लाडली बहन के प्राणोत्सर्ग से। हँस, समाज हँस ! उच्च अट्टहास कर।"[3] लेखिका ने निर्धन कृषकों पर जमींदार और उसके कारिन्दे के अत्याचारों की चर्चा करके कृषक वर्ग की समस्याओं का मार्मिक चित्रण किया है। अर्थ के अभाव में कृषक अपने बच्चों को उत्तम शिक्षा नहीं दिला पाते और पुत्रियों के लिए मनोनुकूल वर नही प्राप्त कर सकते। मोहन, अतुल आदि साहसी युवकों द्वारा 'ग्रामोद्धारक संघ' की स्थापना उक्त समस्या का उत्तम समाधान है। उक्त सामाजिक वातावरण के अतिरिक्त लेखिका ने कहीं-कहीं प्राकृतिक वातावरण का भी सरल तथा प्रभावपूर्ण चित्रण किया है, किन्तु ऐसे स्थल अधिक नहीं हैं। वस्तुतः लेखिका का उद्देश्य सामाजिक वैषम्य की विभीषिकाओं के चित्रण द्वारा समाज-सुधार की प्रेरणा देना है। इस विषय में उपन्यास की भूमिका से श्री भगवतीचरण वर्मा की यह उक्ति उद्धरण-योग्य है—"सामाजिक विषमताओं से न जाने कितनी समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं, और मनुष्य को किन विषमताओं में पड़कर अपना जीवन नष्ट कर देना पड़ता है—इस उपन्यास में इस सत्य का बड़ा करुण संकेत है।"

सुश्री अन्नपूर्णा तांगड़ी ने संस्कृत के तत्सम शब्दों के प्रचुर प्रयोग के अतिरिक्त वाक्य-विन्यास भी प्राय. संस्कृत-व्याकरण की पद्धति से ही किया है। यथा—(अ) "उसी

---

१. समिति वाणी (त्रैमासिक), जुलाई-अक्टूबर १९६३, पृष्ठ १२६
२. देखिए 'निर्धनता का अभिशाप', पृष्ठ १-७
३. निर्धनता का अभिशाप, पृष्ठ २
४. देखिये 'निर्धनता का अभिशाप', पृष्ठ १९५

पर अवलम्बित थी उनकी सारी आशाएँ"[1], (आ) "इस बात को सदैव ध्यान में रखकर ही आँकते थे अपने युग के आचरण को",[2] (इ) "बचपन से ही परोपकार के अंकुर उगा दिए थे उसके हृदय मे उसकी जननी ने।"[3] इन वाक्यों में कर्त्ता, कर्म तथा क्रिया का क्रम हिन्दी-व्याकरण के अनुकूल नहीं है, पर संस्कृत में वाक्यस्थ पदों में किसी क्रम की विशेष अपेक्षा नहीं होती। उपन्यास के अधिकांश पात्रों ने संस्कृतबहुला हिन्दी का प्रयोग किया है, किन्तु लेखिका ने पात्रानुकूल भाषा के आदर्श को खंडित नही होने दिया है। नर्त्तकी नूरजहाँ की उर्दूमयी भाषा और ज़मीदार की दासी सुखिया की भाषा में पूर्वी हिन्दी के शब्दों की प्रमुखता इसका प्रमाण है।[4] मुहावरों और लोकोक्तियों के यथोचित प्रयोग ने भी भाषा को विशेष बल प्रदान किया है। तत्सम शब्दावली के प्रति विशेष आग्रह होने पर भी उनकी भाषा क्लिष्ट नहीं है, अपितु उनकी शैली में भावपूर्ण माधुर्य सर्वत्र विद्यमान है।

२. चिता की धूल

अन्नपूर्णा जी ने इस उपन्यास में जाति-भेद के कारण असफल होनेवाले प्रेम का चित्रण किया है। यद्यपि वर्तमान प्रगतिशील युग में यह समस्या पूर्ववत् उग्र नही रही, तथापि इसके महत्त्व को सर्वथा अस्वीकार नही किया जा सकता। लेखिका ने मुख्य कथा-वस्तु अत्यन्त संक्षिप्त रखी है—शिव एवं रम्भा बाल्यकाल से साथ रहते-रहते प्रीति-सूत्र में आबद्ध हो गए, किन्तु यह उनका दुर्भाग्य रहा कि विजातीय होने के कारण विवाह-बन्धन में न बँध सके। शिव को अपने पिता और रम्भा के आग्रह से सजातीय कुमुद से विवाह करना पड़ा, किन्तु रम्भा ने बालिका-विद्यालय की आचार्या के रूप मे जनसेवा को अपना लिया। रम्भा को अपने सुकार्य मे समय-समय पर शिव से सहयोग मिलता रहा, इस पर दोनों के चरित्र पर लांछन लगाये गए। इस अपवाद-प्रसार मे मुख्य हाथ शिव की पत्नी कुमुद तथा शिव के मित्र राजन की दुश्चरित्रा पत्नी नीलिमा का था। इससे व्यथित होकर रम्भा की मृत्यु हो गई।

उक्त कथा के विस्तार के लिए लेखिका ने शिव और रम्भा के परिवारों के अन्य सदस्यों (माता-पिता, बहिन, भाई, भाभी आदि) के स्वभाव, आचरण, रहन-सहन विवाह आदि की विस्तृत चर्चा की है, किन्तु यह उल्लेखनीय है कि समस्त घटनाओं एवं पात्रो के केन्द्र में शिव तथा रम्भा ही रहे है। यदि यह कहा जाए कि उक्त कथावस्तु का संघटन अत्यन्त शिथिल रूप में हुआ है, तो कुछ भी अनुचित न होगा। शिव और रम्भा के पारिवारिक सदस्यों के जन्म, विवाह, मरण, व्यर्थ के आलाप-प्रलाप, नायक-नायिका के पुनर्पुनः एक-से संवाद, उनकी मानसिक कुंठा आदि प्रसंगों में अनावश्यक विस्तार को

१-२-३. निर्धनता का अभिशाप, पृष्ठ ६, १०, १६

४ देखिये 'निर्धनता का अभिशाप', पृष्ठ १३१, १५५

सहज ही लक्षित किया जा सकता है। यदि इन्हें संक्षिप्त कर दिया जाता तो उपन्यास अपेक्षाकृत सुन्दर एवं सुगठित हो सकता था।

शिव तथा रम्भा उपन्यास के नायक-नायिका हैं, किन्तु इनमें अपने नामानुरूप पौराणिक पात्रों जैसी क्रान्तिकारिणी प्रतिभा का अभाव है। शिव ने परिस्थितियों से संघर्ष न करके समाजभीरु युवक की भाँति अभिभावकों के सम्मुख नतशिर होकर कुमुद से विवाह कर लिया। रम्भा ने भी इस दिशा में कोई आदर्श प्रस्तुत नहीं किया। दोनों ही पात्रों के मन में कुंठाओं का उदय होता रहा, जिसकी प्रशंसा नहीं की जा सकती। राजन और उनकी पत्नी नीलिमा को तो मानो शिव और रम्भा से तुलना के लिए ही गढ़ा गया है। राजन रम्भा के रूप पर आसक्त दुश्चरित्र पात्र है, तो नीलिमा निर्लज्जतापूर्वक शिव को अपनी वासना का शिकार बनाने का यत्न करती है और अस्थायी रूप से सफल भी हो जाती है। इन दोनों के कारण शिव और रम्भा की चरित्र-दृढ़ता में और भी निखार आया है। उपन्यास के अन्य पात्रों के चरित्र में किसी उल्लेखनीय विशेषता के दर्शन नहीं होते।

कथानक में नाटकीयता लाने के लिए लेखिका ने प्रसंगानुकूल कथोपकथन की उपयुक्त योजना की है, किन्तु यह वैविध्य वातावरण और पात्रों के अन्तर से ही है : विषय की दृष्टि से उनके संवादों में अनेकरूपता का अभाव है। एक विशेपता यह भी है कि उनके पात्रों ने संवादों में केवल निजी विशेषताओं का उद्घाटन नहीं किया, अपितु वे अन्य पात्रों की चारित्रिक प्रवृत्तियों के उल्लेख के प्रति भी सजग रहे हैं। राजन की पत्नी नीलिमा के प्रति शिव की निम्नलिखित उक्ति में रम्भा के गुणों की चर्चा प्रमाण है—
"भाभी, राजन मुझसे अवस्था में बड़ा है, तभी आपको बड़ी मानता हूँ।···किसी दिन रम्भा को लाऊँगा आपके पास। सामाजिक सेवा के क्षेत्र में हम दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। विद्यालय स्थापित करने में वह मुझे अपना पूर्ण सहयोग दे रही है। उच्च शिक्षा के साथ-ही-साथ उसका हृदय अत्यन्त उदार है भाभी।"[1]

अन्नपूर्णा जी ने समकालीन सामाजिक समस्याओं के निरूपण की ओर भी यथेष्ट ध्यान दिया है। हिन्दू-कन्या के अविवाहित रहने पर उस पर उँगली उठाना और उसके माता-पिता पर व्यंग्य करना,[2] विजातीय विवाह की आज्ञा न देना[3] आदि संकीर्ण मनोवृत्तियों का उन्होंने अच्छा ज्ञापन किया है। फिर भी, उपन्यास में उतनी प्राणवत्ता नहीं आ सकी क्योंकि लेखिका ने नायक-नायिका की ओर से किसी प्रेरणाप्रद आदर्श की स्थापना नहीं कराई। यद्यपि रम्भा ने अपनी उक्तियों में समाज से टक्कर लेने के विषय में पूर्ण उत्साह दिखाया है,[4] किन्तु व्यावहारिक रूप में उसने सामान्य जन-सेवा और विद्यालय

---

१. चिता की धूल, पृष्ठ ७५-७६
२-३. देखिये 'चिता की धूल' (अ) पृष्ठ ४३, (आ) पृष्ठ ५७
४. देखिये 'चिता की धूल', पृष्ठ ४५-४६

की स्थापना के अतिरिक्त कोई अन्य उल्लेखनीय कार्य नहीं किया। शिव और रम्भा समाज की व्यवस्था को चुपचाप स्वीकार करके विवाह नहीं करते और आजन्म कुंठाग्रस्त रहते हैं। इस प्रकार लेखिका का उद्देश्य समाज-सुधार न होकर सामाजिक मर्यादाओं तथा माता-पिता के अनुशासन को मौन रूप से स्वीकार कर लेने की शिक्षा देना है। विजातीय विवाह की समस्या का युगानुरूप महत्त्व था, किन्तु उन्होंने उसका समाधान प्रचीन भारतीय आदर्शों के अनुसार किया है; फलतः उपन्यास में सामाजिक सजगता अथवा मौलिकता के अभाव को स्पष्ट लक्षित किया जा सकता है।

'निर्धनता का अभिशाप' की भाँति 'चिता की धूल' में भी शुद्ध साहित्यिक हिन्दी का प्रयोग हुआ है, जो लेखिका के संस्कृतज्ञ होने का प्रमाण है। उन्होंने शैली में गम्भीरता लाने के लिए यत्र-तत्र सूक्ति-वाक्यों का भी सुन्दर प्रयोग किया है। यथा—"संसार की यही विचित्रता है कि समय मनुष्य के बड़े-से-बड़े घाव भर देता है। जिस तीव्र आघात से पाषण तक टुकड़े-टुकड़े हो जाता है, वही आघात मनुष्य का कोमल-से-कोमल हृदय सहन करके भी नहीं टूटता।"[1]

३. मिलनाहुति

इस उपन्यास में पारिवारिक पृष्ठभूमि का आधार लेकर हिन्दू-मुस्लिम-ऐक्य की भावना का प्रतिपादन किया गया है। इसमें २६६ पृष्ठ तथा ३२ परिच्छेद हैं। लेखिका ने अम्बिका सहाय और सुलेमान की कथा प्रस्तुत की है, जिनके परिवारों में इतना सौहार्द और स्नेह था कि जातीय भेदभाव अथवा द्वेप के लिए कहीं तनिक भी स्थान न था। सुलेमान की विधवा बहिन सफिया इस स्नेह को पसन्द न करती थी, विशेषतः अपनी भतीजी नजमा और अम्बिका सहाय के पुत्र हेमन्त का मेल-जोल तो उसे फूटी आँखों न भाता था। यद्यपि उन दोनों में भाई-बहिन जैसा स्नेह था, किन्तु सफ़िया ने उन पर कीचड़ उछालते हुए नजमा के भाई महमूद, उसके भावी पति शौकत और उसके माता-पिता को खूब भड़काया। अस्थायी रूप से इसका परिणाम सफ़िया के मनोनुकूल हुआ, किन्तु परिस्थितियों के उतार-चढ़ाव से महमूद और शौकत ने हेमन्त और नजमा के पवित्र स्नेह को पहचाना और स्थिति बिगड़ते-बिगड़ते भी सुधर गई। संयोगवश शौकत साम्प्रदायिक दंगो मे घायल होकर हेमन्त द्वारा रक्षित हुआ। इस घटना ने भी मनोमालिन्य को दूर करने में योग दिया। नजमा का विवाह हो जाने पर भी हेमन्त का उसके प्रति वैसा ही स्नेह रहा। कालान्तर मे साम्प्रदायिक द्वेप की आग भड़कने पर नजमा ने हेमन्त की रक्षा के लिए अपना बलिदान देकर इस आहुति से अपने जाति-भाइयों का हृदय-परिवर्तन कर दिया—इसी संवेदनशील घटना के साथ उपन्यास का अन्त हो गया है। उपर्युक्त कथानक में घटना-बाहुल्य, रहस्य-रोमांच अथवा बोझिल घटनाओं की अपेक्षा पारि-

---

१. चिता की धूल, पृष्ठ ४

वारिक स्नेह की सहजता पर बल दिया गया है। लेखिका ने कथानक में अनावश्यक विस्तार न रखकर प्रत्येक घटना को उद्देश्य की ओर उन्मुख रखा है।

कथानक की भाँति आलोच्य उपन्यास में चरित्र-चित्रण भी उद्देश्य द्वारा शासित रहा है। सफ़िया के अतिरिक्त अन्य सभी पात्रों (सुलेमान और उसकी पत्नी फ़ातिमा, अम्बिका सहाय और उनकी पत्नी उमा, राधा, हेमन्त, नजमा, महमूद, शौकत के पिता अकबर अली और माता आयशा आदि) में सौजन्य और स्नेह का अटूट प्रवाह है। सफिया के कुचक्र से महमूद और शौकत तथा उसके माता-पिता ने अपने मन में जिन दुर्भावों को स्थान दिया था, वे भी स्थायी न रहे। हेमन्त और नजमा उपन्यास के प्रमुख पात्र हैं तथा एक-दूसरे के कष्ट में सहानुभूति रखते हुए आत्म-बलिदान के लिए उत्सुक रहते हैं। यह उल्लेखनीय है कि लेखिका ने पात्रों के व्यक्तित्व में अनेकरूपता को स्थान न देकर प्रायः सद्गुणों का ही विकास किया है, किन्तु यथार्थ-चित्रण के अभाव में कहीं-कहीं सर्वथा अस्वाभाविकता आ गई है। चरित्र-चित्रण में सर्वांगीणता लाने के लिए कथोपकथन की भी योजना की गई है, किन्तु अधिकांश संवाद देशकाल और उद्देश्य की अभिव्यक्ति में सहायक रहे हैं। हिन्दू-मुस्लिम-द्वेष तथा साम्प्रदायिक दंगों के निराकरण के उपायों से सम्बद्ध संवाद इसी प्रकार के हैं। नवें परिच्छेद में महमूद और हेमन्त का वार्त्तालाप[1] तथा बत्तीसवें परिच्छेद में हेमन्त और शौकत का संवाद[2] उद्देश्यप्रधान कथोपकथन के अच्छे उदाहरण हैं। प्रथम परिच्छेद के आरम्भ में नजमा, महमूद और हेमन्त के बाल-सुलभ स्नेह, बालोचित झड़प आदि का भी संवादों के माध्यम से रोचक उल्लेख हुआ है।[3] हेमन्त और नजमा के संवाद उपन्यास में अनेक बार आये हैं, जिनमें उनके स्नेह की पावनता तथा गम्भीरता की अभिव्यक्ति हुई है, किन्तु उनके वर्त्तालापों में और फ़ातिमा, उमा, सफ़िया आदि की उक्तियों में प्रायः पुनरावृत्ति का दोष आ गया है। ऐसे कथोपकथन कथानक की स्वाभाविकता में बाधक रहे हैं।

देशकाल की दृष्टि से लेखिका ने शाहजहाँपुर, लखनऊ, कानपुर, अलीगढ़ आदि स्थानों पर होनेवाले साम्प्रदायिक दंगों का विस्तृत वर्णन किया है।[4] इसके अतिरिक्त साम्प्रदायिक विष से मुक्त हिन्दू-मुसलमानों का एक-दूसरे के त्यौहारों में सामान रूप से भाग लेना,[5] अपने रीति-रिवाजों (पर्दा आदि) का पालन करते हुए भी परस्पर प्रीति-भाव का निर्वाह करना[6] भी अनेक स्थानों पर चित्रित है। लेखिका ने गाँववालों की अन्य सामाजिक प्रवृत्तियों की भी यत्र-तत्र चर्चा की है। उदाहरणार्थ ये पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—
"आजकल तो गाँववाले भी इसीलिए अपने पुत्रों को पढ़ाते हैं कि वे शहर में किसी ऊँची

१-२. देखिये 'मिलनाहुति', पृष्ठ ४९-५१, २६२-२६३

३. देखिये 'मिलनाहुति', पृष्ठ १-४

४. देखिये 'मिलनाहुति', पृष्ठ ४७-४८, १९८, २११-२१८, २५९-२६५

५-६. देखिये 'मिलनाहुति', पृष्ठ १४-१६, ९२।

पदवी को पा लें। उनकी गुलामी की प्रवृत्ति का अभी ह्रास नहीं हुआ है। शिक्षा का अर्थ नौकरी ही समझते हैं। वह यह कभी सोच ही नहीं सकते कि उच्च शिक्षित जन भी इस कृषिप्रधान देश में अच्छे कृषक बनकर नवीन वैज्ञानिक प्रणालियों से अपनी कृषि की उन्नति करके देश को अधिकाधिक उत्तम नाज दें। यदि कभी वे चाहें भी कि पढ़े-लिखे युवक खेती में लगें तो उनके युवा पुत्र ही उद्यत नहीं होते। वे अपना अपमान समझते हैं कि पढ़-लिखकर कृषक बनकर ग्रामों में रहें।"[१] पुलिस के अत्याचारों तथा घूसखोरी की प्रवृत्ति से निरीह तथा निर्धन ग्रामवासी किस प्रकार पीड़ित एवं शोषित होते हैं, इसका हेमन्त की अपने पिता के प्रति कथित उक्तियों में सोद्देश्य उल्लेख हुआ है।[२] राजनीतिक, सामाजिक तथा पारिवारिक वातावरण के अतिरिक्त लेखिका ने यथाप्रसंग प्राकृतिक दृश्यों की भी सहज अवतारणा की है। उन्होंने 'मिलनाहुति' की रचना के उद्देश्य को उपन्यास की भूमिका में इन शब्दों में व्यक्त किया है—"अन्त में नजमा की आकस्मिक मृत्यु उसके कौम के लोगों के हृदय परिवर्तन का कारण होती है और साम्प्रदायिकता के थोथे मिथ्या अभिमान में पथभ्रष्ट लोगों को एक शिक्षा मिलती है, इसमें सन्देह नहीं और यही मेरा अभीष्ट भी है।"[३] लेखिका की दृष्टि मुख्यतः इसी उद्देश्य के निर्वाह पर रही है और अन्य तत्त्वों का संयोजन भी इसी दृष्टि से किया गया है। भारतवर्ष के दो खण्ड हो जाने पर भी यदि हिन्दू-मुसलमान जातीय भेदभाव का त्याग करके मानव-धर्म का पालन करें तो पार्थक्य में भी ऐक्य की-सी सुख-शान्ति प्राप्त हो सकती है, यही इस उपन्यास का सन्देश है। सुश्री तांगड़ी भाषा-शैली में भी 'उद्देश्य' का विस्मरण नहीं कर सकी हैं। इसीलिए उन्होंने मुफलिस, ख्यालात, पाकीजा, मुतास्सिब, सुकून, फिज़ा, तस्कीन, मुनहसिर, मुतवातिर आदि ठेठ उर्दू-शब्दों[४] का प्रचुर प्रयोग किया है और पाद-टिप्पणी में उनके हिन्दी-पर्याय दिए हैं। उद्देश्य चाहे कितना ही महान् हो, किन्तु इस प्रकार की उर्दू-मिश्रित हिन्दी कहीं-कहीं भाषा के स्वरूप-विकार के लिए उत्तरदायी है, अतः इसके लिए लेखिका की सर्वत्र प्रशंसा नहीं की जा सकती।

४. विजयिनी

'विजयिनी' चरित्रप्रधान सामाजिक उपन्यास है जिसमें १८६ पृष्ठ है, जो २८ परिच्छेदों में विभक्त हैं। लेखिका के कथनानुसार इसमें कुछ व्यक्तियों और स्थानों को नामान्तरित करके श्री रामकृष्ण परमहंस की एक शिष्या की, जो योगिन माँ के नाम से प्रसिद्ध थी, जीवन-गाथा को अंकित किया गया है।[५] लेखिका ने उसे 'कल्याणी' कहा

---

१. मिलनाहुति, पृष्ठ ८३
२. देखिये 'मिलनाहुति', पृष्ठ ८५-८६
३. मिलनाहुति, अपनी बात
४. देखिये 'मिलनाहुति' पृष्ठ १३, १६, २०, २२, २३, २७, २६, ७८
५. देखिये 'विजयिनी', दो शब्द

है और नायिका होने के कारण उसी को केन्द्र मानकर सम्पूर्ण कथानक की योजना की है। उपन्यास का कथानक इस प्रकार है—कल्याणी का प्रारम्भिक जीवन अत्यन्त सुखपूर्ण था, किन्तु उसके पति अम्बिकाचरण स्वर्णबाई वेश्या के कुचक्र में फँस गए तो उसका भाग्याकाश धूमिल हो उठा। एक सुदीर्घ अवधि (प्रायः २७ वर्ष) तक उसने पति-गृह में स्नेहहीन जीवन व्यतीत किया, किन्तु जब बहुत समझाने पर भी अम्बिकाचरण के जीवन में कोई सुधार न हुआ तब वह मैके लौट आई और अपनी अभिन्न सखी राधा की प्रेरणा से स्वामी रामकृष्ण परमहंस की प्रमुख शिष्या बन गई। सब धन चुक जाने पर स्वर्णबाई ने अम्बिका को दुत्कार दिया, तो वह रुग्ण शरीर और अनुतप्त मन से पत्नी के पास पहुँचा। कल्याणी ने अपना कर्त्तव्य समझकर उसकी सेवा-सुश्रूषा की, किन्तु अब वह सांसारिक मोह-माया से विरक्त हो चुकी थी, अतः दाम्पत्य जीवन मे फिर से प्रवेश न कर सकी। अन्त में अपनी चरम साधना के बल पर उसने परम पद प्राप्त किया।

उक्त मुख्य कथा के अतिरिक्त अम्बिकाचरण को कुमार्ग की ओर प्रेरित करने-वाले वीरेन्द्र एवं कल्याणी की दरिद्र सखी राधा की जीवन-गाथा के कुछ अंशों का भी प्रासंगिक रूप में उल्लेख हुआ है। उपन्यास का कथानक अत्यन्त मन्थर गति से विकसित हुआ है। प्रारंभ के ४८ पृष्ठों में कल्याणी के बाल्यकाल, विवाह, सुखी विवाहित जीवन आदि के रोचक दृश्य हैं। इसके बाद कल्याणी के दुर्भाग्य की कथा आरम्भ होती है, जिसे लेखिका ने शताधिक पृष्ठों में प्राय. एक-जैसे प्रसंगों (कल्याणी द्वारा पति को बार-बार निष्फल रूप में समझाना अथवा झगड़ना) की पुनरावृत्ति करके प्रस्तुत किया है। यदि लेखिका ने इस प्रसंग को किंचित् संक्षेप में व्यक्त किया होता तो कथानक अपेक्षाकृत सुगठित एवं रोचक हो सकता था। कथानक का तीसरा महत्त्वपूर्ण मोड़, जिसे लेखिका ने अत्यन्त सक्षेप में प्रस्तुत किया है, कल्याणी के गृह-त्याग, स्वर्ण बाई द्वारा साधना-मार्ग का अवलम्बन आदि घटनाओ से सम्बद्ध है। इस कथांश मे अनावश्यक घटनाओं अथवा दृश्यों की बहुलता नही है। वस्तुतः लेखिका का ध्यान मुख्यतः इस बात पर केन्द्रित रहा है कि कल्याणी के जीवन का यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया जाए, अतः कथानक के आदि और मध्य में उसके जीवन की सामान्यतम घटनाओं का भी विस्तारयुक्त वर्णन किया गया है, जिससे कहीं-कहीं एकरसता आ गई है।

'विजयिनी' में मुख्य रूप से कल्याणी और अम्बिकाचरण के व्यक्तित्व का निरूपण हुआ है—उनके माता-पिता, मित्र वर्ग, सेवक-सेविका, वेश्या स्वर्णबाई आदि गौण पात्र हैं। इन पात्रों की चारित्रिक विशेषताएँ केवल आंशिक रूप में व्यक्त हुई है—स्वर्णबाई की धन-लिप्सा, कल्याणी के माता-पिता की स्नेह-वत्सल भावनाएँ तथा वीरेन्द्र की कुप्रवृत्तियाँ इसका उदाहरण हैं। राधा कल्याणी की सुख-दुःख की संगिनी है, उसी की सहायता से चिरदुःखिनी कल्याणी ने रामकृष्ण परमहंस का शिष्यत्व ग्रहण कर अमर पद को प्राप्त किया। गृहस्थ-जीवन में कल्याणी की कष्ट-सहिष्णुता, पति-परायणता तथा साधना-पथ में उसकी चरम वीतराग स्थिति का चित्रण करके लेखिका ने उसके चरित्र

को उत्कर्ष प्रदान किया है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि उन्होंने पात्रों के अन्तर्द्वन्द्व का विश्लेषण न करके मुख्यत: स्थूल रूप में ही चरित्र-चित्रण किया है। दूसरी ओर, उन्होने प्रसगानुकूल संवादों की योजना द्वारा भी चारित्रिक विशेषताओं को व्यक्त किया है। प्रथम परिच्छेद में कल्याणी की बाल-सुलभ उक्तियों मे उसकी मनोभावनाओं का स्वच्छ निरूपण हुआ है। व्यक्तित्व को स्पष्ट रूप में उभारने के लिए उन्होंने संवादों की भाषा को भी पात्रानुकूल रखा है। उदाहरणस्वरूप कल्याणी की माता शुभदा और सेविका शान्ति की यह वार्त्ता देखिए—

"शान्ती ! देख तो बाहर, कल्याणी अभी तक नहीं आई।"

"अरी वहू रानी ! इत्ता घबराय काहे जात हो ? अउतै होई। गाड़ीवानौ तौ साथ गयौ है औ कलुआ तो ! आप तो कल्याणी बिटिया को आंख से ओटो न रखना चाहत हो।"[1]

इस उपन्यास में कल्याणी की पारिवारिक समस्याएँ मुख्य कथानक के रूप में अंकित हुई हैं, अतः इसमें किसी प्रकार के राजनीतिक अथवा सामाजिक वातावरण की खोज निरर्थक होगी। किन्तु, पारिवारिक वातावरण और वेश्या स्वर्णबाई के कोठे की रंगीनियों के चित्रण में लेखिका को पर्याप्त सफलता मिली है। उपन्यास के अन्त में कल्याणी की साधना के प्रसंग में आध्यात्मिक पावनता के जो दृश्य अंकित हुए है, वे किञ्चित् अतिशयोक्तिपूर्ण होते हुए भी अपने आप में दिव्य है।[2] लेखिका का उद्देश्य यह सिद्ध करना है कि आध्यात्मिक मार्ग मानव के लिए सर्वाधिक ग्रहणीय है, क्योकि उस पर चलकर वह सुख-दु.ख, राग-द्वेष, आशा-निराशा आदि द्वन्द्वात्मक भावनाओं से मुक्त हो सकता है।

सुश्री तांगड़ी ने इस उपन्यास की रचना सरल और व्यावहारिक शब्दावली में की है, जिसमें संस्कृत के प्रचलित तत्सम शब्दों और स्त्रीसमूह, गृहस्थाश्रम, भाव-भंगिमा, आमोदमय, पुत्रवियोग आदि समस्त शब्दों[3] का प्रचुर समावेश है। समास-योजना के प्रति उनके मन मे विशेष मोह है, जिसे उनकी सभी कृतियों में लक्षित किया जा सकता है। किन्तु, समासगर्भित होने पर भी भाषा जटिल नही है, अपितु उन्होने व्यास शैली का आधार लेकर सामान्यतम प्रसगो को भी सहज-सरल अभिव्यक्ति प्रदान की है। वर्णनात्मकता और नाटकीयता का सम्मिश्रण उनकी शैली की एक अन्य उल्लेखनीय विशेषता है। कथानक की सहजता और अभिव्यंजना की तदनुरूप सुखदता इस बात का प्रमाण है कि यह उपन्यास उनकी प्रतिभा के विकास में महत्त्वपूर्ण कड़ी है।

---

१. विजयिनी, पृष्ठ ४

२. देखिए 'विजयिनी', पृष्ठ १७३-१७४, १८३-१८६

३. देखिए 'विजयिनी', पृष्ठ ,२२ २५, २८, ३६, ४८

निष्कर्ष

आलोच्य उपन्यासों के अध्ययन से स्पष्ट है कि सुश्री अन्नपूर्णा तांगड़ी ने इनमें नायिकाप्रधान कथानकों की सृष्टि की है। विषम परिस्थिति-चक्र में फँसकर नायिकाएँ प्रायः घुलती रहती है, या आत्म-बलि देकर जीवन्मुक्त हो जाती है। उद्देश्य केवल यही है कि कथान्त में नायिकाओं के चरित्र का विशेष उत्कर्ष किया जाए जिससे पाठकों के हृदय में उनकी स्मृति चिरस्थायी हो सके। सामाजिक विषमताओं की अनिवार्यता को स्वीकार करते हुए लेखिका ने वर्गभेद, जातिभेद, साम्प्रदायिक वैमनस्य, पति द्वारा पत्नी की उपेक्षा आदि समकालीन समस्याओं का यथार्थ रूप में चित्रण किया है। यही कारण है कि उनके उपन्यासों के कथानकों में करुण रस की मार्मिकता की व्याप्ति रही है और पात्र सर्वत्र परिस्थिति-प्रताड़ित रहे है। उपन्यासों की भाषा में तत्सम एवं समस्त शब्दावली का आग्रह होने पर भी क्लिष्टता का दोष प्रायः नही आ पाया है। सहज भावपूर्ण माधुर्य एवं सरल बोधगम्य शैली आलोच्य उपन्यासों की सबसे बड़ी सबलता है।

श्रीमती विमल वेद

श्रीमती विमल वेद ने तीन उपन्यासो की रचना की है, जो क्रमशः इस प्रकार हैं — ज्योति-किरण, अर्चना, असली हीरा नकली हीरा। इनकी रचना समसामयिक सामाजिक समस्याओं के संदर्भ में की गई है और इनमें पारिवारिक उलझनो तथा आर्थिक द्वन्द्व को मूलवर्ती स्थान मिला है। लेखिका ने समाज-विश्लेषण के लिए मुख्यतः यथार्थवादी दृष्टिकोण को अपनाया है, किन्तु साथ ही उनकी दृष्टि चिरपरिचित आदर्शवादी मूल्यों पर भी केंद्रित रही है। आगे हम उनके उपन्यासो में इन प्रवृत्तियों की पृथक् पृथक् खोज करेंगे।

१. ज्योति-किरण

'ज्योति-किरण' २५० पृष्ठो एवं २० अध्यायों में विभक्त सामाजिक उपन्यास है। इसमें दो परिवारों की कथा साथ-साथ चलती है। एक ओर रमानाथ है, जो निम्न मध्यम वर्ग के परिवार का मुख्य सदस्य है। पिता के न रहने पर वह शिक्षार्जन छोड़कर माता, बहिन और भाई के पोषणार्थ नौकरी करने निकल पड़ता है। किन्तु, बहुत समयतक समुचित आजीविका नही मिल पाती। घर के सदस्य फाके करते है, उचित उपचार के अभाव मे माता की मृत्यु हो जाती है आदि घटनाओ का उल्लेख करके लेखिका ने इस निर्धनताग्रस्त परिवार का करुण चित्रांकन किया है। दूसरी ओर तिवारी जी है, जिनके परिवार को धन का कोई अभाव नही, किन्तु धन उनके लिए सर्वोपरि है। इसकी प्राप्ति के लिए वे प्रायः अनुचित दिशाओं का अवलम्बन लेते हैं, यहाँ तक कि अपनी बड़ी पुत्री आशा को भी दाँव पर लगा देते हैं। प्रयत्न तो वे यह भी करते हैं कि छोटी पुत्री उषा भी उसी पथ का अनुसरण करे, किन्तु माता के पावन संस्कारों में पोषित उषा के विरोध के आगे उनकी दाल नहीं गल पाती। उषा और रमानाथ के मध्य प्रेम का नाता स्थापित कर लेखिका ने दोनों परिवारों की कथा को एक सूत्र में पिरोया है।

उषा आलोच्य उपन्यास की नायिका है। रमानाथ से प्रेम करके भी वह प्रतिदान की कामना नही करती। माता के आग्रह और अपने हृदय की प्रेरणा से वह अपने प्रेम-पात्र को इस बात के लिए सहमत करके ही दम लेती है कि वह उसकी अपेक्षा उसकी बहिन आशा को पत्नी के रूप में ग्रहण करके उसका उद्धार करे। आशा उसकी बहिन होकर भी कुमार्ग की ओर उन्मुख होती है, क्योंकि उषा की भाँति उसे माता ने अपनी ममता

का सम्बल नहीं दिया था। अतः पिता उसे अपनी रुचि के अनुसार ढालने में सफल हो गये। उषा की माता शान्ता देवी एक तिरस्कृत पत्नी के रूप मे सम्मुख आती हैं, जो अपना समस्त स्नेह उषा पर उडेलकर उसे आदर्शचरित्रा बनाती हैं। रमानाथ की बहिन कान्ता को अपरिमित स्नेह-सम्पन्ना भगिनी के रूप में चित्रित किया गया है। पुरुष पात्रों में रमानाथ उपन्यास का नायक है। अनेक श्रेष्ठ गुणो से विभूषित होने पर भी उसमें मानवोचित दुर्बलताएँ हैं, जो एक स्वाभाविक पात्र में होनी भी चाहिएं। तिवारी जी जैसे पात्र अद्‌भुत होते हुए भी इस विश्व मे अलभ्य नही हैं। इनके अतिरिक्त घटनाओं के आरोह-अवरोह में रणजीत, शर्मा, लीलावती आदि गौण पात्र-पात्राओ का भी यथास्थान योग रहा है। श्रीमती वेद ने इस उपन्यास में प्रसंगानुकूल सामान्य संवादों के अतिरिक्त अनेक स्थलों पर तर्कपूर्ण कथोपकथन की भी योजना की है। ऐसे वार्तालापों में उक्ति-वैचित्र्य, पात्रों के सिद्धान्तों एवं सूक्ति-वाक्यों को विशेष स्थान प्राप्त हुआ है। उदाहरणार्थ तृतीय अध्याय में आशा और रमानाथ के परस्पर सम्भाषण[1] तथा बारहवें अध्याय में रमानाथ और कान्ता के उत्तर-प्रत्युत्तर[2] इसी प्रकार के हैं।

देशकाल-निरूपण की दृष्टि से लेखिका ने तिवारी जी द्वारा अपनाये गए अर्थोपार्जन के निम्नस्तरीय साधनों की चर्चा करके एक ओर देश में प्रसारित भ्रष्टाचार की ओर पाठकों का ध्यान आकृष्ट किया है और दूसरी ओर रमानाथ के जीवन की विषमताओं का वर्णन करके देशव्यापी निर्धनता एवं बेकारी की ओर मर्मस्पर्शी संकेत किया है। उपन्यास में देशकाल के प्रति आद्यन्त जागरूकता का परिचय दिया गया है और यथावसर प्रत्यक्ष उक्तियाँ प्रस्तुत की गई हैं। यथा—

(अ) "आधुनिक युग में शिक्षा अर्थात् डिग्री का महत्त्व ही सबसे बड़ा है। नाम के आगे लम्बी चौड़ी डिग्री के बिना कहीं आदर नहीं होता।"[3]

(आ) "बिना सिफ़ारिश और पीछे के ज़ोर के आजकल नौकरी मिलना असंभव यदि नहीं है तो भी कठिन अवश्य है। देश की आधी से अधिक जनता नौकरीपेशा है, दिन-रात अफसरों के ताने सुनना, अपमान सहते रहना और एक दिन असह्य हो जाने पर त्यागपत्र देकर वहाँ से हट जाना, लेकिन इस हट जाने की परिणति भी स्वतंत्र अस्तित्व में नही होती।"[4]

साधारण जीवन की समस्याओं का यथार्थ चित्रण और आदर्श समाधान, यही आलोच्य कृति का लक्ष्य है। इसके लिए लेखिका ने उषा को आदर्श नारी के रूप में चित्रित किया है। वही अन्त में 'ज्योति-किरण' बनकर सबको आदर्श की दिशा में खींच ले जाती है। कथान्त मे उसकी मृत्यु से उपन्यास दुखान्त तो बन गया है, किन्तु तिवारी जी का आत्म-परिष्कार, रमानाथ द्वारा आशा को ग्रहण करने की सहमति आदि

१-२. देखिये 'ज्योति-किरण', पृष्ठ ३०-३२, १५०-१५२
३-४. ज्योति-किरण, पृष्ठ ११०, १२७

घटनाओं ने उसकी मृत्यु को भी मानो सार्थक कर दिया है।

श्रीमती विमल वेद ने उपन्यास की रचना सरल एवं मुहावरेदार भाषा में की है। यथा—(अ) 'बहती गंगा में वे भी हाथ धो सकते थे',[1] (आ) 'मुँह है नहीं मसूर की दाल खाने चला है।'[2] लेखिका की शैली प्रवाहपूर्ण है। उन्होंने सूक्ति-वाक्यों का प्रचुरता से प्रयोग करके भाषा-शैली में यथोचित गाम्भीर्य का भी समावेश किया है। यथा—"मनुष्य के अपने सपने होते है और जब उन पर आघात होता है तो वह व्यथा प्रायः असह्य हो जाती है।"[3] अनेक प्रसंगों में वर्णन-प्रवाह तथा नाटकीयता के समुचित मिश्रण ने भाषा को सशक्त एवं प्रभावपूर्ण बना दिया है। वस्तुतः इस उपन्यास की विशेषता यह है कि इसकी कथावस्तु और वर्णन-शैली, दोनो में सशक्त सादगी मिलती है।

२. अर्चना

श्रीमती विमल वेद के 'अर्चना' शीर्षक सामाजिक उपन्यास में १३५ पृष्ठ तथा १४ परिच्छेद है। इसका कथानक इस प्रकार है—अर्चना नगर के एक धनी-मानी व्यक्ति दीनानाथ की इकलौती पुत्री थी, किन्तु वह एक निर्धन एवं अपंग लेखक अरुण से प्रेम करती थी। दीनानाथ जी प्रत्यक्ष में तो व्यापार करते थे, किन्तु परोक्षतः वे सरकार की आँखो में धूल झोंककर निर्यात किए जानेवाले कच्चे माल में सोना छिपाकर विदेश भेजते थे और इस प्रकार न केवल स्वय अनुचित मार्ग का अवलम्बन कर रहे थे, अपितु अपने इकलौते पुत्र राजेन्द्र को भी उसी दिशा में दक्ष बना रहे थे। वे चाहते थे कि उनकी पुत्री अर्चना का विवाह विकास-मन्त्री श्री लाडलीमोहन के पुत्र डाक्टर विनोद से हो, क्योंकि इससे समय-समय पर उनका स्वार्थ सिद्ध हो सकता था। विनोद और अर्चना का विवाह-सम्बन्ध पूर्णतः निश्चित हो चुका था, किन्तु विवाह के पूर्व ही एक दिन विनोद ने आग्रहपूर्वक उससे उसकी उदासी का कारण जानकर विवाह करना अस्वीकार कर दिया। उसने अरुण से अर्चना का विवाह करा देने का केवल आश्वासन ही नहीं दिया, अपितु यह भी वचन दिया कि वह अरुण के पाँव का लंगड़ापन ठीक करके अर्चना का सम्पूर्ण सुख उसे लौटा देगा। अपनी योजना को यों निष्फल जाते देख दीनानाथ जी पहले तो इतने क्रुद्ध हुए कि उन्होने अर्चना के गाल पर थप्पड़ जड़ दिया, किन्तु कालान्तर मे जब बम्बई में उनके माल की चेकिंग होने से सोना बरामद हो गया और अपने और राजेन्द्र के लिए कारागार के द्वार खुले दिखाई पड़ने लगे तो उनकी आँखे खुली और उन्होने एक पत्र लिखकर अर्चना से क्षमा-याचना की।

'ज्योति-किरण' की भाँति प्रस्तुत उपन्यास में भी लेखिका ने पूर्वाग्रह से प्रेरित होकर कथानक को आदर्शवाद की छाया मे पुष्ट किया है। सुख और ऐश्वर्य के क्रोड़ में पली अर्चना एक दिन अपने कॉलेज के समारोह के लिए लेखक अरुण को आमंत्रित करने

१-२-३. देखिये 'ज्योति-किरण', पृष्ठ २०, ८६, २१

गई और सहसा इतनी प्रभावित हो गई कि उसके और अपने स्तर-वैषम्य के अतिरिक्त उसकी अपंगता को भी विस्मृत करके उसी के प्रेम में तल्लीन हो गई। यह ठीक है कि 'प्रेम अंधा होता है', किन्तु फिर भी उसके लिए मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि स्थापित करने के जिस कौशल की अपेक्षा थी, उस ओर लेखिका ने विशेष ध्यान नहीं दिया। यही कारण है कि समस्त कथानक चलचित्र की घटनाओं की भाँति कृत्रिम भावुकता का पोषण-सा करता प्रतीत होता है।

'ज्योति-किरण' की भाँति लेखिका ने इस उपन्यास में भी आदर्श पात्रों की सृष्टि की है। अर्चना एक आदर्श प्रेमिका है तो रमा एक आदर्श भाभी, जिसने मातृहीना अर्चना को अपने प्राणों के रक्त से पाला और कुव्यसनी पति (राजेन्द्र) की उपेक्षा सहकर भी कर्त्तव्यों का सफल निर्वाह किया। अरुण की माता के व्यक्तित्व में लेखिका ने एक आदर्श माता की सृष्टि की है, जो स्वयं कष्ट सहकर पुत्र की सुविधाओं की व्यवस्था करती है। प्रभा और अर्चना का आदर्श सख्य भाव भी सराहनीय है। लेखिका ने नारी पात्रों मे एक ओर कर्त्तव्यपरायणता, कष्टसहिष्णुता, सेवापरायणता, स्नेहशीलता आदि विशेषताओं का समावेश किया है और दूसरी ओर उनकी परिस्थिति-प्रताड़ित विवशता तथा व्यथापूरित अन्तस् की सफल झाँकी प्रस्तुत की है। पुरुष पात्रों में अरुण के प्रतिभा-सम्पन्न, सदाचारी एवं पावन व्यक्तित्व से अधिक उल्लेखनीय डॉक्टर विनोद का आदर्श चरित्र है। पहले कभी वह नारी के रूप-यौवन को खिलवाड़ मानता आया होगा, जैसा कि लेखिका ने एक स्थान पर उसके मुख से कहलवाया है,[1] किन्तु प्रत्यक्षतः उसने अर्चना के लिए जो किया वह सामान्य युवक नहीं कर सकता। अर्चना चाहे अरुण से कितना भी प्रेम करती थी, किन्तु फिर भी उसकी स्थिति ऐसी दयनीय हो गई थी कि यदि विनोद उसे सहारा न देता तो वह पिता के भय से घुटने टेक देती। दीनानाथ को लेखिका ने पूँजीपति-वर्ग के प्रतीक-रूप में प्रस्तुत किया है, जिसका लक्ष्य येनकेनप्रकारेण धनोपार्जन होता है। उनका पुत्र भी उनके संसर्ग में ऐसे व्यक्तित्व का विकास करता है जिसमें स्नेह, कृतज्ञता, सात्त्विकता आदि सद्गुणों की शून्यता एवं परनारीरमण, सती साध्वी पत्नी की उपेक्षा, वहिन के प्रति हृदयहीनता आदि दुर्गुणों की प्रमुखता है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि श्रीमती विमल वेद ने कथ्य को वर्णन मात्र न रखकर नाटकीय सौंदर्य के समावेश की ओर भी यथोचित ध्यान दिया है। उन्होंने प्रायः संक्षिप्त, परिस्थिति-गर्भित तथा पात्रानुरूप संवादों की योजना की है। इस दृष्टि से अर्चना और प्रभा तथा अर्चना और उसकी भाभी रमा के संभाषण उल्लेखनीय हैं, जो सारगर्भित होने के अतिरिक्त अनेकशः चुटीले, भावमय एवं कुतूहलपूर्ण हो उठे हैं।

दीनानाथ तथा उनके पुत्र राजेन्द्र के चरित्र-चित्रण द्वारा लेखिका ने वर्तमान समाज के उन विशिष्ट वर्ग की पोल खोली है, जो गुप्त रूप से पाप में संलग्न रहने पर

---

१. देखिये 'अर्चना', पृष्ठ १०३

भी प्रत्यक्षतः धन एवं मान प्राप्त करके संसार की आँखों में धूल झोंकता है। इस वर्ग के व्यक्तियों के लिए स्वार्थ इतना सर्वोपरि होता है कि नारी को वे पाँव की जूती से अधिक सम्मान नहीं देते। लेखिका ने रमा के माध्यम से नारी के इस परिस्थिति-चित्र को तो उभारा है, किन्तु उसके मनोवेगों अथवा आत्मशक्ति को व्यक्त करने में वे असमर्थ रही हैं। अरुण के घर की अभावग्रस्त परिस्थितियों का वर्णन करके उन्होंने हिन्दी-लेखकों के संघर्षशील जीवन का आभास दिया है। उपन्यास के आरम्भ मे अर्चना और प्रभा के विद्यार्थी-जीवन के प्रसंग में उन्होंने कॉलेज के वातावरण का चित्रण करते समय स्वाभाविकता एवं सजीवता का विशेष ध्यान रखा है।[1] यथार्थ का चित्रण करके उसकी कुरूपताओं की ओर से पाठकों को सचेत करना और आदर्श की दिशा मे प्रेरणा देना इस उपन्यास का लक्ष्य है। मानव-जीवन का लक्ष्य स्वार्थसिद्धि अथवा धनप्राप्ति न होकर स्नेह, ममता, सदाचरण आदि गुणों का विकास होना चाहिये, इसी की सिद्धि में वे सचेष्ट रही हैं। आदर्श के प्रति उनका आग्रह इतना प्रबल है कि कथानक, पात्र, सवाद आदि एक पूर्वनिश्चित दिशा की ओर अग्रसर होते प्रतीत होते हैं ; फलतः उद्देश्य के निर्वाह में कहीं-कही कृत्रिमता आ गई है।

'अर्चना' में सरल, व्यावहारिक एवं मुहावरेदार भाषा को स्थान मिला है। 'बेचारी प्रभा आँख बिछाए बैठी रह गई।[2]' 'क्या बेपर की उड़ाई'[3], 'सुनकर सौ बल खा जाती थी'[4] आदि वाक्य प्रमाणस्वरूप उद्धृत किए जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त अनुभवाश्रित सूक्ति-वाक्यों के प्रयोग से उनकी शैली में यथास्थान गम्भीरता का भी समावेश हुआ है। यथा—"मनुष्य मे जब किसी प्रकार दुर्बलता घर कर लेती है तो वह बात बात पर सकुचित होने लगता है और यदि दुर्बलता किसी व्यक्ति के लिए मन में बैठने लगे तो उसके सामने सारा व्यक्तित्व ही कुंठित हो जाता है।"[5] अपनी उक्ति को अधिकाधिक प्रभावशाली बनाने के लिए लेखिका ने अनेकशः व्यावहारिक उपमाओं का आश्रय लिया है। यथा—"उसी अर्चना का दिन पर दिन सूखता जाता मुख देखकर एक दिन वह इस तरह चौंक उठे जैसे गहरी नीद में सोया मनुष्य कोई अप्रत्याशित आघात पाकर जाग उठता है।"[6] भाषागत प्रवृत्तियों के सम्बन्ध में उद्धृत की गई उपर्युक्त उक्तियों से स्पष्ट है कि लेखिका ने जिस प्रकार कथानक में चेतना-प्रवाह-पद्धति का अकृत्रिम निर्वाह किया है, उसी प्रकार उनकी शैली भी मनोवेगों के सहज उच्छलन को लिए है।

३. असली हीरा नकली हीरा

श्रीमती विमल वेद का यह उपन्यास २०३ पृष्ठों और २५ परिच्छेदों में विभक्त है। अन्य दोनों उपन्यासों की भाँति इसमें भी लेखिका ने एक पूंजीपति की कन्या को

---

१. देखिये 'अर्चना', पृष्ठ १२-२८

२-३-४-५-६. अर्चना, पृष्ठ १३, १७, ५३, ७७, ६०

निम्नमध्य वर्ग के युवक से प्रेम करते दिखाया है। अपर्णा मिलमालिक नवलराय वर्मा की पुत्री थी। पहले उसने किशोर खन्ना को अपने भावी जीवन-साथी के रूप में चुना, जो उसी के सामाजिक स्तर का युवक था, किन्तु बाद में उससे सम्बन्ध तोड़कर उसने लेखक एवं पत्रकार रामनाथ को अपनाने का निश्चय कर लिया। पहले वह रामनाथ से घृणा करती थी, क्योंकि वह उनकी मिल के श्रमिकों का पक्ष लेता था और उन्हें उनके अधिकारो का बोध कराता था। किन्तु, बाद में घटित होनेवाली विविध घटनाओं के आधार पर जब अपर्णा ने रामनाथ और किशोर के आचरण की तुलना की तब उसे स्पष्टतः प्रतीत हुआ कि किशोर दम्भी, स्वार्थी एवं कपटी युवक है जबकि रामनाथ परोपकारी, जनसेवी और आदर्शवादी व्यक्ति है। श्रीयुत वर्मा पुत्री के भाव-परिवर्तन से बहुत प्रसन्न हुए क्योंकि वे तो पहले ही असली हीरे और नकली हीरे के अन्तर को समझ गए थे, किन्तु उसकी माता सुलोचना को इससे अत्यन्त दुःख हुआ, क्योंकि वे ऊपरी चकाचौंध को ही वास्तविकता समझती थीं। उपर्युक्त कथाक्रम से स्पष्ट है कि इस उपन्यास में कथानक और चरित्रो का अन्योन्याश्रित रूप में विकास हुआ है! घटनाएँ अत्यन्त मन्थर गति से प्रवाहित हुई हैं। कथानक के सूत्र कुछ ऐसे सरल एवं स्पष्ट हैं कि पाठक को अनायास ही परवर्ती घटनाओ का आभास होता रहता है, जिससे कौतूहल एवं रोचकता को निश्चय ही क्षति पहुँची है।

आलोच्य उपन्यास में रामनाथ और किशोर के चरित्र को तुलनात्मक रूप में प्रस्तुत किया गया है। श्री वर्मा उदारचेता, स्नेहिल एवं विवेकसम्पन्न उद्योगपति हैं। उनकी पत्नी सुलोचना उनके गुणों को न समझकर उन्हें आलसी एवं लापरवाह की संज्ञा देती रहती है, किन्तु वस्तुतः वे उससे अधिक महान् एवं गम्भीर प्रकृति के हैं। अपर्णा को कोमल चित्त की स्वाभिमानिनी नायिका के रूप में चित्रित किया गया है। रामनाथ की बहिन किरण के स्नेहपूर्ण व्यक्तित्व और अपर्णा की अनुजा वन्दना की बालसुलभ चपल प्रवृत्तियों के अंकन में भी लेखिका सफल रही हैं। उक्त मुख्य कथा के अतिरिक्त श्रमिक सूरज और उसकी पत्नी पन्ना की गौण कथा भी साथ-साथ चलती है। दोनों के मध्य परस्पर गाली-गलौज, मारपीट, मीठी फटकार, अपरिमित स्नेह, कृत्रिम धमकी-घुड़की आदि के इतने रोचक एवं स्वाभाविक चित्र लेखिका ने उभारे हैं कि मुख्य कथानक की गम्भीरता एवं मन्द गति उतनी खलती नही है। उक्त दोनो पात्रों के संवाद इतने स्वाभाविक एवं नाटकीय हैं कि पढ़ते-पढ़ते ऐसा प्रतीत होने लगता है मानो वे पुस्तक मे न रहकर प्रत्यक्ष हो गए हैं और हमारी उपस्थिति में ही वार्त्तालाप कर रहे हैं।[1] अशिक्षित होने के कारण सूरज और पन्ना की उक्तियो में सरग, सरम, पियार, लच्छन आदि शब्दों की भरमार है[2], जो इस बात का प्रमाण है कि लेखिका ने संवादों को

---

१. देखिये 'असली हीरा नकली हीरा', पृष्ठ १९-२२, ४९-५१, ७१-७५

२. देखिये 'असली हीरा नकली हीरा', पृष्ठ १९, २०, ,२२ ७२

पात्रानुकूल रखा है। इसके अतिरिक्त अन्य कथोपकथन भी संक्षिप्त, रोचक एव सार-गर्भित हे। पात्रों की वार्त्तालापकालीन भाव-भंगिमा एवं चेष्टाओं का उल्लेख करके लेखिका ने उन्हें उचित सजीवता प्रदान की है। यथा—'स्नेह विगलित कठ से कहा'[1], 'किरण सिर हिलाकर बोली'[2], 'रामनाथ बड़ा गम्भीर होकर बोला'[3] आदि।

श्रीमती वेद ने देशकाल का प्रसंगानुकूल चित्रण किया है। मिल का अहाता, मज़दूरों के आवास-स्थल, मिल के भीतर के विविध दृश्य, गांधी पार्क की प्राकृतिक सुषमा आदि केवल स्थूल वर्ण्य न रहकर उनकी सूक्ष्म विश्लेषण-शक्ति के सहज अधिकारी रहे है।[4] इनके अतिरिक्त उन्होंने यत्र-तत्र समकालीन समाज की स्थिति पर भी प्रत्यक्ष प्रकाश डाला है। यथा—

(अ) "कौन नही जानता कि आजकल के समय मे दो ही वर्ग सुखी है। उच्च वर्ग अर्थात् वर्मा जी जैसे लोग और मज़दूर वर्ग। सबसे अधिक दयनीय अवस्था है मध्यम वर्ग की, जिसकी सुख-सुविधा के लिए किसी ने कही भी कोई कानून नही बनाया।"[5]

(आ) "एक को छोड़कर दूसरे के घर बैठ जाना निम्न वर्ग में बुरा नही समझा जाता। इसे 'नाता' करना कहते है। मामूली-सा भोज सारी बिरादरी को देकर कोई भी आदमी किसी भी औरत को घर मे बिठा सकता है। उच्च वर्ग-जैसी छीछालेदर इनका समाज नही करता। स्त्री और पुरुष के सम्बन्ध को ये कुछ अलग ही दृष्टि से देखते है। झूठा मान, झूठा प्यार ये दिखाते ही नही। बनी तो साथ है, नही बनी तो अलग हो गये। न अदालत का झगड़ा न समाज का डर।"[6]

इस उपन्यास मे लेखिका का प्रतिपाद्य यह है कि व्यक्ति के चरित्र का बोध उसके वैभव से न करके अन्तर्मन की प्रवृत्तियो के विश्लेषण द्वारा किया जाना चाहिए। इसीलिए लेखिका ने किशोर और रामनाथ के चरित्रों को तुलनात्मक शैली मे प्रस्तुत करके अन्त में रामनाथ की श्रेष्ठता सिद्ध की है और किशोर के मन में छिपे दम्भ एवं कपट को उभार-कर उसे हेय ठहराया है। उपन्यास का शीर्षक भी उक्त लक्ष्य की ओर सकेत करता है।

अपने अन्य उपन्यासो की भाँति प्रस्तुत कृति में भी लेखिका ने सरल, मुहावरेदार तथा सूक्तिगर्भित भाषा का प्रयोग किया है। "इसकी सिट्टी-पिट्टी गुम हो जाती है', 'डूब मर चुल्लू भर पानी में', 'उसके सामाजिक ऐश्वर्य का लोहा नही मानता'[7] आदि मुहावरों के सफल प्रयोग के साथ ही उन्होंने सूक्तियों मे जीवन-दर्शन का भी स्वाभाविक रूप मे समावेश किया है। यथा—(अ) "अतीत की भुलाई हुई स्मृतियो का नागपाश

१-२-३. असली हीरा नकली हीरा, पृष्ठ २७, ३३, ३४

४. देखिए 'असली हीरा नकली हीरा', पृष्ठ ८, १०-११, ५२-५४, ६५

५-६. असली हीरा नकली हीरा, पृष्ठ ३०, ५०

७. असली हीरा नकली हीरा, पृष्ठ १०, ११, ३६

जितना मधुर होता है उतना ही कड़वा भी",[१] (आ) "मनुष्य जब छिपाकर कोई काम करना चाहता है तो उसके हर भाव से एक ऐसे रहस्य की बू आने लगती है कि अन्यमनस्क व्यक्ति तक उन भावों को समझने में भूल नहीं करता।"[२] इसी प्रकार उन्होंने अलंकारों के स्वाभाविक प्रयोग द्वारा अपनी उक्तियों को सजीवता से अनुप्राणित किया है। यथा—

(अ) "अपर्णा का मुख फीका हो गया, मानो अचानक ही किसी ने पथरीली सड़क पर धक्का देकर उसे गिरा दिया हो।"[३]

(आ) "कमल के पत्ते पर से पानी जैसे फिसल जाये, इसी तरह किसी भी व्यंग का इस पर प्रभाव नहीं पड़ा।"[४]

निष्कर्ष

उक्त उपन्यासों के अध्ययन से स्पष्ट है कि श्रीमती विमल वेद ने परिस्थितियों में यत्किंचित् अन्तर रखकर कुछ निश्चित कथासूत्रों को तीन विभिन्न उपन्यासों का रूप दे दिया है। अभिप्राय यह है कि इनमें कथानक और समस्या-चित्रण की दृष्टि से बहुत-कुछ समानता है। इनमें समकालीन समाज के दो प्रमुख वर्गों की समस्याओं एवं विडम्बनाओं का तुलनात्मक चित्रण हुआ है—उच्च वर्ग एवं निम्नमध्य वर्ग। इसके लिए लेखिका ने नायक निम्नमध्य वर्ग से चुने हैं और नायिकाओं को उच्च वर्ग से चुना है। जीवन-स्तर, चरित्रादर्शों एवं नैतिक मूल्यों की दृष्टि से उक्त दोनों वर्गों के मध्य जो गहरी खाई है, उक्त कृतियों में नायकों और नायिकाओं के मध्य प्रेम-सम्बन्ध की स्थापना द्वारा उसी को पाटने का प्रयास किया गया है। इन उपन्यासों में अनुभूति की प्रेरणा की अपेक्षा सोद्देश्यता का आग्रह अधिक प्रबल रहा है, फलतः कथा-सूत्रों एवं चरित्रों में सहज विकास का अभाव प्रायः खटकता है। हाँ, भाषा-शैली के सरस एवं सहज प्रवाह ने उक्त दोष का पर्याप्त परिमार्जन अवश्य किया है। लेखिका की विशेषता यह है कि उन्होंने कथानक के अनावश्यक विस्तार की प्रवृत्ति न अपनाकर प्रतिपाद्य को अधिकाधिक स्पष्ट रखा है। उनके पात्र 'उलझे व्यक्तित्व' के उदाहरण नहीं हैं, अतः समस्यादि का निरूपण भी सर्वथा सुबोध शैली में हुआ है।

●

१-२. असली हीरा नकली हीरा, पृष्ठ ११

३-४. असली हीरा नकली हीरा, पृष्ठ १४, ५६

चतुर्थ प्रकरण

स्वातंत्र्योत्तर युग की अन्य उपन्यास-लेखिकाएँ

रजनी पनिकर प्रभृति उपन्यास-लेखिकाओं के अतिरिक्त वर्तमान काल मे प्राय: चालीस अन्य लेखिकाओं ने भी उपन्यास-रचना की है।[1] इनके नाम इस प्रकार है—कुँवरानी तारादेवी, श्रीमती लावण्यप्रभा राय, सत्यवती भैया 'उषा', सरिता रानी, भारती विद्यार्थी, सुषमा भाटी, माया मन्मथनाथ गुप्त, दर्शना, सुदेश रश्मि, सन्तोष सचदेवा, शिवरानी विश्नोई, शकुन्तला मिश्र, उर्मि, शीला शर्मा, शीला रघुवंशी, उमादेवी, कमलेश सक्सेना, इन्दिरा नूपुर, शकुन्तला शुक्ल, आदर्शकुमारी आनन्द, मधूलिका, मधूलिका मिश्र, सुमित्रा गढ़होक, मीरा महादेवन, पुष्पा भारती, उषा प्रियंवदा, पुष्पा महाजन, नारायणी कुशवाहा, शिवानी, मालती परूलकर, विन्दु अग्रवाल, कमला टंडन 'कमल', वीरा, सन्तोष बाला 'प्रेमी', कान्ता सिन्हा, प्रकाशवती, कृष्णा रविकमल, महेन्द्र बावा, प्रिया राजन, मन्नू भंडारी। इनमें से लावण्यप्रभा राय, भारती विद्यार्थी, मीरा महादेवन तथा मालती परूलकर अहिन्दीभाषी क्षेत्रों की लेखिकाएँ है, किन्तु उन्होंने अपने उपन्यासो की रचना मूलतः हिन्दी में की है।

इन लेखिकाओं ने प्राय: सामाजिक उपन्यासों की रचना की है, केवल सुदेश रश्मि और उमादेवी इसकी अपवाद है, क्योंकि इन्होंने ऐतिहासिक घटनाओं एवं पात्रों का आधार लेकर उपन्यासों का प्रणयन किया है। इनमें से भारती विद्यार्थी और मन्नू भंडारी ने स्वतन्त्र रूप से उपन्यास-रचना न करके अपने पतियों का सहयोग लिया है। भारती विद्यार्थी ने तो यह भी संकेत नही दिया कि उनके द्वारा लिखे गये परिच्छेद कौन-से हैं। ऐसे उपन्यासों की समीक्षा करते समय कठिनाई यही पड़ती है कि लेखिका की प्रतिभा का पृथक् से मूल्यांकन नही किया जा सकता।

उपर्युक्त लेखिकाओं मे से अनेक ऐसी है, जिन्होने एकाधिक उपन्यासों की रचना की है। उनके नाम इस प्रकार हैं—सत्यवती भैया 'उषा', भारती विद्यार्थी, सुषमा भाटी, इन्दिरा नूपुर, शकुन्तला शुक्ल, आदर्शकुमारी आनन्द, मीरा महादेवन तथा पुष्पा भारती। शेष लेखिकाओं में से प्रत्येक ने एक उपन्यास की रचना की है। जिन लेखिकाओं

---

१. सन् १९५७ में हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली से मेरा एक उपन्यास 'वंश वल्लरी' शीर्षक से प्रकाशित हुआ था, किन्तु प्रस्तुत प्रकरण में उसकी समीक्षा नहीं की गई है।

के दो उपन्यास हैं, उन्हें काल-क्रम से पृथक्-पृथक् स्थानों पर रखने की अपेक्षा दोनों का एक ही स्थान पर विवेचन किया गया है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि वर्तमान उपन्यास-लेखिकाओं में से अधिकांश ने सन् १९५८ के बाद उपन्यास-रचना की है, जिससे यह स्वतः व्यक्त है कि महिलाओं के उपन्यास-साहित्य का भविष्य उज्ज्वल है।

१. कुँवरानी तारादेवी

कुँवरानी तारादेवी ने 'जीवन-दान' शीर्षक समस्यामूलक सामाजिक उपन्यास की रचना की है। यह उपन्यास उद्देश्यप्रधान है तथा इसमें भारत की स्वातंत्र्योत्तर सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक स्थितियों की चर्चा की गई है। लेखिका ने प्रायः पात्रों द्वारा मार्क्सवादी सिद्धान्तों की प्रशंसा कराई है, जिससे यह लक्षित होता है कि वे साम्यवाद से प्रभावित हैं।

प्रस्तुत कृति में घटनाओं की योजना पात्रों के चरित्र-विकास के लिए की गई है। इसमें चार पात्र मुख्य हैं—बृजपुर के जमींदार का पुत्र प्रभात, उसकी कथित मौसी की पुत्री मुरला, रामा काकी द्वारा पालित मातृहीन निर्धन मनहर, मन्दिर की देवदासी महाश्वेता। ये चारों बाल-सहचर थे, किन्तु यौवन-काल में सभी का जीवन दुर्भाग्यपूर्ण रहा। प्रभात और मुरला परस्पर प्रेम-सूत्र में बँध गये, किन्तु प्रभात के पिता के हठ के कारण विवाह-सूत्र में न बँध सके। जब प्रभात डॉक्टरी पढ़ने इंग्लैंड गया तब उन्होंने मुरला का विवाह दासीपुर के जमींदार से कर दिया। मनहर ने प्रभात को इस घटना की सूचना इसलिये नहीं दी कि वह स्वयं मुरला को चाहता था। मुरला के विवाह की सूचना मिलने पर प्रभात ने आत्महत्या का प्रयत्न किया, किन्तु डॉ० जान्सन ने उसकी प्राण-रक्षा की। इसके बाद वह पागल हो गया तो उसकी सहपाठिनी शिवाला ने उसकी परिचर्या की। उधर, रामा काकी की भानजी रेवा माता-पिता की मृत्यु के बाद उनके पास रहने लगी और मनहर को चाहने लगी, किन्तु मुरला के वियोग से दुःखी मनहर उसके प्रेम का प्रतिदान न दे सका। उसने जुआ खेलकर कुछ धन एकत्र किया था, जिससे निर्धनों की सेवा के भाव से नगर में एक होटल खोल दिया। इस काम में जितने धन की कमी रही, वह महाश्वेता ने अपने आभूषण देकर पूर्ण की, जिसके लिए उसे जमींदार तथा पुजारी ने लांछित किया। फलतः वह मन्दिर का त्यागकर मनहर के पास भगिनी-रूप में रहने लगी। भीरु-प्रकृति होने के कारण मनहर महाश्वेता को गोआ ले गया। महाश्वेता प्रभात से प्रेम करती थी, किन्तु देवदासी होने के कारण इस विषय में मौन थी। गोआ में मनहर का परिचय नर्तकी मौली से हुआ, जो उससे प्रेम करने लगी। किन्तु, उसके स्वदेश चले जाने पर मौली ने विरहवश प्राण त्याग दिये। मुरला को पति-प्रेम का अभाव न था, उसने गार्हस्थ्य धर्म का भी निर्वाह किया। किन्तु, स्वयं को प्रभात और मनहर के जीवन की अव्यवस्था के लिए उत्तरदायी मानने के कारण अन्ततः उसकी क्षय-रोग से मृत्यु हो गई। इस आघात से प्रभात प्रायः पागल हो गया, किन्तु शिवाला ने

इस बार भी उसकी परिचर्या की। इसी प्रकार रेवा ने मनहर की मनोव्यथा को समझकर उसे अपनी सहानुभूति और सेवा प्रदान की।

इस उपन्यास मे ताराचन्द, विज्जी और वासुदेव की प्रासंगिक कथाओं का भी समावेश है। उपन्यास वृहदाकार है, अतः इसका कथानक भी विस्तारयुक्त है। इस विस्तार ने रोचकता तथा कौतूहलपूर्ण प्रसंगों को क्षति नहीं पहुँचाई। इस दृष्टि से तारा और विज्जी के रोचक संवाद विशेषतः उल्लेख्य है। वैसे, इन दोनों पात्रों के अतिरिक्त उपन्यास के अन्य पात्रों ने चाहे कितनी ही कर्त्तव्यपरायणता का परिचय दिया है, उनके हृदय मे असफल प्रेम की गूंज भी विद्यमान है। कथानक मे परिस्थितियो की विविधता की ओर भी उचित ध्यान दिया गया है। जमींदार (मुरला के पिता, पति), डॉक्टर (प्रभात), जनसेवक (मनहर), पुलिस इंस्पेक्टर (ताराचन्द), रेडियो डाइरेक्टर (विज्जी), देवदासी (महाश्वेता), सफल गृहिणी (मुरला, रेवा) आदि के विविधरूपी जीवन-चित्रों ने कथानक को रोचकता के अतिरिक्त सजीवता भा प्रदान की है। लेखिका ने उपन्यास में वासुदेव सम्बन्धी प्रासंगिक कथा का भी समावेश किया है, किन्तु वह मूल कथा से सर्वथा असम्बद्ध है। मुरला के प्रति वासुदेव की कुदृष्टि, मुरला द्वारा उसे प्रभात की सहायता से नौका-विहार के लिए ले जाना और वहाँ उसे नदी मे डुबो देना ऐसी घटनाएँ हैं जिन्हे उपन्यास में स्थान देकर कलेवर-वृद्धि न की जाती तो रचना-सौष्ठव मे कोई अन्तर न आता। पुलिस इंस्पेक्टर ताराचन्द द्वारा मुरला को परिचिता होने के कारण दण्ड न देना यथार्थ-चित्रण की दृष्टि से भले ही ठीक हो, उसमें उनके पद-गौरव की रक्षा नही हुई।

प्रस्तुत उपन्यास में कथा के सहज विन्यास की अपेक्षा चरित्र-व्यंजना की सशक्तता पर अधिक बल दिया गया है। इसमें जिन युवक-युवतियों का चित्रण हुआ है, वे प्रायः प्रेम-रोग से पीड़ित रहे है, किन्तु उन्होंने मन में कुंठाओ को पल्लवित न करके प्रायः सत्पक्ष अथवा कर्त्तव्य-पथ का अवलम्बन किया है। पुरुष पात्रों में प्रभात और मनहर के चरित्र प्रमुख है। उन दोनो का मुरला के प्रति अनन्य प्रेम है : उसका विवाह अन्यत्र हो जाने पर प्रभात तो प्रायः विक्षिप्त ही हो जाता है। स्वस्थ होने पर भी वह मानसिक वेदना से मुक्त होकर कर्त्तव्य-पालन नहीं कर पाता और न ही उसकी आत्मा मुरला के पति से भेंट करने की उसे अनुमति देती है। इस मनःस्थिति को मुरला ने इन शब्दो में प्रकट किया है—"लोग कहते हैं, प्रभात सुन्दर, विद्वान् एवं प्रतिभाशाली नवयुवक है, पर मुरला ने उसका जीवन लगड़ा कर दिया।"[1] मनहर का व्यक्तित्व अपेक्षाकृत आदर्शयुक्त रहा है, क्योंकि उसने अपनी पीड़ा को भुलाने के लिए जन-सेवा का क्रियात्मक मार्ग अपनाया। अपने एकमात्र अपराध (ईर्ष्यावश प्रभात को मुरला के विवाह की पूर्व-सूचना न देना) के लिए उसे जीवन भर पश्चाताप रहा और इसी से उसका व्यक्तित्व निरन्तर विकासोन्मुख रह सका।। उदाहरणार्थ महाश्वेता द्वारा अपने प्रति उसके भगिनी-जैसे प्रेम की

१. जीवन-दान, पृष्ठ २७३

यह व्याख्या देखिये— "यही वह शराबी, जुआरी, आवारा मनहर है। अपने को मिटाकर दूसरों को बनानेवाला। —लोग कहते है माँ जाया भाई ही इतनी ममता प्यार कर सकता है। मनहर भैया तो उससे भी बढ गये हैं।"[1]

पुरुष पात्रों की अन्य प्रवृत्तियो में प्रभात के पिता का हठ तथा मुरला के पति की रसिकता जमीदार-वर्ग के अनुरूप हैं। ताराचन्द और बिज्जी का परस्पर हास्य-व्यंग्य भी उनके सजीव व्यक्तित्व और दृढ़ मैत्री का बोधक है। स्त्री पात्रों में मुरला, महाश्वेता, शिवाला, मौली और रेवा आत्मोत्सर्ग करनेवाली प्रेममयी नारियाँ हैं। मुरला ने प्रभात के पिता की प्रसन्नता के लिए वासीपुर के जमींदार को पति-रूप में ग्रहण कर लिया। महाश्वेता प्रभात में अनुरक्त होने पर भी देवदासी बन गई और मनहर की सहायतार्थ अपने आभूषण देकर फ़िल्म मे काम करके उसने मन्दिर के आभूषण स्वयं ही लौटा दिये। बाल-विधवा शिवाला ने प्रभात को कष्ट में देखकर उसकी सदैव दत्तचित्त से सेवा की। मौली ने नर्तकी होने पर भी मनहर के प्रति पावन प्रेम किया और उसके सुख की कामना करते हुए ही अपना जीवन उत्सर्ग कर दिया। रेवा इन सबसे भिन्न कुछ-कुछ क्रान्तिकारी विचारोंवाली नारी है, जो मनहर के प्रति प्रेम-भाव के फलस्वरूप उसे सुराह पर लाना चाहती है। रामा काकी तथा प्रभात की माता स्नेहमयी नारियाँ हैं। वस्तुतः नारी पात्रों के चरित्र में लेखिका ने उत्सर्ग तथा निस्स्वार्थ भावना को ही प्रमुख रखा है।

कुँवरानी तारादेवी की लेखन-शैली की सफलता का अधिकांश श्रेय उनकी संवाद-योजना को है। किस परिस्थिति में कौन-सा पात्र कैसी उक्ति कह सकता है, इसका उन्हें सूक्ष्म ज्ञान है। यही कारण है कि इस कृति के वार्त्तालाप अत्यन्त स्वाभाविक तथा सजीव बन पड़े हैं। घटना-विधान और चरित्र-चित्रण ही नहीं, प्रस्तुत उपन्यास के प्रायः सभी तत्त्व कथोपकथन से उपकृत हैं। प्रमाणस्वरूप मन्दिर के पुजारी के प्रति देवदासी महाश्वेता की यह उक्ति देखिए—"और आज, जबकि हमारे भाई अन्न-वस्त्र विहीन भूखे-प्यासे और नंगे घूम रहे हैं, तब भगवान् को कहाँ से चढाएँ और क्या चढ़ाएँ? लुटा दो बाबा! मन्दिर का यह रत्न भण्डार, भगवान् के यह जेवर-सिंहासन सब लुटा दो। भगवान् के भूखे प्राणियो का पेट भरने दो। हमारे देवता इससे निहाल हो जायेंगे। हमारी यही पूजा सार्थक होगी बाबा! विश्वास न हो तो एक बार करके देखो। तब वह मेरी सादी सफ़ेद पोशाक के नृत्य से भी आनन्दविभोर हो उठेंगे।"[2] इस कथन से जहाँ महाश्वेता के तेजस्वी तथा तपःपूत व्यक्तित्व का परिचय प्राप्त होता है वहाँ समकालीन जनता की शोचनीय आर्थिक अवस्था का भी ज्ञान होता है। इसके अतिरिक्त इसमें निहित क्रान्तिकारी विचारधारा उपन्यास के उद्देश्य पर भी पर्याप्त प्रकाश डालती है। लेखिका ने मनहर, रेवा और महाश्वेता के संवादों में उनकी आन्तरिक दृढ़ता और विवेक-

१. जीवन-दान, पृष्ठ १८५
२. जीवन-दान, पृष्ठ ९७

शीलता को प्रतिविम्बित रखा है। ताराचन्द और विज्जी के वार्त्तालाप में हास्य-व्यंग्य-जनित रोचकता और आन्तरिक जीवट का स्वाभाविक निर्वाह हुआ है।[१] अतः यह स्पष्ट है कि इस उपन्यास के संवादो में विविधता, मार्मिकता, तर्कशीलता आदि गुणो का प्रसंगानुरूप अन्तर्भाव है।

कुँवरानी तारादेवी ने इस उपन्यास में वृजपुर नामक गाँव को पृष्ठभूमि में रखकर स्वातंत्र्योत्तर भारतीय समाज और राजनीति का प्रचुर वर्णन किया है। उदाहरण-स्वरूप ये उक्तियाँ देखिये—

(अ) "तकलीफ़ या जो कठिनाइयाँ सामने आती हैं हम झल्लाकर कह देते है—भई क्या वतावें, हमारी गवर्नमेंट का इन्तजाम ही खराव है।...पर इन्तजाम कर कौन रहा है, हमारे अपने भाई तो है। वही सव जव अपने कर्त्तव्य को भुलाकर गड़वड़ करने पर तुल गये हैं तो गवर्नमेंट वेचारी क्या करे।"[२]

(आ) "रियासते ख़त्म हुई जिस दिन, उस दिन एक मेरे ही नही हिन्दुस्तान के लाखों गरीवों के घर मे घी के दीये जले होंगे।"[३]

(इ) "ज़रूरत पड़ने पर हर एक ज़मींदार अपने खेतों को वन्धक रखता है। यह तो ज़मींदारो में एक रिवाज़-सा है।"[४]

इन उक्तियों में समकालीन देश-काल की वड़ी सुन्दर व्यंजना हुई है। ज़मीदारों का चारित्रिक पतन,[५] शहरों में चाय की भाँति मद्य-पान का प्रचलन[६] आदि तथ्यों के उल्लेख द्वारा लेखिका ने समकालीन स्थिति का यथातथ्य चित्र अंकित किया है। प्रकृति-चित्रण में उनकी प्रवृत्ति विशेष न रमी, फिर भी यत्र-तत्र प्राकृतिक दृश्यों का उल्लेख हुआ है। उदाहरणार्थ मुरला के शब्दों में वृजपुर के वातावरण का यह चित्र देखिये—"कैसा सुन्दर दृश्य है कुँवर! लगता है चारों ओर की पहाड़ियाँ जैसे सो रही हैं। उनकी नीद कहीं टूट न जाए, इसलिए नदी विना कुछ शब्द किये धीरे-धीरे चली जा रही है।"[७]

कुँवरानी तारादेवी ने इस उपन्यास में प्रगतिवादी विचारधारा के प्रति सहानुभूति व्यक्त की है, फलतः मनहर, रेवा, महाश्वेता आदि प्रमुख पात्रों ने समय-समय पर क्रान्तिकारी विचारों का सोद्देश्य प्रकाशन किया है।[८] 'दाल-रोटी' को ही जीवन का ध्येय न मानकर उन्होंने परोपकार और देशसेवा को व्यक्ति का उद्दिष्ट माना है।[९] उनका एक अन्य उद्देश्य प्रेम की तुलना में कर्त्तव्य की महानता का प्रतिपादन करना है,[१०] जिसके लिए नारी को पुरुष की भाँति जीवन-यापन की स्वतन्त्रता देने पर वल दिया गया है,[११]

---

१. देखिए 'जीवन-दान', पृष्ठ १०२
२-३-४. जीवन-दान, पृष्ठ ४०, २३, २७
५-६. देखिये 'जीवन-दान', पृष्ठ ५६, ६५
७. जीवन-दान, पृष्ठ २०
८-९-१०-११. देखिये 'जीवन-दान', पृष्ठ ४३, ४०, ५४, २१७

रेवा का व्यक्तित्व विशेष क्रान्तिकारी है। वह ईश्वर की उपासना को पाखण्ड समझती है। वस्तुतः लेखिका ने जन-सेवा को ही सच्ची ईश्वर-पूजा माना है। इस विषय में महाश्वेता की यह उक्ति पठनीय है—"मेरा मन कहता है भगवान् के ऊपर उत्सर्ग होने का अर्थ है उसके प्राणियों पर उत्सर्ग हो जाना, देश पर मर मिटना।"[1]

कुँवरानी तारादेवी की भाषा पात्रानुकूल है, फलतः उन्होंने प्रचलित उर्दू-शब्दों और देशज शब्दों का भी प्रचुर प्रयोग किया है। मुहावरों और लोकोक्तियों के प्रयोग द्वारा अभिव्यंजना-सौन्दर्य का विकास भी उन्हें सहज अभीष्ट रहा है।[2] बोलचाल की भाषा को स्थान देने के प्रयत्न में उन्होंने कहीं-कहीं व्याकरण-विरुद्ध प्रयोग भी किए हैं (जैसे—"कौन-सा किसी ने दफ्तर या स्कूल जाना है"[3]), किन्तु ऐसे स्थल अधिक नहीं हैं। शैली की दृष्टि से भी यह उपन्यास सजीव एवं प्रभावशाली बन पड़ा है, क्योंकि लेखिका ने कथावस्तु का अपनी ओर से अधिक वर्णन न करके नाटकीय संवादों और भावुकतापूर्ण उक्तियों को अधिक स्थान दिया है।

श्रीमती लावण्यप्रभा राय

इन्होंने 'रजनीगन्धा' शीर्षक मौलिक सामाजिक उपन्यास की रचना की है, जिसमें एक पारिवारिक कहानी प्रस्तुत की गई है। इसमें नरेन्द्र और प्रतिभा की कथा मुख्य है और शेखर, ऊर्मि तथा राकेश की कथा मुख्य सहयोगी कथा है। इसमें तीन प्रासंगिक कथाएँ हैं—(अ) शशि बाबू के परिवार की कथा, जिसमें उनकी पत्नी की सन्देहवादी प्रवृत्ति, छुआछूत आदि का विशेष उल्लेख है, (आ) प्रतिभा की भाभी रुक्मा तथा निर्मल के परिवार की कथा, (इ) रुक्मा की पड़ोसिन शान्ता तथा उसके पति श्री खन्ना की कथा। उपन्यास का कथानक संक्षेप में इस प्रकार है—

नरेश विधवा महामाया का इकलौता पुत्र था और निर्मल की बहिन प्रतिमा से विवाह का इच्छुक था, किन्तु उसके मित्र विनोद ने यह प्रवाद फैला दिया कि नरेश का विवाह एक धनी घर में होनेवाला है। विनोद ने प्रतिमा से विवाह कर लिया, किन्तु प्रतिमा उसे हृदय से न चाह सकी, फलतः विनोद ने इस शोक को भूलने के लिए मदिरा का आश्रय लिया और घुल-घुलकर प्राण त्याग दिये। मृत्यु से पूर्व उसने नरेश से क्षमा-याचना की और प्रतिमा को उसे सौंप गया। प्रतिमा नरेश की स्नेहमयी माता महामाया के साथ रहने लगी, किन्तु जब महामाया को यह ज्ञात हुआ कि नरेश उसे अब भी चाहता है तब वे खिन्न हो गईं, क्योंकि वे पड़ोसी शेखर की बहिन ऊर्मि को अपनी बहू बनाना चाहती थीं। उधर ऊर्मि का प्रेम अपनी सखी नूपुर के भाई राकेश से हो गया। महामाया

---

१. जीवन-दान, पृष्ठ ६४
२. देखिये 'जीवन-दान', पृष्ठ २२, २७, २८, ३५, १२७, १७४
३. जीवन-दान, पृष्ठ ६१

की इच्छा का आभास पाकर प्रतिमा अपने भाई के घर चली गई, किन्तु भाभी के व्यंग्य-वाणों से व्यथित होकर उसने दिल्ली में शिशु-सदन में नौकरी कर ली। उधर राकेश को पिता के दबाव के कारण मधु से विवाह करना पड़ा और ऊर्मि का जीवन दुःखमय हो गया, किन्तु राकेश के प्रेम की पूर्व-स्मृतियाँ ही उसके जीवन का वरदान रहीं। महामाया और नरेश को तीर्थ-यात्रा के समय दिल्ली में प्रतिमा मिल गई और पुत्र के सुख की कामना से महामाया उसे घर ले गई। नरेश, महामाया, ऊर्मि सबकी प्रसन्नता के लिए प्रतिमा अपने संस्कारों की दीवार लांघकर अपने हृदय की पुकार सुनने को तैयार हो गई—यही उपन्यास का अन्त है।

लेखिका ने महामाया को एक स्नेहमयी उदारहृदया माता के रूप में प्रस्तुत किया है, जो प्रतिमा और ऊर्मि के प्रति एक-जैसा मातृवत् प्रेम रखती है। इसी प्रकार उसने पुत्र के सुख के लिए अपने रुढिगत संस्कारों का त्याग करके विधवा प्रतिमा को अपनाकर आदर्श चरित्र का परिचय दिया है। प्रतिमा सुन्दर, मितभाषिणी और सेवा-परायणा युवती है। नरेश की प्रेमिका होने पर भी वह विधवा होने पर संस्कारों के कारण उससे विवाह करना अस्वीकार कर देती है, तथापि कथान्त में उसके पुनर्विवाह का उल्लेख करके लेखिका ने आदर्श को अपनाया है। ऊर्मि भी सुन्दर और भावुक है तथा राकेश को हृदय से प्रेम करती है। वह कर्त्तव्यपरायण है, अतः राकेश द्वारा मधु से विवाह करने पर भग्नहृदय होने पर भी एकाग्र मन से उसकी स्मृति में लीन रहती है। मधु को पश्चिमी सभ्यता से अतिप्रभावित युवती के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

पुरुष पात्रों में नरेश को भी विविध गुणों से युक्त दिखाया गया है। वह मातृभक्त है, प्रतिमा के प्रति उसका प्रेम एकनिष्ठ है, वह ऊर्मि से भ्रातृवत् प्रेम करता है तथा सुशील चरित्रवाला मृदुभाषी युवक है। विनोद का चरित्र प्रवंचनायुक्त है, क्योंकि उसने अपने मित्र नरेश से छल करके उसकी भावी पत्नी प्रतिमा से विवाह कर लिया। कथान्त में उसे अपने दुष्कृत्यों का परिणाम भोगना पड़ा, जो लेखिका की आदर्शोन्मुखी वृत्ति का परिचायक है। ऊर्मि का भाई शेखर डॉक्टर है, जनता के प्रति परोपकारी वृत्ति रखता है तथा ऊर्मि के प्रति उसका अनन्य स्नेह है। ऊर्मि का प्रेमी राकेश भावुक-हृदय कवि है, किन्तु पिता के दबाव के कारण मधु को अपनाकर उसने उचित नहीं किया। लेखिका ने चरित्र-चित्रण के लिए प्रत्यक्ष कथन की शैली को सफलतापूर्वक अपनाया है। उदाहरणार्थ उनकी यह उक्ति देखिए—"नरेश के मन की गहराई में जो दुःख व वेदना छिपी थी, बाहर से किसी को भी उसका पता नहीं लगता था। माँ के सामने भी वह अपने को सदा प्रफुल्ल बनाये रखता था। पर माँ आखिर माँ ही थी। उनकी आँखों को धोखा देना आसान नहीं था।"[1] लेखिका ने पात्रों के आत्मचिन्तन अथवा अन्तर्द्वन्द्व का निरूपण करने की ओर भी यथोचित ध्यान दिया है। उदाहरणार्थ प्रतिमा की मानसिक विचारधारा

---

१. रजनीगन्धा, पृष्ठ १३८

का चित्रण देखिए—"आँखों के सामने नरेश का प्रेम से उज्ज्वल चेहरा चमक उठता है। प्रतिमा का मन भी साथ-ही-साथ विवश, व्याकुल, आतुर हो जाता। बार बार क्या उसको अपने हाथों से ही अपने प्रियतम को दूर ढकेलना पड़ेगा ? और उपाय ही क्या है ?"[१]

श्रीमती राय ने अपनी ओर से अधिक न कहकर कथानक को नाटकीय रीति से विकसित किया है और संक्षिप्त एवं सार्थक सवादों की आयोजना की है। कथा-विकास के अतिरिक्त अनेक संवाद पात्रों की चारित्रिक प्रवृत्तियों के प्रकाशन में सहायक रहे हैं। उदाहरणार्थ नरेश की इस उक्ति से उसकी माता महामाया के सद्गुणों का बोध होता है—"तुमको मैं अपने ही साथ ले जाऊँगा। मेरी माँ, प्रतिमा तुमको छाती से लगाकर रखेगी। उन्हें तुम नही जानती हो। ऐसा स्नेह, ऐसी शान्ति, इतनी ममता तुम्हें दुनिया में और कही भी नहीं मिलेगी।"[२] वार्त्तालाप के अवसर पर पात्रों की भाव-भंगिमा का चित्रण करके लेखिका ने सूक्ष्म दृष्टि का परिचय दिया है। यथा—(अ) "शशि बाबू की स्त्री ने मुख बिचकाकर कहा",[३] (आ) "नरेश ने ऊर्मि के कन्धे पर हाथ रखकर कोमल कंठ से कहा।"[४]

प्रस्तुत उपन्यास में नूपुर, राकेश तथा मधु की सामाजिक स्थिति के चित्रण द्वारा उच्च धनिक वर्ग की रीति-नीति का परिचय दिया गया है। तनिक-सी बात को लेकर पार्टी देना उनके लिए सामान्य बात है—"उस दिन शाम को फिर नूपुर के यहाँ पार्टी थी। शेखर ने सच ही कहा था कि रईसो के यहाँ पार्टी के लिए विशेष अवसर की आवश्यकता नहीं होती। जब देखो उनके यहाँ पार्टी हुआ करती है।"[५] लेखिका के अनुसार इस वर्ग के व्यक्तियो की एक अन्य विशेषता यह है—"ऐसी सोसाइटी के लोग प्रेम को एक हल्का-सा मनोविनोद समझते हैं।"[६] ऊर्मि, प्रतिमा तथा महामाया प्राचीन संस्कारों से ग्रस्त हिन्दू नारियाँ है और पूजा-पाठ में विश्वास रखती हैं। नरेश को प्राणपण से चाहने पर भी विधवा प्रतिमा अपने संस्कारों के कारण उससे विवाह करने में आनाकानी करती रहती है। महामाया भी विधवा-विवाह को उचित नहीं समझती, किन्तु पुत्र की प्रसन्नता के लिए अपने संस्कारों का त्याग करने को तैयार हो जाती है। ऊर्मि राकेश द्वारा छली जाकर भी उसे अपना आराध्य मानकर चिरकुमारी रहती है, जो भारतीय संस्कृति के अनुकूल है। इस प्रकार लेखिका ने विभिन्न प्रवृत्तियोंवाले पात्रों की सृष्टि करके भारतीय संस्कृति की पाश्चात्य वातावरण से तुलना की है। उन्होने भारतीय समाज की संकुचित दृष्टि की ओर भी इंगित किया है। विधवा प्रतिमा द्वारा अपनी मृत सखी की पुत्री की देखभाल करने पर समाज द्वारा उसके और विधुर मि० खन्ना के सम्बन्धों को लेकर उँगली उठाना, ऊर्मि को राकेश से प्रेम करते देखकर शशि बाबू की पत्नी का उसके चरित्र पर लाछन लगाना आदि घटनाएँ इसी प्रकार की हैं। इस प्रकार लेखिका

१-२. रजनीगन्धा, पृष्ठ १४७, १४-१५

३-४-५-६. रजनीगन्धा, पृष्ठ ४७, ६७, ४८, ७६

ने इस तथ्य की स्थापना की है कि भारतीय नारी हृदय की प्रेरणा को सत्य मानते हुए भी संस्कार को नहीं भूल सकती।

'रजनीगन्धा' में नरेश और प्रतिमा तथा ऊर्मि और राकेश का प्रेम-सम्बन्ध दिखाकर यह स्पष्ट किया गया है कि प्रणय के मूल में हृदय की प्रेरणा होती है, उसमें ऊँच-नीच, विधवा-सधवा का भेद नहीं होता। समाज की मान्यताएँ प्रायः दो प्रेमियों के मिलन में बाधक सिद्ध होती हैं, फलतः व्यक्ति का जीवन संघर्षमय हो उठता है, किन्तु सफल प्रेमी वह है जो प्रेम-पात्र के अभाव में भी उसकी स्मृति को लेकर प्रसन्न रहे। जिस प्रकार रजनीगन्धा आँखों की आड़ में रहकर भी समीपस्थ व्यक्ति को गन्ध-दान देती है, ठीक उसी प्रकार सच्चे प्रेम की स्मृति विरहिणी के लिए सुखदायक होती है—इसी तथ्य को स्पष्ट करने के लिये इस उपन्यास की रचना हुई है। ऊर्मि और राकेश के प्रेम का चित्रण इसी आधार-भूमि पर हुआ है।

आलोच्य कृति की भाषा सामान्य हिन्दी है, जिसमें इम्तहान, सिर्फ़, नाराज़ सिफ़ारिश-जैसे प्रचलित उर्दू-शब्दों[१] तथा फ़ैशनेबिल, म्यूज़ियम, हॉल आदि प्रचलित अंग्रेजी-शब्दों[२] का भी समावेश है। 'आँखें चार होना', 'धुन काटना' जैसे प्रसंगानुकूल मुहावरे[३] भी भाषा-सौष्ठव की वृद्धि में सहायक रहे हैं। दूसरी ओर लेखिका ने लिंग-वचन सम्बन्धी अशुद्धियाँ भी की हैं। यथा—(अ) "दोपहर ढल चुका था,"[४] (आ) "ऊर्मि ने ज़िद किया"[५] (इ) "बच्चा को ऊर्मि की गोद से ले ली।"[६] लेखिका ने उपमा, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों के प्रयोग से भाषा-शैली को चित्रात्मक बनाने का सफल यत्न किया है। यथा—(अ) "पूनो के चाँद पर मानो कहीं से एक काला बादल का टुकड़ा आ पड़ा है,"[७] (आ) "ऊर्मि की झरने की तरह छोटी-सी ज़िन्दगी प्रेम के रंगीन स्पर्श से सुनहरी होने लगी।"[८] इसके अतिरिक्त अनेक स्थानों पर प्रश्न शैली द्वारा विषय को मर्मस्पर्शी बनाया गया है। यथा—"निर्मल प्रेम की भागीरथी में नहाकर जिसका तन मन पवित्र हुआ है वह क्या गन्दे नाले के जल से तृप्त हो सकता है।"[९]

निष्कर्ष-रूप में यह कथितव्य है कि आलोच्य लेखिका एक मर्मस्पर्शी सामाजिक कथानक प्रस्तुत करने में सफल रही हैं। उनके सभी पात्र सद्गुणों से युक्त हैं तथा संवाद-योजना संक्षिप्त एवं सारगर्भित है। पाश्चात्य समाज के अन्धानुकरण की अपेक्षा प्रस्तुत कृति में भारतीय समाज के सुधार पर बल दिया गया है, जो सर्वथा उचित है।

३. सुश्री सत्यवतीदेवी भैया 'उषा'

सुश्री सत्यवती 'उषा' ने 'मृदुला' तथा 'क्षितिज के पार' शीर्षक दो सामाजिक

१-२. देखिये 'रजनीगन्धा' (अ) पृष्ठ ९, ७९, ११०, १३४, (आ) २८, ५६, ७६

३. देखिये 'रजनीगन्धा', पृष्ठ ६, ६७

४-५-६. रजनीगन्धा, पृष्ठ ९९, ९९, १५०

७-८-९. रजनीगन्धा, पृष्ठ ८, ६९, ७७

उपन्यासों की रचना की है। इनमें से 'मृदुला' का प्रकाशन बाद में 'कमलाकान्त' शीर्षक से हुआ,[1] जिससे व्यर्थ ही लेखिका के तीसरे उपन्यास का भ्रम होता है। इनमें से जहाँ 'मृदुला' २४४ पृष्ठों और ४६ परिच्छेदों की रचना है, वहाँ 'क्षितिज के पार' में केवल ६७ पृष्ठ तथा २८ लघु परिच्छेद हैं।

(अ) मृदुला

इस उपन्यास का कथानक इस प्रकार है—"कमलाकान्त ने अपनी प्रथम पत्नी की मृत्यु होने पर सुनन्दा से विवाह किया, किन्तु विमाता की छाया में उनकी सप्तवर्षीया पुत्री मृदुला सुख से न रह सकी। कुछ समय बाद पडोस में रहनेवाले भाई-बहिन वृजेन्द्र और विभा को मित्र-रूप में पाकर मृदुला के नीरस जीवन में किंचित् सरसता का संचार हुआ, किन्तु विमाता को यह भी सहन न हुआ। यौवन के साथ-साथ मृदुला और वृजेन्द्र का बालोचित सरल स्नेह प्रिया-प्रियतम के प्रेम में परिवर्तित होता गया, किन्तु विजातीय होने के कारण उन्होंने परस्पर एकनिष्ठ रहने का वचन देकर संसार से अपने भावों को गुप्त ही रखा। मृदुला की विमाता ने उसका विवाह अपने भतीजे अरुण से करना चाहा, किन्तु मृदुला ने उसे भ्रातृवत् मानकर इस योजना को विफल कर दिया। तब उसका विवाह दोहाजू सेठ रमाकान्त से निश्चित हुआ, किन्तु मृदुला ने लग्न-मंडप में अपने को किसी अन्य की वाग्दत्ता बताकर विवाह न होने दिया। इस घटना के बाद उसे विमाता तथा पिता की ओर से अनेक कष्ट मिले। तब उसने गृह त्यागकर स्वतन्त्र रूप से जीविकोपार्जन करते हुए अनेक विषम परिस्थितियों का सामना किया। किन्तु, अंत में अरुण और विभा के प्रयत्न से मृदुला और वृजेन्द्र का विवाह हो गया और सब विघ्न स्वतः शांत हो गए।"

उपर्युक्त कथानक में घटनाओं का बाहुल्य है और प्रायः सभी घटनाएं मृदुला के चरित्र को निखारने के लिए आयोजित हुई हैं। उसके जीवन में क्रमशः अनेक विषम परिस्थितियाँ आईं, किन्तु अन्त में उसने इन सब पर विजय प्राप्त करके अपने लक्ष्य को पा लिया। वृजेन्द्र का चरित्र भी मृदुला के अनुरूप आदर्श गुणों से अनुप्राणित है। वह एक धनी पिता का एकमात्र पुत्र है, किन्तु धनी युवकों के दुर्गुण उसमे नहीं हैं। मृदुला को जीवनसंगिनी बनाने का निश्चय करके वह अन्त तक उस पर दृढ़ रहता है। माता-पिता की अवज्ञा न करके वह विवाह के प्रश्न को कौशलपूर्वक टालता रहा और अन्त में उन्हें अपने अनुकूल जानकर अपना मन्तव्य प्रकट किया, जिसे उन्होंने सहर्ष स्वीकार कर लिया। अरुण का त्यागमय आदर्श चरित्र, विभा का स्नेहभाव एवं मृदुला के प्रति दोनों का सौहार्द भी उल्लेखनीय है। इनके अतिरिक्त कमलाकांत, सुनन्दा, वृजेन्द्र के माता-

---

१. यह उपन्यास नवभारती प्रकाशन, दिल्ली से सन् १६५७ में प्रकाशित हुआ था, जबकि 'मृदुला' का प्रकाशन-काल सन् १६५१ है।

पिता, सेठ रमाकांत आदि अन्य अनेक पात्र प्रस्तुत उपन्यास में हैं, जो प्रसंगानुकूल विविधरूपी आचरण करके कथानक को गति प्रदान करने और मृदुला की चरित्र-रेखाओं को व्यक्त करने मे सहायक सिद्ध हुए है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि लेखिका ने कथानक और चरित्र-चित्रण में सूक्ष्म विश्लेषण का ध्यान नही रखा। घटनाओं के ऊहापोह में पात्रों की सूक्ष्म प्रकृतिगत विशेषताएँ अनावृत्त ही रह गई हैं और केवल स्थूल चारित्रिक प्रवृत्तियाँ प्रकट हो पाई हैं। पात्रों के मानसिक अन्तर्द्वन्द्व अथवा संघर्षशील स्थितियों के चित्रण की ओर लेखिका ने ध्यान नही दिया।

श्रीमती सत्यवती 'उपा' ने चारित्रिक विशेषताओं को व्यक्त करने के लिए मुख्य रूप से कथोपकथन का आश्रय लिया है। मृदुला, विभा और वृजेन्द्र के वार्तालापों मे हास-परिहास, वाग्वैदग्ध्य, पारस्परिक स्नेह, मान-मनौवल आदि भावो का सुन्दर समावेश हुआ है। किन्तु, कही-कही भावुकता अथवा भावावेश से युक्त संवादो में अभिव्यंजना सम्बन्धी प्रौढ़ता का निर्वाह नही हो सका है। उदाहरणार्थ वृजेन्द्र के प्रति अरुण की इस उक्ति में मृदुला के गुणों का वर्णन देखिए—"इन्द्र तुम पुरुप होकर इतना कातर होते हो। मृदुला के विपय में कैसी भी चिन्ता करना अपनी कमजोरी है। वह देवी है, इससे भी भयानक कष्ट झेल लेगी। तुम्हारे लिए इन्द्र! मैंने मृदुला का तेज, उसकी दृढ़ता देखी है। विवाह के दिन का वह साहस मैं कभी न भूल सकूंगा भाई। मालूम होता है वह श्रापभ्रष्ट देवकन्या है कोई। वह कलियुग की दूसरी सावित्री है इन्द्र।"[1]

'मृदुला' में वर्तमान समाज की पारिवारिक समस्याओं का विविधतापूर्ण चित्रण हुआ है। विमाता का कटु व्यवहार, विजातीय प्रेम के मार्ग में आनेवाली बाधाएँ, दहेज के अभाव में अनमेल विवाह की संभावनाएँ, स्वतन्त्र रूप से जीविकोपार्जन करनेवाली नारी के विपय मे मिथ्या लोकापवाद आदि समस्याएँ ऐसी हैं जिन्होंने न केवल देशकाल के प्रति लेखिका की सजगता का प्रमाण दिया है, अपितु पात्रों के चरित्र को भी यथास्थान प्रखरता प्रदान की है। लेखिका ने समकालीन सामाजिक-राजनीतिक स्थितियों को प्राय: संक्षेप में व्यक्त किया है। यथा—(अ) 'हिन्दू सदा ही भाग्यवादी रहे है बुआ जी, फिर मैं ही अपवाद कैसे हो सकता हूँ,'[2] (आ) 'असहयोग का काम उन दिनो जोरो पर था। नमक कानून तोड़ा जा चुका था। दिन-रात पिकेटिंग जलूस सभाओं का जोर था।'[3] मृदुला के चरित्र में दृढ़ता, कष्ट-सहिष्णुता एवं शक्ति का समन्वय करके लेखिका ने भारतीय नारी के गौरवपूर्ण चरित्र को मूर्त्त रूप प्रदान किया है और यही इस उपन्यास का प्रमुख उद्देश्य है। वृजेन्द्र और मृदुला के प्रेम को सफलता का बाना पहनाकर उन्होंने यह सिद्ध किया है कि यदि धैर्य, विवेक और दृढ़ता से काम लिया जाए तो समाज और परिस्थितियों को अपने अनुकूल बनाया जा सकता है।

१-२. मृदुला, पृष्ठ १६०-१६१, १२६
३. मृदुला, पृष्ठ १७८

इस कृति की भाषा सरल, व्यावहारिक और मुहावरेदार है तथा शैली में रोचकता और प्रवाह की ओर यथोचित ध्यान दिया गया है। लेखिका ने अनुभवपुष्ट सूक्ति-वाक्यों का बहुत ही सुन्दर प्रयोग किया है। यथा—"मरुस्थल में मरते हुए प्यासे को जिस प्रकार जल की एक बूंद भी अमृत के समान है उसी प्रकार प्रेमविहीन जीवन में ज़रा-सी सहानुभूति पा लेना जीवन को लहलहा देने के समान है।"[1] अन्त में यह उल्लेखनीय है कि 'मृदुला' घटनात्मक, किन्तु चरित्रप्रधान उपन्यास है। यथार्थ की अपेक्षा इसमें आदर्श की प्रतिष्ठा की गई है, किन्तु सूक्ष्म भाव-प्रक्रियाओं के स्थान पर वर्णनगत स्थूलता के फलस्वरूप इस रचना का अभिव्यंजना-पक्ष विशेष सबल नहीं बन पाया है।

(आ) क्षितिज के पार

इस उपन्यास में हिन्दू-विधवा की पारिवारिक एवं सामाजिक दुर्दशा का चित्रण करते हुए नायिका अनुमति के चरित्र को विशेष उत्कर्ष प्रदान किया गया है। वह एक धनी परिवार की इकलौती पुत्री थी तथा उसके पति प्रवीण भी सम्पन्न ज़मीदार घराने के थे। किन्तु, 'सबै दिन होत न एक समान' को चरितार्थ करते हुए लेखिका ने उसके सुख-सौभाग्य पर शीघ्र ही वज्रपात करा दिया। आकस्मिक दुर्घटना के कारण माता-पिता की मृत्यु, पति की अकाल मृत्यु के उपरान्त सास के अत्याचारों से व्यथित होकर गृह-त्याग, जीविकोपार्जन के लिए दर-दर भटकना, विधवाश्रम के संचालक तथा एक धनी सेठ द्वारा उसके सतीत्व-नाश के असफल प्रयत्न आदि विपत्तियों में तपकर अनुमति का चरित्र स्वर्ण की भाँति उज्ज्वल हो उठा है। वस्तुतः यह कृति नायिकाप्रधान है और उसी के चरित्र को आदर्श रूप में अभिव्यक्त करने के लिये समस्त घटनाओं एवं पात्रों की योजना की गई है। नायक प्रवीण की अकाल मृत्यु भी इसी कारण दिखाई गई है कि वैधव्य के कष्टों में अनुमति की चारित्रिक दृढ़ता निखरे हुए रूप में प्रत्यक्ष हो सके। घटना-बाहुल्य को लक्षित करके इसे घटनाप्रधान उपन्यास भी कहा जा सकता था, किन्तु घटनाओं के संयोजन और निर्वाह में अनुमति का योगदान इतना अधिक है कि इसे चरित्रप्रधान उपन्यास कहना ही उपयुक्त होगा।

अनुमति का चरित्र आदर्श प्रवृत्तियों का पुंज मात्र नहीं है। नर्स के रूप मे कार्य करते समय डॉक्टर निरंजन जैसे संयमशील व्यक्ति के सम्पर्क में किंचित् चारित्रिक दुर्बलता का आभास देकर लेखिका ने उसे देवी का बाना न पहिनाकर मनोविज्ञान का उपयुक्त निर्वाह किया है। संयम एवं दमन द्वारा अपनी उक्त दुर्बलता को दमित करनेवाली 'अनु' निश्चय ही आदर्श नारी है। उपन्यास के अन्त में अपनी सखी ध्वजा के पुत्र की अग्निकांड से रक्षा करने में प्राणों की आहुति देकर उसका जीवन मानो सार्थक हो उठा है। 'अनुमति' के अतिरिक्त लेखिका ने जिन अन्य पात्रों की सृष्टि की है, उन्हें 'सत्'

१. मृदुला, पृष्ठ ७

एवं 'असत्' की श्रेणियों में सहज ही विभक्त किया जा सकता है। प्रवीण, ध्वजा और उसके पति समीर, डॉक्टर निरजन, अनुमति के उदार आश्रयदाता (कृपक राघोवा, गुप्ता परिवार के सदस्य) आदि पात्र उदात्त गुणों से विभूषित हैं और 'अनु' के प्रति सदैव सद्व्यवहार करते हैं। दूसरी ओर अनु की सास, देवर दीपक, विधवाश्रम के सचालक, कामुक सेठ आदि पात्र द्वितीय कोटि के है। लेखिका ने उक्त पात्रो को अनु के प्रति उनके व्यवहार के आधार पर ही उदार अथवा अनुदार व्यक्तित्व प्रदान किया है। चरित्र-चित्रण में स्वाभाविकता एवं नाट्योचित गति के लिए प्रायः लघु एवं सारगर्भित वार्त्तालापों की योजना की गई है। ये सवाद परिमाण में अधिक न होने पर भी कथानक तथा पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं को मुखरित करने मे सहायक सिद्ध हुए हैं। इस दृष्टि से अनुमति और ध्वजा के संवाद विशेष रोचक एवं मार्मिक बन पड़े हैं।[1]

आलोच्य कृति में एक ओर 'अनु' की चारित्रिक दृढ़ता को विधवाओं के लिए अनुकरणीय आदर्श के रूप में प्रस्तुत किया गया है और दूसरी ओर समाज की निकृष्ट प्रवृत्तियों पर भी प्रकाश डाला गया है। लेखिका ने समकालीन देशकाल को ध्यान में रखते हुए विधवा-जीवन की समस्याओं (सास की कटूक्तियाँ, कामी पुरुषों से रक्षा, दृढ़ संयम की आवश्यकता आदि) पर विस्तारपूर्वक विचार किया है। प्रस्तुत कृति की रचना का उद्देश्य इन्हीं समस्याओं को प्रकाश में लाना है, किन्तु लेखिका ने कोई क्रान्तिकारी समाधान प्रस्तुत न करके इस दिशा में प्रायः पिष्टपेषण की प्रवृत्ति अपनाई है।

भाषा की दृष्टि से प्रस्तुत कृति में सरल साहित्यिक शब्दावली को स्थान दिया गया है। लेखिका ने देशज शब्दों एवं उर्दू-शब्दों के प्रति आग्रह न रखकर तत्सम-तद्भव शब्दावली का संतुलित प्रयोग किया है, जिससे वाक्य-विन्यास में सुगठन एवं गरिमा का अनायास ही समावेश हो गया है। उदाहरणस्वरूप उपन्यास के आरम्भ की ये पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—"जीवन में एक ऐसा भी समय आता है जब युवक और युवतियाँ अपनी ही भावनाओं में बहा करते हैं। जीवन उनके लिए एक रंगीन स्वप्न बन जाता है। संसार उन्हें रस की खान और प्रेम का मनोहर संगीत मालूम पड़ता है। उनका जीवन स्वप्निल और मादक हो उठता है। 'अनु' आज इसी दशा को पहुँच गई थी।"[2] अन्त में निष्कर्ष-स्वरूप यह कहा जा सकता है कि लेखिका को एक ओर वक्रतारहित सरल कथानक के आयोजन मे सफलता मिली है और दूसरी ओर भाषा-शैली भी पर्याप्त स्वच्छ है। अभाव है तो केवल यही कि विधवा-जीवन की समस्याओं को नारी-जागरण के नवीन आन्दोलन की पृष्ठभूमि में व्यक्त नहीं किया गया है।

४. श्रीमती सरिता रानी

श्रीमती सरिता रानी ने 'नीला' शीर्षक रहस्य-रोमांचपूर्ण उपन्यास की रचना

---

१. देखिये 'क्षितिज के पार' पृष्ठ ४-६, ७९-८०, ८६-८८

२. क्षितिज के पार, पृष्ठ १

की है जिसमें चिकित्सा-क्षेत्र के विनाशकारी वैज्ञानिक आविष्कारों का उल्लेख किया गया है। कथानक इस प्रकार है—नीला को अपने अभिभावक लाला दीवानचन्द की आज्ञा से, इच्छा न होने पर भी, अपनी दुर्बलता का उपचार कराने के लिए डॉक्टर बोस के मोरावादी-स्थित आरोग्य-सदन में जाना पड़ा। वस्तुतः डॉक्टर बोस का आरोग्य-सदन रहस्यपूर्ण पापों (हत्या, रोगियों को पागल बनाना आदि) का केन्द्र था और दीवानचन्द ने डॉक्टर बोस को रिश्वत देकर नीला को वहाँ पागल होने के लिए ही भेजा था, क्योंकि वे उसकी सब सम्पत्ति हड़प चुके थे। लाला जी का उक्त मनोरथ सफल न हो सका, क्योंकि नीला के प्रेमी विनोद ने (जिससे नीला का मोरावादी आते समय गाड़ी में परिचय हुआ था) अपने कौशल एवं युक्ति से आरोग्य-सदन के सब भयंकर रहस्यों का ज्ञान प्राप्त करके डॉक्टर बोस, उनके सहकारियों एवं लाला दीवानचन्द को न्यायालय से उचित दण्ड दिलवा दिया। अन्त में नीला और विनोद का सामाजिक रीति से विवाह सम्पन्न हुआ।

इस उपन्यास का कथानक आद्यन्त 'आरोग्य-सदन' से ही सम्बद्ध रहा है। डॉक्टर बोस द्वारा सुन्दर युवतियों पर वैज्ञानिक प्रयोग करके उनकी शक्ति से सौन्दर्य-वृद्धि का रसायन तैयार करना, अपनी नर्स किरण को उसके प्रयोग से अतिरिक्त सौन्दर्य एवं अमर यौवन प्रदान करना, किसी की मृत्यु होने पर आरोग्य-सदन में ही उसे दफ़ना देना आदि रहस्यपूर्ण तत्त्वों ने कथानक में कौतूहल की सृष्टि की है, किन्तु जीवन की यथार्थ समस्याओं का इसमें अभाव है। सस्ती रुचि के पाठक इससे तुष्ट हो सकेंगे, किन्तु साहित्यिक रुचि के पाठकों को इस उपन्यास का अध्ययन करके निराश ही होना पड़ेगा।

प्रस्तुत उपन्यास में पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं को प्रायः स्थूल रूप में प्रकट किया गया है। डॉक्टर बोस, लाला दीवानचन्द, नर्स किरण, सिस्टर विलसन तथा नर्स मालती असत् पात्र है और उनके कार्य भी वैसे ही क्रूर, पापपूर्ण तथा स्वार्थपरक है। सत् पात्र केवल तीन हैं—डॉक्टर विनोद, डॉक्टर प्रकाश तथा नीला। प्रकाश ने असहमत होने पर भी भय तथा मानसिक दुर्बलता के कारण डॉक्टर बोस का साथ दिया, किन्तु विनोद उनकी अपेक्षा अधिक साहसी, प्रतिभावान् एवं नीति-कुशल है। नीला भीरु प्रकृति की कोमलहृदया युवती है, किन्तु प्रस्तुत उपन्यास में घटनाओं के केन्द्र में मुख्यतः उसी का व्यक्तित्व है। पात्रों की चारित्रिक प्रवृत्तियों के प्रकाशन की अपेक्षा लेखिका की दृष्टि मुख्यतः घटना-चमत्कार की ओर रही है, अतः पात्रों के अन्तर्द्वन्द्व का निरूपण करने की ओर प्रायः उनका ध्यान नहीं गया। उन्होंने चरित्र-चित्रण के लिए संवाद-योजना की ओर भी समुचित ध्यान नहीं दिया है। इस उपन्यास के अधिकांश संवाद मुख्यतः कथानक से सम्बद्ध हैं, अतः इन्हें कथानक का ही नाटकीय रूप माना जाए तो अनुचित न होगा। फिर भी, कतिपय वार्तालाप पात्रों की चारित्रिक प्रवृत्तियों की अभिव्यक्ति में भी सहायक रहे हैं। उदाहरणार्थ विनोद की उक्तियों में सर्वत्र उसकी निर्भीकता और बुद्धि-कौशल की छाप है तथा डॉक्टर बोस की उक्तियों में उसकी मक्कार तथा क्रूर प्रवृत्ति

स्पष्टतः झलकती रही है।

'नीला' में डॉक्टर बोस के आरोग्य-सदन के वातावरण का चित्रण ही लेखिका का उद्दिष्ट है, अतः इसमें किसी समकालीन सामाजिक तथा राजनीतिक समस्या का उल्लेख नहीं हुआ है। भारत-विभाजन से उत्पन्न शरणार्थी-समस्या की ओर नर्स किरण ने एक स्थल पर संकेत किया है,[1] किन्तु उसका उल्लेख आरोग्य-सदन के प्रसंग में अत्यन्त गौण रूप में हुआ है। इस उपन्यास की रचना पाठक की कौतूहल-वृत्ति को तृप्त करने के लिए की गई है। डॉक्टर बोस के काले कारनामों की चर्चा करके सम्भवतः लेखिका यह व्यक्त करना चाहती है कि समाज के असत् पात्रों द्वारा दुरुपयोग के कारण विज्ञान-जैसा वरदान भी अभिशाप सिद्ध हो सकता है।

आलोच्य उपन्यास की भाषा व्यावहारिक हिन्दी है। लेखिका ने जिम्मेदारी, दिलचस्पी, जाहिर, मदद, ताज्जुब आदि उर्दू-शब्दों[2] तथा प्रैक्टिस, इंचार्ज, सिस्टर आदि अंग्रेजी के प्रचलित शब्दों[3] का प्रचुर प्रयोग किया है। मुश्कुराहट, शिर, किश्म, सूटकेश आदि शब्दों[4] में 'स' के स्थान पर 'श' का प्रयोग अशुद्ध है और बंगभाषा के प्रभाव का सूचक है। बंगभाषा के प्रभावस्वरूप लेखिका ने कहीं-कहीं लिंग-वचन सम्बन्धी भूलें भी की हैं। उनकी वर्णन-शैली सरल है, किन्तु उसे साहित्यिक गुणों से समृद्ध नहीं कहा जा सकता।

५. श्रीमती भारती विद्यार्थी

श्रीमती भारती विद्यार्थी और उनके पति श्री देवदूत विद्यार्थी ने 'हार या जीत' और 'पाँच बेत' शीर्षक दो उपन्यासों की सयुक्त रूप से रचना की है। इनमें से किसी भी कृति में लेखक-द्वय ने यह स्पष्ट नहीं किया कि कौन-से परिच्छेद किसने लिखे है, फलतः श्रीमती विद्यार्थी के कथा-शिल्प की स्वतन्त्र रूप में विवेचना सम्भव नहीं है।

(अ) हार या जीत

इस उपन्यास की रचना प्रथमतः एक कहानी के रूप में की गई थी, किन्तु बाद में इसे २०६ पृष्ठों के लघु उपन्यास के रूप में पल्लवित कर दिया गया। इसकी आधिकारिक कथा नायक देवेन्द्र तथा नायिका सरला की प्रेम कथा है। देवेन्द्र सरला को आरम्भ से ही जीवन-संगिनी बनाने का अभिलाषी था, किन्तु सरला उसके प्रति अनुरक्त होकर भी अपनी सखी ईवा की प्रेरणा से देश की तत्कालीन परतन्त्र स्थिति से अभिभूत होकर आजन्म अविवाहित रहने का व्रत ले बैठी थी। एक दिन देवेन्द्र द्वारा प्रणय-याचना

---

१. देखिए, नीला,' पृष्ठ १२०

२. नीला, पृष्ठ २, ५, ६, ७, ११

३-४. देखिए 'नीला', (अ) पृष्ठ, ७, १५, १७, (आ) पृष्ठ १४, २७, ३६, ३९

करने पर सरला भी अपने अव्यक्त प्रेम को अभिव्यक्त कर देती है और व्रत-भंग की हार में भी जीत की प्रसन्नता का अनुभव करती है। परन्तु, यहीं पर लेखक-द्वय ने अत्यंत कुशलतापूर्वक कथानक को एक नवीन मोड़ देकर व्रत को भंग होते-होते बचा लिया है। विवाह की शाम को राष्ट्र के स्वतन्त्रता-आन्दोलन से उत्तेजित हुई सरला के जेल जाने पर प्रेमी देवेन्द्र भी उसी मार्ग का अनुसरण करते हुए पुलिस की गोली का शिकार बनता है। इस मुख्य कथा के साथ-साथ कुमुद, बालकृष्ण, ईवा, सुधा, प्रफुल्ल घोष आदि पात्रों से सम्बद्ध प्रासंगिक कथाओं के कलात्मक एवं समुचित सुगुम्फन में भी लेखक-द्वय को सफलता मिली है और इन्हीं कथाओं के कारण उपन्यास में विविधता एवं रोचकता का समावेश हो सका है। उपन्यास के कथानक को सुख की चरम सीमा पर पहुँचाते-पहुँचाते अकस्मात् दु:खान्त बना दिया गया है।

आलोच्य उपन्यास में वर्ग-चरित्र अधिक हैं। नायिका सरला और नायक देवेन्द्र परतन्त्रताकालीन भारत के उन युवक-युवतियों के प्रतीक हैं जो युगीन आन्दोलन से उत्तेजित होकर मर-मिटने को चल निकले थे। कुमुद की पीड़ा से उस वेदनामयी नारी का स्मरण हो आता है जो पति के जीवित रहते हुए भी वैधव्य को अंगीकार करने को विवश हो जाती है। देवेन्द्र के अतिरिक्त प्रफुल्ल घोष उत्तम प्रकृति का पात्र है। बालकृष्ण अत्याचारी पुरुष वर्ग का प्रतीक है। समग्र रूप से चरित्र-चित्रण पर विचार करने पर ऐसा लगता है कि प्रत्येक पात्र किसी अभाव से पीड़ित है। वस्तुतः चरित्र-चित्रण की दृष्टि से लेखक-द्वय को उपन्यास में पर्याप्त सफलता मिली है। पात्रों के हृद्गत द्वन्द्व का मनोवैज्ञानिक चित्रण अत्यंत कुशलतापूर्वक किया गया है। उपन्यास के पात्र सजीव हैं और उनमें सहृदय पाठक को प्रभावित करने की अपूर्व क्षमता है।

विविध पात्रों के वार्त्तालाप उपन्यास में नाटकीयता लाने में सहायक रहे हैं। ये संवाद अनेक प्रकार के हैं। उपन्यास के प्रारम्भ में सरला और उसके पिता का देवेन्द्र-विषयक वार्त्तालाप कथानक को गति देने में सहायक है।[1] ईवा और सरला का विचारपूर्ण वार्त्तालाप नारी की तत्कालीन स्थिति और उसमें सुधार सम्बन्धी तथ्यों पर पर्याप्त प्रकाश डालता है।[2] कुमुद और देवेन्द्र तथा सरला और देवेन्द्र के भावुकतापूर्ण संवाद और शंकर मेनोन एवं देवेन्द्र के ब्रिटिश सरकार की नीति सम्बन्धी राजनीतिक वार्त्तालापों का भी उपन्यास को रोचक बनाने में पर्याप्त योगदान है।[3] सुधा और देवेन्द्र तथा माधवी अम्मा और मेनोन के तर्कपूर्ण संवाद नारी की अतीतकालीन गरिमा के परिचायक हैं।[4] प्रफुल्ल घोष और सुधा के वार्त्तालाप द्वारा केरल के रमणीय प्राकृतिक सौन्दर्य, रीति-रिवाज, रहन-सहन, वेशभूषा आदि को व्यक्त किया गया है।[5] संवाद पात्रों के चरित्र को स्पष्ट करने में भी सहायक रहे हैं। उदाहरणतया माधवी अम्मा को समझाते हुए मेनोन

१-५. देखिए 'हार या जीत', (अ) पृष्ठ १, (आ) पृष्ठ १५-१६, (इ) पृष्ठ २३, ८१-८३, ४३, (ई) पृष्ठ ४७-४८, ६४-६६, (उ) पृष्ठ ६८-७१

की यह उक्ति नायिका सरला के चरित्र पर प्रकाश डालती है—"देखो माधवी, मुझे इसका पूरा विश्वास है कि सरला कोई ऐसा काम कभी नही करेगी जो अयोग्य हो, अनुचित हो। उसका मन ऐसी बातों की तरफ जायेगा ही नही, जो अभद्र हों।"[१]

'हार या जीत' का महत्त्व विशेषतः देशकाल के निरूपण की दृष्टि से है। स्वतंत्रतापूर्व भारत की राजनीतिक स्थिति, अंग्रेजो के दमन-चक्र तथा स्वतन्त्रता के लिए कांग्रेस के माध्यम से देश की जनता के सामूहिक प्रयत्न का इतिहास-सम्मत वर्णन किया गया है। प्रफुल्ल तथा सुधा के संवाद के माध्यम से केरल के प्राकृतिक सौंदर्य, उसके विभिन्न वर्गों के सामाजिक जीवन तथा उनके पृथक्-पृथक् रीति-रिवाजों (घर के अहाते में ही मृतक का दाह-संस्कार करना, भाई तथा बहिन की सन्तान के मध्य विवाह-सम्बन्ध आदि) का सरस एव सजीव चित्रण किया गया है। प्रासंगिक रूप से ईसाई धर्म का भी कुछ विस्तृत वर्णन हुआ है। ईवा द्वारा 'सिस्टरहुड' ग्रहण करने का दृश्य-वर्णन अत्यन्त मार्मिक है। वैसे, इस रचना का उद्देश्य युग की माँग के अनुरूप भारत में राष्ट्रीयता की भावना का प्रचार करना है। डॉ० रांगेय राघव के अनुसार, "हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने के लिए यह आवश्यक है कि भारत के विभिन्न प्रांतों के जीवन को साहित्य में उतारा जाये; और श्री विद्यार्थी तथा श्रीमती भारती ने यह कार्य अत्यन्त सफलतापूर्वक किया है।"[२]

प्रस्तुत उपन्यास में व्यक्तिगत, पारिवारिक तथा राजनीतिक समस्याओं के चित्रण के पश्चात् उनके समाधान के संकेत तथा प्रेरणा-स्रोत भी विद्यमान है। जीवन के किसी भी क्षेत्र में भेद-भाव का निराकरण, पुरुष और स्त्री, धनी और निर्धन, सबके समान अधिकार आदि का वर्णन विभिन्न स्थलों पर किया गया है।[3] राष्ट्रीय एकता के लिए जातिगत अथवा धर्मगत भेद-भाव की विस्मृति अनिवार्य है, इस तथ्य की पुष्टि प्रफुल्ल घोष तथा सुधा के विवाह-सम्बन्ध द्वारा की गई है। अन्त मे यह उल्लेखनीय है कि इस उपन्यास की भाषा-शैली प्रवाहपूर्ण, प्रभावोत्पादक तथा विविध विषयों की अभिव्यंजना में सक्षम है। वस्तुतः राष्ट्रीय ऐक्य का समर्थन करनेवाले इस उपन्यास में भाषा-शैली भी ऐसी प्रयुक्त की गई है, जिससे किसी भी जिज्ञासु पाठक को कठिनाई का अनुभव न हो।

(आ) पाँच वेंत

'पाँच वेंत' एक आंचलिक उपन्यास है, जिसमें लेखक-द्वय ने दक्षिण भारत के राजनीतिक एवं सामाजिक जीवन पर विस्तृत प्रकाश डाला है। इस कृति का शीर्षक कथा-

---

१. हार या जीत, पृष्ठ ६४
२. हार या जीत, भूमिका, पृष्ठ 'द'
३. देखिए 'हार या जीत', पृष्ठ ६६

नक की प्रमुख घटनाओं से विशेष सम्बद्ध नहीं है, इसका महत्त्व केवल इतना है कि प्रारम्भ में हैडमास्टर से पाँच बेंत खानेवाला नायक चन्द्रकान्त अन्ततः एक सफल समाज-सेवक और हिन्दी-प्रचारक बनता है। यह उपन्यास देशकालप्रधान है, इसलिए इसमें कथानक नगण्य-प्रायः ही है। मध्यवर्गीय परिवार से सम्बन्धित नायक चन्द्रकान्त के विद्यार्थी-जीवन एवं हिन्दी-प्रचारक-रूप की अभिव्यक्ति ही उपन्यास की कुल कथावस्तु है। चन्द्रकान्त पितृहीन, निर्धन तथा क्रान्तिकारी विचारोंवाला युवक है, जो स्कूल के हैडमास्टर के अत्याचारों को सहन न कर पाने के कारण अपनी जन्मभूमि का त्याग कर देता है और फिर अपना अधिकांश जीवन दक्षिण के विभिन्न भागों में घूमते हुए व्यतीत करता है। नौकरी के लिए इस भ्रमण-काल में उसमें कर्त्तव्य के साथ-साथ सरस्वती, देवयानी, रजनी आदि विविध नारी-पात्रों के सम्पर्क में आने पर भावना की झलक भी मिलती है, परन्तु मुख्यतया कर्त्तव्य-भाव ही प्रधान रहा है, जो उचित ही है।

इस उपन्यास में चरित्र-चित्रण की ओर लेखक-द्वय ने विशेष ध्यान नहीं दिया है। दक्षिण भारत की अधिकाधिक सामाजिक विविधताओं का दिग्दर्शन कराने के लिए ही अनेक पात्रों की सृष्टि की गई है। परन्तु पुरुष पात्रों में चन्द्रकान्त और स्त्री पात्रों में रजनी के अतिरिक्त अन्य किसी पात्र का चरित्र अधिक मुखर नहीं हो पाया है। चन्द्रकान्त का चरित्र उपन्यास में प्रमुख है। उपन्यास के मध्य तक वह कुंठाग्रस्त कर्त्तव्य-प्रेमी अधिक है, देवयानी के विवाह-समाचार के पश्चात् तो उसका भग्न हृदय कर्त्तव्य-पथ से भी विचलित होना चाहता है, किन्तु स्नेहमयी भावुक रजनी उसकी वेदना में सहयोग देती हुई उसे ऊँचा उठने की प्रेरणा देती है। अन्य पात्रों में चन्द्रकान्त की माँ रूढ़िग्रस्त, परम्परावादी, धार्मिक और स्नेहशीला है। बालविधवा देवयानी प्रारम्भ में कर्मठ देश-सेविका के रूप में चित्रित है, परन्तु कुछ समय पश्चात् उसका पुनर्विवाह हो जाता है। सरस्वती तत्कालीन देशसेविकाओं का प्रतिनिधित्व करनेवाली वर्ग-चरित्र है। पुरुष पात्रों में चन्द्रकान्त और उसके सहपाठियों के अतिरिक्त चन्द्रकान्त के भाई सूर्यकान्त और रजनी के भाई माधवन का वर्णन प्रसंगवश ही किया गया है।

जहाँ तक कथोपकथन का प्रश्न है, इस उपन्यास में उनका अभाव ही कहा जा सकता है। वस्तुतः अंचलविशेष की सांस्कृतिक एवं सामाजिक स्थिति का चित्रण इस उपन्यास में प्रमुख रहा है। दक्षिण भारत के विभिन्न प्रान्तों—मद्रास, कोचीन आदि—की भिन्नरूपा संस्कृति पर पर्याप्त प्रकाश डाला गया है। यहाँ की स्त्रियाँ नौ गज लम्बी साड़ी पहनती हैं, पर्दा-प्रथा का अभाव है, माथे की बिन्दी तथा गले का मंगलसूत्र सौभाग्य-चिह्न हैं, विधवाएँ अनिवार्यतः श्वेत वस्त्र पहनती हैं और सिर मुँडवाकर रखती हैं, कुमारी कन्याएँ घाघरी और चोली पहनती है—आदि बातों का उल्लेख रोचक शैली में किया गया है। इस प्रान्त की संस्कृति भी विशिष्टता लिए है। प्रत्येक घर के बाहर साफ़ स्थान पर अल्पना की जाती है तथा स्वच्छता को विशेष महत्त्व दिया जाता है।[1] भोजन

१. देखिए 'पाँच बेंत', पृष्ठ ५६-५७

की दृष्टि से कॉफ़ी यहाँ का मुख्य पेय है और चावल मुख्य खाद्य पदार्थ, जिसे केले के पत्ते पर रखकर खाया जाता है। छुआछूत को बहुत माना जाता है। विवाह की विधि भी दक्षिण में भिन्न है।[१] इस प्रकार सामाजिक दृष्टि से दक्षिण का जीवन सादा तथा परम्परावादी अधिक है। धार्मिक दृष्टि से समाज दो वर्गों में विभाजित है—ब्राह्मण तथा अब्राह्मण अथवा शूद्र। ब्राह्मण वर्ग भी स्मार्त और वैष्णव दो उपवर्गों मे विभक्त है। स्मार्त शिव की तथा वैष्णव विष्णु की पूजा करते हैं।[२] आर्थिक दृष्टि से दक्षिण का जीवन अधिक सम्पन्न नहीं है। दक्षिण के राजनीतिक वातावरण को प्रस्तुत करने में लेखक-द्वय को सर्वाधिक सफलता मिली है। प्रथम महायुद्ध से लेकर स्वतन्त्रता-प्राप्ति तक के राजनीतिक वातावरण को सजीव रूप में व्यक्त किया गया है। काग्रेस देश की स्वतन्त्रता के लिए प्राणपण से जुटी थी। गांधी जी, जवाहरलाल नेहरू, डॉ० राजेन्द्रप्रसाद आदि नेता देश के विभिन्न भागों में घूम-घूमकर अंग्रेजों के विरुद्ध देशवासियों को जागृत करने का यथासम्भव प्रयत्न कर रहे थे। जलियाँवाला बाग की घटना, द्वितीय महायुद्ध, सन् १९४२ का असहयोग आन्दोलन, मुसलमानों द्वारा पाकिस्तान की माँग आदि घटनाओं का विवेचन करके लेखक-द्वय ने राजनीतिक वातावरण को सफलतापूर्वक व्यक्त किया है। उत्तर भारत तथा दक्षिण भारत के निवासियों को अधिकाधिक निकट लाने के लिए कांग्रेस द्वारा निर्मित समिति ने विभिन्न प्रचारकों को दक्षिण के विभिन्न भागों में हिन्दी-प्रचार के लिए नियुक्त किया था। उपन्यास का नायक चन्द्रकान्त भी इसी प्रकार का एक प्रचारक था। वैसे, शिक्षा-क्षेत्र में दक्षिण का स्वर ऊँचा था तथा स्त्रियों को भी शिक्षा दी जाती थी। उपर्युक्त सम्पूर्ण विवरण से स्पष्ट है कि इस उपन्यास में देश-काल की अभिव्यक्ति के प्रति जागरूकता प्रकट की गई है।

दक्षिण भारत के राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक तथा शैक्षिक वातावरण को प्रस्तुत करना ही लेखक-दम्पति का मुख्य उद्देश्य है। यद्यपि उत्तर भारत के वातावरण को भी तुलनात्मक दृष्टि से व्यक्त करने का प्रयत्न किया गया है, तथापि इसे उनका उद्देश्य नहीं माना जा सकता; दक्षिण के जीवन को स्पष्ट करने के लिए ही उसका समावेश किया गया है। उपन्यास की भाषा बोलचाल की सामान्य भाषा होने पर भी विषयानुरूप है। विवरणात्मक स्थलों पर भाषा भी वैसी ही विवरणात्मक है[३] तथा भावात्मक स्थलों पर भाषा स्वभावतः भावात्मक एवं अलंकृत हो गई है। 'हृदयोद्गार' शीर्षक परिच्छेद तो पूर्णतया भावात्मक भाषा में रचित है। भाषा-परिवर्तन को लक्षित करके यह परिच्छेद भारती विद्यार्थी द्वारा लिखित प्रतीत होता है। शैली की दृष्टि से सामान्यतः विवरणात्मक तथा विवेचनात्मक शैली में सम्पूर्ण उपन्यास लिखा गया है। परन्तु शैली में एकरसता नहीं है, विषय-परिवर्तन के साथ शैली भी परिवर्तित हो गई

१-२. देखिए 'पाँच बेंत', पृष्ठ ७३-७५, ९०

३. देखिये 'पाँच बेंत', पृष्ठ १५

है। भाषणों में भाषण-शैली, रजनी तथा चन्द्रकान्त के पत्र-व्यवहार के प्रसंग में पत्र-शैली तथा अनेकशः अलंकृत शैली का प्रयोग किया गया है। वस्तुतः उपन्यास की रोचकता और सरसता का मुख्य श्रेय शैली की विविधता को ही दिया जा सकता है।

६. सुश्री सुषमा भाटी

सुषमा जी ने 'गेट कीपर' तथा 'ममता' शीर्षक सामाजिक उपन्यासों की रचना की है। इनमें नारी-जीवन की समस्याओं के विविधतापूर्ण चित्रण पर बल दिया गया है, जिसके लिए आदर्शोन्मुख यथार्थ की शैली अपनाई गई है। इस दृष्टि से 'ममता' लघु उपन्यास होने के कारण अधिक सफल है, क्योंकि 'गेट कीपर' में लेखिका की दृष्टि घटना-वाहुल्य एवं व्यक्ति-वैचित्र्य मे उलझकर रह गई है। इस उपन्यास में वासना और प्रेम के द्वन्द्व का चित्रण करते हुए प्रेम को दीर्घजीवी और सुखदायी माना गया है। उपन्यास के कथानक को एक स्कूल के गेट कीपर दीनू दादा ने पूजा, दीप्ति, यामिनी, दलजीत आदि छात्र-छात्राओं के समक्ष आत्मकथा होने पर भी अन्यपुरुष की शैली में प्रस्तुत किया है। कथानक बीस प्रकरणो में विभक्त है तथा कथानायक देवेन्द्र (दीनू दादा) के जीवन से सम्बद्ध मुख्य कथा के अतिरिक्त बीच-बीच में उक्त छात्र-छात्राओं के संवादों को भी स्थान दिया गया है। कथानक के प्रस्तुतीकरण की यह शैली नवीन तो है, किन्तु लेखिका को इसे वांछित गम्भीरता के साथ प्रस्तुत करने में सफलता नहीं मिली है।

इस उपन्यास में चारित्रिक विविधताओं के निरूपण को प्राथमिकता दी गई है, किन्तु घटना-विस्तार के मोह को भी पर्याप्त सीमा तक लक्षित किया जा सकता है। देवेन्द्र और नयना का प्रेम, नीरज द्वारा छलपूर्वक देवेन्द्र को जेल भिजवाकर विवश नयना से विवाह कर लेना, जेल से लौटने पर निराश देवेन्द्र द्वारा मद्यपान और वेश्यागमन, दुश्चरित्र नीरज की उपेक्षा के फलस्वरूप नयना द्वारा देवेन्द्र से मिलने की अभिलाषा में वेश्यावृत्ति अपनाना, अन्ततः नयना की मनोभिलाषा का पूर्ण होना और देवेन्द्र का स्नेह पाकर परलोकगामिनी होना आदि घटनाओं को मुख्य रूप में चित्रित करते हुए लेखिका ने उपन्यास मे अनेक गौण घटनाओं को भी स्थान दिया है। अर्चना, भारती और बुलबुल को अपनी वासना-पूर्ति का साधन बनानेवाला नीरज ऐसी घटनाओं का केन्द्र रहा है। लेखिका का दृष्टिकोण आदर्शवादी है, किन्तु यथार्थ का चित्र प्रस्तुत करने के लिए उन्होने हत्या, दुराचार, वेश्यावृत्ति आदि की अनेकशः चर्चा की है और इनमें से मुख्यतः वेश्यावृत्ति का उल्लेख किया है। सामान्यतः लेखिकाओं ने इस समस्या पर विचार नहीं किया है, किन्तु सुषमा भाटी ने वेश्यालय के वातावरण और दुराचारियो की मनोवृत्तियों का सफल चित्रण किया है जिसे उनकी अध्ययनशील मनोवृत्ति की देन कहा जायेगा, क्योंकि इस कोटि के दुराचारियों के स्वभाव-निरीक्षण के अवसर उनके लिए निश्चय ही विरल रहे होंगे।

आलोच्य कृति में चरित्र-चित्रण पर सर्वाधिक बल दिया गया है, किन्तु लेखिका

ने चरित्रों की सृष्टि न करके इस कोटि के अन्य उपन्यासों अथवा फ़िल्मों में सामान्यतः चर्चित पात्रों का पुनराख्यान मात्र किया है। देवेन्द्र भावुक आदर्शवादी युवक है, जो परिस्थितियों के संघात से उग्र यथार्थवादी बनने की चेष्टा करने पर अपनी मूल प्रवृत्तियों का सर्वथा त्याग न कर सका। उसके चरित्र के माध्यम से लेखिका ने संभवतः यह दिखाना चाहा है कि 'नारी ही पुरुष की शक्ति है'। फिर भी देवेन्द्र के मन की हीन ग्रन्थियों और उसे पाने के लिए नयना द्वारा अन्य उपाय न अपनाकर वेश्या बनने के विषय में एकमत नहीं हुआ जा सकता। लेखिका ने पात्रों को प्रायः स्वभाव-दुर्बल और परिस्थिति-प्रताड़ित रखा है। देवेन्द्र, नयना और आरती ने इस दिशा में किंचित् साहस का परिचय अवश्य दिया है, किन्तु वह नगण्य है। लेखिका ने मुख्य पात्रों के मनोविकास को विविध चरणों में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है, किन्तु उपन्यास में पात्रों की बहुलता होने के कारण वे इस दिशा में सफल नहीं हो पाई हैं। तथापि इस उपन्यास में चरित्र-चित्रण की दृष्टि से दो बातें ऐसी हैं, जो तुरन्त ध्यान आकृष्ट करती हैं—(अ) लेखिका ने सभी पात्रों के जीवन में संघर्ष, दुःख अथवा परिस्थितिसंभूत अन्यमनस्कता को स्थान दिया है : सुख के सहज क्षणों की दीप्ति सबके लिए विरल रही है, (आ) वेश्यागृह से सम्बद्ध पात्रों (अमीर बानू, बेगम आरा, जीवन, देवेन्द्र, इमाम खाँ आदि) के मनोभावों का चित्रण सामान्य सामाजिक पात्रों की अपेक्षा अधिक कुशलता से किया गया है।[1]

'गेटकीपर' में घटनाओं के वर्णन अथवा विवरण की अपेक्षा कथोपकथन को प्राथमिकता दी गई है, किन्तु संवादों में संक्षिप्तता का ध्यान रखने पर भी लेखिका ने कहीं-कहीं अनावश्यक विस्तार की प्रवृत्ति का परिचय दिया है। ऐसे स्थलों पर वे प्रायः सफल नहीं हो पाई हैं, क्योंकि उन्होंने संवादों में अनुभव अथवा तर्क का अन्तःप्रवाह न रखकर उनमें किसी विशिष्ट प्रसंग अथवा पात्र का वर्णनात्मक शैली में उल्लेख किया है।[2] वैसे, कथा-प्रसंगों और पात्रों में विविधता के फलस्वरूप प्रस्तुत कृति के संवाद भी वैविध्य-विभूषित हैं : उन पर एकरसता का दोषारोपण नहीं किया जा सकता। लेखिका ने संवादों को पात्रों के वैयक्तिक, सामाजिक और सांस्कृतिक स्तर के अनुकूल रखने की ओर भी यथोचित ध्यान दिया है, फलतः सजीवता, स्वाभाविकता, मार्मिकता आदि गुण अधिकांश संवादों में सहज प्राप्य हैं। उदाहरणार्थ नयना और अमीर बानू का मनोरंजक संवाद देखिए—

"नयना ने मुँह फुलाकर कहा—"मगर यह तुमसे किसने कहा कि वो निहायत खूबसूरत है ?"

"उस्ताद इमाम कह रहे थे। बताऊँ वह कैसा है ? सुना है, शरीर मोटा, कद नाटा, रंग बहुत काला, दाँत बड़े-बड़े और गन्दे, जो तुम्हें बहुत पसन्द आएँगे। और मुँह से ऐसी खुश्बू चलती है कि चबच्चे को भी मात दे दे। उम्र है करीब पचपन्न की, मगर

१-२. देखिये 'गेट कीपर', (अ) पृष्ठ १२८-१७५, (आ) ६६-७१, ७६-८५

दिल है सोलह वर्ष के पट्ठे की तरह का। और सबसे क़ाबिले तारीफ़ बात यह है कि एक आंख से काना और मूंछ बलांद-बलांद भर लम्बी है।"[1]

आलोच्य कृति में जिन समकालीन सामाजिक समस्याओं अथवा दुराचारों की चर्चा की गई है, उनमें से ये प्रमुख हैं—बलात्कार, हत्या, व्यभिचार, वेश्यावृत्ति। इनमें से प्रथम तीन का सम्बन्ध नीरज से है : वह बुलबुल के प्रति बल-प्रयोग करता है, कालान्तर में उसकी हत्या कर देता है और आरती तथा बुलबुल के प्रति व्यभिचार का दोषी है। लेखिका ने इन प्रसंगों की एकाधिक बार आवृत्ति की है, किन्तु इनकी अपेक्षा वेश्या-जीवन का वर्णन करने में वे देशकाल के अधिक निकट रही हैं। वेश्यालय के वातावरण का उन्होंने ऐसा सजीव वर्णन किया है कि उसकी मौलिकता के विषय में भी शंका नहीं हो पाती और लेखिका की सफलता पर आश्चर्य भी होता है। तथापि यह कहना अप्रासंगिक न होगा कि उपर्युक्त प्रसंगों में लेखिका ने कहीं-कहीं मर्यादा का त्याग करके जिन अश्लील परिस्थिति-चित्रों को मूर्त्त किया है, वे हिन्दी-उपन्यास-लेखिकाओं की गौरवपूर्ण परम्परा के विरुद्ध हैं। नीरज द्वारा बुलबुल का शील भंग करने और अमीर बानू द्वारा देवेन्द्र के प्रति आत्मसमर्पण करने के दृश्य ऐसे ही स्थूल चित्र हैं।[2]

प्रस्तुत उपन्यास का लक्ष्य सामाजिक दुराचारों की भर्त्सना करते हुए सदाचार की महिमा को प्रकट करना है। इसके लिये उन्होंने उग्र यथार्थवादी शैली अपनायी है। उनके दृष्टिकोण को आदर्शोन्मुख भी नहीं कहा जा सकता, क्योंकि उपन्यास के फलागम में यथार्थ का पोषण न होने पर भी पात्रों की आकस्मिक मृत्यु अथवा निराशा का ऐसा जाल है, जिसे आदर्श मानने में स्वभावतः संकोच होता है। देवेन्द्र की जीवन-रेखा को सरलता से वक्रता, अतिवक्रता और सरल-साधुता की ओर जिस क्रम से गतिमान् रखा गया है, उसमें अनेक प्रश्नचिह्नों के लिए अवकाश है। नारी-लेखिकाओं की कृतियों में नारी-जीवन के औदात्य का जो सहज समावेश रहता है, उसका भी इस कृति मे अभाव है। यद्यपि लेखिका ने प्रायः सभी स्त्री पात्रों को गरिमा का बाना पहनाने की यत्किंचित् चेष्टा की है, किन्तु वासना, लोभ, ईर्ष्या आदि दुर्गुण उनके चरित्र पर इस प्रकार हावी रहे हैं कि उनके प्रति साधारणीकरण की प्रक्रिया मध्य में ही क्लान्त हो जाती है। फिर भी उद्देश्य की दृष्टि से इस उपन्यास को प्रेमचन्द के 'सेवासदन' की कोटि में रखा जा सकता है, क्योंकि इसमें वेश्यावृत्ति और तत्सम्बद्ध दुर्गुणों के विरुद्ध सजग सन्देश विद्यमान है।

सुश्री सुषमा भाटी के उपन्यास का सबसे दुर्बल पक्ष यह है कि उन्होंने अभिव्यंजना-सौष्ठव की ओर यथोचित ध्यान नहीं दिया। भाषा को पात्रानुकूल रखने में तो उन्हें सफलता मिली है, किन्तु उर्दू-शब्दों के प्रति उनका मोह इतना प्रबल है कि उसका

---

१. गेट कीपर, पृष्ठ २६८-२६६

२. देखिए 'गेट कीपर', पृष्ठ २२७-२२८, ३०८-३०६

सर्वत्र अनुमोदन नहीं किया जा सकता। शरीफ़, अहसान, मुताबिक आदि शब्दों के प्रयोग से भाषा में व्यावहारिकता लाने के प्रयत्न की स्वभावतः सराहना की जानी चाहिये, किन्तु हिन्दी के प्रचलित शब्दों की तुलना में इसी कोटि के शब्दों को प्रमुखता देना चिन्त्य है। उर्दू-शब्दों के प्रति लेखिका के मन में इतना आग्रह रहा है कि जहाँ उन्होंने नुक्तों के प्रयोग में प्रायशः सावधानी रखी है, वहाँ उन्होने 'वो' (वह, वे) का हिन्दीकरण करने की आवश्यकता भी नही समझी है। हलन्त वर्णो और चन्द्रबिन्दु के यथोचित प्रयोग के प्रति भी वे असावधान रही है। शाब्दिक अशुद्धियाँ भी, जिनमें से अधिकांश मुद्रण सम्बन्धी हैं और कुछ 'भ्रूयें'[1] (भौहें) जैसी हैं, इस उपन्यास में सर्वत्र उपलब्ध है।

'गेट कीपर' के अनुशीलन के अनन्तर यह धारणा निर्मूल न होगी कि यह उपन्यास सर्वथा सामान्य कोटि का है। इसकी एक मुख्य असंगति यह भी है कि उपन्यास के शीर्षक का उसके कलेवर से किंचित् सम्बन्ध नहीं है : केवल प्रारम्भ में यह उल्लेखमात्र है कि अपने उत्तरवर्ती जीवन में देवेन्द्र एक विद्यालय का गेटकीपर बन गया था। हिन्दी-लेखिकाओं के विकास-क्रम के प्रारम्भिक चरण में इस कृति को गौरव मिल सकता था, किन्तु उत्कर्ष-काल के उपन्यास-विभव में इस कोटि की शिथिल रचनाओं की सराहना नही की जा सकती।

(आ) ममता

सुश्री सुषमा भाटी ने 'ममता' शीर्षक उपन्यास की रचना १२४ पृष्ठों और १२ परिच्छेदों में की है। इसमें लेखिका ने घटना-बाहुल्य का आश्रय लेकर नायक-नायिका के प्रेम, विरह एवं पुनर्मिलन की कथा अंकित की है और संयोग तथा परिस्थितियों के विविधरूपी घात-प्रतिघातों द्वारा कथानक को रोचक बनाने का प्रयास किया है। पंकज और शशि (नायक और नायिका) एक ही कॉलेज में पढ़ते थे। परस्पर-दर्शन, सम्भाषण से दोनो मे प्रीति-भावना का विकास हुआ। अवधेश नामक उनके एक ईर्ष्यालु सहपाठी ने शशि के मन में पंकज के चारित्रिक पतन का विश्वास जमाकर रस में विष घोल दिया, फलतः दोनों विलग हो गये। एक दुर्घटना मे मूर्च्छित पंकज को संयोगवश शशि की विधवा माता अपने घर उठा लाईं। वे उसे गोद लेकर अपने मृत युवा पुत्र का अभाव पूर्ण करना चाहती थीं, किन्तु उनके दुर्भाग्य से वह शशि का पूर्व प्रेमी निकला। पंकज ने अवधेश द्वारा भ्रष्ट की गई शशि के समस्त पूर्व-अपराधों को उदार चित्त से क्षमा कर दिया और बाद में दोनों विवाह-सूत्र में बँध गये। शारदा (शशि की माता) ने पकज के स्थान पर उसके मित्र हेमन्त को गोद ले लिया और शैलजा, जिसे पंकज की माता मरते समय अपनी भावी पुत्रवधू मनोनीत कर गई थी, हेमन्त की भावी पत्नी बना दी गई।

आलोच्य कथानक में पंकज और शशि के अतिरिक्त हेमन्त, शैलजा, शारदा,

१. गेट कीपर, पृष्ठ १३४

सिन्धु (पंकज की मुंहवोली वहिन), भूषण (पंकज का भाई), लीला (पंकज की भाभी), अवधेश (खलनायक) आदि अनेक गौण पात्र हैं और सभी ने कथानक के विकास में यथोचित योग दिया है। वस्तुतः इस कृति में चरित्र-चित्रण कथानक पर आश्रित है। घटनाओं के घात-प्रतिघात में पात्रों का योगदान ही उनका चरित्र है और उससे पृथक् करने पर उनका कोई अस्तित्व नहीं रह जाता। लेखिका ने पात्रों के व्यक्तित्व को मात्र स्थूल रूप में अंकित किया है, उनके मन की गहराइयों में पैठकर सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक विश्लेषण उन्होंने नहीं किया। यही बात कथानक में भी है, घटनाओं के स्थूल क्रम को ही वे मुख्य रख सकी है।

'ममता' का कथानक मुख्यतः नाटकीय शैली में प्रस्तुत किया गया है। संवाद संक्षिप्त हैं, किन्तु वे अनावश्यक रूप से वहुसंख्यक हैं। पंकज, शशि, शैलजा, लीला आदि भावुक पात्र एक ही वात को लेकर अनेकशः उत्तर-प्रत्युत्तर करते है, जो कथा-विकास अथवा चरित्र-चित्रण की दृष्टि से निरर्थक ही हैं।[1] फिर भी, अधिकांश कथोपकथन रोचक हैं और कथानक के विकास में सहायक रहे है। देशकाल तथा वातावरण के चित्रण की लेखिका ने प्रायः उपेक्षा की है। वस्तुतः उनका उद्देश्य एक घटना-वहुल नाटकीय कथानक द्वारा पाठकों को चमत्कृत एवं अनुरंजित करना रहा है, अतः प्रस्तुत कृति में इसी दिशा में प्रयास किया गया है। व्यक्तिगत समस्याएँ तो इसमें घटनावश आ गई हैं, किन्तु किसी सामाजिक अथवा राजनीतिक समस्या के सम्पर्क से लेखिका कोसों दूर रही हैं।

जहाँ तक भाषा-शैली का सम्वन्ध है, 'ममता' में नितान्त व्यावहारिक हिन्दी अथवा यों कहिये कि हिन्दुस्तानी का प्रयोग हुआ है। प्रमाणस्वरूप एक उद्धरण अवलोकनीय है—"थोड़ी देर वाद पीरियड खत्म हो गया तथा सव लोग वाहर निकल आए। पंकज कुछ दूर तक शशि के पीछे पीछे चला फिर न जाने क्या सोचकर साइकिल स्टैंड की ओर घूम पड़ा। उधर शशि, चुपचाप जाकर कार में वैठ गई तथा स्टेयरिंग थामकर पंकज की तलाश में इधर-उधर नजरें दौड़ाने लगी। उसने देखा कि वग़ल में साइकिल दवाए पंकज उसी की ओर आ रहा है। अत. उसने स्विच आन करके कार स्टार्ट कर दी।"[2] जैसा कि पहले ही वताया गया है, इस उपन्यास की शैली वर्णनात्मक वहुत कम है, और नाटकीय वहुत अधिक। भाषा सरल एवं प्रवाहमयी तो है, किन्तु परिष्कृत नहीं।

७. श्रीमती माया मन्मथनाथ गुप्त

श्रीमती माया मन्मथनाथ गुप्त ने 'मंझधार' शीर्षक उपन्यास में राजनीति को मुख्य स्थान देने के अतिरिक्त अभिजात वर्ग के काले कारनामों पर भी व्यंग्यपूर्ण दृष्टि-

---

१. देखिये 'ममता', पृष्ठ ३४-३५, ८०-८३

२. ममता, पृष्ठ १२

पात किया है। लोकतन्त्र की स्थापना से भारत में मतदान का अधिकार सार्वजनिक हो गया है, किन्तु व्यावहारिक दृष्टि से यह अधिकार कितना निरर्थक है, इसे आलोच्य कृति के नायक रायसाहब मेहरचन्द के चरित्र द्वारा भलीभाँति व्यक्त किया गया है। व्यभिचारी एवं दुराचारी होते हुए भी वे सर्वपूज्य हैं, क्योंकि वे सफल व्यापारी हैं। चुनाव में भाग लेने पर उन्होंने प्रतिपक्षी को परास्त करने के लिए मदिरा, क्लब, धन, छल-प्रपंच, व्यभिचार आदि सभी हथकण्डों का प्रयोग किया और अपने सेक्रेटरी की सहायता से मतदाताओं को धन द्वारा वश में करके विजय प्राप्त की। सैद्धान्तिक रूप मे सफल प्रतीत होनेवाली मतदान की स्वतन्त्रता व्यावहारिक रूप में कितनी लचर है, इसे लेखिका ने सफलतापूर्वक चित्रित किया है। इसके लिए उन्होंने उपन्यास मे जिन पात्रो को स्थान दिया है, उनके सड़े-गले जीवन की मानो पोल खोलकर रख दी है। रायसाहब मेहरचन्द और उनके सेक्रेटरी भल्ला साहब तो पूरे घाघ है ही, रामनारायण-जैसे कांग्रेस के प्रसिद्ध कार्यकर्त्ता भी अपना उल्लू सीधा करने के लिये जनता को धोखा देते हैं। सोशलिस्ट नेता हों चाहे कम्युनिस्ट, धन का जादू सब पर चलता है और अपने हितों को देखते हुए वे दल के हितों की चिन्ता बहुत कम करते हैं। परिस्थिति की विषमता स्वतन्त्र पत्रकार विश्वम्भरनाथ की आत्मा को भी धन के लिये बिक जाने को बाधित करती है। उनका सहकारी रामप्रकाश आत्मा की पुकार को अनसुनी नहीं करता तो उसे आत्मघात का आश्रय लेना पड़ता है। साधनाकुंज के सदस्यों की निर्लज्जता का वर्णन करते समय लेखिका ने जिन अश्लील प्रसंगों का ब्यौरा दिया है, उनमें अनौचित्य स्पष्ट झलकता है। इस दृष्टि से श्रीमती बत्रा की व्यभिचारी वृत्ति के अतियथार्थवादी वर्णन की सराहना नही की जा सकती।[1]

पात्रों के व्यक्तित्व के अनुकूल लेखिका ने उनकी उक्तियों मे भी छल-कपट तथा हथकण्डों को प्रमुखता दी है, फलतः उपन्यास में सहज संवादों की अपेक्षा तर्कयुक्त कथोपकथन की प्रचुरता है। रायसाहब तथा रामनारायण के संवाद और सोशलिस्ट नेता गिरिजाकुमार तथा रामनारायण के वार्त्तालाप इसी प्रकार के है। उनमें रायसाहब और गिरिजाकुमार द्वारा कांग्रेस की दोगली तथा कपटपूर्ण नीति की व्यंग्यपूर्ण निन्दा कराई गई हैं।[2] वस्तुतः ऐसे प्रसंगों का चित्रण करते समय लेखिका के मन में स्पष्टतः पूर्वाग्रह रहा है। अधिकारी वर्ग और अभिजात वर्ग के जो छिद्र उन्होंने दिखाये हैं वे यथार्थ हो सकते हैं, किन्तु केवल कुरूपता को ही लक्ष्य में रखना न्यायसंगत नही माना जा सकेगा। उच्चवर्गीय समाज के घृणित जीवन का चित्रण करते समय यदि उन्होंने अतिरंजना और अश्लीलता का आश्रय न लिया होता, तो वे अपने उद्दिष्ट को निश्चय ही अधिक प्रभावपूर्ण ढंग से पा सकती थीं। सांसारिक यथार्थ को नग्न एवं अशोभन रूप में प्रस्तुत करने-

---

१. देखिये 'मंझधार', पृष्ठ ३४

२. देखिये 'मंझधार', पृष्ठ २०-२३, ५८-६०

वाले साहित्य से लोकमंगल की प्रेरणा की आशा करना व्यर्थ है। लेखिका ने साम्यवादी दल तथा रूस के प्रति विशेष सहानुभूति प्रकट की है,[1] जिससे यह स्पष्ट हो जाता है कि उन्होंने समाज की भाँति राजनीति की भी अपने ढंग से व्याख्या की है।

'मंझधार' की भाषा में व्यावहारिकता और मुहावरों की सजीवता के अतिरिक्त व्यंग्य शैली की प्राणवत्ता भी सर्वत्र उपलब्ध है। अभिजात वर्ग की जीवनधारा और कांग्रेस के सिद्धान्तों को लेकर लेखिका ने अनेक मर्मस्पर्शी व्यंग्य प्रस्तुत किये हैं। उदाहरणस्वरूप रायसाहब मेहरचन्द की आय-वृद्धि और आय-कर का यह विवरण देखिये— "गत बीस साल में एक एक करके चीजें बढ़ीं और रायसाहब के व्यापार का विस्तार हुआ। महायुद्ध बीच में आ जाने से उनके व्यापार में चार चाँद लग गये थे। और धन तो इस प्रकार बढ़ गया था जैसे सीली हुई जमीन पर उचित आधार पाकर दीमक बढ़ती है। इससे यह न समझा जाय कि रायसाहब उसी अनुपात से आय-कर भी अधिक दे रहे थे। वह दूसरी बात है।"[2] व्यंग्य की सजीवता के अतिरिक्त यहाँ दीमक की उपमा भी मौलिक रूप में दी गई है; और ये दोनों विशेषताएँ उपन्यास में आद्यन्त व्याप्त हैं।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि प्रस्तुत उपन्यास की रचना प्रगतिवादी धारा के अन्तर्गत हुई है। लेखिका ने पूंजीपतियों के प्रति असन्तोष का भाव रखते हुए उनके दोषों की गणना में असहिष्णुता का परिचय दिया है। इसी प्रकार उक्त वर्ग की उपभोगवादी शृंगारिक प्रवृत्तियों का भी मनोयोगपूर्वक चित्रण किया गया है। यदि श्रीमती गुप्त इन दोनों अतिवादों से मुक्त रही होतीं तो उनकी अभिव्यंजना में अपेक्षाकृत प्रौढ़ता आ सकती थी।

८. सुश्री दर्शना

सुश्री दर्शना ने १९१ पृष्ठों में 'चाय का पानी' शीर्षक सामाजिक उपन्यास की रचना की है, जिसमें योगेन्द्र और सुशीला के परस्पर आकर्षण, प्रेम तथा विवाह की कथा अंकित है। कथानक का प्रारम्भ अत्यन्त नाटकीय रीति से हुआ है—योगेन्द्र अपने लिये चाय बनाकर चाय का फ़ालतू पानी द्वार खोलकर बाहर फेंकता है तो असावधानी से वह उस मार्ग से जा रही सुशीला की साड़ी पर गिर पड़ता है। सुशीला खरीखोटी सुनाती है, योगेन्द्र क्षमा-याचना करता है और यहीं से नायिका के हृदय में नायक के प्रति प्रेम का सूत्रपात होता है। इसके उपरान्त लेखिका ने नायक-नायिका के माता-पिता तथा अन्य सम्बन्धियों का विस्तार से परिचय दिया है और उनके गुणों का सप्रमाण उल्लेख करते हुए दोनों के मध्य प्रेम के उत्तरोत्तर विकास को प्रकट किया है। घटनाओं को सहज एवं सजीव रूप में विकसित करने की अपेक्षा लेखिका का ध्यान पात्रों के प्रशस्ति-गान में

---

१. देखिये 'मंझधार', पृष्ठ ९६
२. मंझधार, पृष्ठ १

विशेषतः केन्द्रित है, फलतः कथानक शिथिल है और पात्र कठपुतलियाँ बनकर रह गए हैं।

योगेन्द्र की माता इन्द्रा को लेखिका ने सर्वाधिक आदर्श नारी के रूप में प्रस्तुत किया है, जिसने पति-गृह में प्रवेश करते ही अपने बुद्धि-कौशल से पति को कुसंगति और कुव्यसनों से मुक्त कर दिया और उनकी जमीदारी की पतनोन्मुख दीवारों को अपनी योजनाओं का सहारा देकर सुदृढ़ बना दिया। उनका पुत्र होने के नाते योगेन्द्र तो मानो गुणागार ही है—परिश्रम, विद्या, बुद्धि, आत्म-बल, रूप-लावण्य, विश्व के समस्त सम्भव गुण मानो उसी में साकार हो गए हैं। उधर सुशीला भी सौन्दर्य, बुद्धि-कौशल, सेवा, निष्ठा, आत्मतोष आदि गुणों की प्रतिमूर्ति है। अन्य प्रमुख पात्रों में भी मात्र गुणों का संयोग रहा है, दोषों की चर्चा नहीं की गई। योगेन्द्र के परिवार का वृद्ध सेवक स्वामिभक्ति में आदर्श है तो योगेन्द्र की धर्म-बहिन विमला में भ्रातृ स्नेह की पराकाष्ठा है। सुशीला की भाभी एक आदर्श भाभी है तो इन्द्रा की बाल सहचरी श्रीमती जौन एक आदर्श सखी होने के साथ ही योगेन्द्र की अभिभाविका भी है। कहने का तात्पर्य यह है कि लेखिका ने अपने पात्र-पात्राओं को दोषों से मुक्त रखकर अनुकरणीय तो बना दिया है, किन्तु साथ-साथ मानवोचित स्वाभाविकता एवं मनोविज्ञान-सम्मत सहजता को भी ताक पर रख दिया है।

सुश्री दर्शना ने पात्रों का चरित्र मुख्यतः प्रत्यक्ष कथन द्वारा वर्णित किया है। यथा—"सुशीला न केवल बहुत नटखट और चंचल ही थी, परन्तु साथ ही पढ़ने लिखने में भी तेज थी। मैट्रीकुलेशन प्रथम श्रेणी में पास किया और अब भी अपनी क्लास में प्रथम थी और क्लास की लीडर थी। हँसी हर समय मुँह पर नाचती रहती और चचलता तो मानो कूट कूटकर ही भरी थी। हाई कोर्ट के जज की लड़की होकर भी मान तो उसको छू तक न गया था और कॉलिज की सारी लड़कियों का सुशीला की सहानुभूति और सुहृदता प्राप्त थी।"[1] कथानक मे सजीवता का संचरण करने के लिए लेखिका ने पात्रानुकूल कथोपकथन की योजना की है। संवाद प्रसंगानुकूल हैं तथा कथानक, चरित्र-चित्रण एवं अन्य तत्त्वों की अभिव्यक्ति मे सहयोगी रहे है। किन्तु, कथानक की भाँति यहाँ भी शिथिलता का दोष व्याप्त है। इसका प्रमाण यह है कि अधिकांश संवाद अनावश्यक रूप से बहुसंख्यक अथवा दीर्घ हो गये हैं।

आलोच्य लेखिका ने कहीं प्रत्यक्ष रूप में और कहीं पात्रों की उक्तियों में प्रासंगिक रूप से देश और काल सम्बन्धी तथ्यों की चर्चा की है। उदाहरणार्थ एक स्थल पर योगेन्द्र के नियोगी वंश और राजा टोडरमल के वंश का भूतपूर्व सम्बन्ध स्थापित करके हुमायूँ, अकबर, सिकन्दर सूरी, राजा टोडरमल आदि सम्बद्ध ऐतिहासिक पात्रों के चरित्र एवं राज्य-काल का संक्षिप्त वर्णन किया गया है।[2] इसी प्रकार मिस बैनरजी (इन्द्रा)

---

१. चाय का पानी, पृष्ठ ५

२. देखिये 'चाय का पानी', पृष्ठ ४२-४३

के विवाह के प्रसंग में बंगाल की लेन-देन की प्रथा तथा उसके कुपरिणामों का उल्लेख हुआ है।'

'चाय का पानी' की रचना सरल एवं प्रचलित हिन्दी में हुई है। डिनर, इन्तजार, फुलस्लीपर, आउट, रिटर्न, तजवीज, प्रोग्राम आदि शब्दों एवं वाक्यांशों का प्रचुर प्रयोग इस तथ्य का प्रमाण है कि उन्होंने भाषा के परिष्कार अथवा एकरूपता की अपेक्षा उसकी स्वाभाविकता एव सरलता को ही विशेपत: ध्यान में रखा है। किन्तु, 'नींद खुले' के स्थान पर 'जाग खुले' जैसे कतिपय अशुद्ध प्रयोग' हिन्दी की साहित्यिक प्रवृत्ति के लिए घातक हैं। लेखिका की शैली विवरणात्मक है, किन्तु उसमें नाटकीयता का भी संयोग है और इसी कारण उसमें किंचित् सजीवता का संचरण हो सका है। उनकी शैली का उल्लेखनीय दोष यही है कि सामान्य एवं संक्षिप्त घटनाओं को भी अत्यन्त तूल देकर प्रस्तुत किया गया है, फलतः उपन्यास सुगठित एवं सुव्यवस्थित नहीं बन सका है। लेखिका ने समकालीन साहित्यिक प्रवृत्तियों के अनुरूप मनोवैज्ञानिक उपन्यास की रचना न करके जिस वर्णनात्मक एवं आदर्शात्मक कृति की सृष्टि की है, वह कथा-शिल्प की दृष्टि से उन्हे विकास काल की सामान्य उपन्यास-लेखिकाओं की श्रेणी में जा बैठाती है।

९. श्रीमती सुदेश 'रश्मि'

सुश्री सुदेश 'रश्मि' ने १३२ पृष्ठों एवं ३३ परिच्छेदों मे विभक्त 'एक ही रास्ता' शीर्षक उपन्यास की रचना की है, जिसमे बंगाल के नवाब सरफ़राज (नवाब सिराजुद्दौला का पुत्र) के पतन एवं अलीवर्दी के उत्थान की ऐतिहासिक घटनाएँ अंकित हैं। उक्त क्रान्ति की पृष्ठभूमि मे जो भी ऐतिहासिक कारण थे (सरफ़राज की विलासप्रियता के कारण जनता में असन्तोष, कासिम अली और उमर अली की गद्दारी, सरफ़राज द्वारा जगत्सेठ का अपमानित होना और प्रतिशोध लेने की भावना से अपना धन देकर अलीवर्दी को आक्रमण के लिए आमन्त्रित करना आदि), उन सबका लेखिका ने यथाप्रसंग उल्लेख किया है। इनके अतिरिक्त उन्होने कतिपय गौण हेतुओं की कल्पना करके कथानक मे रोचकता की सृष्टि की है, जिनमें मुख्य रूप से जगत्सेठ की पुत्रवधु रेखा का उदाहरण उल्लेखनीय है। जब सरफराज ने उसके सौन्दर्य पर मुग्ध होकर अपने वजीर कासिम के द्वारा उसे पकड़ मँगवाया तब उसके श्वसुर, पति तथा अन्य हिन्दू कायरो की भाँति देखते रहे। किन्तु, उसके वीरत्व एवं निर्भीकता पर मुग्ध होकर नवाब ने उसके शरीर को अपावन किये बिना ही उसे मुक्त कर दिया। रेखा ने पुन: जगत्सेठ के घर में प्रविष्ट होना चाहा, किन्तु उन्होंने उसे भ्रष्टा कहकर त्याग दिया। इस पर रेखा ने उन्हे शाप दिया कि उनका धन-मान पठानो द्वारा पददलित होगा। कालान्तर मे सरफ़राज से ग़द्दारी करने के अपराध में उन्हें कारावद्ध कर दिया गया और तब रेखा का अभिशाप भी पूर्ण हुआ।

१-२. देखिये 'चाय का पानी', पृष्ठ ४४, १५

रेखा ने एक दस्यु-दल की सहायता से सैन्य संगठन कर सरफ़राज से प्रतिशोध लिया। जब विजय के पुत्र कुमार के ओजस्वी शब्दों एवं अपूर्व रणकौशल के प्रभाव से सरफराज की विजय एवं अलीवर्दी की पराजय निश्चित थी, ठीक उसी समय रेखा ने दल-बल-सहित आक्रमण करके सरफराज को परास्त कर पासा पलट दिया।

रेखा आलोच्य उपन्यास का मुख्य केन्द्र रही है। लेखिका ने उसके व्यक्तित्व में हिन्दू-वीरांगना के अनुरूप शौर्य, निर्भीकता, सतीत्व, सहनशीलता, तेजस्विता आदि गुणों का समावेश किया है। इसी प्रकार की निर्भीक तेजस्विता का परिचय रामभरोसे (सरफ़राज का एक सामान्य पदाधिकारी) की पुत्री पार्वती ने दिया। जब वह सरफराज की तृष्णा का शिकार बनने के लिए महल में लायी गई तब उसने भ्रष्ट होने के पूर्व ही अपने वक्ष में तलवार भोंक ली। किन्तु, उसका चरित्र अत्यन्त गौण है। इनके अतिरिक्त वेश्या हुस्नबानू, नर्तकी जुबेदा आदि पात्राओं का भी प्रसंगानुकूल उल्लेख हुआ है। इनमें हुस्नबानू का चरित्र अपेक्षाकृत उज्ज्वल है—कासिम से प्रेम हो जाने पर उसने अपने पेशे को त्यागकर उसी के ध्यान में तन्मय रहना प्रारम्भ कर दिया। पुरुष पात्रों में सर्वाधिक गौरवपूर्ण चरित्र विजय (सरफ़राज का अंगरक्षक, बाद में सेनापति) और उसके पुत्र कुमार का है, क्योंकि उनमें वीरता एवं निर्भीकता के अतिरिक्त कर्त्तव्य-निष्ठा भी कूट-कूटकर भरी है। सरफ़राज का चरित्र पहले कासिम के सम्पर्क में रहने से कुव्यसन-ग्रस्त तथा व्यभिचारपूर्ण था, किन्तु बाद में रेखा के चरित्र के प्रभाव से तथा विजय एवं कुमार की संगति से उसके चरित्र के सब कालुष्य धुल गए। जयन्त रेखा का पति होकर भी नायकोचित वीरता से शून्य है। उसके सामने ही अत्याचारी उसकी पत्नी को उठा ले गये और वह कुछ न कर सका।' जब वह किसी प्रकार सतीत्व-रक्षा करके लौट आई तब भी वह निःशंक होकर उसे ग्रहण न कर सका। कासिम, उमर अली, जगत्सेठ आदि पात्रों की गद्दारी का चित्रण लेखिका ने इतिहास के पृष्ठों के अनुरूप ही किया है।

आलोच्य कृति में वर्णनात्मक शैली का प्रयोग अत्यन्त विरल रूप में हुआ है, मुख्य रूप से पात्रों के परस्पर सम्भाषणों द्वारा कथानक तथा अन्य तत्त्वों का विकास हुआ है। संवादों की उल्लेखनीय विशेषताएँ ये हैं कि वे लघुकाय एवं प्रसंगानुकूल हैं। उनमें पात्रानुकूल भावनाओं का समावेश तो है, किन्तु भाषा की दृष्टि से वे प्रायः एकरूप हैं अर्थात् मुसलमान एवं हिन्दू दोनों प्रकार के पात्र एक-सी भाषा का व्यवहार करते हैं, जो मुख्य रूप से तत्समबहुला है। कथानक, चरित्र-चित्रण आदि तत्त्वों की भाँति देशकाल सम्बन्धी तथ्यों का उल्लेख भी पात्रों के संवादों में ही हुआ है। प्रमाणस्वरूप रामभरोसे तथा उसकी पत्नी का संवाद द्रष्टव्य है—

"पहले तो तुम नवाबी खान्दान की प्रशंसा करते हुए नहीं अघाते थे।"

"वह समय ही ऐसा था। स्वर्गीय बंगेश्वर सिराजुद्दौला ने बंगाल की बहू-बेटियों को कभी भी कुदृष्टि से नहीं देखा था। उसका आचरण विशुद्ध था, लेकिन सरफ़राज अपने पिता के बिल्कुल ही विपरीत गया है।"

"वह तो शासन की बागडोर को चंद चाटुखोर मौलवियों के हाथों में छोड़े विलासिता के झूले में झूल रहा है। रात दिन होनेवाला किसी न किसी अबला का करुण क्रन्दन मेरे तो कानों के पर्दों को फाड़ डालेगा।"[१]

वस्तुतः आलोच्य कृति के प्रणयन में श्रीमती सुदेश 'रश्मि' का उद्देश्य यही है कि बंगाल के इतिहास में कुछ विशिष्ट पृष्ठों की उपन्यास के रूप में पुनरावृत्ति की जाए। अतः विभिन्न अवसरों पर भिन्न-भिन्न पात्रों के मुख से समकालीन देशकाल से सम्बद्ध तथ्यों का उल्लेख कराके उन्होंने रचना के लक्ष्य को पुष्ट किया है। उपन्यास का एक अन्य लक्ष्य राजपूत वीरों एवं वीरांगनाओं के उज्ज्वल चरित्र को सजीवता प्रदान करना है, जिसके लिए लेखिका ने रेखा, पार्वती, विजय और कुमार नामक पात्र-पात्राओं की सृष्टि की है। कहना न होगा कि ये दोनों लक्ष्य अन्योन्याश्रित रहे हैं और लेखिका को उनकी अभिव्यक्ति में पर्याप्त सफलता मिली है।

आलोच्य लेखिका ने प्रस्तुत कृति में हिन्दी के व्यावहारिक रूप का प्रयोग किया है। अधिकांश पात्रों के मुसलमान होने पर भी लेखिका ने उर्दू-शब्दों को आवश्यकता से अधिक महत्त्व नहीं दिया। यह उचित भी है, क्योंकि कतिपय लेखक-लेखिकायें उक्त स्थिति में भाषा को पात्रानुकूल बनाने की धुन में उर्दू-शब्दावली का ही प्रचुर प्रयोग कर डालते हैं। किन्तु, आलोच्य लेखिका ने हिन्दी की मूल प्रवृत्ति पर कुठाराघात नहीं किया। उनकी भाषा मुहावरेदार होने के कारण विशेष सजीवता-सम्पन्न है।[२] उपन्यास की एक अन्य विशेषता यह है कि इसमें मुख्य रूप से नाटकीय शैली का प्रयोग हुआ है। वर्णनात्मक प्रसंग इतने विरल एवं संक्षिप्त हैं कि यदि इन्हें विलग कर दिया जाए अथवा किंचित् रूपान्तर कर दिया जाए तो उपन्यास के स्थान पर एक नाटक दृष्टिगोचर होने लगेगा। जो भी हो, आलोच्य कृति की सजीवता एवं उपयोगिता निर्विवाद है। लेखिका का महत्त्व इस दृष्टि से भी है कि उन्होंने महिलाओं द्वारा प्रणीत ऐतिहासिक उपन्यासों की क्षीण परम्परा में योगदान किया है।

१०. सुश्री सन्तोष सचदेवा

इन्होंने 'रूप और छाया' शीर्षक उपन्यास में मृग और तृष्णा नामक पात्रों की प्रेम-कथा के माध्यम से समाज की कुप्रवृत्तियों पर व्यंग्य-प्रहार करते हुए तर्कपूर्ण वार्तालापों के द्वारा जीवन तथा जगत् के विभिन्न प्रश्नों का समाधान प्रस्तुत किया है। 'मृग' और 'तृष्णा' के प्रति विशेष मोह होने के कारण लेखिका ने नायक-नायिका के नामकरण के अतिरिक्त उनके ग्रामों को भी 'मृगपुर' तथा 'तृष्णापुर' नाम दिये हैं। नायक-नायिका के उपर्युक्त नामकरण से प्रारम्भ में यह भ्रम होने लगता है कि यह कथानक प्रतीकात्मक

---

१. एक ही रास्ता, पृष्ठ ८

२. देखिये 'एक ही रास्ता', पृष्ठ ८, २८, ११८

है, किन्तु बाद में यह भ्रम स्वतः दूर हो जाता है। वस्तुतः इस उपन्यास का शीर्षक 'मृग-तृष्णा' होना चाहिये था। इसका कथानक इस प्रकार है—

मृगपुर के जमींदार विन्दासिंह ने तृष्णापुर के जमीदार वीरसिंह से अपनी मैत्री को दृढ़ करने के लिए उनकी पुत्री तृष्णा को अपनी पुत्रवधु बनाने का निश्चय किया। मृग और तृष्णा बालसहचर थे, अतः उनमें पहले से ही प्रेम-भाव था। एक अवसर पर वीरसिंह ने मृग के चरित्र पर अकारण संशय करके क्रोधावेग में अपनी पुत्री का सम्बन्ध अन्यत्र निश्चित कर दिया। विन्दासिंह ने भी प्रत्युत्तरस्वरूप मृग का सम्बन्ध सीतापुर के ताल्लुकेदार नर्मदा की पुत्री माला से निश्चित कर दिया। मृग और तृष्णा शिवलिंग के सम्मुख गन्धर्व-विवाह कर अन्यत्र चले गये, किन्तु उनके माता-पिता को यह भ्रम रहा कि उन्होंने नदी में डूबकर आत्महत्या कर ली, अतः दोनों पक्षों को अपने पूर्व हठ पर गहन अनुताप हुआ। तृष्णा को कालान्तर में सेठ रूपदयाल के कुचक्रवश पति से पृथक् होना पड़ा, किन्तु उसने अपने सतीत्व की दृढ़तापूर्वक रक्षा की और रामू किसान तथा उसकी पत्नी राधा के स्नेहपूर्ण आश्रय में पुत्र को जन्म दिया। दो मास के पुत्र को साथ लेकर वह पति की खोज में निकली और दो वर्ष के उपरान्त संयोगवश पति को रामपुर में मीनाक्षी के पति के रूप में पाया। मृग ने पहले तो सेठ रूपदयाल की बात को लेकर उसके प्रति अविश्वास व्यक्त किया, किन्तु बाद में पूर्व-प्रेम की स्मृतियों से प्रेरणा पाकर उसे सम्मान-पूर्वक अपना लिया।

स्पष्ट है कि लेखिका ने वास्तविकता और घटना-बाहुल्य का आश्रय लेकर कथानक को रोचक बनाने का प्रयास किया है। किन्तु, यह उल्लेखनीय है कि माला, उसकी सखी मृदुला, मीनाक्षी की सखी जानकी आदि पात्राओं की प्रासंगिक कथाओं ने मुख्य कथा के विकास में विशेष योगदान नहीं किया है, अपितु मृदुला और जानकी की कथाओं ने तो मुख्य कथा के प्रवाह को बाधित ही किया है।

'मृग' आलोच्य उपन्यास का नायक है, किन्तु उसमें नायकोचित चरित्र-दृढ़ता का अभाव है। तृष्णा के लिए वह अपने माता-पिता का त्याग करता है, किन्तु रूपदयाल के कपट-चक्र से उसकी रक्षा नहीं कर पाता। यह जानकर भी कि तृष्णा उसके विरह मे व्याकुल होगी, वह उसे खोजने का प्रयत्न नही करता और रामपुर जाकर शीघ्र ही मीनाक्षी से प्रेम-विवाह कर लेता है। अस्थिर मनोवृत्ति और अकर्मण्यता उसके अक्षम्य दुर्गुण हैं। नायिका तृष्णा का चरित्र अपेक्षाकृत दृढ है। मृग के प्रति उसका एकनिष्ठ प्रेम है, इसी कारण उसने माता-पिता तथा गृह का त्याग कर दिया, वासनान्ध सेठ से अपने सतीत्व की रक्षा की, पति की खोज में दिन-रात एक कर दिया और परनारी से विवाह रचाकर विश्वासघात करनेवाले प्रियतम को हृदय से क्षमा कर दिया। मृदुला, माला, मीनाक्षी, जानकी आदि गौण पात्राएँ भी तृष्णा की भाँति ममता की साकार प्रतिमाएँ हैं। रधिया और रामू नामक कृषक दम्पति का मृदुल एवं परोपकारी स्वभाव भी उल्लेख-नीय है। जमींदार विन्दासिह, वीरसिंह और नर्मदा अपने वर्ग का प्रतिनिधित्व करने-

वाले स्वाभिमानी तथा हठी ठाकुर हैं। पात्रों के अन्तर्द्वन्द्व तथा मानसिक विकलता का चित्रण करके लेखिका ने चरित्र-चित्रण में मनोवैज्ञानिक सौन्दर्य का समावेश किया है। मीनाक्षी की मृग के प्रति प्रेम-विह्वलता [१] तथा तृष्णा की मृग के विषय में व्याकुल चिन्ता इस प्रसंग में उल्लेखनीय हैं। [२]

प्रस्तुत उपन्यास में तर्कपूर्ण कथोपकथन की आयोजना द्वारा नाटकीय सौन्दर्य का विधान किया गया है। ये संवाद अन्य तत्त्वों के विकास में भी सहायक रहे हैं। तृष्णा और मृग के संवादो तथा मीनाक्षी और मृग के वार्त्तालापों में सामाजिक कुरूपताओं की अत्यधिक निन्दा की गई है। [3] यद्यपि कहीं-कहीं जटिल विषयों की व्याख्या के कारण संवाद भी कुछ दार्शनिक हो गये हैं, किन्तु उनमें उद्देश्य की मुखरता रही है। सामान्य विषयों पर वार्त्तालाप करते समय वक्ताओं ने अनेकशः अत्यन्त सुन्दर उक्तियाँ व्यक्त की हैं। उदाहरणार्थ मृग की माता ने जब पति के सम्मुख पुत्र के विवाह में कर्ज लेने का प्रस्ताव रखा तो विन्दासिंह बोले—"राजो, ठाकुर घराने में कोई कर्ज नही लेता, इसलिए मैं भी कर्ज नहीं लेना चाहता। कर्ज लेकर शादी-व्याह करना अथवा कोई भी उत्सव मनाना एक स्वाभिमानी देश के नागरिकों के लिए अभिशाप है।" [४]

ज़मीदार विन्दासिंह और ठाकुर वीरसिंह की वंशगत तथा व्यक्तिगत विशेषताओं के माध्यम से लेखिका ने समकालीन सामाजिक और राजनीतिक स्थिति को चित्रित किया है। दोनों ठाकुरों द्वारा अपनी अल्पायु सन्तानों को परस्पर विवाह-सूत्र में बाँधने का निश्चय, कांग्रेस-आन्दोलन में दोनों का सक्रिय भाग लेना, सन्तान की इच्छा-अनिच्छा की उपेक्षा करके विवाह अन्यत्र निश्चित कर देना आदि घटनाओं द्वारा समकालीन ज़मीदार-समाज की विशेषताओ पर प्रकाश डाला गया है। सेठ रूपदयाल के चरित्र के माध्यम से उन व्यक्तियों पर तीव्र व्यग्य किया गया है, जो धार्मिक संस्थाएँ खोलकर जनता को मार्गभ्रष्ट करते हैं और चारित्रिक पतन अथवा वासनात्मक प्रवृत्ति का परिचय देते हैं। लेखिका ने पात्रों के वार्त्तालापों में कहीं-कहीं समकालीन सामाजिक समस्याओं की ओर भी इंगित किया है। प्रस्तुत प्रसंग मे तृष्णा की मृग के समक्ष कही गई वह उक्ति उल्लेखनीय है, जिसमें उसने समकालीन समाज की स्वार्थपरता, धन-तृष्णा, बर्बरता, कृत्रिम सभ्यता, नारी-शोषण आदि कुप्रवत्तियो की चर्चा करते हुए प्रचलित सामाजिक कुरूपताओं के विरुद्ध विष उगला है। [५] देशकाल के विवेचन से प्रत्यक्ष है कि इस उपन्यास की रचना समाज-सुधार की भावना से प्रेरित होकर की गई है। व्यक्ति के सुधार पर ही समाज का उद्धार निर्भर है, अतः लेखिका ने पात्रों की उक्तियों में व्यक्ति और समाज

१-२. देखिये 'रूप और छाया', पृष्ठ १०७-१०८, १२१-१२३

३. देखिये 'रूप और छाया', पृष्ठ ३७-४०, ११६-११७

४. रूप और छाया, पृष्ठ २३

५. देखिये 'रूप और छाया', पृष्ठ ३७

के परिष्कारार्थ अनेक सूक्ति-वाक्य और प्रेरणाप्रद आप्त वाक्य प्रस्तुत किये है। उदाहरणार्थ मृदुला के शब्दों में, "आज देश को ऐसी सन्तान की आवश्यकता है जो देश के सच्चे हितैषी हों।"[1] अन्यत्र उसने अपने पति शेखर को प्ररणा देते हुए कहा है—"आज समय की माँग है कि गीतकार नशीले गीतों को बन्द कर क्रान्ति के गीत गाएँ।"[2]

विवेच्य कृति में मुख्य रूप से संस्कृत की तत्सम पदावली का प्रयोग हुआ है, किन्तु उर्दू-शब्दों के प्रयोग द्वारा भाषा की व्यावहारिकता को भी सुरक्षित रखा गया है। यत्र-तत्र "जान न पहचान बड़े मियाँ सलाम"[3] जैसे रोचक मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग भी इसी दिशा में सहायक रहा है। शैली में वर्णनात्मकता की अपेक्षा नाटकीयता का रूप प्रमुख है, जिसमें रोचकता और प्रवाह सर्वत्र विद्यमान हैं। चित्रात्मक अभिव्यंजना के लिए प्रायः आलंकारिक शब्दावली का प्रयोग हुआ है। यथा—"विदा की यह वेला उसके लिए ऐसे थी मानो कोई उसके लुटे प्यार का जनाजा लेकर जा रहा है।"[4] अन्त में यह उल्लेखनीय है कि 'रूप और छाया' एक पठनीय उपन्यास है। सामयिक देशकाल और उद्देश्य की अभिव्यंजना में यह विशेष सफल रहा है। सामाजिक कथानक में दार्शनिक सिद्धान्तों का सुगुम्फन कर लेखिका ने अपनी सुधारवादी विचारधारा की सुन्दर अभिव्यक्ति की है। संवाद प्रायः सारगर्भित है और भाषा-शैली भावानुरूप है।

११. श्रीमती शिवरानी विश्नोई

श्रीमती विश्नोई ने 'उपकार', 'दुर्भाग्य' तथा 'जीवन की अनुभूतियाँ' शीर्षक कहानी-संग्रहों के अतिरिक्त 'भीगी पलकें' शीर्षक पारिवारिक उपन्यास की भी रचना की है। यह ४०६ पृष्ठों और ३२ परिच्छेदों का वृहद् उपन्यास है, किन्तु इसका कथानक अत्यन्त संक्षिप्त है। घटना-बाहुल्य की अपेक्षा लेखिका ने सूक्ष्म तथा विस्तृत वर्णन को विशेष प्रश्रय दिया है, किन्तु उद्देश्य द्वारा शासित होने के कारण उपन्यास के अन्य तत्त्वों में सहज विकास का अभाव रहा है। इसका कथानक इस प्रकार है—सुषमा और नीरजा क्रमशः मध्यम तथा धनी परिवार की कन्याएँ थी, किन्तु दोनों में परस्पर घनिष्ठ सौहार्द था। संयोगवश एक धनी परिवार का इकलौता पुत्र विजय दोनों सखियों के 'भावी वर' के रूप में प्रकट हुआ। विजय की माता अधिक धन पाने की लालसा से नीरजा को अपनी पुत्रवधु बनाना चाह रही थी, किन्तु विजय की इच्छा के आगे विवश होकर उन्हें निर्धन मुंशी की पुत्री सुषमा को ही स्वीकार करना पड़ा। फिर भी उन्होने विजय से छिपाकर बीस हजार रुपये की माँग की और पुत्री का भविष्य सोचकर पिता ने मकान रहन रखकर दहेज की पूर्ति की। किन्तु, यह दहेज ही विजय के सुखी दाम्पत्य जीवन का घुन बन गया। सुषमा अपने पूर्व-मधुर गुणों का त्यागकर विजय को अपना क्रीत दास समझकर व्यवहार करती थी और उधर नीरजा ने मन-ही-मन प्रण कर लिया था कि वह विजय से आत्मिक

१-२-३-४. रूप और छाया, पृष्ठ ८१, १३५, १३३, १२६

प्रेम करके तुष्ट रहेगी, किन्तु शारीरिक सुखों के लिए दूसरा विवाह न करेगी। उसने अपना एक विद्यालय खोलकर बच्चों को पढाना आरम्भ कर दिया और जन-सेवा में रुचि लेने लगी। उधर नीरजा के संयमपूर्ण सरल जीवन से प्रभावित विजय ने नीरजा के समक्ष अपनी द्वितीय पत्नी बनने का प्रस्ताव रखा, किन्तु नीरजा ने अस्वीकार करते हुए कहा कि सुषमा का जीवन विषाक्त बनाने की अपेक्षा उन्हें अगले जन्म में मिलन की आशा पर तुष्ट रहना चाहिए। इस प्रकार कथानक सुखान्त होकर भी पाठक के मन में वेदना की एक मधुर टीस जाग्रत कर देता है।

कथानक का पूर्वार्द्ध पर्याप्त सहज रीति से विकसित हुआ है, किन्तु विजय और सुषमा के विवाह के उपरान्त घटनाओं में अस्वभाविकता आ गई है। समस्त उपन्यास को पढ़कर यह स्पष्टतया प्रतीत होने लगता है कि इसमें कथानक स्वतन्त्र रूप से विकसित न होकर 'उद्देश्य' द्वारा संचालित रहा है। प्रारम्भ में मुन्शी तथा दीवान जी के पारिवारिक वातावरण की तुलना कथानक का प्रमुख अंग बनकर रह गई और कथानक के 'विकास' में पार्टी, वनभोज, क्लब, तर्कपूर्ण तथा दार्शनिक वार्त्तालाप, तीर्थयात्रा, दान-दहेज, बारात की धूमधाम आदि तत्त्वों से कथानक की कलेवर-वृद्धि की गई है। कथानक के अन्तिम अंश में घटनाएँ कम हैं, केवल सुषमा और नीरजा के चरित्र-परिवर्तन को लक्षित कराने में ही लेखिका दत्तचित रही हैं।

श्रीयुत वृन्दावनलाल वर्मा ने विवेच्य उपन्यास की भूमिका में चरित्र-चित्रण के विषय में अपना मत प्रतिपादित करते हुए लिखा है—"उपन्यास के सभी पात्रों का चरित्र-चित्रण कुशलता के साथ किया गया है। उपन्यास में सम्पत्तिशाली, मध्यमवर्गीय और नित्य के श्रम से पेट पालनेवाले सभी प्रकार के पात्रों का उपयोग किया गया है।"[1] जहाँ तक गौण पात्रों तथा उनकी वर्गगत विशेषताओं का प्रश्न है, वहाँ तक निश्चय ही लेखिका को चरित्र-चित्रण में सफलता प्राप्त हुई है। मुन्शी जी के परिवार के सदस्यों—मुन्शी जी, उनकी पत्नी लक्ष्मी, पुत्र निर्मल, पुत्री सुषमा—के चरित्रों में मध्यवर्गीय पात्रों की विशेषताओं (सादगी, सरलता, मितव्ययता, निरभिमानता, महत्त्वाकांक्षा आदि) का सफल दिग्दर्शन हुआ है। दीवान जी के पारिवारिक सदस्यों—दीवान जी, उनकी पत्नी आशा, पुत्री नीरजा तथा विजय के माता-पिता, चाचा-चाची आदि—के व्यक्तित्व मे अभिजातवर्गीय संस्कृति (क्लब, पार्टी, सूट-बूट, लिपस्टिक, ब्रिज, गायन-वादन, धन का गर्व आदि) का पात्रानुकूल समाहार हुआ है। विजय की माता जी के चरित्र-चित्रण में लेखिका सर्वाधिक सफल रही हैं—उनकी पुत्र के प्रति अपार ममता, अभिजातवर्गीय गर्व, वधु को दबाकर रखने की प्रवृत्ति, सबकी इच्छाओ पर शासन करने की सक्रिय भावना आदि विशेषताओं का उनकी उक्तियों, क्रियाओं एवं विचारों में सुन्दर प्रतिफलन हुआ है। निम्नवर्गीय पात्रों में तांगेवाले, घरेलू सेवक, आया, दासी

---

१. देखिये 'भीगी पलकें', भूमिका, पृष्ठ 'क'

आदि पात्रों के व्यक्तित्व उनकी वर्गगत प्रवृत्तियों के अनुरूप ढाले गये हैं।

विजय आलोच्य उपन्यास का नायक है और सुषमा तथा नीरजा नायिकाएँ हैं। इन तीनों प्रमुख पात्रों के चरित्र-विकास को लेखिका ने अत्यन्त अस्वाभाविक क्रम से प्रस्तुत किया है। मध्यवर्गीय अभावों में पली हुई सुषमा अपने पितृ-गृह में गुणों का आगार थी। सरलता, सादगी, लज्जा, कर्मठता, सहनशीलता, आज्ञाकारिता, गृह-कार्यों में निपुणता आदि ऐसे आकर्षक गुण उसमें थे कि जो भी देखता मुग्ध हो जाता। उसके सलज्ज सौन्दर्य तथा उक्त गुणों पर मुग्ध होकर ही तो विजय ने माता के निर्वाचन की अवहेलना करके नीरजा को अस्वीकार कर दिया, क्योंकि अभिजातवर्गीय वातावरण में विकसित हुई नीरजा की गर्वीली, विलासी, आरामपसन्द प्रवृत्तियाँ उसे पसन्द न थीं। सुषमा का विवाह होते ही बिना किसी ठोस कारण के सुषमा और नीरजा के चरित्र में मानो आकाश-पाताल का अन्तर हो गया—सुषमा विलासिनी, ढीठ, कलहप्रिय तथा अपव्ययी हो गई और उधर नीरजा तप, संयम, त्याग की मानो साकार प्रतिमा बन गई; और विजय, जिसने सुषमा को हृदय से पसन्द किया था, अब अपने निर्वाचन की भूल से पीड़ित होकर मद्यपान करने लगा। यद्यपि सुषमा के चरित्र-परिवर्तन के लिए लेखिका ने विजय की माता द्वारा लिए गए 'बीस हजार' के दहेज को कारण-रूप में प्रस्तुत किया है और विजय के प्रति प्रेम को नीरजा के चरित्र-परिवर्तन का हेतु सिद्ध किया है, तथापि यह उल्लेखनीय है कि उक्त दोनों कारण इतने प्रबल नहीं हैं कि नारी अपनी जन्मजात प्रवृत्तियों को त्यागकर एकबारगी विलोम विशेषताओं को ग्रहण कर ले। वस्तुतः लेखिका ने 'नारी के चरित्र-निर्माण में परिस्थितियों के महत्त्व' को लक्ष्य में रखकर ही प्रस्तुत कृति का प्रणयन किया है और उद्देश्य के प्रति विशेष सजग रहने के कारण वे मनोविज्ञान की सम्भावनाओं के प्रति न्याय नहीं कर पाईं।

पात्रों के चरित्र-चित्रण के लिए लेखिका ने संवाद-शैली तथा वर्णनात्मक शैली का आधार ग्रहण किया है। इनके अतिरिक्त बहुशः पात्रों के मानसिक भाव-मंथन द्वारा भी उनकी विशेषताओं को अनावृत्त किया गया है। विजय की दार्शनिक चिन्तनधारा,[1] नीरजा का मानसिक अन्तर्द्वन्द्व, सुषमा के आन्तरिक भावों का परिचय आदि प्रसंग उक्त कथन के प्रमाण हैं। प्रस्तुत कृति में प्रायः चार प्रकार के संवाद दृष्टिगत होते हैं—(अ) ऐसे सामान्य वार्त्तालाप, जो कथानक अथवा चरित्र-विकास की दृष्टि से उपयोगी हैं, (आ) सखियों, भाई-बहिनों अथवा मित्रों के चुहलपूर्ण कथोपकथन, जिनमें वक्ताओं की व्युत्पन्नमति तथा वाक्-पटुता का परिचय प्राप्त होता है, (इ) वे तर्कपूर्ण विवेचनात्मक संवाद जिनमें सामयिक परिस्थितियों (राशन, आर्थिक वैषम्य, चोरबाजारी, आधुनिक नारी की उच्छृङ्खलता, शृंगारप्रियता आदि) की चर्चा हुई है। राशन के विषय में विजय

१-२-३. देखिये 'भीगी पलकें', पृष्ठ ११४-११५, २३२ तथा ३३६, ३२६

तथा उसके चाचा कुन्दन के वार्त्तालाप[१] और दिनेश, विजय, नीरजा तथा सुषमा के आधुनिक नारी तथा पुरुष की त्रुटियों की विवेचना करते समय के संवाद[२] उक्त तथ्य के उदाहरण-रूप में उल्लेखनीय हैं। (ई) चतुर्थ प्रकार के कथोपकथन वे हैं जिनमें ज्ञानी पात्र दार्शनिक सिद्धान्तों की विस्तृत व्याख्या प्रस्तुत करते हैं। द्वितीय परिच्छेद में मुंशी जी तथा दीवान जी का वार्त्तालाप इसी प्रकार का है।[३] इस श्रेणी के कथोपकथन में भारतीय संस्कृति के गौरव का विशेष रूप से गान किया गया है और तप, संयम, आत्म-विकास तथा आध्यात्मिक उन्नति की प्रेरणा दी गई है। यहाँ यह कथितव्य है कि तर्कपूर्ण एवं दार्शनिक कथोपकथन आवश्यकता से अधिक दीर्घ तथा सैद्धान्तिक हो गये हैं। उपन्यास अथवा कहानी में ऐसे कथोपकथन अधिक नहीं होने चाहिएँ अन्यथा दोष की सीमा तक पहुँच जाते हैं। विवेच्य उपन्यास में मध्यवर्गीय तथा अभिजातवर्गीय परिवारों के वातावरण का यथोचित चित्रण करने के अतिरिक्त बिश्नोई जी ने पात्रों के कथोपकथन में सामाजिक प्रवृत्तियों की भी बहुशः चर्चा की है। क्लब, चाय-पार्टी, दावत, नवभोज, ब्रिज, गायन-वादन, साज-शृंगार, दहेज, तीर्थयात्रा, विवाह में जन्म-पत्रियों को मिलाना, जन्म-दिवस की चहल-पहल आदि दृश्यों के अंकन में लेखिका विशेष सफल रही हैं। इनके अतिरिक्त अधोलिखित सामयिक प्रसंगों की भी चर्चा की गई है—(अ) पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव में नारी की भोगवादी प्रवृत्ति,[४] (आ) विज्ञान के प्रभाव से मनुष्य की भौतिक उन्नति, किन्तु आध्यात्मिक प्रगति का ह्रास,[५] (इ) आर्थिक विषमता से पीड़ित निर्धनों की दयनीय दशा,[६] (ई) राशन के फलस्वरूप चोरबाजारी की प्रगति तथा निर्धन जनता की कष्ट-वृद्धि।[७]

भारतीय नारी के चरित्र-पतन पर लेखिका को अत्यन्त क्षोभ है। इसी कारण उन्होंने विभिन्न पात्रों के माध्यम से उक्त तथ्य की अभिव्यक्ति कराई है। उदाहरणार्थ सुषमा और विजय की निम्नलिखित उक्तियाँ देखिए—(अ) 'क्या पश्चिमी सभ्यता हमारी भारतीय संस्कृति को बिलकुल ही लोप करके साँस लेगी ?'[८] (आ) 'आज की शिक्षाभिमानिनी नारी अपने प्राकृतिक गुणों को छोड़कर पुरुषों को नचाने का दंभ करती हैं, जिससे दोनों के जीवन में अशान्ति ही अशान्ति भरती चली जा रही है।'[९] नारी को ही नहीं, पुरुष को भी पाश्चात्य सभ्यता ने छला है। नारी के प्राचीन गौरवमय त्याग, तप और संयम का उपहास करके पुरुष ने ही उसे पाश्चात्य अन्धानुकरण की ओर प्रेरित

१-२. देखिये 'भीगी पलकें', पृष्ठ ८१-८४, ३६१-३६४
३. देखिये 'भीगी पलकें, पृष्ठ १३-१८
४-५-६. देखिये 'भीगी पलकें', पृष्ठ ७, १५, ३८८
७. देखिये 'भीगी पलकें', पृष्ठ ८२-८३
८-९. भीगी पलकें, पृष्ठ ७, ३६१

किया है, ऐसा लेखिका का विचार है।[1] सामाजिक तथा पारिवारिक वातावरण के अतिरिक्त उन्होंने प्रकृति के मधुर तथा भीषण चित्र भी यत्र-तत्र अंकित किये हैं। उषा तथा पृथ्वी नाम्नी सखियों का परस्पर प्रेमालिंगन,[2] वसन्त ऋतु का मंगलमय मादक प्रभात[3] तथा जेठ की दोपहरी का तपता हुआ वातावरण[4] ऐसे ही परिस्थिति-चित्र हैं।

सुश्री शिवरानी बिश्नोई ने उपन्यास की भूमिका में उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए लिखा है—"यह उपन्यास इसी भावना को लेकर लिखा गया है कि पढ़ी-लिखी धनवान् घर की सब ही लड़कियाँ बुरी नहीं होतीं। जो कोई भी भला बुरा होता है, वह परिस्थितियों के कारण ही। देवी भी राक्षसी बन सकती है, और राक्षस भी देवता बन सकता है।"[5] उक्त उद्देश्य की सिद्धि के लिए लेखिका ने नीरजा और सुषमा की सृष्टि की है और परिस्थिति-परिवर्तन द्वारा दोनों को क्रमशः राक्षसत्व से देवत्व की ओर तथा देवत्व से राक्षसत्व की ओर उन्मुख किया गया है। परिवर्तन का यह उत्कर्ष अथवा अपकर्ष नितान्त अस्वाभाविक हो गया है और इसी कारण इस कृति की उद्देश्य-अभिव्यंजना सफल नहीं हो सकी। कथानक, संवाद, चरित्र-चित्रण आदि तत्त्वों पर उद्देश्य इतना हावी रहा है कि सहज कलात्मकता को इससे भारी क्षति पहुँची है। अभिव्यंजना-पक्ष की दृष्टि से लेखिका ने प्रवाहपूर्ण एवं मुहावरेदार भाषा-शैली को स्थान दिया है। प्रचलित साहित्यिक मुहावरों और लोकोक्तियों के अतिरिक्त संवादों में व्यावहारिक मुहावरों और लोकोक्तियों का भी रोचक प्रयोग हुआ है। 'चढ़ी हाँडी उतारने वाले बहुत हैं', 'पुआ न पापड़ी पटाक बहू आ पड़ी', 'जर है तो नर है नहीं पंजावे का खर है', 'चारों पल्ले हिलाते चली आईं' आदि प्रयोग इसके प्रमाण हैं।[6] भाषा में व्यावहारिकता लाने के लिए उन्होंने उर्दू-शब्दों को अधिक न अपनाकर सरल हिन्दी-शब्दों के प्रयोग पर बल दिया है। प्रकृति-चित्रण करते समय, पात्रों के मानसिक भावों का विश्लेषण करते समय अथवा तर्कपूर्ण वार्त्तालापों का विधान करते समय लेखिका ने काव्यमय, भावुकतापूर्ण अथवा विश्लेषण-परक शैली का प्रयोग किया है। यथा—"सद्यःस्नाता-सी सरिता नीलवर्ण के परिधान से सजकर चमचमाते हीरक खंडों की मेखला कटि में बाँध पग नूपुरों को रिनमिन बजाती—शावक के चंचल नयनों से पिया को खोजती फूलों से आँचल भरे हुए तीव्र वेग से भागी जा रही थी अपने प्रियतम रत्नेश की शान्तिमयी गोद में चिर विश्राम के लिए।"[7]

निष्कर्षतः 'भीगी पलकें' एक पठनीय उपन्यास है। 'भारतीय संस्कृति की रक्षा' के लक्ष्य को सम्मुख रखकर लेखिका ने उद्देश्यप्रधान कथानक की सृष्टि की है। वर्गगत पात्रों के चरित्र-चित्रण में वे विशेष सफल हुई हैं। सामयिक सामाजिक परिस्थितियों की

१-२-३-४. देखिये 'भीगी पलकें', पृष्ठ ३६२, ४५, ५११, ३०२

५. देखिये 'भीगी पलकें', दो शब्द, पृष्ठ 'ग'

६. भीगी पलकें, पृष्ठ ६४, ७२, २६७, २६८

७. भीगी पलकें, पृष्ठ ११३

चर्चा करते हुए उन्होंने पारिवारिक वातावरण तथा प्रकृति-सौन्दर्य को जिस विविधता के साथ अपने उपन्यास में उभारा है, उसके लिए उनकी प्रशंसा की जानी चाहिए। सरल एवं मुहावरेदार भाषा-शैली ने उपन्यास को और भी सौष्ठव एवं प्रवाह प्रदान किया है।

१२. सुश्री शकुन्तला मिश्र

शकुन्तला जी ने 'कच्ची मिट्टी' शीर्षक रहस्य-रोमांचयुक्त सामाजिक उपन्यास की रचना की है। उपन्यास प्रतीकात्मक है : यौवन-काल को कच्ची मिट्टी की संज्ञा दी गई है। कच्ची मिट्टी के पात्र पर कोई भी रंग चढ़ सकता है और कठोर वस्तु से टकराने पर वह टूट भी सकता है। यही दशा प्रारम्भिक यौवन की है। प्रस्तुत उपन्यास का उपनायक नवीन दुर्व्यसनी भुवन के साथ रहकर कुपथगामी हुआ और अन्त में पुलिस की गोली से उसकी मृत्यु हुई। उपन्यास का नामकरण उसी की जीवन-घटनाओं को लक्ष्य में रखकर किया गया है।

लेखिका ने उपन्यास में रोचकता के लिए घटना-बाहुल्य का आश्रय लिया है। नगर के प्रमुख धनी सेठ रूपचन्द अपनी पत्नी सुमुखी, पुत्र नवीन तथा पुत्री रजनी के साथ एक सुन्दर बंगले में रहते थे। उनकी धर्मशाला के मुंशी ने विधवा गोमती और उसकी पुत्री इन्दु को उनके यहाँ सेविका का कार्य दिला दिया। वे अपनी जीविका का साधन पाकर प्रसन्न थीं, किन्तु जब नवीन अवकाश के दिनों में बनारस से घर लौटा तब रजनी के शिक्षक भुवन की कुसंगति के प्रभाववश उसने इन्दु पर डोरे डालकर उनका घर में रहना दूभर कर दिया। जब सुमुखी ने भी पुत्र का पक्ष लेकर इन्दु को ही दोषी ठहराया तब वे नौकरी छोड़कर चली गई। सुमुखी ने अभिजात वर्ग के अहंकारवश उन्हें झुकाने के लिए उन पर कंगन की चोरी का मिथ्या आरोप लगाया, किन्तु डॉक्टर टंडन ने उन अनाथ स्त्रियों की रक्षा की और कालान्तर में इन्दु के स्वभाव पर मुग्ध होकर उससे विवाह करने का निश्चय किया। इससे सुमुखी का अहंकार-जनित क्रोध और भी बढ़ गया। उधर नवीन ने डॉ० टंडन के विवाह के तीन दिन पूर्व भुवन की प्रेरणा से डॉक्टर और गोमती को बन्दी बना लिया तथा भुवन, रहमत एवं बुद्धू खटीक की सहायता से इन्दु के सतीत्व-हरण की चेष्टा की, किन्तु सफलता न मिली। मुंशी जी के प्रयत्नों से जब पुलिस वहाँ पहुँची तब इन्दु और डॉक्टर टंडन मूच्छितावस्था में थे। नवीन ने भागने का प्रयास किया, किन्तु पुलिस की गोली से उसकी मृत्यु हो गई। पुत्री के अपहरण के धक्के से गोमती पागल हो गई थी। भुवन को आजीवन कारावास का दंड मिला। पुत्र की मृत्यु से सुमुखी का जीवन बंजर रेगिस्तान बन गया और उसका अभिजात वर्ग का अहंकार चूर-चूर हो गया। डॉ० टंडन तथा इन्दु को उपचारार्थ अस्पताल में भर्ती करा दिया गया। उनके स्वस्थ होने के विषय में लेखिका मौन रही हैं, अतः कथानक का अन्त स्वतः स्पष्ट नहीं है।

प्रस्तुत उपन्यास के पूर्वार्द्ध मे चरित्र-चित्रण पर अधिक वल दिया गया है, किन्तु उत्तरार्द्ध में गोमती और इन्दु द्वारा सेठ जी का घर छोड़ देने के वाद से घटना-वाहुल्य के दर्शन होते हैं। कथानक का उत्तरार्द्ध वैसे भी अत्यन्त क्षिप्र गति से युक्त रहा है, जो उचित नहीं है। लेखिका ने अभिजात वर्ग के अहंकार तथा कुसंगति के प्रभाव को दिखाने के लिए अधिकतर समाज के कुरूप दृश्य ही अंकित किये हैं। ये दृश्य परिमाण में इतने अधिक हैं कि पाठक का मन समाज के प्रति विरक्ति तथा घृणा से भर जाता है। वस्तुतः लेखिका को किसी मनोवैज्ञानिक तथा स्वस्थ सामाजिक कथानक का आश्रय लेना चाहिए था। किसी महत्त्वपूर्ण सामाजिक समस्या का समाधान प्रस्तुत न करने के कारण भी यह उपन्यास गरिमापूर्ण नही वन पाया है।

'कच्ची मिट्टी' में एक ओर अभिजात वर्ग के पात्रों (रूपचन्द, सुमुखी, नवीन) की मनोवृत्तियों पर प्रकाश डाला गया है और दूसरी ओर मध्यवर्गीय समाज की वेदनाओं का चित्रण हुआ है। लेखिका ने चरित्र-चित्रण में प्रत्यक्ष कथन की शैली का प्रायशः आश्रय लिया है। उदाहरणार्थ सुमुखी और रूपचन्द की चारित्रिक प्रवृत्तियों का उल्लेख देखिये—

(अ) "सुमुखी वैसे कुलीन थी, कुछ दयालु भी, किन्तु वह अभिजात वर्ग की स्त्री थी। उसमें अपना अहं और अहंकार सेठ जी से भी अधिक था।"[1]

(आ) "वह भावहीन पुरुष था। केवल कर्म करना ही उसने सीखा था। आत्म-ज्ञानी की तरह फलरहित भावना से नही, फल प्राप्त करने की भावना से।······ संवेदना, सहानुभूति की सरस कोमल भावनाएँ उसके वज्र हृदय को छूने का कभी साहस न कर सकी थीं।"[2]

उपर्युक्त उद्धरणों से स्पष्ट है कि पति-पत्नी के स्वभाव मे महान् अन्तर था। तथापि उनमे वैमनस्य नही था।[3] वैसे सुमुखी जितनी हठी थी, रूपचन्द उतने ही विवेकशील थे। इसीलिए उन्होंने सुमुखी को यह परामर्श दिया कि डॉ० टण्डन, गोमती और इन्दु का विरोध न करे, किन्तु वह अहकार और हठ के वशीभूत रहकर नवीन की प्रतिशोध-भावना को उभारती रही। जहाँ सेठ रूपचन्द ने अपने व्यवहार-कौशल से मिल के विद्रोही श्रमिकों को वश में रखा,[4] वहाँ उनका पुत्र नवीन दूसरों के हाथ की कठपुतली वनकर रहा। वह पिता की भाँति विवेकशील नही है, अपितु माता-जैसा हठ और दुराग्रह ही उसमें प्रमुख है। अपरिपक्व-वुद्धि होने के कारण उसने भुवन की सगति मे मद्यपान, वेश्यागमन आदि दुर्गुणो को सहज ही अपना लिया।

उपन्यास के अन्य पात्रों मे इन्दु का चरित्र विशेष रूप से गतिशील रहा है। वह निर्धन है, किन्तु उसके सौन्दर्य और कार्य-दक्षता की सभी पात्रों ने किसी-न-किसी

१-२. कच्ची मिट्टी, पृष्ठ १४, १५-१६

३-४. देखिये 'कच्ची मिट्टी', पृष्ठ १६, ३४-३५

रूप में प्रशंसा की है। कार्यनिष्ठा के अतिरिक्त उसमें आत्मविश्वास की भी कमी नहीं है। उसकी माता गोमती का चरित्र वात्सल्य का मूर्त रूप है। वह विधवा थी, किन्तु इन्दु की सुख-कामना से उसने अपने जीवन को कभी अभावग्रस्त नहीं समझा। लेखिका ने उसके जीवन में सुख-दुःख के संघात का मर्मस्पर्शी चित्रण किया है। डॉ० टण्डन और मास्टर भुवन मध्यवर्गीय पात्र हैं। लेखिका ने इनके चरित्रों को एक-दूसरे का विलोम बनाकर प्रस्तुत किया है। भुवन स्वार्थी और पतित मनोवृत्ति का युवक है, जिसने नवीन को कुमार्ग की ओर उन्मुख करने के अतिरिक्त डॉ० टण्डन, इन्दु और गोमती के सुखी जीवन में व्याघात उपस्थित किये। इसके विपरीत डॉ०टण्डन के चरित्र में विविध आदर्शों का समन्वय है। उपन्यास के अन्य पात्रों में मुंशी जी को लोक-व्यवहार मे निपुण गृहस्थ के रूप में चित्रित किया गया है। नवीन के सहायक दस्युओं में से रहमत की प्रकृति अधिक उदार है। इसके विपरीत लेखिका ने बुद्धू खटीक को क्रूरकर्मी रखा है, जो अपने साथी रहमत की ही हत्या कर देता है। अन्ततः यह कहा जा सकता है कि लेखिका ने चरित्र-चित्रण की विविध प्रणालियों का आश्रय लेते हुए पात्रों की वर्गानुकूल मनोवृत्तियों और चारित्रिक द्वन्द्व को भलीभाँति प्रस्तुत किया है।

लेखिका को पात्रानुरूप संवादों की योजना में विशेष सफलता मिली है। इसीलिये जहाँ इन्दु और गोमती के संवादों मे नम्रता का पुट है,[1] वहाँ सुमुखी की उक्तियों में अभिजात वर्ग का अहं स्पष्ट झलकता है।[2] भाषा को पात्रों के सामाजिक संस्कारों के अनुरूप रखने के लिये लेखिका ने मुसलमान-पात्र रहमत के मुख से उर्दू-शब्दों का अधिक प्रयोग कराया है।[3] पात्रों के कथोपकथन का कथा-विकास और चारित्रिक विशेषताओं के उद्घाटन में विशेष योग रहा है। इस दृष्टि से इन्दु तथा सुमुखी का संवाद उल्लेखनीय है, जिससे सुमुखी के अर्थजनित अहंकार और गोमती के सन्तोषप्रेरित स्वभाव तथा तर्कपटु व्यक्तित्व का बोध होता है।[4]

इस उपन्यास में अभिजातवर्गीय समाज का वातावरण प्रस्तुत करने पर विशेष बल दिया गया है। सुमुखी द्वारा पति की अनिच्छा होने पर भी दान-धर्म करना, मास्टर भुवन के साथ ताश खेलना, पति की अनुपस्थिति में उनके मित्रों के साथ घूमना-फिरना, घर के सेवकों पर रौब बनाये रहना आदि प्रवृत्तियों का चित्रण इसी दृष्टि से किया गया है। दूसरी ओर, सेठ रूपचन्द द्वारा मजदूरों को कूटनीतिपूर्वक वश मे रखना भी इसी अभिप्राय से चित्रित है। अभिजात वर्ग का 'अहं' रूपचन्द की अपेक्षा सुमुखी में अधिक था। लेखिका ने इस उपन्यास में प्रकृति-चित्रण की ओर ध्यान न देकर मानव-प्रकृति के विश्लेषण पर बल दिया है। उपन्यास के उत्तरार्द्ध में वातावरण को कौतूहलपूर्ण रोमांचकारी घटनाओं के अनुरूप रखा गया है। एक स्थान पर प्रसंगवश श्रमिक वर्ग की उन्नति का भी उल्लेख हुआ है, जो लेखिका की जागरूकता का परिचायक है। यथा—"कांग्रेस

१-२-३-४. देखिए 'कच्ची मिट्टी', पृष्ठ २४-२५, ७८, १८३, २४-२५

की हकूमत थी। नीचे के लोग तेजी से ऊपर आ रहे थे। कांग्रेस ने उन्हें अपना मूल्य बता दिया था। वह अब सस्ते नहीं रहे थे, क्योंकि कांग्रेस सरकार ने उनकी आत्मरक्षा के लिए नये-नये कानूनों की सृष्टि कर दी थी। अब न तो उनकी मजदूरी में धांधली की जा सकती थी और न उनसे पशुओं की तरह काम ही लिया जा सकता था।"[१]

प्रस्तुत कृति की रचना करते समय लेखिका के समक्ष दो उद्देश्य रहे हैं—(अ) अभिजात वर्ग के अहं और उसके दुष्परिणाम की संभावनाओं का चित्रण, (आ) कुसंगति के फलस्वरूप कुमार्गगामी होने का उल्लेख। प्रथम लक्ष्य की पूर्ति सुमुखी के चरित्र द्वारा की गई है और द्वितीय के लिए नवीन, और उसे कुपथ पर ले जानेवाले भुवन का चरित्र प्रस्तुत किया गया है। लेखिका ने भाषागत सरलता और व्यावहारिकता की ओर भी समुचित ध्यान दिया है। किन्तु, कहीं-कहीं सूक्ति-वाक्य अनावश्यक रूप से दीर्घ हो गए हैं जिससे उनमें निहित मनोविश्लेषण प्राय: दब गया है। तथापि यह निर्विवाद है कि भाषा की सरलता और सजीवता द्वारा कथानक की रोचकता को खंडित नहीं होने दिया गया है। अन्तत: यह कहा जा सकता है कि लेखिका के समक्ष कुछ निश्चित जीवन-सिद्धान्त रहे हैं, जिनकी अभिव्यक्ति के लिए मुख्य रूप से यथार्थ-चित्रण की प्रणाली को अपनाया गया है, किन्तु आदर्शवाद को भी स्फुट रूप में अभिव्यक्ति प्राप्त रही है।

१३. सुश्री उर्मि

सुश्री उर्मि ने ६४ पृष्ठों और २२ परिच्छेदों में विभक्त 'प्रतीक्षा' शीर्षक लघु सामाजिक उपन्यास की रचना की है, जिसमें सामाजिक बाधाओं के फलस्वरूप नायक और नायिका की असफल प्रेम-गाथा का करुण चित्र अंकित किया गया है। रुद्र नगर में निवास करनेवाला, उच्च कुल एवं धनी घराने का प्रतिभावान् युवक था और उमा श्रीपुर गाँव में रहनेवाली सुन्दरी, किन्तु निर्धन नवयुवती थी। संयोगवश दोनों में सात्त्विक प्रेम का विकास हुआ। उन्होंने ग्राम के देवालय में परस्पर सच्ची प्रीति के निर्वाह का प्रण किया। सम्भवत: इसी प्रतिज्ञा की रक्षा के लिए विधाता ने इहलोक में उनके मिलन को बाधित समझकर उन्हें अपने निकट बुला लिया। उमा के नाना उसका अन्यत्र विवाह करने के लिए कटिबद्ध थे, अत: उसने ग्राम त्याग दिया और मार्ग में एक मोटर-दुर्घटना के फलस्वरूप उसकी मृत्यु हो गई। इसके बाद शीघ्र ही रुद्र भी वृक्षपात के आघात से काल-कवलित हो गया। कथानक का यह अन्त प्रेम की दिशा में एक आदर्श प्रस्तुत करता है, किन्तु संयोगाधिक्य के कारण अस्वाभाविक प्रतीत होता है। कथानक में अत्यन्त शिथिलता के दर्शन होते हैं; और उपन्यास के आरम्भ में पुनर्पुन: एक-से दृश्य आने से कथानक की रोचकता क्षीण हो गई है।

इस उपन्यास में संक्षिप्त कथानक के अनुकूल इने-गिने पात्रों को स्थान

---

१. कच्ची मिट्टी, पृष्ठ ३४

प्राप्त हुआ है—रुद्र, उसके माता-पिता और बहिन उमा, उसके नाना और उसकी सखी गौरी। इन पात्रों की केवल वे ही विशेषताएं प्रकाश में आई हैं जो कथानक को गति देने मे सहायक रही हैं। उमा और रुद्र की परस्पर सच्ची प्रीति, उमा के प्रति गौरी का अनन्य सखी-भाव आदि विशेषताएँ उल्लेखनीय है। पात्रों की चारित्रिक प्रवृत्तियाँ मुख्य रूप से घटनाओं के घात-प्रतिघात के माध्यम से व्यक्त हुई है। वर्णनात्मक प्रसंगों में नाटकीयता के संचार के लिए कहीं-कही लेखिका ने पात्रों के मध्य लघु एवं प्रसंगानुकूल संवादो की आयोजना की है। अधिकांश सम्भाषण उमा और रुद्र के हैं, जिनमें उनके प्रेमपूर्ण आकुल अन्तर की भावानुरूप अभिव्यक्ति हुई है।

'प्रतीक्षा' में लेखिका ने ग्रामों के सरल, परिश्रम साध्य, निष्कपट, दरिद्र एवं धर्मपरायण जीवन की प्रसंगानुकूल अभिव्यक्ति की है। इस उद्देश्य के अतिरिक्त उनका उद्देश्य प्रेम की अनन्यता को प्रकट करना है, जिसे उपन्यास की भूमिका में इन शब्दो में व्यक्त किया गया है—"जब नायक और नायिका समाज की मर्यादा और प्रतिष्ठा का उल्लघन कर मृत्यु को भी चुनौती देने के लिए तत्पर हो जावें तभी यह जानना चाहिए कि उनके प्रेम की सच्ची परीक्षा हुई है।"[१] लेखिका की भाषा सरल, बोधगम्य एवं मुहावरेदार है। उन्होंने वर्णनात्मक शैली और सवाद शैली का प्रयोग करने के अतिरिक्त गम्भीर प्रसंगों का वर्णन करते समय प्रायः दीर्घसूक्तिपरक वाक्यावली का संयोजन किया है। उदाहरणस्वरूप यह उक्ति द्रष्टव्य है—"हम लोगों के जीवन में न जाने कौन-सी अलक्षित शक्ति काम करती है। यह नही जान पड़ता कि कब किस बात से हम लोगों के जीवन की गति किस ओर मुड़ जाए। संसार मे कितने ही लोग आते और जाते हैं। सभी को हम देखते रहते है, किन्तु देखकर भी हम उन पर कोई ध्यान नही देते।"[२]

सुश्री उर्मि ने सम्भव-असम्भव की चिन्ता किये बिना अपनी कृति में जिन अस्वाभाविक घटनाओं को स्थान दिया है, वे उपन्यास के साहित्यिक महत्त्व को क्षीण करती हैं। समस्या-चित्रण अथवा सामाजिक प्रसंगों की अवतारणा की ओर उन्होने ध्यान नहीं दिया, उनकी दृष्टि प्रेम के सीमित वृत्त मे ही परिभ्रमण करती रही है।

१४. श्रीमती शीला शर्मा

श्रीमती शीला शर्मा ने 'एक था' शीर्षक सामाजिक उपन्यास की रचना की है, जिसमें मैडिकल कॉलेज के एक छात्र प्रकाश के जीवन की विरूपताओं और उसके द्वारा आयोजित कुचक्रो की चर्चा की गई है। उसका सहपाठी राकेश (केशू) समस्त घटनाओं का केन्द्र रहा है, क्योंकि उसके व्यक्तित्व की गम्भीरता से चिढ़कर ही प्रकाश ने उसे लाछित करने के उद्देश्य से समस्त दुर्भावनापूर्ण कार्य किये हैं। वस्तुत. यह चरित्रप्रधान घटनात्मक

---

१. देखिए 'प्रतीक्षा', पृष्ठ ६
२. प्रतीक्षा, पृष्ठ १

उपन्यास है, क्योंकि इसमें राकेश के चरित्र को आदर्श रूप में प्रतिष्ठित करने के लिए ही समस्त घटनाओं एवं पात्रों का विधान किया गया है। लेखिका ने घटनाओं में रोचकता का सर्वत्र ध्यान रखा है, किन्तु कहीं-कहीं आकस्मिकता का दोष भी विद्यमान है। उपन्यास के नायक राकेश को, अपने पिता की वेश्यागमन की प्रवृत्ति से क्रुद्ध होकर गृह-त्याग करने पर तनिक भी भटकना नहीं पड़ता—नौकरियां उसे इस प्रकार मिलती चली जाती हैं मानो वे उसी की प्रतीक्षा में हों। तदनन्तर मैडिकल कॉलेज में प्रवेश लेने पर भी छात्रालय में उसके जीवन से सम्बद्ध प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष घटनाएँ नाटकीय रूप में घटित होती हैं। उसके सहपाठी प्रकाश की दुर्बलता के फलस्वरूप एक अन्य छात्र चन्द्र का अपनी नव विवाहिता पत्नी सुनयना से विग्रह हो जाता है, क्योंकि प्रकाश ने उसे यह मिथ्या विश्वास दिला दिया था कि उसकी पत्नी राकेश की पूर्व प्रेमिका है। चन्द्र का पुनर्विवाह होने पर परित्यक्ता सुनयना ने राकेश से मिलकर अपना दोष पूछा, तो घटना-चक्र से सर्वथा अनवगत राकेश ने अपनी उदारता और सहृदयता का परिचय देते हुए सुनयना और उसके नवजात पुत्र को पत्नी एवं पुत्र के रूप में ग्रहण कर लिया। लेखिका ने राकेश के सद्गुणों (परदुःखकातरता,जन-सेवा आदि) पर विविध प्रसंगों में प्रकाश डाला है। ऐसे अवसरों पर प्रकाश की दुर्भावनाओं और दुर्गुणों की ओर पाठक का ध्यान अनायास ही आकृष्ट हो जाता है। उपन्यास के अन्य पात्रों में सुनयना और राकेश के माता-पिता की जीवन-धारा को सामान्य सांसारिक व्यक्तियों के अनुरूप रखा गया है। इनमें समय-समय पर मानव-सुलभ गुणों एवं दुर्बलताओं का प्रावल्य रहा है। यहाँ यह उल्लेख्य है कि लेखिका ने चरित्र-विश्लेषण में विविधता और प्रभावान्विति के लिए प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष कथन-शैलियों का समान रूप से आश्रय लिया है।

'एक था' की रचना मुख्यतः वर्णनात्मक शैली में हुई है, किन्तु कथानक में नाटकीय गति लाने के लिए लेखिका ने पात्रानुकूल संवादों की भी योजना की है, जिससे कथानक के अतिरिक्त चरित्र-विकास में भी योग प्राप्त हुआ है। कहीं-कहीं बंगला एवं पूर्वी हिन्दी के अनुरूप वाक्य-विन्यास करके[१] उन्होंने इसी प्रवृत्ति का परिचय दिया है। प्रकाश की उक्तियों में उसके व्यक्तित्व की वक्रता को ध्वनित रखने में भी लेखिका को विशेष सफलता मिली है।[२] देशकाल अथवा वातावरण की दृष्टि से लेखिका द्वारा कलकत्ता के व्यस्त जीवन, रात्रि की चहल-पहल, वेश्या-जीवन तथा छात्रावास की घटनाओं का चित्रण उल्लेखनीय है। जैसा कि पहले बताया जा चुका है, राकेश के रूप में आदर्श चरित्र की सृष्टि आलोच्य उपन्यास का एकमात्र उद्दिष्ट है। इस दृष्टि से यह रचना निश्चय ही प्रेरणादायी और सफल बन पड़ी है।

प्रस्तुत उपन्यास में साहित्यिक हिन्दी की अपेक्षा प्रचलित भाषा का प्रयोग किया गया है, किन्तु 'वो', 'विद्युता' (विद्वत्ता), खसकना (खिसकना) आदि अशुद्ध प्रयोग

१-२. देखिये 'एक था', (अ) पृष्ठ १३, १८-१९, (आ) पृष्ठ ६७-६९

कथा-प्रवाह में निश्चय ही बाधक रहे हैं।[1] भाषा में सजीवता और व्यावहारिकता लाने के लिए लेखिका ने मुहावरों का विदग्धतामय प्रयोग करने के अतिरिक्त सूक्ति-वाक्यों की भी सहज योजना की है। यथा—"किनारों से दूर महासागर की उत्ताल जल लहरों पर उतराता हुआ काठ का एक मामूली टुकड़ा भी समय पर सहारे के लिए बहुत होता है।"[2] इसी प्रकार उन्होंने चित्र-शैली तथा उपमान-योजना में भी पर्याप्त रुचि ली है। उदाहरणार्थ राकेश के विषय में यह उक्ति देखिए—"आतंक काल में जैसे सीप के अन्दर का कीड़ा और अपनी ही सीप में सिकुड़ जाता है उस मंजिल की सीढ़ियों पर पैर रखते ही केशू भी और अपने ही में सिमट जाता है।"[3]

निष्कर्ष रूप में यह ज्ञातव्य है कि सुश्री शीला शर्मा ने इस उपन्यास में उपदेशात्मकता को मुख्य स्थान दिया है: युगीन साहित्यिक प्रवृत्तियों के अनुरूप कोई सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक कथानक वे नहीं दे पाईं। घटनाओं एवं पात्रों पर उनका पूर्ण नियन्त्रण रहा है, अतः उनमें सहज विकास का क्रम प्राप्त नहीं होता। फिर भी सामान्य रुचि के पाठकों के लिए इसमें मनोरंजन की पर्याप्त सामग्री विद्यमान है।

१५. सुश्री शीला रघुवंशी

सुश्री शीला रघुवंशी ने 'अभागा' शीर्षक उपन्यास की रचना की है, जिसमें एक लघु प्रेम-कथा को निरर्थक संवादों एवं असम्भव घटनाओं के विस्तार से चमत्कारपूर्ण बनाने का असफल प्रयास किया गया है। प्रताप और कला का संयोगवश मिलन, प्रेम, प्रताप के पिता द्वारा उसका अन्यत्र विवाह, कला और प्रताप का विरह एवं तज्जन्य रुग्णता, कला की मृत्यु, प्रताप का भी उन्मादग्रस्त होकर मृत्यु-वरण—यही आलोच्य कथानक की घटनाओं का क्रम रहा है। इस उपन्यास का कथानक पिष्टपेषित है, किन्तु उसमें किंचित् कौतूहल की सृष्टि के लिये लेखिका ने कतिपय असम्भव घटनाओं की कल्पना की है। प्रताप द्वारा कला को ऐसे जादुई हार का उपहार देना, जिसे धारण करनेवाले का कभी नाश न हो सके, ऐसी ही घटना है। फिर भी न जाने क्यों कला की विरहवश मृत्यु दिखाई गई ? विरहावस्था में प्रताप और कला का पृथक् नगरों में रहते हुए भी अर्द्धरात्रि को अचेतन अवस्था में शय्या त्यागकर एक उपवन में मिलना भी ऐसी ही असम्भव घटना है। इस भेंट को लेखिका ने आत्मिक मिलन की संज्ञा दी है किन्तु उनके शरीर शय्या से क्यों अनुपस्थित रहते थे, इसका कारण वे नहीं दे पाईं। पागलखाने में प्रताप की मृत्यु-वेला में कला की मृतात्मा का प्रकट होना और सम्भाषण द्वारा प्रताप की आत्मा का पथ-निर्देश करके उसे अपने साथ ले जाना भी अविश्वसनीय घटना है वर्तमान वैज्ञानिक युग में ऐसी असंगत कल्पनाएँ कदापि स्पृहणीय नहीं मानी जा सकती

---

१. देखिये 'एक था', पृष्ठ ५, ६, ७७
२-३. एक था, पृष्ठ १५, २४

वस्तुतः लेखिका ने कथानक के आयोजन मे किसी उल्लेखनीय प्रौढ़ि का परिचय नही दिया है।

प्रताप और कला इस उपन्यास के प्रमुख पात्र हैं। अन्य पात्र (प्रताप के माता-पिता, भाई-भाभी, पत्नी वसु, मित्र विहारी, कला के पिता, उसकी सखी चन्द्रा आदि) इन्ही दो पात्रों की चारित्रिक प्रवृत्तियों को प्रकाश मे लाने में सहायक रहे हैं। प्रताप उपन्यास का नायक है, किन्तु उसमें नायकोचित दृढ़ता एवं साहस का सर्वथा अभाव है। उसका सबसे बडा गुण अथवा दुर्गुण उसकी भावुकता है जिसके वशीभूत होकर वह ऐसे विचित्र कार्य करता है कि उसका व्यक्तित्व एक निरर्थक पहेली बनकर रह जाता है। अथ से इति तक वह कष्टो का आह्वान-सा करता प्रतीत होता है। उसका चरित्र-चित्रण उपन्यास का प्रमुख लक्ष्य है, अतः उसी के विशेषण 'अभागा' को शीर्षक रूप मे चुना गया है, किन्तु यह उल्लेखनीय है कि ऐसे निराशावादी नायक पाठकों को स्वस्थ दृष्टि नहीं दे सकते। प्रताप के प्रति अनन्य अनुराग और प्रेम की वेदी पर मौन मृत्यु—नायिका कला के चरित्र की यही उल्लेखनीय विशेषताएँ है। वास्तव मे कला की सृष्टि प्रताप के चरित्र-विकास के लिए ही की गई है। उपन्यास के पात्रों में अनेकरूप विशेषताओं के दर्शन दुर्लभ हैं, प्रायः प्रत्येक पात्र की लगभग एकरूप रहनेवाली विशेषताओं का अत्यन्त स्थूल रूप में प्रासंगिक उल्लेख हुआ है। पात्रो के सम्भाषण भी भावातिरेक के कारण प्रायः प्रभावशून्य रहे है। वे सामान्य तथ्यों पर भी अत्यन्त गम्भीरतापूर्वक विचार करके उत्तर-प्रत्युत्तर देते है, किन्तु भावविह्वलता के कारण बहुत रुक-रुककर अनेकविध भाषण-सम्भाषण के उपरान्त अपने मनोभाव व्यक्त कर पाते हैं।[1] अधिकाश संवाद न तो चरित्र-चित्रण में सहायक रहे हैं और न ही उपन्यास के अन्य तत्त्वो को गति दे पाए हैं—अनावश्यक विस्तार ही उनका मुख्य गुण है।

'अभागा' में देशकाल सम्बन्धी केवल एक घटना ही की प्रासंगिक चर्चा हुई है। वह है—फ़िल्म कम्पनी में काम करने की इच्छा से सहस्रों युवक-युवतियों का नित्य एकत्र होना, किन्तु डाइरेक्टरो द्वारा केवल उन्ही कलाकारो का चुनाव करना, जो उनकी कम्पनी के शेयर ले सकें।[2] यदि देशकाल-विरुद्ध तथ्यों के दर्शन हो तो इस उपन्यास में पाठक को निराश न होना पड़ेगा। जादुई हार का जादू, दूरस्थ प्रेमियो का शारीरिक और आत्मिक मिलन, मृतात्मा का प्रकट होकर उच्च स्वर में सम्भाषण आदि घटनाओं को उदाहरण-रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। उपन्यास के मुखपृष्ठ के अनुसार यह 'मनोवैज्ञानिक उपन्यास' है। सम्भवतः लेखिका का उद्देश्य प्रताप का मनोवैज्ञानिक चरित्रांकन करना होगा, किन्तु वे इस लक्ष्य मे सफल नही हो पाई। भाषा सरल और व्यावहा-

---

१. देखिये 'अभागा', पृष्ठ ३३, ३८-४१
२. देखिये 'अभागा', पृष्ठ १६-२१

रिक है, किन्तु संकोचता (संकोच), सिड़ियाँ (सीढ़ियाँ) आदि अशुद्ध प्रयोग[1] चिन्तनीय हैं। भाषा में प्रायः एकरूपता का अभाव रहा है—कतिपय स्थलों पर शुद्ध साहित्यिक हिन्दी के प्रयोग का प्रयत्न किया गया है और अत्यत्र अत्यन्त चलती हुई भाषा का व्यवहार हुआ है। लेखिका ने वर्णनात्मकता की अपेक्षा नाटकीयता को अधिक प्रश्रय दिया है, किन्तु अनावश्यक संवाद-योजना कथानक के सुव्यवस्थित विकास में बाधक रही है। वार्त्तालाप प्रायः उखड़े-उखड़े अथवा अपूर्ण हैं तथा सुनियोजित शैली के अभाव में उपन्यास नीरस तथा अनर्गल हो गया है।

१६. सुश्री उमादेवी

सुश्री उमादेवी ने 'आलिंगन' शीर्षक ऐतिहासिक उपन्यास की रचना की है, जिसमें ८४ पृष्ठ तथा १३ लघु परिच्छेद हैं। इसमें मुगल राज्य की स्थापना के पूर्व के भारत की राजनीतिक स्थिति पर विहंगम दृष्टि डालते हुए बाबर द्वारा भारत-विजय के प्रकरण को चित्रित किया गया है। इस कृति के पूर्वार्द्ध में प्रारम्भ में त्रिविक्रमपुरी के जागीरदार की वीर तथा बुद्धिमती कन्या मणिमाला के चरित्र का विस्तृत परिचय देते हुए चंदेरी के राजकुमार मेदिनीराय से उसके प्रेम तथा विवाह का वर्णन किया गया है। इसके उपरान्त चंदेरी के राजा द्वारा पुत्र को राज्यगद्दी सौंपकर स्वयं संन्यास ग्रहण करना, मुसलमानों द्वारा भारत की लूट-खसोट, मेदिनीराय द्वारा बादशाह खलील को पराजित करना आदि घटनाओं को इतिहास और कल्पना के योग से व्यास शैली में प्रस्तुत किया गया है। राजकुमार मेदिनीराय के राजतिलक के उपरान्त उपन्यास का उत्तरार्द्ध आरम्भ होता है। लेखिका ने राणा सांगा तथा इब्राहीम लोदी से बाबर के असफल युद्धों को पृष्ठभूमि में रखकर अन्त में बाबर की सफलता का प्रत्यक्ष रूप से चित्रण किया है। राजा मेदिनीराय ने राणा सांगा के पक्ष में युद्ध किया था—उन्हें उक्त समग्र घटनाओं के केन्द्र-रूप में रखा गया है। पानीपत के द्वितीय युद्ध मे सुल्तान इब्राहीम लोदी तथा बाबर की सेनाओं के विभिन्न भागों का इतिहासानुरूप परिचय तथा युद्ध की स्थिति में दोनों सेनाओं के मोर्चों का सम्यक् विश्लेषण[2] इस बात का साक्षी है कि लेखिका का इतिहास विषयक अध्ययन पर्याप्त गम्भीर है। पूर्वार्द्ध मे घटनाएँ मन्थर गति से विकसित हुई है (विवाह आदि सामान्य घटनाओं का भी विस्तार से वर्णन हुआ है), किन्तु उत्तरार्द्ध में विभिन्न घटनाओं को अत्यन्त त्वरित गति से लक्ष्योन्मुख किया गया है।

प्रस्तुत उपन्यास में मुख्य रूप से राजा मेदिनीराय और उनकी पत्नी मणिमाला का चरित्रांकन किया गया है। क्षत्रियोचित गौरव के अनुरूप उनमें शौर्य, स्वदेश-प्रेम, मानसिक दृढ़ता, दया, बुद्धि-कौशल आदि स्तुत्य गुणों का परिपाक हुआ है। बाबर से

---

१. देखिये 'अभागा', पृष्ठ १३, १४

२. देखिये 'आलिंगन', पृष्ठ ६९-७०, ७२

युद्ध करते समय पत्नी के दर्शनों की लालसा से भावुक होकर मेदिनीराय ने युद्ध से लौट कर चारित्रिक दुर्बलता का परिचय अवश्य दिया था, किन्तु मणिमाला ने पति-दर्शन के पूर्व ही चितारोहण करके उनके गौरव की रक्षा कर ली। यही तो अतीतकालीन वीरांगनाओं का आदर्श रहा है। बाबर, राणा सांगा, इब्राहीम लोदी आदि अन्य पात्रों का चरित्र उनकी इतिहास-विश्रुत विशेषताओं के अनुरूप ही चित्रित हुआ है। बाबर की वीरता, युद्ध-कौशल और दृढ़ इच्छा-शक्ति की लेखिका ने अनेकशः सराहना की है।[1] मणिमाला तथा मेदिनीराय के पारिवारिक सदस्यों तथा अन्य गौण पात्रों की चारित्रिक प्रवृत्तियों का भी प्रसंगानुकूल उचित उल्लेख हुआ है। लेखिका ने चरित्र-चित्रण के लिए रोचक एवं सार्थक कथोपकथन की आयोजना की ओर भी उचित ध्यान दिया है। संवादों में पात्रानुकल आचार-विचार, संस्कृति तथा भाषा का यथोचित ध्यान रखा गया है। उदाहरणार्थ बाबर की उक्तियों से उसकी महत्वाकांक्षाओं तथा दृढ़ व्यक्तित्व की झलक दृष्टिगत होती है और उसकी मलका की उक्तियों में गम्भीरता एवं दार्शनिक प्रवृत्ति के दर्शन होते हैं।[2] इसी प्रकार मणिमला के कथन उसकी वीरता तथा स्वदेश-प्रेम के परिचायक हैं।[3] कथोपकथन में स्वाभाविकता लाने के लिए लेखिका ने मुसलमान पात्रों की भाषा में उर्दू-शब्दों की प्रचुरता रखी है और मणिमाला, मेदिनीराय आदि हिन्दू-पात्रों के मुख से तत्सम-बहुला हिन्दी का प्रयोग कराया है।

सुश्री उमादेवी ने प्रस्तुत कृति में देशकाल के निर्वाह की ओर निष्ठापूर्वक ध्यान दिया है। इसमें त्रिविक्रमपुरी, नर्मदा तट के देवालय, नर्मदा-क्षेत्र के उत्तरी मार्ग के बीहड़ प्रदेश, अजमेर राज्य के शुष्क मरुस्थलीय प्रांगण, चंदेरी राज्य, पानीपत का मैदान खनवा का मैदान आदि स्थानों की भौगोलिक, ऐतिहासिक तथा प्राकृतिक स्थितियों का कथा-प्रसंग के अनुसार सराहनीय चित्रण किया गया है। लेखिका ने शिक्षा, धर्म, विवाह, राज्यारोहण, राज-दरबार, युद्ध आदि से सम्बद्ध तत्कालीन वातावरण का जाति, धर्म तथा स्थान के अनुरूप अंकन किया है। उन्होंने पात्रों की विशेषताओं का भी देशकाल के अनुरूप चित्रण किया है। उदाहरणार्थ निम्नलिखित पंक्तियों में बाबर के चरित्र का देशकाल-सापेक्ष वर्णन देखिए—"कट्टर सुन्नी मुसलमान होने के कारण केवल हिन्दुओं को ही नहीं वरन् शिया मुसलमानों को भी काफ़िर समझता था। इसलिए भारतीय युद्ध को जिहाद का स्वरूप देकर उसने अपने समस्त सैनिकों के रग रग में विजय और युद्ध का जोश भर दिया।"[4]

'आलिंगन' की रचना में लेखिका के समक्ष निम्नलिखित तीन उद्देश्य रहे हैं—(अ) राजपूत वीरों एवं वीरांगनाओं का गौरव-गान, (आ) भारत में मुगल-राज्य की स्थापना के कारणों का विश्लेषण, (इ) तत्कालीन रीति-नीतियों, भौगोलिक स्थितियों

१-२-३. देखिये 'आलिंगन', (अ) पृष्ठ ६८,६९,७४, (आ) पृष्ठ ६५, ७९, (इ) पृष्ठ ४
४. आलिंगन, पृष्ठ ६८

आदि का यथातथ्य चित्रण। प्रथम उद्देश्य की पूर्ति के लिए मेदिनीराय और मणिमाला के चरित्रों को केन्द्र-रूप में रखा गया है। द्वितीय उद्देश्य की अभिव्यक्ति के लिए हिन्दू-राजाओं की फूट, हिन्दुओं द्वारा मुसलमानों को परास्त करके क्षमा कर देना, बाबर की कठोर नीति और उसकी महत्वाकांक्षाओं आदि का चित्रण किया गया है। त्रिविक्रमपुरी, नर्मदा आदि स्थानों के भौगोलिक वर्णन एवं राज्याभिषेक-जैसी विभिन्न रीति-नीतियों के उल्लेख में तृतीय उद्देश्य की अभिव्यंजना हुई है।

इस उपन्यास में प्रायः साहित्यिक हिन्दी का प्रयोग हुआ है। लेखिका ने अस्त्र-शस्त्र-संचालन, शिरोबिन्दु, शांति-निमित्त, धरा-विलोड़ित आदि समस्त शब्दों[1] का बहुलता से प्रयोग किया है, किन्तु मुसलमान पात्रों की उक्तियों में उर्दू-शब्दों की भरमार रही है। 'इस मन्दिर से अतुल सम्पदा प्राप्त किया', 'साथ में १०० सिपाहियों की एक टुकड़ी भी लगा दिया', 'सेना को तैयार होने में मुश्किल से आध घंटे लगे होंगे' आदि वाक्यों में लिंग-वचन की अशुद्धियाँ लेखिका की असावधानी की सूचक है।[2] इस उपन्यास की शैली वर्णनप्रधान है, जिसमें यथाप्रसंग चित्रात्मकता (युद्ध-वर्णन, भौगोलिक चित्रण तथा राज्य-दरबार के दृश्यों में), नाटकीयता (संवादों तथा पात्रों के क्रिया-व्यापार के चित्रण में) तथा भावुकता का सुन्दर समावेश हुआ है। चित्रात्मक वर्णनों मे सर्वत्र प्रवाह के दर्शन होते हैं। यथा—"चारों ओर हृदय-विदारक दृश्य उपस्थित हो गया। तोपें आग बरसने लगी और अग्नि गोले सैनिकों को तुरन्त यमलोक पहुँचाने लगे। वातावरण की भयंकरता के पीछे करुण क्रन्दन और चीख के मारे कान फटने लगे।"[3] कहीं-कहीं दृश्य विशेष को मूर्त रूप देने के लिये लेखिका ने आलंकारिक शैली का भी प्रयोग किया है। यथा—"पुरी को तीन दिशाओं से घेरकर मंथर गति से प्रवाहित नर्मदा ऐसी परिलक्षित होती थी जैसी कोई अतुल मुन्दरी बच्चे को गोद में रखकर क्रीड़ा कर रही हो।"[4]

अतः यह कहा जा सकता है कि नारी-लेखिकाओं द्वारा लिखित ऐतिहासिक उपन्यासों में इस कृति का उल्लेखनीय स्थान है। इसमें मातृभूमि पर बलि होने की क्षत्रियोचित आन के प्रति असीम श्रद्धा व्यक्त की गई है। अतः राष्ट्रीय-सांस्कृतिक चेतना से अनुप्राणित होने के कारण भी इस उपन्यास का विशेष महत्त्व है। भाषा-शैली तथा कथा-शिल्प की दृष्टि से लेखिका ने इसे श्री जयशंकर प्रसाद के आदर्श के अनुरूप रखने का प्रयत्न किया है।

१७. कुमारी कमलेश सक्सेना

कुमारी सक्सेना ने 'शाप और वरदान' शीर्षक लघु उपन्यास की रचना की है, जिसमें केवल ६६ पृष्ठ है। इसमें नरेन्द्र और रूपा की सबसे छोटी पुत्री नीलिमा के जीवन

१-२. देखिये 'आलिंगन', (अ) पृष्ठ २, ५, ६, ७८, (आ) पृष्ठ ७, १६, ४४
३-४. आलिंगन, पृष्ठ ४५, २

वृत्त का चित्रण है। लेखिका ने उनकी अन्य पाँच सन्तानों के व्यक्तित्व को विशेष उभार न देकर विवाहादि का उल्लेख-मात्र किया है, जिसके कारण कथानक में वांछित परिपाक नहीं आ पाया है। वस्तुतः इस कृति में एक दीर्घ कहानी को उपन्यास के रूप मे पल्लवित करने का असफल प्रयास किया गया है, क्योंकि मूल कथा केवल ७२ पृष्ठों में समाप्त हो गई है : इसके बाद पार्वती ने नीलिमा द्वारा लिखित एक कहानी को पढ़कर उसकी सराहना-मात्र की है।

लेखिका ने उपन्यास के प्रारम्भ में नरेन्द्र और रूपा के सुखी गृहस्थ जीवन का चित्रण किया है। उन्होंने अपनी पुत्री नीलिमा का विवाह-सम्बन्ध स्थिर कर लिया, किन्तु सहसा नरेन्द्र की मृत्यु के फलस्वरूप सगाई टूट गई, क्योंकि अब दहेज में संशय था। नीलिमा ने विवाह न करके लोक-सेवा मे जीवन बिताने का निश्चय किया। कुछ समय पश्चात् उसकी प्रशंसा सुनकर उसके पूर्व-सम्बन्ध की ननद पार्वती उसको देखने आई और उसके रूप-गुणों पर मुग्ध हो गई। नीलिमा की 'मेरी मृत्यु के बाद' शीर्षक कहानी तो उसे अत्यधिक मार्मिक लगी। नीलिमा के यहाँ से जाते समय पार्वती उसके गुणों से अति प्रभावित थी, यही कथान्त है। स्पष्ट है कि कथानक मे रोचकता और गम्भीरता का अभाव है। लेखिका द्वारा समाविष्ट प्रासंगिक कथाये[1] (नीलिमा की सखी नीता द्वारा एक कन्या की प्रेम-कथा का वर्णन, नीलिमा द्वारा माता के समक्ष एक पड़ोसी द्वारा पत्नी की हत्या का विवरण, नीलिमा द्वारा लिखित कथा में कथानायिका मंजु का चरित्र-चित्रण) भी उपन्यास मे अपनी सार्थकता सिद्ध नही कर पाई है। उनके समावेश का एक ही लक्ष्य है—कथानक का येनकेनप्रकारेण विस्तार।

प्रस्तुत उपन्यास में मुख्य पात्रों (नरेन्द्र, रूपा, नीलिमा) को विविध गुणों से विभूषित दिखाया गया है, जिनकी प्रशंसा गौण पात्रों द्वारा स्थान-स्थान पर कराई गई है। चरित्र-चित्रण मे उतार-चढ़ाव अथवा संघर्ष न होकर संवाद-योजना तथा परिस्थिति-वर्णन द्वारा गुणो का आख्यान-मात्र किया गया है। यथा—"रूपा तो एक ही बात जानती थी और वह यह कि जीवन के संघर्ष के साथ आगे बढ़ते जाना। झंझा और भयंकर तूफ़ानों से लड़-लड़कर आगे चलते रहना।"[2] लेखिका ने कथोपकथन की योजना भी सुचारु रूप मे नहीं की है। संवादों मे निरर्थक विस्तार को प्रायः लक्षित किया जा सकता है,[3] तथापि नीलिमा और उसकी सखियों के वार्त्तालाप प्रायः सरस रहे है।

'शाप या वरदान' का प्रारम्भ रात्रिकालीन प्रकृति-सौन्दर्य के चित्रण से हुआ है। इसके अतिरिक्त देशकाल का निरूपण दो अन्य रूपों में हुआ है—एक ओर लेखिका ने

---

१. देखिये 'शाप या वरदान', पृष्ठ ३६-४१, ५२, ७२
२. शाप या वरदान, पृष्ठ ७१
३. देखिये 'शाप या वरदान', पृष्ठ २-५

दहेज-समस्या, नारी-शिक्षा-समस्या आदि का विविध स्थलों पर उल्लेख किया है और दूसरी ओर नीलिमाकृत कहानी 'मेरी मृत्यु के बाद' में कांग्रेस के 'भारत छोड़ो आन्दोलन' के फलस्वरूप हुए लाठी चार्ज का चित्रण किया है।[1] उपन्यास की भाषा में व्यावहारिकता को विशेष स्थान मिला है, अतः मुहावरों, उर्दू-शब्दों, सूक्ति-वाक्यों, लोक-व्यवहृत उपमाओं आदि को प्रायः प्रयुक्त किया गया है। उपन्यास में लेखिका का सन्देश यह रहा है कि जीवन के अभिशापों को भी वरदान के रूप में ग्रहण किया जाना चाहिये। रूपा का वैधव्य और पितृहीना नीलिमा के विवाह मे बाधा अभिशाप से कम नहीं है, किन्तु उन्होंने विषम परिस्थितियों में जिस साहस का परिचय दिया उससे यह सिद्ध हो जाता है कि दुःख को भी सुख में बदला जा सकता है। तथापि यह उल्लेखनीय है कि लेखिका ने इस महत् उद्देश्य का उचित रीति से निर्वाह नहीं किया है।

१८. सुश्री इन्दिरा 'नूपुर'

इन्दिरा जी ने 'सपने, मान और हठ' तथा 'वह कौन थी' शीर्षक दो उपन्यासों की रचना की है, जिनमे से प्रथम में सामाजिक कथानक को स्थान दिया गया है और दूसरा उपन्यास घटनाप्रधान तथा काल्पनिक है। सुविधा के लिए इनका पृथक्-पृथक् निरूपण उचित होगा।

(अ) सपने, मान और हठ

इस उपन्यास में १७३ पृष्ठ और ४३ परिच्छेद हैं। इसका कथानक इस प्रकार है—"संजय से विवाह करके शिला के स्वप्न साकार न हुए। इसका मुख्य कारण था शिला का सौतेला सप्तवर्षीय पुत्र परिमल, जिसे चाहकर भी वह अपना न बना पाई। परिमल की हठी प्रकृति तथा संजय के अविश्वास के कारण यह संभव न हो सका। नित्य की अप्रिय परिस्थिति से ऊबकर शिला पति-गृह त्यागकर एक कन्या-विद्यालय की मुख्याध्यापिका नियुक्त होकर रानीखेत चली गई। उसकी अनुपस्थिति ने परिमल के हृदय में उसके प्रति मातृ-स्नेह की आकुलता को जन्म दिया, फलतः वह छात्रावास में रुग्ण हो गया। शिला ने यह समाचार पाकर जब अपनी परिचर्या द्वारा उसे मृत्यु के मुख से लौटा लिया तो संजय का उसके प्रति पूर्व अविश्वास (पुत्र-स्नेह के प्रसंग में), रोष, मान सब स्वतः मिट गए और उसने अपने पूर्व-कृत्य पर अनुताप करते हुए पत्नी से लखनऊ लौट चलने का स्नेहपूर्ण आग्रह किया। इस प्रकार पुत्र का हठ और पति का मान वह जाने से शिला के मूच्छित स्वप्न सजग होकर खिल उठे।"

उक्त संक्षिप्त कथानक को उपन्यासोचित आकार प्रदान करते हुए लेखिका ने अखिल (संजय का मित्र), सावना (संजय की बाल-सहचरी, पति-त्यक्ता होने पर संजय

---

१. देखिये 'शाप या वरदान', (अ) पृष्ठ ३२, ५१, (आ) पृष्ठ ७३

की आश्रिता), आनन्द (शिला का प्रेमी एवं उससे विवाह का इच्छुक), रचना और आदेश (सुखी दम्पति, नैनीताल में शिला के सह-यात्री, बाद में उसके मित्र) आदि गौण पात्रों की जीवन-गाथाओं को प्रासंगिक रूप से उपन्यास में स्थान दिया है और मुख्य कथा-सूत्रों में कुशलता से संपृक्त किया है। इस कथानक में लेखिका का आदर्शवादिता के प्रति विशेष आग्रह रहा है। शिला और संजय के चरित्र उक्त तथ्य के प्रमाणरूप में उल्लेखनीय हैं। पति-गृह-त्याग के उपरान्त शिला के व्यक्तित्व से प्रभावित होकर अखिल ने उसे अपनी जीवन-सहचरी बनाने की कामना व्यक्त की, धनी-मानी इंजीनियर आनन्द ने भी उससे अपनी पत्नी बनने का आग्रह किया, किन्तु वह सीता और सावित्री की भाँति मन में संजय के चरणों में प्रीति का जल अर्पित करती रही (चाहे संजय ने कभी उसे पत्नी का प्रेम तथा आदर प्रदान नहीं किया था)। उधर संजय साधना के घनिष्ठ सम्पर्क में रहकर भी चरित्र की दृष्टि से उससे निर्लिप्त रहा। आत्माभिमान के कारण वह शिला को मनाने नैनीताल तो न गया, किन्तु मन-ही-मन वह उसी की स्मृति मे लीन रहता था।

गौण पुरुष पात्रों में अखिल का स्नेहपूर्ण भावुक व्यक्तित्व तथा समाज-सेवा की एकाग्रता, आनन्द का विदेशी रंग में रंजित चंचल व्यक्तित्व और आदेश का पत्नी-प्रेम उल्लेखनीय है। गौण पात्राओं मे साधना का त्याग और कर्मठता, और रचना की प्रेम-मयी भावुक भावनाएँ विशेषतः उल्लेखनीय हैं। उक्त पात्रों मे लेखिका ने जहाँ अवसरा-नुकूल दिव्य विशेषताओं का समावेश किया है, वहाँ अनेकशः उनकी मानवोचित दुर्बलताओं का संकेत देकर उन्हें अतिमानव होने से भी बचा लिया है। बालक परिमल के बाल-मनोविज्ञान के चित्रण में लेखिका विशेष सफल रही हैं। कथानक में सन्निविष्ट घटनाएँ रोचक है, किन्तु उनका प्रमुख लक्ष्य पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं को गति प्रदान करना रहा है।

पात्रों के कथोपकथनों मे उनके मनोभावों, सिद्धान्तों एवं आदर्शों की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है। छात्रावास में परिमल के अपने मित्र रंजन के प्रति वार्त्तालापों में उसकी शिला के प्रति व्याकुलता, अपने पूर्व हठ के लिए अनुताप आदि भावों का मार्मिक उल्लेख हुआ है।[1] आलोच्य संवाद सर्वत्र पात्रानुकूल रहे हैं। उदाहरणार्थ आनन्द की उक्तियों मे विदेशी सभ्यता तथा विदेशी भाषा के प्रति उसके प्रेम के दर्शन होते हैं तो शिला के उसके प्रति प्रत्युत्तरों में उसकी चारित्रिक दृढ़ता, भारतीय गौरव आदि विशेषताओं का परिचय प्राप्त होता है।[2] अखिल के प्रति शिला की निम्नलिखित उक्ति देशकाल के प्रसंग मे उद्धरणीय है—"अखिल बाबू ! वह दिन सपने हो गए जब नारी को पत्नीत्व की दुहाई देकर पुरुष पतली डाल-सा झुका लेता था। आज उसकी भी अपनी एक आस्था है, एक विश्वास

१. देखिये 'सपने, मान और हठ', पृष्ठ १२०-१२२
२. देखिये 'सपने, मान और हठ', पृष्ठ १२५-१३१, १३८-१४३

है, एक अभिमान है।"[1] इस उपन्यास का लक्ष्य भारतीय नारी के आदर्श गौरव का अंकन करना है। वर्तमान जागरूक नारी प्राचीन नारी की भाँति पति की प्रत्येक इच्छा के सम्मुख चाहे मस्तक नहीं झुका पाती, किन्तु फिर भी चरित्र की दृष्टि से उसका स्तर पूर्ववत् महान है, संसार का कोई भी लालच उसे उसके सीता-सावित्री के चरित्रादर्श से भ्रष्ट नहीं कर सकता।[2] पति को पत्नी की भावनाओं को समझकर उसके प्रति अनुकूल आचरण करना चाहिए, अन्यथा पत्नी की अप्रसन्नता पर सारे परिवार की सुख-शान्ति के नष्ट होने की सम्भावना है। भारतीय नारी को अत्यन्त उच्च धरातल पर अवस्थित करने की कामना से लेखिका ने शिला के चरित्र को आवश्यकता से अधिक आदर्शवादी रखा है। अपनी कहानियों की भाँति प्रस्तुत उपन्यास में भी उन्होंने जीवन के सुख-दुःख को सहज एवं भावपूर्ण धरातल पर चित्रित किया है। लेखिका ने सरल एवं पात्रानुकूल भाषा-शैली में कथानक को अत्यन्त स्वाभाविक रूप मे विकसित किया है।

(आ) वह कौन थी

इस उपन्यास में पुनर्जन्म के सिद्धान्त में विश्वास रखते हुए एक काल्पनिक कथा प्रस्तुत की गई है। उपन्यास की रचना करते समय लेखिका श्री हैगर्ड की 'आयशा' शीर्षक कृति से अप्रत्यक्ष रूप में प्रभावित रही हैं।[3] प्रस्तुत उपन्यास में सिद्धान्त नामक वयोवृद्ध पात्र की जीवनकथा को आत्मकथा की शैली में व्यक्त किया गया है। किन्तु उपन्यास का मुख्य पात्र सिद्धान्त न होकर शरद है, जो आयु में पुत्र के समान होने पर भी सिद्धान्त का अभिन्न मित्र है। उपन्यास मे चार पात्र मुख्य हैं, जिनके पूर्वजन्म का पूर्ण इतिवृत्त न देकर वर्तमान जीवन और दो सहस्र वर्ष पूर्व के जीवन की विविध प्रसंगो मे चर्चा की गई है। ये पात्र हैं—शरद, महामाया, नवीना और सिद्धान्त, जो दो सहस्र वर्ष पूर्व क्रमशः उदयन, मल्लिका, मागन्धी और रत्नाकर थे। इनमें से महामाया को अद्भुत जीवन-शक्ति प्राप्त थी, किन्तु उसके अतिरिक्त अन्य तीनो पात्र पूर्व जन्मों के इत्तिवृत्त से सर्वथा अभिज्ञ थे। उपन्यास की मूल कथा को प्रारम्भ करने से पूर्व लेखिका ने पृष्ठभूमि के रूप में यह उल्लेख किया है कि शरद और सिद्धान्त को विश्व-भ्रमण करते समय कोर की गुफाओं में मल्लिका मिली थी—वही मल्लिका, जो दो सहस्र वर्ष पूर्व उदयन (शरद) से प्रेम करती थी। इस बार भी उन दोनों के प्रेम की सफल परिणति से पूर्व ही मल्लिका की मृत्यु हो गई, किन्तु वह पुनः मिलने का आश्वासन देती गई।

मल्लिका के विरह में विह्वल होकर शरद ने सिद्धान्त की सहायता से उसकी खोज आरम्भ की, क्योंकि उन्हें विश्वास था कि देवी मल्लिका का पुनर्जन्म अवश्य हुआ है। विषम

---

१. सपने, मान और हठ, पृष्ठ ६१

२. देखिये 'सपने, मान और हठ', पृष्ठ १४३

३. देखिये 'वह कौन थी', आमुख, पृष्ठ ५

पर्वतीय भागों को पार करते हुए अन्ततः वे कुलू प्रदेश पहुँचे। इस प्रकार उन्होंने प्रायः बीस वर्षों तक अथक साधना की और इस सम्पूर्ण अवधि में एक अदृश्य शक्ति उनकी सहायता करती रही, जो अन्य कोई न होकर महामाया (मल्लिका) थी। कुलू प्रदेश में वे नवीना (मागन्धी) के अतिथि रहे, जो शरद पर आसक्त हो गई, किन्तु परिस्थितियों से भीषण संघर्ष करते हुए वे महामाया के पास पहुँचे। इसके उपरान्त नवीना और महामाया के संघर्ष, नवीना की मृत्यु, महामाया द्वारा निश्चित की गई संयम-अवधि का परिपालन न करने के कारण शरद की मृत्यु, इस दुःख से अवसन्न होकर महामाया द्वारा शरीर-त्याग आदि घटनाओं का रोचक वर्णन किया गया है। कथानक में स्वाभाविकता लाने के लिए लेखिका ने प्रकृति के मनोरम चित्रों की अनेकशः सृष्टि की है, किन्तु इनके अतिरिक्त उपन्यास में सर्वत्र कल्पना का ऐसा प्रवाह है कि आयोजित दृश्यों को असंभाव्य मानना ही अधिक उपयुक्त होगा। शरद द्वारा स्वप्नों में भविष्य-दर्शन और महामाया द्वारा अनेक वार अमानवीय शक्ति का प्रदर्शन ऐसी ही घटनाएँ हैं।[1] यहाँ एक असगति का निर्देश करना अप्रासंगिक न होगा—महामाया से हजारों मील दूर भेड़िये से संघर्परत शरद चार घण्टे बाद मल्लिका के पास लौट आया।[2] लेखिका ने ऐसी ही अनेक अविश्वसनीय बातों को रोचकता और आध्यात्मिकता के संदर्भ में व्यक्त किया है, जिससे उपन्यास की गरिमा को हानि पहुंची है और उसका कोई निश्चित उद्देश्य हमारे समक्ष स्पष्ट नहीं हो पाया है।

कथानक की विचित्रताओं के फलस्वरूप प्रस्तुत उपन्यास में चरित्र-चित्रण भी स्वाभाविक धरातल पर स्थिर नहीं रह सका है। शरद और सिद्धान्त का निश्छल सौहार्द, मल्लिका के प्रति शरद का भावुकतामिश्रित प्रेम, शरद के प्रति नवीना की वासना आदि कुछ ही प्रसंग ऐसे हैं, जिन्हें यथार्थ की भूमि पर अवस्थित माना जा सकता है। अन्यथा मीना के चाचा बन्धुल, महामाया, उसके सहायक लुब्धक आदि का व्यक्तित्व इतना रहस्यान्वेष्टित है कि न तो उसे यथार्थ माना जा सकता है और न ही आदर्श। उन सबका व्यक्तित्व मानो एक ऐसा इन्द्रजाल है, जिससे लेखिका पाठकों को सहज सम्मोहित कर लेना चाहती है। कुलू प्रदेश के मार्ग में शरद से मिलनेवाला देवदत्त भी ऐसा ही रहस्यमय व्यक्ति है। अन्ततः यह कहना उचित होगा कि यद्यपि लेखिका ने कथा-विकास के साथ-साथ चरित्र-चित्रण की ओर भी यथोचित ध्यान दिया है, तथापि उनके पात्र सर्वत्र वांछित मार्मिक प्रभाव नहीं डाल पाते, क्योंकि उनके चरित्र का निर्माण प्रायः असंगतियों अथवा अस्वाभाविकताओं की आधार-भूमि पर हुआ है।

यद्यपि प्रस्तुत उपन्यास का कथानक अघटित अस्वाभाविक प्रसंगों का जाल है और कतिपय पात्रों में अमानवीय शक्ति के प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष चिह्न विद्यमान हैं, तथापि

---

१. देखिये 'वह कौन थी', पृष्ठ १२, ३६, १६८, १७८, १६८

२. देखिये 'वह कौन थी', पृष्ठ १६०

कथोपकथन के सौन्दर्य का मूल्यांकन इन दोनों तत्त्वों को परोक्ष रखकर भी किया जा सकता है। सर्वप्रथम उल्लेखनीय विशेषता यह है कि लेखिका ने संवादों में घटनाओं अथवा चारित्रिक प्रवृत्तियों का वैविध्यमूलक कथन किया है : शरद के चरित्र की दृढ़ता और सिद्धान्त की उत्कट सहयोग-भावना का अनुमान उनके संवादों से सहज ही हो जाता है। इस कृति के संवादों का एक अन्य गुण यह है कि वे सहृदय की जिज्ञासा को निरन्तर प्रवुद्ध रखते हैं अर्थात् कथानक में रोचकता और सजीवता के संचार में उनका अनन्य सहयोग है। लेखिका ने कथोपकथन में एक अन्य विशेषता यह रखी है कि वे देशकालानुरूप हैं—शब्दों को ही नहीं, पात्रों की भाव-भंगिमाओं और आचरण को भी तदनुरूप रखा गया है। यथा—

"उस निस्तब्धता के बीच अचानक ही महामाया की आवाज़ गूंज उठी—'महामाया के प्रिय की ओर देखो !'

'महामाया के स्वामी का स्वागत है!' पुजारियों ने एक साथ झुकते हुए कहा।"[1]

आलोच्य उपन्यास मे देशकाल के दो पक्ष हैं—एक ओर प्रकृति के कतिपय दृश्यों को साकार करने का प्रयत्न किया गया है और दूसरी ओर कुलू प्रदेश और महामाया की नगरी की सामाजिक एवं शासनिक प्रथाओं का कल्पना-कौशल द्वारा अतिरंजित वर्णन किया गया है। इनमें से प्रथम की समीक्षा ही विशेष लाभदायक होगी, क्योंकि लेखिका की विशुद्ध कल्पना होने के कारण द्वितीय पक्ष की विवेचना समकालीन अथवा तत्कालीन देशकाल में से किसी भी दृष्टि से संभव नहीं है। प्राकृतिक वातावरण की अभिव्यक्ति लेखिका ने दोनों रूपों में की है—उन्होंने प्रकृति के कोमल रूपों का तो मनोहारी विन्यास किया ही है,[2] उसके उग्र चित्र (भयंकर शीत, राशि राशि अंधकार, हिमखंड-क्षरण आदि) भी प्रस्तुत उपन्यास मे विरल नहीं हैं।[3] तथापि यह स्वीकार करना होगा कि कथानक का सम्बन्ध पर्वत-प्रदेश से रहने पर भी इस कृति में प्रकृति-निरूपण को प्रतिनिधि स्थान नहीं मिला है।

प्रस्तुत उपन्यास का मुख्य उद्देश्य पाठक को पुनर्जन्म के सिद्धान्त के प्रति आस्थावान् बनाना है, किन्तु इसमें उन्हें यथोचित सफलता नहीं मिली है। कारण स्पष्ट है—यदि उन्होंने प्रस्तुत कथानक को ऐतिहासिकता और आध्यात्मिकता का बाना न पहनाकर इसे विशुद्ध सामाजिक स्तर पर प्रस्तुत किया होता तो वे निश्चय ही अधिक सफल होतीं। ग्रन्थ के आमुख में उन्होंने पुनर्जन्म की जिन दो घटनाओं का उल्लेख किया है,[4] उन्हीं को अथवा वैसी ही किसी अन्य घटना को पल्लवित करके वे अधिक कृतकार्य हो सकती थीं। उपन्यास का एक अन्य उद्देश्य वासना के गर्हित रूप की तुलना में प्रेम की पवित्रता

---

१. वह कौन थी, पृष्ठ १४४

२-३. देखिये 'वह कौन थी', (अ) पृष्ठ १६, २६, (आ) पृष्ठ ३४, ३७, ४३

४. देखिये 'वह कौन थी', आमुख, पृष्ठ ३-४

का दिग्दर्शन कराना है। नवीना (मागन्धी) और महामाया (मल्लिका) के भाव-वैषम्य में इसी उद्देश्य की सफल व्यंजना हुई है। लेखिका ने शरद और सिद्धान्त के सौहार्द को भी साभिप्राय चित्रित किया है, अतः इसे भी प्रस्तुत कृति का उद्देश्य माना जा सकता है।

प्रस्तुत उपन्यास का कथानक प्रायः दो सहस्र वर्षों की अवधि में गतिमान रहा है, अतः इस बात की पर्याप्त सम्भावना थी कि इसकी भाषा प्रसाद जी की भाषा की भाँति किंचित् जटिल हो, किन्तु वस्तुस्थिति यह नहीं है। लेखिका ने भाषा को प्रायः व्यावहारिक रखा है, तथापि सामान्य सामाजिक उपन्यासों की अपेक्षा संस्कृत के तत्सम शब्दों के अधिक प्रयोग को भी इसमें सहज ही लक्षित किया जा सकता है। दूसरी ओर इसमें कुलू प्रदेश की रीति-नीतियों को व्यक्त करनेवाले कतिपय प्रादेशिक शब्दों का प्रयोग भी अपेक्षित हो सकता था, किन्तु आंचलिक उपन्यास न होने के कारण इसे लेखिका की अनुपलब्धि नहीं माना जा सकता। वैसे, उनकी भाषा में शब्द-लालित्य, संक्षिप्त वाक्य-विन्यास, भाषा की सजीव व्यावहारिकता आदि गुणों को सहज ही देखा जा सकता है।

उपर्युक्त विवेचन के अनन्तर यह कहना अप्रासगिक न होगा कि इन्दिरा 'नूपुर' ने प्रस्तुत उपन्यास मे कथा-शिल्प की दृष्टि से एक नवीन प्रयोग प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है। कथानक के संगठन के विषय में हमारा उनसे मतभेद अवश्य है, किन्तु उपन्यास के अन्य तत्वों का निर्वाह करने की संभावनाएँ उनमे है, इसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता।

१६. सुश्री शकुन्तला शुक्ल

सुश्री शकुन्तला शुक्ल ने 'अंधेरे उजाले के फूल' तथा 'पंथ का जल' शीर्षक दो सामाजिक उपन्यासों की रचना की है। इनमें पावन प्रेम एवं चारित्रिक दृढता का संदेश ध्वनित है।

(अ) अंधेरे उजाले के फूल

श्रीमती शुक्ल ने इस उपन्यास की रचना १३९ पृष्ठों और २२ परिच्छेदों में की है। इसका कथानक गिरीश एवं सत्या के चतुर्दिक् घूमता हुआ पाठकों के लिए चारित्रिक दृढ़ता एवं मानसिक शक्ति का सदेश ध्वनित करता है। गिरीश विधुर युवक था और सत्या बाल-विधवा युवती। परिस्थिति-चक्र के परिणामस्वरूप एक दिन दोनों का परिचय हुआ और अनायास ही उनमें भ्रातृ-भगिनी का पावन स्नेह विकसित होने लगा। त्रिवेणी-स्नान के अवसर पर सत्या के एकमात्र सम्बन्धी वृद्ध नाना भीड़ में कुचले गये, तो निराश्रिता सत्या गिरीश के घर उसकी छोटी बहिन की भाँति रहने लगी। गिरीश का मित्र चन्द्रकान्त (धनी, मानी एवं प्रियदर्शी युवक) सत्या से हृदय से प्रेम करता था, किंतु सत्या अपने को मृत पति की धरोहर समझकर सांसारिक मोह-माया की ओर विरक्त एवं

निर्विकार रहती आई। उसके दृढ़ निश्चय से निराश चन्द्रकान्त ने बंगाली कन्या हेम से विवाह कर लिया, जो निराश्रिता होने के कारण सत्या के ही समान थी। उसी त्रिवेणी-पर्व में उसके माता-पिता भी कुचले गये थे और चन्द्रकान्त को अपनी पुत्रियों का भार सौंप गये थे। वह अपनी दोनों वहिनों के साथ उसी के घर रहती थी और उससे प्रेम करती थी। चन्द्रकांत की ममेरी वहिन वन्दना गिरीश से प्रेम करती थी, किन्तु गिरीश अपनी मृत पत्नी की स्मृति को लेकर ही सन्तुष्ट था। अन्त में गिरीश के आग्रह से वन्दना ने शेखर से विवाह कर लिया, जो एक सरलहृदय और सेवापरायण युवक था। उपर्युक्त मुख्य कथा के अतिरिक्त इस उपन्यास में प्रसंगवश अनेक गौण कथाओं का भी समावेश हुआ है—

(अ) गिरीश के मित्र अतुल की विधवा साली वीणा की कथा (पति की मृत्यु के उपरान्त सरल और सादा जीवन, किन्तु सुरेश नामक एक युवक द्वारा उससे वहिन का सम्बन्ध स्थापित करके बाद में विश्वासघात, फलस्वरूप एक पुत्री का जन्म, वीणा की उसके प्रति घृणा, पुरुष जाति के प्रति विद्रोह आदि)।

(आ) गिरीश की रिश्ते की वहिन सावित्री दीदी की कथा (पति द्वारा अत्याचार होने पर भी उनके प्रति एकनिष्ठ प्रेम, वेदना में घुलकर मृत्यु आदि)।

(इ) गिरीश के पड़ोसी मि० वर्मा तथा उनकी पत्नी किरण की कथा (किरण बाँझ थी, किन्तु मातृत्व की इच्छा उसमें इतनी प्रबल थी कि एक गुड्डे को अपना बच्चा मानकर उसकी सेवा-शुश्रूषा में लीन रहकर पागलों का सा आचरण करती रहती थी)।

आलोच्य लेखिका ने प्रमुख एवं गौण कथाओं का समुचित सयोजन किया है, फलतः कथानक सुगठित एवं सन्तुलित हो सका है। इस कृति में घटनाओं की अपेक्षा चरित्र-चित्रण को प्राथमिकता दी गई है। पात्रों की एक प्रमुख विशेषता, जो सबमे समान रूप से है, यह है कि वे जिससे भी अनुराग करते हैं एकनिष्ठ होकर करते हैं, चाहे उनका प्रेमपात्र उनसे विरक्त ही क्यों न रहे। सत्या, गिरीश, वन्दना, चन्द्रकांत, हेम, शेखर आदि सभी मुख्य पात्र इसी प्रकार के हैं। सत्या और गिरीश में तो आदर्श प्रेम की पराकाष्ठा है, क्योंकि वे अपने मृत जीवन-साथियों की स्मृति में ही लीन रहते है। सत्या को तो लेखिका ने देवी के पावन सिंहासन पर प्रतिष्ठित कर नारी-सुलभ ईर्ष्या-द्वेष तथा राग-विराग से मुक्त रखा है, किन्तु हेम, वन्दना, वीणा, सावित्री आदि अन्य पात्राओं के पक्ष में उन्होंने नारी-मनोविज्ञान-सम्मत सहज चित्र अंकित किये हैं। इसी प्रकार पुरुष पात्रों में गिरीश के अतिरिक्त चन्द्रकांत, शेखर आदि पात्रों के चरित्र मनोवैज्ञानिक बन पड़े हैं। फिर भी यह तो मानना ही पड़ेगा कि लेखिका ने अपने पात्र-पात्राओ के सद्गुणों को ही विशेष उभारा है, दुर्बलताओं की ओर उतना ध्यान नहीं दिया।

पात्रों के व्यक्तित्व एवं परिस्थितिपरक विविधता को लक्ष्य में रखते हुए लेखिका ने लघु एवं सजीव कथोपकथनों का विधान किया है। पात्रों की उक्तियाँ एक ओर कथानक को नाटकीय सौन्दर्य से विभूषित कर रही हैं, दूसरी ओर उनमे पात्रों के आंतरिक

भाव सहज ही प्रतिविम्बित हो उठे हैं। उदाहरणार्थ चन्द्रकांत और वीणा के कथन प्रायः व्यंग्य की तीव्रता, तर्क-वितर्क की आतुरता एवं उनके अन्तर के विद्रोह के द्योतक है,[1] तो गिरीश और सत्या की उक्तियाँ उनके सरल विश्वास, कर्त्तव्यपरायणता एवं धार्मिक श्रद्धा से ओतप्रोत हैं।[2]

प्रस्तुत कृति में लेखिका ने इस समस्या पर विचार किया है कि क्या भारत की प्राचीन संस्कृति के अनुरूप युवती विधवा अथवा युवक विधुर को संयम या वैराग्य का जीवन बिताना चाहिये अथवा प्रगतिशील सुधारवादी विचारो के अनुकूल दूसरा विवाह कर लेना चाहिये। सत्या एवं गिरीश के जीवन को आदर्श रूप में रखते हुए उक्त समस्या का जो समाधान लेखिका ने दिया है, यह है कि यदि विधवा अथवा विधुर संयम एवं सदाचार से रह सकें, उनमें इतनी मानसिक दृढ़ता हो कि वे समस्याओं से अकेले जूझ सकें तो उनके लिए विवाह निरर्थक है। इस प्रसंग मे सत्या के समक्ष व्यक्त की गई गिरीश की प्रस्तुत उक्ति उद्धरणीय है—"सुनो सत्या, विधवा हो जाना ही नारी-जीवन की चरम व्यर्थता नही है और न कोई भी जीवन सम्पूर्णतः सार्थक अथवा व्यर्थ होता है। जीवन में पूर्णता तथा अपूर्णता का चक्कर चलता ही रहता है। जीवन के सामान्य स्तर से उठकर विचार करने की क्षमता जिसमें आ सकी, वह जीवन कभी भी व्यर्थ नही कहा जायगा।"[3]

जैसा कि शीर्षक से ध्वनित है, जीवन की सुख-दुःखमयी अनुभूतियों को मुखरित करना आलोच्य कृति का लक्ष्य है। मानवता का आदर्श यही है कि शिव की भाँति गरल का पान कर दूसरों के कष्ट-निवारणार्थ अपने स्वार्थों का बलिदान करे। आलोच्य कृति के आदर्श पात्र (सत्या और गिरीश) आपत्तियो मे भी धैर्य नही खोते और सुख में संयम का पल्ला पकड़े रहते हैं। यही निर्लिप्तता, जो भारतीय धर्म-ग्रन्थों का सार है, प्रस्तुत उपन्यास का संदेश है। लेखिका कि यह दृढ़ धारणा है कि मनुष्य में दुर्बलताएँ होती हैं, किन्तु उनसे ऊपर उठना ही मानवता है।

विवेच्य उपन्यास की भाषा तत्सम-बहुला एवं समस्त पदों से सुगुम्फित होने पर भी क्लिष्ट नहीं है, क्योकि उसमे वाक्य प्रायः लघु एवं सुनियोजित हैं। सूक्ति-वाक्यों का प्राचुर्य आलोच्य भाषा-शैली की गम्भीरता का द्योतक है। यथा—(अ) "स्नेह एक स्पर्श-मणि-सा मन की रिक्तता में स्वर्ण ही स्वर्ण भर देता है,"[4] (आ) "यह मन भी मानो एक छोटा-मोटा आकाश है—धूल, गर्द, बादल, विजली और इन सबके अन्त मे वही स्वच्छ निर्मेघ अम्बर।"[5] पात्रों की विचारधारा का आलोचन करते समय लेखिका ने प्रायः शेक्सपियर आदि अंग्रेजी कलाकारों अथवा बंगला के कवियों की उक्तियाँ यत्र-

१. देखिये 'अंधेरे उजाले के फूल', पृष्ठ २३-२५, ३०-३१, ७६
२. देखिये 'अंधेरे उजाले के फूल', पृष्ठ ३६-३७, ६७
३-४-५. अंधेरे उजाले के फूल, पृष्ठ २१, १६, ६८

तत्र उद्धृत की हैं,[1] जो अवसरानुकूल उपयुक्त प्रतीत होती हैं।

(आ) पंथ का जल

इस उपन्यास की पृष्ठभूमि को लेखका ने इन शब्दों में व्यक्त किया है—"मन ने अपने आस-पास के जीवन की झलकियाँ देख-देखकर, उनसे कुछ सूखे-हरे तिनके चुन-चुनकर यह छोटा-सा नीड़ बना दिया है, जिसके पंछियों के कलरव में कहीं उल्लास है तो कहीं विषाद, कहीं रोना तो कहीं मुस्कान, वह भी आँसुओं से भीगी हुई।"[2] कुंठाओं, असन्तोषों तथा अस्थिरचित्त व्यक्तित्व के प्रतीक धीरेन्द्र को लेखिका ने 'पंथ का जल' की संज्ञा दी है। धीरेन्द्र अपनी पत्नी मीरा को हृदय से चाहता था, किन्तु कायरतावश अपनी माता तथा बहिन के अत्याचारों का विरोध न कर पाने से वह उसे प्रसन्न न रख सका और दो बालकों को जन्म देने के उपरान्त मीरा क्षयरोगिणी होकर स्वर्ग सिधार गई। धीरेन्द्र ने मीरा की सखी सुषमा से विवाह की प्रार्थना करके अपने अभावग्रस्त जीवन की खाई को भरने का प्रयत्न किया, किंतु सुषमा उसे न अपना सकी क्योंकि वह संयत, विवेकशील तथा अध्यवसायी केशव को चाहती थी। सुषमा की ओर से निराश होकर धीरेन्द्र ने केशव के मित्र डॉ० वर्मा की बहिन नीला से विवाह की इच्छा व्यक्त की, किंतु नीला भी केशव को हृदय दे बैठी थी। परिस्थितियों के उतार-चढ़ाव से केशव और सुषमा का विवाह हो गया, नीला ने आजन्म ब्रह्मचारिणी रहने का प्रण किया और धीरेन्द्र का जीवन मरुस्थल की भाँति शून्य ही रहा। उपर्युक्त मुख्य कथा के अतिरिक्त केशव की बहिन कांता तथा उसके पति हरीश के दाम्पत्य जीवन के सुख-दुःख की प्रासंगिक कथा भी गौण रूप से प्रस्तुत की गई है। विवाह के बाद हरीश कुछ समय तक अपने कार्यालय की सहकर्मिणी मंजु के प्रति आकृष्ट रहा, किन्तु पत्नी के गर्भवती होने पर मंजु के प्रति विमुख हो गया। उक्त दोनों कथाएँ सुगुम्फित हैं। पूर्वापर क्रम की सुशृंखलित योजना द्वारा लेखिका ने कथानक को सुगठित तथा रोचक बनाया है। घटना-बाहुल्य की अपेक्षा उन्होंने पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं के प्रकाशन पर बल दिया है। विषय की दृष्टि से प्रस्तुत कृति का क्षेत्र सीमित है। इसमें केवल सामाजिक क्षेत्र का स्पर्श किया गया है, वह भी विविध दृष्टिकोणों से नहीं। लेखिका ने केवल अन्तर्जातीय विवाह की समस्या प्रस्तुत की है, समकालीन ज्वलन्त दृष्टान्तों का इसमें अभाव है। फिर भी, कथानक की सजीवता तथा सुगुम्फन इसकी उल्लेखनीय विशेषताएँ हैं।

धीरेन्द्र तथा केशव की चारित्रिक विशेषताओं की तुलना इस उपन्यास का लक्ष्य है। धीरेन्द्र अव्यवस्थित चित्त का रूप-लोलुप पुरुष है तो केशव संयत, विवेकशील तथा

---

१. देखिये 'अंधेरे उजाले के फूल', पृष्ठ २२, ५२, ६६, १०१, १०७

२. पंथ का जल, दो शब्द, पृष्ठ ७

सागर की भाँति गम्भीर प्रकृति का व्यक्ति है। अन्य पुरुष पात्रों में पत्नी से विश्वासघात करनेवाला रूप-लोभी हरीश धीरेन्द्र की कोटि का है और डॉक्टर वर्मा धीरता, गम्भीरता तथा सज्जनता में केशव के समकक्ष ठहरते हैं। नारी पात्रो के चरित्र-चित्रण में लेखिका को अपेक्षाकृत अधिक सफलता मिली है। मीरा, सुषमा, कान्ता तथा नीला के मनोभावो एवं क्रिया-कलाप में नारी-मनोविज्ञान के अनुरूप ममता, सौहार्द, एकनिष्ठता, सहनशीलता आदि गुणो का उचित निर्वाह किया गया है। सुषमा का प्रखर तेजस्वी व्यक्तित्व उसे सबसे पृथक् करता है। हरीश को पथभ्रष्ट करनेवाली मंजु उस तितलीनुमा नारी वर्ग की प्रतीक है जो बाह्य सौन्दर्य को प्रसाधनादि से अलंकृत करके पर-पुरुषों का धन हड़पने की इच्छा से समाज को कलंकित करती है। विवेच्य कृति के सभी पात्र मानवत्व की सीमा में रहकर ही अपने गुणों एवं दुर्गुणो का प्रकाशन करते हैं। लेखिका ने चरित्र-चित्रण के लिए सवाद-योजना, प्रत्यक्ष-कथन तथा मनोभावो के चित्रण को मुख्य साधन के रूप में ग्रहण किया है। निम्नस्थ पंक्तियो में तीनों प्रकार के उद्धरण प्रस्तुत हैं—

(अ) लेखिका की टिप्पणी—"व्यवस्थित केशव की भाँति उसका कमरा भी व्यवस्थित था।"[1]

(आ) धीरेन्द्र के विषय में केशव की सुषमा के प्रति कथित उक्ति—"ऐसे अव्यवस्थित मन के लोगों का प्रभाव प्रायः अच्छा नहीं पड़ता। उनके निकट के लोगों को भी प्रायः कष्ट उठाना पड़ता है।"[2]

(इ) सुषमा के दृढ निश्चय का अंकन—"उसने सोच लिया कि अपने प्रेम और निष्ठा को बलि देकर भी वह अपनी माँ की अन्तिम इच्छा पूरी करेगी।"[3]

पात्रानुकूल संवाद-योजना मे आलोच्य लेखिका विशेष कुशल हैं। ऐसे संवादों में पात्रो की तात्कालिक मनःस्थिति की उपयुक्त अभिव्यक्ति हुई है। धीरेन्द्र के दूसरे विवाह की इच्छुक उसकी माता के उसके प्रति संवाद[4] तथा सुषमा को लेकर धीरेन्द्र का केशव के प्रति व्यंग्यपूर्ण वार्त्तालाप[5] इस प्रसंग में उल्लेखनीय हैं। केशव-जैसे संयत पात्रो के कथोपकथन उसकी नैतिक विवेकशील वृत्ति तथा गाम्भीर्य के परिचायक हैं। अधिकाश कथोपकथन कथानक के विकास मे सहायक रहे हैं। निरर्थक वार्त्तालाप को लेखिका ने कहीं भी प्रश्रय नहीं दिया है। 'धीरेन्द्र बीच मे ही फूट पड़ा', 'माँ के तेवर भी बदले', 'धीरेन्द्र मुस्कराया', 'माँ और भी उत्तेजित हो उठी' जैसे चित्रात्मक वाक्य[6] संवाद-योजना को नाटकीय बनाने में विशेष सफल रहे हैं।

सुश्री शकुन्तला शुक्ल ने प्रस्तुत उपन्यास मे अन्तर्जातीय विवाह की समस्या को उठाया है। यद्यपि भारत में जाति-पाँति की संकीर्णताएँ अब उतनी व्यापक नहीं हैं,

---

१-२-३. पंथ का जल, पृष्ठ २५, ३३, १४९

४-५. देखिए 'पंथ का जल', पृष्ठ ५५, ११०-१११

६. पंथ का जल, पृष्ठ ५५

तथापि संस्कारग्रस्त व्यक्ति उनसे चिपके रहना चाहते हैं। सुषमा और केशव की प्रेम-वार्त्ता को जान लेने पर भी सुषमा की माता ब्राह्मण होकर कायस्थ को जामाता बनाने के लिए तैयार न हो सकी। अन्त में परिस्थितिवश उनका भय दूर हुआ और उन्होंने स्वयं केशव को बुलाकर सुषमा को उसे सौंपते हुए कहा—"जीवन-भर मैं बड़ी कट्टर रही हूँ, पर अब लगता है यह सब भ्रम है। जाति के भेद भगवान् ने तो नहीं बनाए, फिर उन्हें लेकर इतनी खींचतान क्यों की जाय ?"[1] सामाजिक वातावरण को स्पष्ट करने के लिए लेखिका ने कहीं-कहीं प्रकृति का आलंकारिक चित्रण भी किया है। अन्तर्जातीय विवाह को प्रोत्साहन देने के अतिरिक्त मानव-मन का विश्लेषण करना भी लेखिका का उद्देश्य रहा है। उन्होंने धीरेन्द्र तथा केशव की तुलना द्वारा यह सिद्ध किया है कि धीरेन्द्र-जैसे अस्थिर-चित्त व्यक्ति 'पंथ के जल' की भाँति किसी को प्रभावित नहीं कर पाते। सागर के समान गम्भीर केशव-जैसे व्यक्तित्व जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सफल होते हैं। इसलिए सुषमा और नीला धीरेन्द्र के चाहने पर भी उससे दूर रहती हैं और केशव की शुष्क प्रवृत्ति भी उन्हें उसे पाने के लिए व्याकुल बना देती है। गम्भीर तथा उथले व्यक्तित्व का यह तुलनात्मक उत्कर्षापकर्ष आलोच्य उपन्यास का लक्ष्य है।

'पंथ का जल' की रचना व्यावहारिक, किन्तु साहित्यिक, हिन्दी में हुई है। भाषा में प्रवाह लाने के लिए उन्होंने तत्सम शब्दों के प्रयोग के प्रति पूर्वाग्रह न रखकर तद्भव शब्दों, विदेशी शब्दों, युग्मक शब्दों और मुहावरे-लोकोक्तियों के प्रयोग की ओर यथोचित ध्यान दिया है। उनकी शैली की उल्लेखनीय विशेषता यह है कि उन्होंने अभिव्यंजना-सौष्ठव के लिए शब्दालंकारों तथा अर्थालंकारों का प्रचुर प्रयोग किया है। उदाहरणार्थ 'उत्प्रेक्षा' और 'मानवीकरण' का यह सुन्दर प्रयोग देखिए—"एकादशी का चन्द्रमा छत के एक कोने से झाँक रहा था, मानो कोई लजीली नववधू झरोखे की तनिक ओट लेकर प्रिय की राह देख रही हो।"[2]

२०. सुश्री आदर्शकुमारी आनन्द

सुश्री आदर्शकुमारी आनन्द ने 'प्रेम और बलिदान' तथा 'गरीब घर अमीर इरादे' शीर्षक दो उपन्यासों की रचना की है। ये दोनों कृतियाँ सामाजिक हैं और इनमें गार्हस्थ्य जीवन के सहज चित्रण को प्रमुख स्थान प्राप्त हुआ है। लेखिका ने प्रेम और विवाह की समस्याओं को अन्य सामाजिक परिस्थितियों के सन्दर्भ में रोचक तथा यथार्थ-वादी शैली में प्रस्तुत किया है।

(अ) प्रेम और बलिदान

प्रस्तुत उपन्यास में मुख्यतः प्रेम और विवाह सम्बन्धी समस्याओं को स्थान

१-२. पंथ का जल, पृष्ठ १५०, २३

प्राप्त हुआ है। इसमें लेखिका ने आशा, मधु, नीलम, रेखा, शकुन आदि विभिन्न पात्राओं की जीवन-गाथाओं का अकन करके समाज के विविध पक्षों पर प्रकाश डाला है। इनमे प्रमुख कथा आशा से सम्बद्ध है। आशा के घर का वातावरण प्रारम्भ मे उसके प्रतिकूल रहता है, क्योंकि उसकी छह बहिनें थीं और भाई एक भी नहीं, फलतः माता-पिता अपनी पुत्रियों से कटु व्यवहार करते थे। बाद में एक भाई के हो जाने से स्थिति अपेक्षाकृत अनुकूल हो गई। आशा अपने शिक्षक राकेश से प्रेम करती थी, किन्तु उससे उसका विवाह न हो सका, क्योकि बचपन में ही राकेश का विवाह एक देहाती कन्या शकुन से हो चुका था। राकेश ने न शकुन को देखा था और न उसे चाहता था; इसी आधार पर वह आशा प्रति अनुरक्त रहा। किन्तु, जब एक बार वह गाँव गया तो माँ की ममता और शकुन के स्नेह ने उसे ऐसा बाँध लिया कि वह पुनः आशा से मिल न सका। उधर आशा की सखी रेखा का भाई मधुर भी मन-ही-मन आशा से प्रेम करता था, किन्तु उसका विवाह भी अन्यत्र हो गया। आशा ने राकेश की स्मृति में घुल घुलकर प्राण त्याग दिये। कथान्त में लेखिका ने यह दिखाया है कि आशा की चिता के पास दो साधु आये और दुःखपूर्ण दृष्टि से चिता की ओर देखते रहे। सम्भवतः लेखिका का इंगित राकेश तथा मधुर की ओर रहा होगा, किन्तु इसके लिए पृष्ठभूमि की अपेक्षा थी। आखिर वे कब और क्यों साधु बन गये और घटनास्थल पर सहसा कैसे आ उपस्थित हुए !

आशा की सखी रेखा सात भाइयो की इकलौती बहिन होने पर भी प्रसन्न न थी, क्योंकि उसकी माँ उसे स्वतन्त्रतापूर्वक कहीं आने-जाने न देती थी। किन्तु, विवाह के उपरान्त पति का एकनिष्ठ प्रेम पाकर उसका जीवन-कुसुम मानो खिल उठा। आशा की दूसरी सखी मधु का विवाह एक सेठ के कुव्यसनी पुत्र से हुआ, जहाँ प्रारम्भ में उसका जीवन कष्टपूर्ण रहा, किन्तु पुत्रोत्पत्ति के उपरान्त जीवन में सहजता आ गई। मधु की बहिन नीलम का विवाह विनोद नामक वृद्ध से हुआ, किन्तु उसके पुत्र सुधीर से (जो नीलम का समवयस्क था) नीलम का प्रेम हो गया और युवक पुत्र ने वृद्ध पिता को विष देकर मार दिया। इस प्रकार समाज के विभिन्न चित्रों का अंकन करने के लिए लेखिका ने अनेक पात्रों की जीवन-गाथा का वर्णन किया है और मुख्य कथा के साथ उनका यथोचित सम्बन्ध स्थापित किया है।

आलोच्य उपन्यास मे पात्र अत्यन्त सामान्य हैं, जो परिस्थितियों के सम्मुख विवश होकर सहज ही घुटने टेक देते हैं। राकेश नायक है, किन्तु उसमें नायकोचित मानसिक दृढ़ता नही है। नीलम के पति विनोद कंजूस हैं, उनका पुत्र सुधीर पितृघाती है, मधु के पति विलासप्रिय हैं, रेखा के पति पत्नी के प्रति अत्यन्त अनुरक्त है और आशा के पिता गोपीचरण एक निराश पिता हैं, जो सात पुत्रियो के जन्म से खिन्न हैं—वस्तुतः लेखिका ने उक्त विविधरूपी पुरुष पात्रों का चरित्रांकन करके मध्यवर्गीय पुरुषों की विभिन्न सम्भावित मनोवृत्तियों की ओर संकेत किया है। नारी पात्रों में नायिका आशा का चरित्र अपेक्षाकृत उज्ज्वल है, क्योंकि वह प्रेम की दिशा में आत्मबलि देकर एक आदर्श प्रस्तुत

करती है। मधु, नीलम, रेखा आदि गौण पात्राओं का व्यक्तित्व अत्यन्त सामान्य है। शकुन के चरित्र द्वारा लेखिका ने यह दिखाया है कि प्रेम के क्षेत्र में देहाती कन्याएँ भी शहरी कन्याओं से कम नही हैं—विवाह किसी से (राकेश से) और प्रेम किसी और से (मतई नामक देहाती युवक से)।

आशा, राकेश, सुधीर आदि पात्रो के मनोजगत् के चित्रण में लेखिका ने कहीं-कहीं उनके मानसिक अन्तर्द्वन्द्व की भी झलक दिखाई है, किन्तु इस दिशा में उन्होंने किसी सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक विश्लेषण का परिचय नही दिया। पात्रो के भावों को व्यक्त करते हुए संक्षिप्त एवं पात्रानुकूल संवादों की योजना की गई है। उदाहरणार्थ आशा और राकेश के सम्भाषण प्रायः उनके आन्तरिक प्रेम के परिचायक हैं। संवादों में एक दोष यह है कि एक पात्र की उक्ति समाप्त होते ही अल्पविराम लगाकर तुरन्त उसी पंक्ति में दूसरे पात्र की उक्ति प्रारम्भ हो जाती है, जिससे पाठक को असुविधा होती है। आशा और मधु का यह सम्भाषण इसका उदाहरण है—"इस बिचारे ने क्या सुख देखा है, मेरी ही तरह इसकी भी दशा है ? पर आशा ! कभी-कभी तो इतना चाहते है जितना तुम्हें राकेश भी न चाहता होगा, अब कभी राकेश का नाम न लो मधु। अब उससे मेरे सब नाते टूट चुके।"[1] यहाँ मधु की उक्ति के बाद अल्पविराम लगाकर तुरन्त आशा की उक्ति प्रारम्भ कर दी गई है। ऐसा एक नही, अनेक स्थलों पर हुआ है, जो निश्चय ही शैली-दोष है।

इस उपन्यास में समाज की निम्नलिखित समस्याओ का चित्रण हुआ है—(अ) बाल-विवाह के दुष्परिणाम (राकेश द्वारा शकुन की उपेक्षा और शकुन द्वारा मतई से अवैध प्रेम), (आ) विवाह के पूर्व स्वच्छन्द प्रेम का परिणाम (आशा का जीवन नष्ट होना), (इ) वृद्ध-विवाह के दुष्परिणाम (नीलम का पति के प्रति असन्तोष, उसके युवा पुत्र से प्रेम, पुत्र द्वारा पितृघात), (ई) कुव्यसनी पुरुषों से विवाह होने पर नारियो का दुर्भाग्य (मधु का कष्टपूर्ण जीवन), (उ) निम्न मध्यम वर्ग में दहेज-प्रथा के भय से कन्या का माता-पिता के लिए भारस्वरूप होना (आशा और मधु के परिवारों में), (ऊ) मध्यवर्गीय परिवार में अविवाहित कन्या की स्वतंत्रता पर माता-पिता द्वारा लगाये गए प्रतिबन्ध (रेखा के अविवाहित जीवन पर) आदि। इसके अतिरिक्त यत्र-तत्र पात्रो की उक्तियों अथवा विचारधारा मे लेखिका ने देशकाल सम्बन्धी तथ्यों की अभिव्यक्ति की है। उदाहरणार्थ मधु की यह उक्ति अवलोकनीय है—"भारतीय नारी की यह सभ्यता भी तो नही है कि पति का घर छोड़कर माँ के चली जाय। जब माँ-बाप ने एक व्यक्ति के हाथ मेरा हाथ दे दिया है तो जन्म भर उस व्यक्ति के साथ ही निभाना पड़ेगा, चाहे रोकर या हँसकर।"[2]

जैसा कि उपन्यास के शीर्षक से व्यंजित है, इसका लक्ष्य यह सिद्ध करना है कि

---

१. प्रेम और बलिदान, पृष्ठ ६८
२. प्रेम और बलिदान, पृष्ठ ४५

प्रेम का सम्बन्ध मन से है, शरीर से नहीं। प्रेम की पावनता बलिदान की अपेक्षा रखती है। इस प्रसंग में आशा की यह उक्ति पठनीय है—"बहिनो! विदेशी सभ्यता विदेशियों के लिए ही रहने दो। हमारे देश का श्रृंगार कर्त्तव्यपरायणता, जीवनोत्सर्ग एवं आत्म-बलिदान है। आज देश आपका बलिदान चाहता है, हमारे देश की रक्षा आपके बलिदान से ही हो सकती है। कृत्रिम आभूषणों को त्यागकर हमें त्याग-तपस्या रूपी सच्चे आभूषण धारण करने चाहिएँ।"[1] जो आशा ने अपने उक्त वक्तव्य मे कहा, वही जीवन मे सत्य कर दिखाया, किन्तु उसका बलिदान देश के लिए न होकर प्रेम के क्षेत्र में रहा। समाज के विभिन्न दूषित चित्रो (लड़कियो के जन्म पर शोक, वृद्ध-विवाह आदि) का अंकन करके लेखिका ने प्रकारान्तर से उनके सुधार की प्रेरणा दी है।

प्रस्तुत उपन्यास में सरल, सरस एव मुहावरेदार भाषा का प्रयोग हुआ है। यथा—"मैंने कितने ऊँचे महल बनाये थे सब धूल मे मिल गये", "मुझ मे ही कौन से सुरखाव के पर लग गए हैं", "काजल की कोठरी में जाकर उसका असर अवश्य ही होता है।"[2] कतिपय स्थलों पर अशुद्ध वाक्यों का प्रयोग हुआ है, जो चिन्त्य है। यथा—'लड़की और लड़का में कितना अन्तर है," "दसवाँ पास करेगी तो बारहवाँ पास लडका ढूँढ़ना पड़ेगा", "सेठ जी उठ पड़े"[3] आदि। वैसे, लेखिका की शैली व्यावहारिक एव प्रवाहपूर्ण है। निष्कर्षत: आलोच्य कृति मे सामाजिक दुष्प्रवृत्तियों का यथार्थ चित्रांकन हुआ है और प्रेम के क्षेत्र में बलिदान की प्रेरणा देना लेखिका का उद्देश्य रहा है।

(आ) ग़रीब घर : अमीर इरादे

इस उपन्यास में शिक्षा के महत्त्व को प्रकट करते हुए इस बात पर बल दिया गया है कि शिक्षित होने पर निर्धन व्यक्ति की महत्त्वाकांक्षाएँ भी एक दिन पूर्ण हो जाती हैं। उपन्यास मे नायिका शान्ता और उसकी सखी निशा के परिवारो की कथा का साथ-साथ निर्वाह किया गया है, जिनमें शान्ता की कथा प्रमुख है। शान्ता के पिता धनी थे और वह साधारण शिक्षित भी थी, किन्तु उसका विवाह निर्धन और अशिक्षित भोलानाथ से हुआ। पति और सास की ओर से उपयुक्त सद्भाव के अभाव में भी उसने धैर्यपूर्वक सेवा की और पति की ओर से विरोध होने पर भी पुत्र को डॉक्टरी की उच्च शिक्षा दिलाई। पुत्र की योग्यता, उन्नति तथा यश को देखकर भोलानाथ भी शिक्षा के महत्त्व को समझ गये और उन्होंने अपने दुर्व्यवहार के लिए पत्नी से क्षमा माँगी। निशा धनी होने के अतिरिक्त बी० ए० तक शिक्षिता थी, उसके पति राकेश केवल मैट्रिक तक शिक्षित थे, किन्तु पत्नी के प्रयत्नों से उन्होने भी बी० ए० तक शिक्षा प्राप्त की। निशा निरभिमानिनी थी, किन्तु उसकी छोटी बहिन सुमन किंचित् उद्दण्ड प्रकृति की थी। निशा ने उसे विश्वास-

१. प्रेम और बलिदान, पृष्ठ ३
२. देखिये 'प्रेम और बलिदान', पृष्ठ ८, ४०, ६०
३. देखिये 'प्रेम और बलिदान', पृष्ठ १२, १३, २८

घाती युवक मधुप के प्रेम-जाल से बचाकर अपने व्यवहार-कौशल और स्नेह का अच्छा परिचय दिया है। निशा की सबसे छोटी बहिन मधु राजन् के व्यक्तित्व पर मुग्ध थी, जिसे निशा ने विवाह-सम्बन्ध में परिणत कर अपनी उदारता और गुणग्राहकता का अच्छा परिचय दिया।

उक्त दोनो कथाएँ समानान्तर रूप से विकासमान रही हैं तथा इनमें पारिवारिक सौहार्द पर विशेष बल दिया गया है। लेखिका ने परिस्थिति-चित्रण की ओर भी यथोचित ध्यान दिया है। शान्ता और राजन् का व्यक्तित्व योग्यता और शक्ति का प्रतिरूप है, किन्तु आर्थिक अभाव के कारण उनकी महत्त्वाकांक्षाओ का स्तम्भ कई बार लड़खड़ाता है। दूसरी ओर निशा के माता-पिता वैभव-सम्पन्न है, किन्तु राजन् और मधु का विवाह इस बात का प्रतीक है कि अध्यवसायी व्यक्ति के लिए अर्थाभाव की बाधा नगण्य है। लेखिका ने कथानक में रोचकता और कौतूहल की ओर उचित ध्यान दिया है तथा उनकी यह प्रवृत्ति रही है कि जब कोई घटना किसी पात्र के पक्ष में अप्रिय रूप लेने लगती है तब वे तुरन्त ही विषयान्तर कर देती हैं।

प्रस्तुत कृति में पात्रों को व्यक्ति के रूप में नही, वर्ग-प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया गया है। शान्ता ने पारिवारिक संघर्षो के होते हुए भी जिस कर्म-तत्परता, स्नेह और सेवा-भाव का परिचय दिया है, वह भारतीय नारी की गरिमा के सर्वथा अनुकूल है। उसकी सखी निशा का व्यक्तित्व भी तदनुरूप परिष्कृत रहा है। अपने निरभिमान स्वभाव के कारण उसे पति-गृह के सभी सदस्यो का प्रेम और आदर प्राप्त हुआ। उसकी बहिन सुमन अहम्मन्य प्रकृति की अदूरदर्शी युवती है। लेखिका ने मधुप के प्रति उसके प्रेम-प्रसंग को यथार्थ की भूमि पर प्रस्तुत किया है। दूसरी ओर निशा की सबसे छोटी बहिन मधु सौम्य तथा विवेकशील है और राजन् के प्रति उसका प्रेम-भाव सर्वथा स्वाभाविक है। निशा की ननद रेखा का भाई तथा भाभी के प्रति असीम प्रेम तथा चंचल व्यक्तित्व भी उल्लेखनीय है। इसी प्रकार शान्ता की सास की बहू के प्रति क्रूरता वर्गांकित परम्परा के अनुरूप है।

पुरुष पात्रों में भोलानाथ, राजन्, राकेश, मधुप तथा दीपक उल्लेखनीय हैं। शान्ता के पति भोलानाथ उस अशिक्षित वर्ग के प्रतिनिधि है, जिसका शिक्षा के प्रति दुराग्रह रहता है। राजन् को परिश्रमी और मेधावी छात्र के रूप में प्रस्तुत करने मे भी लेखिका सफल रही है। राकेश का अपनी पत्नी निशा के प्रति प्रेम और सद्भाव इसलिये अधिक उल्लेखनीय है कि उसका व्यक्तित्व भोलानाथ से सर्वथा विलोम है। मधुप ऐसे युवक वर्ग का प्रतिनिधि है जो विषय-भोग को महत्त्व देता है। निशा के भाई दीपक का चरित्र विविध गुणों का समन्वय है—तीव्र बुद्धि, परोपकार, मित्र-प्रेम आदि उसके चरित्र की प्रमुख विशेषताएँ हैं। लेखिका ने पात्रों के नाम प्रायः उनकी चारित्रिक विशेषताओं के अनुरूप ही रखे हैं। भोलानाथ, शान्ता, सुमन, मधुप आदि सभी पात्र अपने नाम को सार्थक करते हैं। निशा और राकेश का, सुमन और मधुप का युग्म प्रतीकात्मक

है। पात्रों के मनोभावों के अंकन में लेखिका ने मनोविज्ञान का उपयुक्त आश्रय लिया है। इस दृष्टि से सुमन की वह भाव-स्थिति उल्लेखनीय है, जिसके अन्तर्गत वह बार-बार राजन् को भुलाकर कुछ और सोचने का प्रयत्न करती है, किन्तु उसकी विचारधारा पुनः उसी बिन्दु पर जा पहुँचती है।[1] यह उल्लेखनीय है कि लेखिका ने कथागत मनोविज्ञान और संवाद-योजना के अतिरिक्त प्रत्यक्ष कथन की शैली में भी पात्रों का चरित्र-निरूपण किया है। यथा—"भारतीय नारी शान्ता जो अपने पति द्वारा सदैव ठुकराई गई थी, उसके पति ने तमाम प्रकार की यातनाएँ उसे दी थी, घर तक से जिस शान्ता को निकाल दिया गया था, वही आज अपने जीवन का शेष भाग अपने पति के चरणों में अर्पण करने को तैयार है। वह धन्य है, स्त्री रूप मे देवी है।"[2]

आलोच्य उपन्यास में प्रायः लघु एवं रोचक सवादों की योजना की गई है। यद्यपि कहीं-कहीं संवादों मे अनावश्यक विस्तार की प्रवृत्ति भी लक्षित की जा सकती है, तथापि अधिकांश वार्तालाप चरित्र-चित्रण, देशकाल अथवा कथानक के विकास में सहायक रहे हैं। लेखिका ने संवादो में नाटकीयता और सजीवता लाने के लिए 'शान्ता ने आते ही कहा', 'निशा मुस्करा पड़ी और बोली'[3] जैसे क्रिया-संसूचक वाक्यों का भी बहुश. प्रयोग किया है। राजन् के बाल्यावस्था के सवादों में बाल-मनोविज्ञान का सुन्दर प्रतिफलन हुआ है।[4] इसी प्रकार शान्ता की सास की कटूक्तियाँ भी नितान्त सहज तथा पात्रानुकूल हैं। यथा—"जब उसने शेष मिठाई सास के सामने रखी तो सास रानी ने पाँव की ठोकर से सब मिठाई आंगन में फैला दी। आँख मटकाती हुई बोली—चुड़ैल, डायन, अब मेरी याद आई है, जब उसमें एक भी रसगुल्ला नहीं बचा। क्या मैं बची-खुची मिठाई लेने वाली हूँ। चली जा मेरे सामने से, नही तो अभी···।"[5]

प्रस्तुत उपन्यास में समकालीन प्रवृत्तियों को लक्ष्य में रखते हुए युवक-युवतियों के चरित्र-पतन के तीन कारण माने गये है—कुरुचिपूर्ण उपन्यासों का अध्ययन, फैशन, चलचित्रों के प्रति मोह। राजन्, सुमन, मधुप आदि पात्र इन्ही कारणो से पथभ्रष्ट हुए। राजन् तो अपनी माता के प्रयत्न से शीघ्र ही सँभल गया, किन्तु मधुप तथा उसकी प्रेमिका सुमन का भविष्य सदा के लिए अन्धकारमय हो गया। राजन् द्वारा मधुप के विषय में मधु के प्रति कथित यह उक्ति देखिये—"ऐसे ही लड़के भारत का भविष्य बिगाड़ते है। न आज वह भारत की ललनाएँ रही हैं और न वह युवक ही रहे हैं। आज ज़माना कितना बदल गया है। अपने देश में भी पाश्चात्य सभ्यता का राज आ चुका है। यदि कुछ कमी है तो वह भी शीघ्र ही आ जायगी, अब वह समय दूर नहीं है।"[6]

---

१. देखिए 'ग़रीब घर : अमीर इरादे', पृष्ठ १३६
२-३. ग़रीब घर : अमीर इरादे, पृष्ठ १६४, ६१
४. देखिये 'ग़रीब घर : अमीर इरादे', पृष्ठ २४, ३१-३२
५-६. ग़रीब घर : अमीर इरादे, पृष्ठ ३०, १४१

लेखिका ने प्राकृतिक वातावरण की अपेक्षा समकालीन समाज के चित्रण की ओर अधिक ध्यान दिया है। उन्होंने यह सिद्ध किया है कि भारतीय समाज में नारी की स्थिति कितनी असहाय और विवश है। माता-पिता उसकी इच्छा का आदर किये बिना ही उसे विवाह-सूत्र में बाँध देते हैं, जो अनुचित है। लेखिका का दृष्टिकोण यह रहा है कि नारी की सहनशीलता तथा आदर्शवादिता के फलस्वरूप ही भारतीय समाज विशृंखलित होने से बचा हुआ है। उपन्यास का मुख्य प्रतिपाद्य शिक्षा के महत्त्व को स्वीकृति देना है। विद्या को सुख-सुविधा-सम्पन्न प्राणियों की बपौती न मानकर लेखिका ने राजन् के माध्यम से यह प्रमाणित कर दिया है कि निर्धन व्यक्ति भी मनोयोगपूर्वक उच्च शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं। उक्त उद्देश्य के अतिरिक्त शान्ता तथा निशा के चरित्रों द्वारा भारतीय नारी की गुण-गरिमा एवं सहनशीलता का प्रत्यक्षीकरण भी इस उपन्यास का लक्ष्य है। इसके लिए लेखिका ने प्रायः प्रारम्भकालीन लेखिकाओं की शैली अपनाई है। उदाहरणार्थ शान्ता के विषय में निम्नलिखित भावपूर्ण कथन देखिये—"वह धन्य है, स्त्री रूप में देवी है। आज अपने देश में ऐसी ही सती, साध्वी नारियों की आवश्यकता है।"[1]

आलोच्य कृति में भाषा के व्यावहारिक रूप को महत्त्व दिया गया है, फलतः इसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों की अपेक्षा तद्भव शब्दों, उर्दू-शब्दों (बर्ताव, सजा, मजाल, खसम, यतीम आदि)[2] और अंग्रेजी-शब्दों (क्लास, टीचरें, ग्रेजुएट, फर्स्ट पोजीशन आदि)[3] का प्रचुर प्रयोग हुआ है। इसी प्रकार सहयोगी शब्द-युग्मों (चहल-पहल, गप-सप, शुभ-अशुभ, लेने-देने, पढ़ी-लिखी, सोच-विचार आदि)[4] एवं पुनरुक्त शब्दो (फुसर-फुसर, लपर-लपर, कभी-कभी, बार-बार आदि)[5] के प्रयोग द्वारा भी भाषा को सजीव तथा व्यावहारिक रूप दिया गया है। लेखिका ने मुहावरों के प्रसंगानुकूल प्रयोग की ओर भी यथोचित ध्यान दिया है। तथापि भाषा की सजीवता के लिए प्रयुक्त ये सभी उपकरण मन पर समवेत प्रभाव नहीं डाल पाते, क्योंकि अशुद्ध शब्दों तथा वाक्यों ने भाषा के सौन्दर्य को प्रायः क्षीण कर दिया है। उदाहरणार्थ निम्नलिखित उक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—(अ) शान्ता की सास अब आगे से बहुत कुछ ठीक हैं[6], (आ) शान्ता ने राजू को बाजार मिठाई मँगाया और सब की सब माँ के पास जाकर रख दिया[7], (इ) वह यकायक कह पड़ी[8] आदि। अन्ततः यह कहा जा सकता है कि आलोच्य कृति में व्यावहारिक शब्दों के प्रयोग के फलस्वरूप भाषागत सरलता, रोचकता और प्रवाह तो हैं, किन्तु गाम्भीर्य-जन्य

---

१. गरीब घर : अमीर इरादे, पृष्ठ १६४

२. गरीब घर : अमीर इरादे, पृष्ठ ६, १०, ११, १२, १३

३. गरीब घर : अमीर इरादे, पृष्ठ ११, १५, ३६, १२३, १२७

४. गरीब घर : अमीर इरादे, पृष्ठ ११, १७, २०, २१, २८, ६५

५. गरीब घर : अमीर इरादे, पृष्ठ १२, १४, १७, २३

६-७-८. गरीब घर : अमीर इरादे, पृष्ठ २६, ३०, ६०

गौरव का अभाव कहीं-कहीं खटकता है।

२१. सुश्री मधूलिका

सुश्री मधूलिका ने १९८ पृष्ठों और २१ परिच्छेदों में 'प्राणों की प्यास' शीर्षक सामाजिक उपन्यास की रचना की है। इसमें उन्होंने कथा-नायिका माया की जीवन-गाथा अंकित करते हुए वेश्या-जीवन का यथार्थ चित्रण किया है। माया मध्यमवर्गीय परिवार की धार्मिक प्रवृत्ति की वालिका थी—नित्य प्रातः मन्दिर जाना उसका अटल नियम था। किन्तु, दुर्भाग्यवश उसे अपना जीवन एक चकले मे विताना पड़ा। कथानक का प्रारम्भ वहाँ से होता है जब माया के भयंकर रोग का पत्र पाकर उसकी छोटी वहिन सुजाता माता-पिता से छिपाकर उससे मिलने चल पडी। सुजाता को अकेली चकले मे आया देखकर और यह जानकर कि अब उसकी मुक्ति भी असभव है, माया को इतना आघात पहुँचा कि उसके प्राण-पखेरू उड़ गये। माया ने अपने जीवन के कटु अनुभवों को आत्मकथा के रूप में लिख रखा था, मरने के पूर्व वह उसे सुजाता को सौंप गई। वहिन की डायरी पढकर सुजाता को ज्ञात हुआ कि दो गुण्डो ने मंदिर से उसका अपहरण किया था, मार्ग में एक मन्त्री द्वारा रक्षित होने पर कुछ दिन वह उसके पास रही। वाद मे संयोगवश उसकी पोल खुलने पर उसके दुराचार से बचने के प्रयास में उसे जेल जाना पड़ा जहाँ उसकी वाल-सहपाठिनी मिन्नी मिली, जो उसी की भाँति परिस्थिति-प्रताड़िता थी। सयोगवश दोनों एक ही दिन जेल से मुक्त हुई। कुछ दिन दोनो एक पवित्र महात्मा की संगति मे रहीं, किन्तु वाद मे मिन्नी दुर्भाग्यवश एक चकले में फँस गई और उसे खोजने जाकर माया को भी वही की होकर रहना पड़ा। दीदी की डायरी पढकर सुजाता के मन मे उसके प्रति श्रद्धा की वृद्धि ही हुई। ज्यो ही उसने डायरी समाप्त की, त्यों ही संयोगवश उसकी वहिन की परिचिता रेखा, जो कलुषित जीवन विताने के वाद एक मंत्री के सेक्रेटरी से विवाह करने का सुयोग पा चुकी थी, अपने पति के साथ पुलिस को लेकर वहाँ आ गई। चकले पर पुलिस ने छापा मारा और भ्रष्ट होने के पूर्व ही सुजाता का उद्धार हो गया। सुजाता रेखा के घर रहकर विश्वविद्यालय में पढ़ने लगी और मिन्नी भी सम्मानपूर्वक रेखा के घर रहने लगी।

इस प्रकार लेखिका ने पहले नग्न यथार्थ का चित्रण करके वाद में कथानक को आदर्श के साँचे मे ढाल दिया है। यों वर्तमान साहित्य में यथार्थ के नाम पर घोर अश्लीलता का चित्रण होता ही रहता है, किन्तु प्रस्तुत उपन्यास मे चकले और वेश्या-जीवन के जो कुत्सित वर्णन हुए हैं (अश्लील चित्र, घृणित वार्तालाप आदि), वे अशोभन प्रतीत होते हैं। इसके अतिरिक्त अनेक प्रासंगिक कथाएँ भी इसी कोटि की है। उदाहरणार्थ एक वुनकर की वहू से मन्त्री के दुराचार की घटना[1], मिस वनर्जी और मन्त्री का पाप-

---

१. देखिये 'प्राणों की प्यास', पृष्ठ ४९-५०

[illegible],' इसके पूर्व अपने ममेरे भाई के साथ उनका प्रवेश [illegible],' मिन्नी और उसकी पादन्यास में [illegible] कली का [illegible] सब आचरण,' एवं सेठ के प्रति उसकी दासी का आत्मसमर्पण [illegible]' आदि प्रसंग उपन्यास में [illegible] लिखे गए हैं। [illegible] कथानक में [illegible] है कि [illegible] प्रसंगों के अतिरिक्त [illegible] यथार्थ के भी दर्शन होते हैं।

आलोच्य [illegible] में कथानक में कतिपय ऐसे प्रसंगों का भी समावेश किया है, जो वर्तमान प्रगतिशील युग में प्रायः अविश्वसनीय हैं। यथा—माया द्वारा प्रश्न करने पर कृष्ण-राधा की प्रतिमा का हँस उठना' अथवा चकले में माया के समक्ष संन्यासी महात्मा की उज्ज्वल आकृति का उसके निकट साकार होना' (जबकि वे अन्यत्र रहते थे)।

प्रस्तुत उपन्यास में माया, मिन्नी, मिस रेणा बनर्जी, सुजाना आदि का चरित्र परिस्थितियों द्वारा निर्धारित रहा है। माया और सुजाना का परस्पर घनिष्ठ स्नेह, माया की धार्मिक तन्मयता तथा मिन्नी का मातृ स्नेह विशेषतः उल्लेखनीय है। पुरुष पात्रों में महात्मा जी का चरित्र सर्वाधिक आदर्श रेखाओं में चित्रित हुआ है। मिन्नी तथा माया को साथ रखकर भी वे निर्लिप्त एवं निर्विकार रहे। माया के मन की गहराई में पैठकर, उनके विकार को पहचानकर, उन्होंने उसे माता के आसन पर सुशोभित कर मानो समस्त दुविधाओं को समाप्त कर दिया। कवि अध्यापक का चरित्र भी कुछ कम आदर्श नहीं है। रंगे सियार मन्नी ने माया के सतीत्व की रक्षा करने के लिए उसने अपने प्राणों की बाजी लगा दी। मन्नी, नूर मुहम्मद, नरेन्द्र (रेणा का ममेरा भाई) आदि पात्र विश्व के कुत्सित व्यक्तियों के प्रतीक हैं जो अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए दूसरों को संकट में डालते रहते हैं। सेठ जी, मन्नी के सेक्रेटरी (रेणा के पति) आदि अनेक पात्र सामान्य हैं जिनमें मानवोचित दुर्बलताएँ तो हैं, किन्तु उचित अवसर पर जब उनका मन जागरूक हो जाता है तो फिर वे बहुत ऊँचे उठ जाते हैं।

आलोच्य उपन्यास में अधिकांश संवाद कथानक को नाटकीय रूप में वर्णित करने के लिए प्रयुक्त हुए हैं। प्रायः सभी संवादों की उल्लेखनीय विशेषता यह है कि उनमें वक्ता का व्यक्तित्व विशेषतः प्रतिबिम्बित रहा है। उदाहरणार्थ चकले के संचालक नूर मुहम्मद और रमजानी (उसकी सहयोगिनी) की उक्तियों में सर्वत्र अश्लील, अनर्गल एवं बाजारू शब्दावली को स्थान दिया गया है, तो उधर महात्मा जी के सम्भाषण प्रायः दार्शनिक एवं पावन विचारों से युक्त हैं।

देश और समाज के रंगे सियारों की पोल खोलकर लेखिका ने वर्तमान युग की कुप्रवृत्तियों (भ्रष्टाचार, व्यभिचार, धोखा, कपट, मिथ्याचार और अन्याय) की यथार्थ झाँकी प्रस्तुत की है। अनेकशः ऐसी घटनाओं का उल्लेख करते हुए व्यंग्यात्मक शैली का

१-२-३-४. देखिये 'प्राणों की प्यास', पृष्ठ ५६, १४२, ६५-६६, १५०-१६०

५-६. देखिये 'प्राणों की प्यास' पृष्ठ ३४, १६४

प्रयोग किया गया है। यथा—"और उसके बाद उन लोगों की जैसी बातें शुरू हुई तो सुनकर मेरे होश उड़ गए। मैंने अपने कान अपनी ही हथेलियों से बन्द कर लिए और सोचने लगी—यही है इस स्वतंत्र भारत के कर्णधार ? यही है उस राष्ट्रपिता के उत्तराधिकारी ? यही है इनका गांधीवाद ? यही है इस आश्रम के संस्थापक ?"[1] विश्व में व्याप्त कुरूप प्रवृत्तियों का यथार्थ चित्रण इस उपन्यास का लक्ष्य है, केवल कथान्त में आदर्शवादिता का आश्रय लेकर उसे आकस्मिक मोड़ दे दिया गया है जो वस्तुतः इतना प्रभावपूर्ण नहीं बन सका।

२२. सुश्री मधूलिका मिश्र

सुश्री मधूलिका मिश्र ने १२२ पृष्ठों और १६ परिच्छेदों में 'तड़पत बीते रैन' शीर्षक घटनाप्रधान लघु सामाजिक उपन्यास की रचना की है। इसमें हरीश और शोभना की एक डिब्बे में सहयात्रा, शोभना के प्रेमी कपूर द्वारा हरीश को हत्या के चक्र में उलझा देना, कुमारी आप्टे नाम की महिला वकील द्वारा उसे बचा लेना और हरीश का शोभना और उसके पुत्र राहुल से मिलन चित्रित है। राहुल का जन्म हरीश और शोभना के एक रात्रि मे कही आकस्मिक मिलन के परिणामस्वरूप हुआ था। लेखिका ने कथानक का प्रारम्भ नितान्त सहज रूप में किया है, किन्तु उसका विकास करते समय ऐसे चमत्कारपूर्ण आकस्मिक मोड़ प्रस्तुत किये हैं कि अन्त तक पहुँचते-पहुँचते कथानक की कृत्रिमता एवं कौतूहल के प्रति लेखिका का अत्यधिक आग्रह स्पष्टतः खटकने लगता है। इस कथानक का दूसरा उल्लेखनीय दोष यह है कि इसमें यत्र-तत्र घोर अश्लील प्रसंगों का समावेश है। शोभना के पत्र मे हरीश के साथ बिताई गई तूफ़ानी रात का उल्लेख[2] और पत्र पढ़ लेने के बाद हरीश और शोभना का डिब्बे में ही प्रेमोन्मत्त आचरण[3] (जिसकी व्याख्या लेखिका ने बहुत रस लेकर की है) मात्र सस्ती रुचि के पाठको को आकृष्ट करने के लिये है।

विवेच्य उपन्यास में घटना-बाहुल्य इस प्रकार छाया रहा है कि अन्य तत्त्व उभर नहीं पाये। यही बात चरित्र-चित्रण की भी है कि लेखिका ने इस ओर विशेष ध्यान नहीं दिया। फिर भी घटनाओं के प्रसंग में शोभना, हरीश, मिस आप्टे, महेन्द्र कपूर आदि की जो विशेषताएँ सम्मुख आई हैं उनके आधार पर यह कहा जा सकता है कि उपन्यास में पात्र वर्ग के प्रतीक न होकर व्यक्ति-रूप में प्रस्तुत हुए हैं। शोभना का प्रेमाकुल अन्तर, हरीश की लेखन-प्रतिभा एवं सरल विश्वासपूर्ण हृदय, कुमारी आप्टे का निर्भीक एवं कुशल कर्मठ व्यक्तित्व तथा खलनायक महेन्द्र कपूर का दोहरा व्यक्तित्व (जिस पर प्रसन्न हो उसके लिए प्राण तक दे देना और जिस पर रुष्ट हो उसे जड़ से उखाड़ फेंकना)

---

१. प्राणों की प्यास, पृष्ठ ५५-५६
२-३. देखिये 'तड़पत बीते रैन', पृष्ठ ४१, ४२-४४

सहज ही पाठकों का ध्यान आकृष्ट कर लेते हैं।

लेखिका ने उपन्यास में वर्णनात्मक प्रसंगों के अतिरिक्त नाटकीयता का भी यथोचित विधान किया है। संवाद यथाप्रसंग कथानक, चरित्र-चित्रण एवं देशकाल के विकास में भी सहायक सिद्ध हुए हैं। उदाहरणार्थ कथानक के प्रारम्भ में शोभना हरीश से सम्भाषण करते समय हिन्दी के समकालीन साहित्यकारों एवं उनके समीक्षकों पर व्यंग्य करते हुए कहती है कि वर्तमान लेखक निकृष्ट साहित्य-रचना करके ही अपने को प्रेमचन्द एवं टैगोर समझते हैं और समाचारपत्र भी उन्हें चोरी का लेखक सिद्ध करने का प्रयत्न करते हैं।[1] कपूर द्वारा धन के बल पर पुलिस को वश में करने और झूठे गवाह तैयार करके निर्दोष हरीश को ही दोषी सिद्ध करने की घटनाओं को लेकर लेखिका ने समाज की हेय प्रवृत्ति एवं धन की सर्वविजय की ओर इंगित किया है। उपन्यास के तेरहवें, चौदहवें और सोलहवें परिच्छेदों में न्यायालय के सजीव एवं स्वाभाविक दृश्य अंकित हुए है। चमत्कार और रहस्य से ओत-प्रोत घटना-बाहुल्य का आधार लेकर पाठकों का सस्ता मनोरंजन इस उपन्यास का लक्ष्य है; और इसी कारण कथानक में कृत्रिमता का दोष आ गया है। उपन्यास की भाषा व्यावहारिक एवं प्रवाहपूर्ण है। वस्तुत. भाव-पक्ष तथा अभिव्यंजना-पक्ष दोनों की दृष्टि से 'तड़पत बीते रैन' सामान्य श्रेणी का उपन्यास है। गम्भीर एव साहित्यिक रुचि के भावुक तो इसकी सराहना नहीं करेंगे, किन्तु चलचित्र की भाँति घटनाओं के उतार-चढाव मे रुचि लेनेवाले पाठक इसे पढ़कर अवश्य अनुरंजित होंगे।

२३. श्रीमती सुमित्रा गढ़होक

श्रीमती सुमित्रा गढहोक ने 'पूनम का चाँद' उपन्यास मे जाति-भेद तथा वर्ण-व्यवस्था से पीड़ित किशन और गोपी की मार्मिक प्रेम-गाथा अंकित की है, जिसमे 'हीर-रांझा' अथवा 'सोहिनी महिवाल' के प्रेमादर्श को लक्ष्य में रखा गया है। किशन सुनार था और गोपी हिरिया कहार की पुत्री थी। परस्पर दर्शन-सम्भाषण से दोनों में प्रेम का विकास हुआ, किन्तु जाति-भेद ने उनके बीच एक दीवार खड़ी कर दी। कथानक को आरोह-अवरोह में से निकालकर लेखिका ने उसमे एक ओर मार्मिकता का समावेश किया है, दूसरी ओर किशन तथा उसके मित्र बिरजू के साहस और कौशल से समस्त बाधाओं को पार कराकर कथानक को सुखान्त बना दिया गया है। गोपी की सहनशक्ति तथा उसकी माता और भाइयों की उग्रता को देखकर पाठक का हृदय प्रेमी-युगल के अनिष्ट की आशंका से धड़कता रहता है—एक तीव्र जिज्ञासा उसे सर्वत्र घेरे रहती है कि इस विजातीय प्रेम का अन्तत. क्या परिणाम होगा !

प्रस्तुत उपन्यास के पात्र इतने सजीव है कि यदि इसे चरित्रप्रधान उपन्यास की

---

१. देखिये 'तड़पत बीते रैन', पृष्ठ ८

संज्ञा दी जाए तो अनुचित न होगा। नायिका गोपी भारतीय नारी की प्रतीक है, जो संस्कारभीरु होने के कारण किशन के प्रति अपने प्रेम को किसी के समक्ष व्यक्त नहीं करती। अपने मन की व्यथा को व्यक्त करने के लिए उसने 'पीपल दा' को अपना साथी बनाया है, जो निर्जीव होकर भी मानो सजीव है। किशन सर्वगुणसम्पन्न एवं दृढ़व्यक्तित्व नायक है। वह गोपी से सच्चा अनुराग करता है और समस्त विघ्न-बाधाओं को पराभूत करके अन्त में उससे विवाह कर लेता है। बिरजू के मित्रादर्श एवं किशन के भाई चमन के भ्रातृ-स्नेहादर्श के चित्रण मे लेखिका के भावुक मन का प्रतिबिम्ब विद्यमान है। अन्य गौण पात्रों का भी यथायोग्य चरित्रांकन हुआ है। परोक्ष चित्रण के अतिरिक्त लेखिका ने पात्रों के विषय मे वर्णनात्मक टिप्पणियाँ भी प्रस्तुत की हैं। यथा—'गोपी का जन्म गरीब घर में हुआ था। परन्तु उसके सस्कार, उसका रहन-सहन का ढंग उन लोगों से बिल्कुल भिन्न था। वह बचपन से ही साफ़-सुथरा रहना पसन्द करती थी।"[1] पात्रों के मानसिक अन्तर्द्वन्द्व का चित्रण भी लेखिका ने सफलतापूर्वक किया है। प्रमाणस्वरूप प्रेम और कर्त्तव्य के मध्य गोपी का मानसिक संघर्ष उल्लेखनीय है।[2]

चरित्र-चित्रण मे सजीवता की सृष्टि के लिए लेखिका ने सरल, मुहावरेदार एवं पात्रानुकूल संवादों की योजना की है। प्रायः घटनाओं तथा कार्य-व्यापारो के बीच में संवादो का विधान हुआ है, जिससे वे सहज एवं सारगर्भित सिद्ध हुए हैं। कथानक का अधिकांश भाग वार्त्तालापो के माध्यम से विकसित हुआ है। इस उपन्यास मे अन्तर्जातीय प्रेम और विवाह की समस्या का चित्रण हुआ है। किशन तथा गोपी का प्रेम समाज को फूटी आँखों नहीं सुहाता। लेखिका ने यत्र-तत्र समाज की संकुचित मनोवृत्ति पर व्यंग्य किये है। आलोच्य उपन्यास के नायक और नायिका विवाह-बन्धन में बँधकर समाज के मुख पर 'करारा थप्पड़' लगाते हैं; और यही लेखिका की दृष्टि में समस्या का सर्वोत्तम समाधान है। प्रस्तुत उपन्यास का पाठकों को यही संदेश है कि जाति-भेद की उपेक्षा करके सबको समान समझें। आत्मा का लगाव सब बन्धनों से परे है, और उसी का अनुसरण सबका लक्ष्य होना चाहिए। राष्ट्रीयता के इस युग में प्रस्तुत उद्देश्य का महत्त्व स्वतः सिद्ध है।

आलोच्य उपन्यास में सरल, व्यावहारिक एवं मुहावरेदार भाषा को स्थान प्राप्त हुआ है। यत्र-तत्र वाक्य-रचना विषयक अशुद्धियाँ भी है किन्तु प्रभाव की दृष्टि से भाषा रोचक एवं सजीव है। उपन्यास की रचना अन्य पुरुष की शैली मे हुई है। व्यंग्य शैली में रचित वाक्यो ने शैली के सौन्दर्य मे यत्र-तत्र विशेष वृद्धि की है। उदाहरणार्थ निम्नस्थ पंक्तियों में प्रश्न शैली, व्यंग्य शैली तथा मुहावरेदार भाषा के मिश्रण ने वाक्यावली को विशेष सजीव बना दिया है—'जमना भी भला किसी से कम थी। क्या हुआ वह कहारिन

---

१. पूनम का चाँद, पृष्ठ १७
२. देखिए 'पूनम का चाँद', पृष्ठ १२९

थी? भी तो उसकी जीभ भी नारी जाति की ही। उसका स्वभाव था कि नाक पर मक्खी नहीं बैठने देती थी।"[1] यहाँ जमना की चारित्रिक विशेषता को व्यक्त करने के प्रसंग मे नारी जाति की वाचाल वृत्ति पर सफल व्यंग्य किया गया है।

२४. श्रीमती मीरा महादेवन

मीरा महादेवन ने महाराष्ट्रदेशीय होकर भी हिन्दी में दो उपन्यास लिखे हैं— 'सो क्या जाने पीर पराई' तथा 'अपना घर'। इनमें उन्होंने क्रमशः एक निर्धन मध्य-वर्गीय परिवार की कन्या की समस्याओं एवं एक यहूदी परिवार की सुख-दुःखमयी अनुभूतियों का चित्रण किया है। इनमें से प्रथम उपन्यास में १६४ पृष्ठ तथा ४४ परिच्छेद है और 'अपना घर' की रचना २१८ पृष्ठों एवं ४६ परिच्छेदों मे हुई है।

(अ) सो क्या जाने पीर पराई

प्रस्तुत उपन्यास की समस्त घटनाओं एवं पात्रों का केन्द्रबिन्दु नायिका माधवी है, जो निम्न मध्यवर्गीय परिवार की एकमात्र कन्या है। घर के आर्थिक अभाव का समाधान करने के लिए वह शिक्षा पूर्ण किये बिना ही (दसवीं पास करने से भी पहले) नौकरी करने निकलती है और अनेक मधुर-कटु अनुभव प्राप्त करते हुए धनोपार्जन करती है। उसके इन्हीं अनुभवों को लेखिका ने कथानक का रूप दिया है। रजनी नामक लड़की के द्वारा सर्वप्रथम उसका परिचय घोष बाबू से हुआ, जिनके कार्यालय में काम करते हुए धीरे-धीरे वह उनसे प्रेम करने लगी, किन्तु वे पहले ही विवाहित थे और माधवी से प्रेम का नाटक खेलकर उसे अर्थोपार्जन का साधन मात्र बनाना चाहते थे। जब पुष्पा ने माधवी को इसकी चेतावनी दी थी तो उसका मन न माना था, किन्तु जब उसे प्रत्यक्ष ही घोष बाबू की उक्त नीचता का बोध हो गया तो उसने उनसे सब सम्बन्ध तोड़ लिये। इसके उपरान्त संयोगवश उसका परिचय रमा पटवर्धन नाम की एक संभ्रान्त महिला से हुआ। उनके तथा उन्हीं के दायरे के गीता, नरेन्द्र आदि अन्य सदाशय व्यक्तियों के सहयोग से माधवी ने दसवीं की परीक्षा दी और भूदान यज्ञ में भाग लेकर कुछ समय तक देश-सेवा में सक्रिय सहयोग दिया। इसके उपरान्त उसने थामस नामक एक ईसाई युवक के दफ्तर में कार्य किया। साथ रहते-रहते दोनों के मध्य अनुराग का विकास हुआ, किन्तु माधवी ने केवल इस विचार से थामस का विवाह-प्रस्ताव ठुकरा दिया कि उसकी सन्तान ईसाई कहलाएगी। जब अपने मन की वेदना पहचानकर उसने स्वीकृति देकर भूल सुधारनी चाही तो ज्ञात हुआ कि श्री थामस अन्यत्र विवाह करने जा रहे हैं। थामस की विरहजन्य पीड़ा से क्षत-विक्षत हृदय को सहारा दिया डॉ० अनवर ने, जो केवल निःस्वार्थ भाव से उसे प्रसन्न करना चाहते रहे। अन्त में संयोगवश चित्रकार अश्विन से उसकी पुनः भेंट हुई (एक

---

१. पूनम का चाँद, पृष्ठ १४

वार पहले दोनों का परिचय हो चुका था) और दोनों विवाह-सूत्र में बँध गये। अव माधवी के भ्रमित जीवन का अन्त हुआ और वे दोनों सुख से कला-आराधना करते हुए जीवन-यापन करने लगे।

उक्त पात्रों के अतिरिक्त मनोहर वावू, सोमण साहव, सेठ साहव, चन्द्रकला, माधवी के माता-पिता, भाई, श्यामा, श्रीमती स्टोन आदि अनेक पात्र-पात्राओं को कथानक में स्थान प्राप्त हुआ है और यथाप्रसंग उनकी चारित्रिक प्रवृत्तियों का प्रकाशन भी किया गया है। इनमें से कुछ सच्चरित्र है, कुछ दुश्चरित्र, कुछ परमार्थी, कुछ स्वार्थी। वस्तुतः लेखिका ने माधवी के जीवन एवं चरित्र को मुख्यतः दृष्टि में रखा है और अन्य पात्रों का उल्लेख केवल प्रसगवश हुआ है। वे तो सचारी भावों की भाँति अस्थायी रूप मे कथानक में प्रविष्ट हुए हैं, अतः स्वतन्त्र रूप से उनके चरित्र का कोई महत्त्व नही है। माधवी एक साधारण महत्त्वाकांक्षिणी आधुनिका है। अन्य मानवोचित दुर्वलताओं के अतिरिक्त उसमें सवसे वड़ी दुर्वलता यह है कि जो भी उसे स्नेहामृत देता है, वह उसी की ओर आकृष्ट होती जाती है और इस प्रवाह में अनेकशः मानसिक पवित्रता के अतिरिक्त शारीरिक पवित्रता को भी सुरक्षित नही रख पाती। स्वाभाविकता की ओर ध्यान दिये विना लेखिका ने अपने कथानक में यह दिखाया है कि जो भी माधवी के सम्पर्क में आता है, उसे अत्यधिक चाहने लगता है। जो भी हो, एक नायिकाप्रधान उपन्यास के प्रणयन में लेखिका सफल रही है।

आलोच्य उपन्यास में सवाद लघु हैं और प्रसंगानुरूप कथानक एव चरित्र-चित्रण के विकास में सहायक सिद्ध हुए हैं। संवादों की भाषा सरल, स्पष्ट एवं पात्रानुकूल है। उदाहरणार्थ भूदान यज्ञ में सहयोग देने के लिए गाँव मे जाकर माधवी ने ग्राम्य रमणियों से जो सम्भाषण किये, वे उल्लेखनीय है।[1] देशकाल के लिए लेखिका ने अनेक संकेत दिये हैं। माधवी के जीवन-चरित्र द्वारा उन्होंने यह आभास दिया है कि वर्तमान युग की विषम परिस्थितियों में नारी को नौकरी करने निकलना पड़ता है और तव घोष वावू, मनोहर वावू जैसे व्यक्तियों के रहते क्या उसका चरित्र सुरक्षित रह पाता है? और फिर, आज के युग में नारी चरित्र-स्खलन को हीन भी तो नही मानती। रजनी और श्यामा-जैसी रमणियाँ तो शरीर-विक्रय से धनोपार्जन को अत्यन्त सहज रूप में लेती हैं, और माधवी-जैसी नारियाँ भी धन के लिए शरीर का विक्रय तो नहीं करती, फिर भी स्नेह-प्रदर्शन करनेवाले प्रत्येक युवक से शारीरिक सम्बन्ध स्थापित करने को तैयार हो जाती हैं। आज के युग मे चरित्र सम्बन्धी मानदण्ड कितने परिवर्तित हो चुके है! क्या वे हमारी अधोगति के सूचक नहीं हैं?

रमा पटवर्धन द्वार पति को तलाक देने की वात[2], भूदान यज्ञ की वात[3] और निम्न-मध्यम वर्ग के अभावों एवं विषमता की चर्चा[4] इस तथ्य का प्रमाण है कि लेखिका

१-२-३-४. देखिये 'सो क्या जाने पीर पराई', पृष्ठ ७८-८०, ५२, ७७, ८५

ने समकालीन सामाजिक-राजनीतिक चेतना को यथावसर स्थान दिया है। उदाहरणार्थ लेखिका की यह उक्ति देखिये—"छोटे-छोटे गाँव, भोले-भाले किसान और वहाँ का दारिद्रय का साम्राज्य माधवी के मन में नैराश्य भरता जाता था। देश स्वतन्त्र हुआ, किन्तु देहातों में अभी स्वतन्त्रता का आगमन नहीं हुआ था। पहले जितना ही आज भी किसान अपढ़ था।"[1] वर्तमान जीवन की विषमताओं एवं आर्थिक अभावों से प्रेरित मध्यवर्गीय नारी को नौकरी करने जाकर जो मधुर-कटु अनुभव प्राप्त होते हैं, उनका चित्रण उपन्यास का लक्ष्य है।

यह उपन्यास बोलचाल की सरल भाषा में लिखा गया है। लेखिका ने प्रायः लघु एव सुव्यवस्थित वाक्यों का प्रयोग किया है। भाषा-शैली के प्रति किसी प्रकार का पूर्वाग्रह न रखकर उनकी दृष्टि कथ्य पर केन्द्रित रही है। उपन्यास के विविध लक्ष्यों मे से एक लक्ष्य धार्मिक सहिष्णुता की आवश्यकता का प्रतिपादन भी है। इसलिए लेखिका ने फरीदा, ज़किया, इथेल आदि सखियों के साथ माधवी का हाजी मलंग के दर्शनों को जाना, वहाँ मजार में नेत्र मूंदकर समाधि मे लीन हो जाना, उसी अवस्था मे हाजी मलग के दर्शन करना आदि दृश्यों[2] का वर्णन किया है।

(आ) अपना घर

'अपना घर' मे भारत में बसे एक सनातनी यहूदी परिवार के सदस्यों की विविध सुख-दुःखमयी जीवन-अनुभूतियों की गाथा अंकित है। सन् १९४८ में जब इस्राएल का जन्म हुआ तब प्रायः दो सहस्र वर्षों से विश्व के विभिन्न भागों में शरणार्थियों की भाँति रहनेवाले यहूदी देश प्रेम की भावना से प्रेरित होकर इस्राएल लौटने लगे। आलोच्य कथानक का प्रारम्भ वहाँ से होता है जब देश-प्रेम एवं धार्मिक भावनाओं से अनुप्राणित होने के कारण उपन्यास का नायक अपने परिवार से विलग होकर इस्राएल के लिए प्रस्थान करता है। उसके लाख चाहने पर भी उसका परिवार उसके साथ नहीं गया, क्योंकि एस्तेर (उसकी माता) तथा शुलमिथ (उसकी पत्नी) ने उस भारत माता को छोड़कर जाना स्वीकार न किया जो दो सहस्र वर्षों से यहूदियों को प्रेम से पालती-पोसती रही थी। मेखाएल के सबसे बड़े भाई गैब्रिएल का सेना में भर्ती हो जाना, वहाँ उसकी मृत्यु हो जाने के शोक मे पीड़ित मेखाएल के पिता की भी मृत्यु, उससे (मेखाएल से) बड़े भाई दानिएल का विलायत जाकर अैन नामक अंग्रेज महिला से विवाह कर वहीं बस जाना आदि घटनाओं को लेखिका ने पृष्ठभूमि में रखा है।

मेखाएल के इस्राएल चले जाने के उपरान्त उसके परिवार में अनेक घटनाएँ घटित हुई। उदाहरणार्थ अैन की मृत्यु होने पर दानिएल घर लौट आया, शुलमिथ अपने एक निर्धन किरायेदार-परिवार की युवती कन्या जाओमी को अपने घर ले आई, क्योंकि उसके

१-२. सो क्या जाने पीर पराई, पृष्ठ ७७, ९३-९८

पति ने उसे निर्दोष ही कलंक लगाकर त्याग दिया था और उसकी माता तथा भाई उसके दुःख में दुखित थे। मेखाएल की बहिन मेजूजा अपने चिर प्रेमी एवं भावी वर बारुत्व को छोड़कर श्याम नामक हिन्दू-युवक (जो बारुत्व का मित्र था) की ओर आकृष्ट हो गर्भवती हो गई। घर की मर्यादा की रक्षा के लिए शुलमिथ ने गुप्त रूप से उसका गर्भपात करा दिया, किन्तु बारुत्व ने उनसे विवाह करना अस्वीकार कर अन्यत्र विवाह कर लिया। निरुपाय हो जाने पर शुलमिथ ने उसका विवाह नाओमी के भाई इसहाक से कर दिया, जो उससे प्रेम करता था। किन्तु, विवाह के उपरान्त वह आलसी एवं कुव्यसनी होकर मेजी से दुर्व्यवहार करने लगा। एक दिन तंग आकर मेजी मैके लौट आई और नर्सिग की शिक्षा लेकर जन-सेवा में संलग्न हो गई। मेखाएल की माता को लकवा मार गया, फलस्वरूप उसकी मृत्यु हो गई। मेखाएल के पुत्र उरिएल ने अपनी पसन्द की लड़की सिमहा से विवाह किया और एक दिन सपत्नीक इस्राएल चला गया। पुत्र और पुत्रवधु के समझाने पर मेखाएल, जो परिवार से पृथक् रहकर सुखी न हो पाया था, घर लौट आया। शुलमिथ, जो चारों ओर से कष्ट सहकर जर्जर हो चुकी थी, मेखाएल के लौटने के एक-दो दिन बाद ही परलोकगामिनी हुई। मरते समय वह दानिएल और नाओमी को विवाह-सूत्र में बाँधने की योजना बना गई थी।

इस प्रकार लेखिका ने घटना-वैविध्य के द्वारा एक यहूदी परिवार का सहज एवं प्रभावपूर्ण चित्र अंकित किया है। शुलमिथ की मृत्यु के कारण कथानक दुखान्त एवं मार्मिक बन गया है। लेखिका की वर्णन-शैली इतनी सजीव है कि अथ से इति तक कथानक में रोचकता और स्वाभाविकता व्याप्त रही है। शुलमिथ इस उपन्यास की केन्द्रबिन्दु है। उसके चरित्र में परोपकार, संवेदना, स्नेह, कर्त्तव्य-परायणता, पर-दुःखकातरता आदि गुणों के समावेश मे लेखिका विशेष सफल रही हैं। नाओमी की सेवा-परायणता एवं मेजूजा की अल्हड़ता का भी सुन्दर चित्रण हुआ है। पुरुष पात्रों मे मेखाएल का देशप्रेम एवं धर्म-प्रेम तथा दानिएल की गम्भीरता एव उदार दृष्टिकोण उल्लेखनीय है। इनके अतिरिक्त इसहाक, डॉक्टर हाइम, श्याम आदि गौण पात्रों का यथायोग्य चरित्र-चित्रण करके लेखिका ने प्रस्तुत उपन्यास को अपेक्षित गरिमा प्रदान की है। इतना तो निश्चित है कि इस कृति मे यहूदी पात्रों की रीति-नीति, आचार-विचार, आकृति-प्रकृति, आस्था-अनास्था का जो सजीव एवं स्वाभाविक चित्रण किया गया है, वह उनकी गहन अनुभूति अथवा विस्तृत अध्ययन का परिणाम है। प्रत्येक पात्र अपने आप मे इतना सशक्त एवं प्राणवान् है कि सामान्य होकर भी विशेष प्रतीत होता है।

आलोच्य उपन्यास मे संवाद अत्यन्त लघु है तथा कथानक के विकास एवं चरित्रों की अभिव्यक्ति में उनका विशेष योगदान रहा है। इसके अतिरिक्त अनेकशः उनमे देशकाल सम्बन्धी तत्त्वों की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है। उदाहरणार्थ दानिएल और शुलमिथ का यह कथोपकथन देखिए—

"शुलमिथ, हमारी लड़कियों पर इतनी बंदिश क्यों लगाई जाती है ?"

"इसलिए कि वे पर-जाति में न जा सकें।"

"तो क्या अन्तर्जातीय विवाह बुरे होते हैं ?"

"प्रायः वे अच्छे नहीं होते। फिर इस्राएल लड़की इतनी कट्टर होती है कि वह कभी किसी दूसरे धर्म का पालन नहीं कर सकती। यदि कर भी ले तो उसका यह विश्वास अधिक काल तक टिक नहीं सकेगा।"[1]

आलोच्य लेखिका ने देशकाल के चित्रण की ओर विशेष ध्यान दिया है। उदाहरणार्थ एक स्थल पर फिलिस्तीन मे अरबों और इस्राइलों की शत्रुता का[2] तथा एक अन्य स्थान पर हिन्दुस्तान के विभाजन के उपरान्त कराची मे मुसलमानों की अमानुषिकता का[3] तथा अनेकशः यहूदियों की रीति-नीतियों का प्रासंगिक उल्लेख हुआ है। जन्म-दिन आदि समारोहों मे द्राक्षों का याचिन पीना, शनिवार को शव्वाथ का पवित्र दिन मानकर उस दिन कोई काम न करना, बकरे के खून में हाथ भिगोकर घर के दरवाजों पर पंजे लगाना, वर का पहले वधु के घर जाना आदि प्रथाओं का उल्लेख विविध प्रसंगों में हुआ है।[4] पाठकों तक राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय एकता का संदेश पहुँचाना उपन्यास का लक्ष्य है। लेखिका ने सरल, लघु वाक्यान्वित एवं सुस्पष्ट भाषा का प्रयोग किया है। शैली में वर्णनात्मकता की अपेक्षा नाटकीयता अधिक है। कथा-वर्णन की प्रणाली इतनी सजीव है कि सहज ही वर्ण्य से पाठक का तादात्म्य हो जाता है। यहूदी परिवार को लेकर मौलिक एवं रोचक कथानक की सृष्टि लेखिका की मौलिक सूझ-बूझ का परिणाम है।

२५. श्रीमती पुष्पा भारती

श्रीमती पुष्पा भारती ने 'विधाता के निर्माता' तथा 'किनारों के बीच' शीर्षक घटनाप्रधान सामाजिक उपन्यासों की रचना की है। उपन्यास-लेखिका होने के साथ ही वे कहानी-लेखिका भी हैं—उनके कथा-संग्रह 'मरियम' की समीक्षा इसके पूर्व की जा चुकी है। उन्होंने समकालीन अनेक लेखिकाओं की भाँति गार्हस्थ्य चित्रण पर बल न देकर समाजव्यापी अपराध-मनोवृत्ति के विश्लेषण को अपने उपन्यासों का लक्ष्य बनाया है।

(अ) विधाता के निर्माता

इस उपन्यास में ग्राम-सुधार के लिए सामूहिक प्रयास के युगानुरूप महत्त्व को व्यंजित किया गया है। इसमें १७६ पृष्ठ हैं और कथानक विविध खण्डों में विभाजित है। उपन्यास का नायक अतुल विद्यार्जन के उपरान्त कुछ उत्साही युवकों के सहयोग से एक

---

१. अपना घर, पृष्ठ ३४

२-३. देखिये 'अपना घर', पृष्ठ ५७, ५८-६०

४. देखिये 'अपना घर', पृष्ठ ६४, ६८, ८०-८२

ग्राम-प्रबन्धक-संघ की स्थापना कर जन-सेवा का कार्य करता है। इसके लिए उसे अनेक विरोधी परिस्थितियों (माता-पिता के विरोधस्वरूप गृह-त्याग, खलनायक नीलकण्ठ का षड्यन्त्र, जनता में मिथ्या प्रवाद आदि) का सामना करना पड़ता है। अपनी प्रेयसी वसुधा के सहयोग से वह प्रत्येक परिस्थिति को निर्भीकतापूर्वक सँभालता है, फलतः उसकी जय होती है और षड्यन्त्रकारियों को कठोर दण्ड प्राप्त होता है। कथानक का विकास करते समय लेखिका ने जिस तीव्रता से घटनाओं का जाल बिछाया है, उपसंहार में उसी तीव्रता से उसे समेटकर उलझी हुई स्थिति को वश में कर लिया है। नीलकण्ठ के दल द्वारा डाकाजनी, लूटमार, अग्निकाण्ड, नारी-अपहरण आदि रोमांचकारी घटनाओं की चर्चा करके लेखिका ने कथानक को रोचक बनाने का प्रयास किया है, किन्तु इससे कहीं-कहीं अस्वाभाविकता भी आ गई है। इसके अतिरिक्त अतुल के ग्राम-सुधार सम्बन्धी दीर्घ संवादों और कृत्रिम घटनाओं के बाहुल्य ने भी कथानक को बोझिल बना दिया है। कथा-विधान का एक अन्य दोष यह है कि घटनाओं का विकास मनोवैज्ञानिक रीति से नहीं किया गया। उदाहरणार्थ वसुधा की घनिष्ठ सखी वीणा एक अत्यन्त सामान्य कारण से रूठकर नीलकण्ठ की सहयोगिनी बनकर वसुधा और अतुल के विरुद्ध षड्यन्त्र में भाग लेती है और पुनः उसी नाटकीय रीति से उनके पक्ष में हो जाती है। यद्यपि नीलकण्ठ के प्रति घृणा के लिए उसके पास कुछ ठोस कारण थे—नीलकण्ठ की हृदयहीनता, अनुचित सम्बन्ध स्थापित कर गर्भपात का आयोजन आदि—किन्तु लेखिका उक्त स्थिति को उचित और मनोवैज्ञानिक रीति से व्यंजित नहीं कर पाई।

आलोच्य कृति में बहुसंख्यक पात्र हैं, किन्तु इसमें चरित्र-चित्रण की स्वाभाविकता का अभाव है। लेखिका ने सत् और असत् प्रवृत्तियोंवाले पात्रों को दो वर्गों में प्रस्तुत किया है—एक ओर अतुल और उसके सहकारी (वसुधा, प्रकाश, मोहन आदि) हैं, जिनका लक्ष्य जनसेवा है और दूसरी ओर नीलकण्ठ के सहकारी (गजाधर, महावीर आदि) हैं जो लूटमार, अग्निकाण्ड आदि के द्वारा जनता को आतंकित करके अपना उल्लू सीधा करते हैं। इन दोनों प्रकार के पात्रों के मध्य मैजिस्ट्रेट, उनकी पुत्री वीणा, पार्वती, कन्हैया, अतुल के माता-पिता आदि अनेक पात्र हैं, जिनमें से कुछ अतुल का साथ देते हैं, कुछ विरोधी पक्ष का; और कुछ हृदय-परिवर्तन होने पर एक पक्ष को त्याग-कर दूसरे का समर्थन करते हैं। अन्त में प्रायः सभी तटस्थ पात्र अतुल के समर्थक बन जाते हैं। उपर्युक्त स्थिति में पात्रों के मानसिक अन्तर्द्वन्द्व के चित्रण के लिए पर्याप्त अवसर था, किन्तु लेखिका ने पात्रों की स्थूल विशेषताओं तक ही अपने को सीमित रखा है और ये स्थूल प्रवृत्तियाँ भी आंशिक रूप में व्यक्त हुई हैं। वस्तुतः घटना-बाहुल्य में चरित्र-चित्रण प्रायः दब गया है। फलतः कथोपकथन के माध्यम से भी मुख्यतः कथानक का ही विकास किया गया है। इस दृष्टि से वे तर्कपूर्ण उक्तियाँ उल्लेखनीय हैं जिनमें अधि-कारियों की शोषण-वृत्ति पर प्रकाश डालते हुए समाज-सुधार की योजनाओं को व्यक्त किया गया है। प्रकाश और हरिहरप्रसाद तथा अतुल और हरिहरप्रसाद के संवाद इसी

प्रकार के है।[1] वसुधा और अतुल के कतिपय संवाद भी इसी कोटि के हैं, जिनमें अतुल ने वसुधा की जिज्ञासाओ के उत्तर मे 'ग्राम-प्रबन्धक संघ' के उद्देश्यो को स्पष्ट किया है।[2] यहाँ यह उल्लेखनीय है कि ये कथोपकथन कहीं-कहीं आवश्यकता से अधिक विस्तृत हो गए हैं—अतुल की तत्सम्बन्धी उक्तियों को पढ़ते समय ऐसा प्रतीत होता है मानो उपन्यास न पढ़कर ग्राम-सुधार पर कोई योजना-विवरण पढ़ा जा रहा है।

'विधाता के निर्माता' में ग्रामों की विविध समस्याओ (संकीर्ण मनोवृत्ति, निर्धनता, जमीदारो द्वारा कृपकों का शोषण, अशिक्षा आदि) की विस्तृत चर्चा करते हुए अतुल द्वारा सचालित ग्राम-प्रबन्धक सघ की ओर से ग्राम-सुधार की उचित पृष्ठ-भूमि प्रस्तुत की गई है। वसुधा के पिता संसद्-सदस्य थे, अतुल के पिता धनी व्यापारी थे और वीणा के पिता न्यायाधीश थे, किन्तु उन्होने अपने उत्तरदायित्व का यथोचित निर्वाह नहीं किया। लेखिका ने उनके काले कारनामों की चर्चा करके समाज मे प्रचलित भ्रष्टाचार के रहस्योद्घाटन का प्रयास किया है, किन्तु यह समाज का कुरूप पक्ष है: उसकी उज्ज्वल सभावनाओ की ओर उन्होने दृष्टिपात तक नही किया। समस्त उपन्यास में खलनायक नीलकण्ठ और उसके सहकारियो को केन्द्र बनाकर रोमांचकारी वाता-वरण की सृष्टि की गई है, किन्तु अभिव्यक्ति मे स्वाभाविकता एवं मनोविज्ञान का प्रायः अभाव रहा है, अतः देशकाल का चित्रण अनेकशः कृत्रिम प्रतीत होता है। इस उपन्यास को यदि हम उद्देश्यप्रधान कहें तो अनुचित न होगा, क्योंकि इसमें अन्य सभी तत्त्व उद्देश्य द्वारा शासित रहे हैं। स्वतन्त्रता के उपरान्त भारतीय नेताओ ने भारत की उन्नति के लिए ग्राम-सुधार की आवश्यकता का बहुशः प्रतिपादन किया है। पुष्पा भारती ने भी प्रस्तुत कृति में इसी उद्देश्य को सम्मुख रखा है और इस दिशा में ये योजनाएँ प्रस्तुत की हैं—सामूहिक प्रयास द्वारा खेती, ग्राम में नहरो का निर्माण तथा बाँध की स्थापना, ग्राम-पचायतों का उचित संगठन, शिक्षा का प्रसार, युवतियो को अक्षर-ज्ञान के अतिरिक्त कला-कौशल तथा गृहस्थी सम्बन्धी ज्ञान देना आदि। ये योजनाएँ निश्चय ही उपयोगी हैं। उपन्यास का उद्देश्य अथवा सन्देश ग्रामीणों के प्रति प्रकाश की निम्नलिखित उक्ति में भलीभाँति व्यक्त हुआ है—"अब युग ने करवट ली है। बरसों का सन्तप्त मानव अब जाग्रत हो उठा है। हम सुनते आये हैं कि विधाता ने सृष्टि का निर्माण किया है, उसने अपने हाथों से हमारी तकदीर लिख दी है।...लेकिन हमे इस भावना को समूल नष्ट कर देना है। हमें अपने हाथो अपना निर्माण करना होगा। शक्ति के सामूहिक प्रयोग से हम क्या नही कर सकते।"[3]

आलोच्य कृति मे सरल और मुहावरेदार भाषा को स्थान प्राप्त हुआ है। वाक्य-रचना मे लिंग-वचन की अशुद्धियाँ बहुत है, जो सम्भवतः स्थानीय प्रभाव का परिणाम

१-२. देखिये 'विधाता के निर्माता', (अ) पृष्ठ ३१-३३, ५९-६०, (आ) पृष्ठ २३-२८
३. विधाता के निर्माता, पृष्ठ १७४

हैं। यथा—(अ) "पिता को विश्वास हो गया कि इसी ने डकैती करवाया"[1], (आ) "मैंने करवट बदल लिया"[2], (इ) "ऐसी भयंकर आग उन्होंने कभी नहीं देखा था।"[3] वस्तुतः इस उपन्यास को उच्च कोटि की निर्दोष रचना नहीं कहा जा सकता। भाव-पक्ष की अतिरंजनाओं और अभिव्यंजना-पक्ष की व्याकरण सम्बन्धी अशुद्धियों ने कृति के सहज सौन्दर्य को विशेषतः बाधित किया है। उपन्यास का लक्ष्य निश्चय ही युगानुरूप एवं महान् है, किन्तु उसकी सुचारु अभिव्यक्ति के लिए अन्य तत्त्वों का जैसा सुनियोजन अपेक्षित था, उसमें लेखिका को सफलता नहीं मिल सकी।

(आ) किनारों के बीच

इस रोमांचक घटनाप्रधान उपन्यास में चरितनायक शंकर के व्यक्तित्व को विविध घटनाओं के माध्यम से उभारा गया है। उपन्यास की पृष्ठभूमि में दहेज-समस्या का विकराल रूप है, जिसके कारण स्टेशन मास्टर कैलाश शर्मा को पुत्री सरोज के विवाहार्थ पठान से ऋण लेना पड़ा, जिसे चुकाना उनके लिए सम्भव न हो पाया। इस घटनाचक्र से उनके द्वितीय पुत्र शंकर का मन इतना व्यथित हुआ कि अन्य कोई भी उपाय करने में असमर्थ होने पर उसने छल-छन्द का मार्ग अपना लिया। इसके उपरान्त लेखिका ने उसके द्वारा किये गए विविध अपराधों का विस्तारपूर्वक उल्लेख किया है और उपन्यास के अन्त में उसके जीवन के अवसान की मर्मवेधी चर्चा की है।

उपन्यास के प्रारम्भ में पृष्ठभूमि के रूप में शंकर के पारिवारिक जीवन की सक्षेप में चर्चा की गई है। लेखिका ने शंकर के पिता की विवशताओं, माता के स्नेह और उसकी प्रेयसी मालती के निश्छल प्रेम की चर्चा करने के अनन्तर मूल कथावृत्त को आरम्भ किया है। शंकर के अपराधी जीवन का प्रारम्भ दिल्ली के सरदार ज्ञानसिंह को पन्द्रह हजार रुपयों का धोखा देने से हुआ (इस राशि को लेखिका ने अन्यत्र भ्रमवश दस हजार रुपये लिखा है)[4], किन्तु पुलिस-कर्मचारियों ने अपनी अकर्मण्यता को चरितार्थ करते हुए कुछ अन्य अपराधों के लिए भी उसी को उत्तरदायी ठहराया। एक अन्य प्रसंग में शंकर ने जेल यात्रा की, जहाँ उसका परिचय अभ्यस्त अपराधी बाबूलाल शुक्ल से हुआ। बाद में शंकर ने शुक्ल और उसके साथी इस्माइल को अपना सहायक बनाकर बैंकों को कई लाख रुपयों का धोखा दिया। मूल कथा में इन्हीं अपराधों की योजनाओं और इनकी कार्यान्विति का वर्णन है। शंकर ने इस जीवन को त्याग देने का अनेक बार निश्चय किया, किन्तु घटनाचक्र की जटिलता के फलस्वरूप वह अपनी अनन्य प्रेमिका मालती को अपनाने के लिए कभी स्वतन्त्र न हो सका। यद्यपि संयोगवश उसने एक अन्य अभ्यस्त अपराधी द्वारिकाप्रसाद की पुत्री लक्ष्मी से विवाह कर लिया, किन्तु वह मालती को कभी न भुला सका

१-२-३. विधाता के निर्माता, पृष्ठ ४६-४७, ६१, ६४

४. देखिये 'किनारों के बीच', पृष्ठ १७, ७६

और मालती भी जीवनपर्यन्त उसकी स्मृति में घुलती रही। इस प्रकार मालती सम्बन्धी कथांश को इस उपन्यास का प्रासंगिक वृत्त माना जा सकता है। लेखिका को कथानक में रोचकता, स्वाभाविकता और मार्मिकता के समावेश में सराहनीय सफलता मिली है, जिसका कारण यह है कि उन्होंने कथा-विकास की चारों अवस्थाओं की सुचारु योजना की है। कथानक का प्रारम्भ जितना जिज्ञासामूलक है, अन्त भी उतना ही मार्मिक है: उन्होंने उपसंहार को असन्तुलित नहीं होने दिया है। लेखिका ने कथा में यथार्थ और आदर्श के सूत्रों को इस प्रकार ग्रथित रखा है कि उसमें सस्ती रोचकता के स्थान पर मनोवैज्ञानिक संस्पर्श और जीवन की प्रौढ़ व्यावहारिकता को सहज ही लक्षित किया जा सकता है।

इस उपन्यास का नायक शंकर है, जिसके व्यक्तित्व के तीन संस्थान हैं—एक ओर उसके निश्छल भावों की अभिव्यक्ति है, दूसरी ओर अपराध-जगत् में उसके क्रमशः अभ्यस्त होते जाने का सजीव वर्णन है; और तीसरी ओर मालती के प्रति उसके सहज अनुराग तथा लक्ष्मी के प्रति कर्त्तव्यजनित प्रेम का द्वन्द्वात्मक चित्रण है। सामाजिक विषमताओं और पुलिस द्वारा मिथ्या दोषारोपण के फलस्वरूप वह उत्कट इच्छा होने पर भी कभी अपने चरित्र का संस्कार न कर सका, यह उसके जीवन की सहज-करुण विडम्बना है। सरदार ज्ञानसिंह, डॉक्टर सक्सेना और श्रीमती कपूर को धोखा देते समय उसके मन में शिव और अशिव का जो द्वन्द्व विद्यमान रहा, वह बाद के प्रसंगों में भी आत्मचिन्तन के रूप में प्रायशः उभरा है। यही कारण है कि जहाँ उसके अपराधी मित्रों (बाबूलाल शुक्ल, तुलसीराम पंडा, इस्माइल) के प्रति हमारे मन मे कोई सहानुभूति उत्पन्न नही होती, वहाँ शंकर के प्रति हमारा सद्भाव निरन्तर जाग्रत रहता है। नारी पात्रों में लेखिका ने मालती के मन को द्वन्द्व-मुक्त रखा है। उसके मन मे शंकर के प्रति अनन्य अनुराग है, जिसे वह उसके विकट अपराधी हो जाने पर भी नही भुला सकी। शंकर को सत्य-पथ पर आरूढ़ करने का उसने भरसक प्रयत्न किया, किन्तु वह और उसके माता-पिता इस दिशा में इसलिए सफल नहीं हो सके कि पुलिस की सशंकित दृष्टि ने प्रत्येक अवसर पर शंकर के मन को भीरु बना दिया। लक्ष्मी ने अपने पिता द्वारिकाप्रसाद से अपराध-वृत्ति को संस्कार-रूप में पाया था, अतः उसने प्रारम्भ में शंकर की अपराधी मनोवृत्ति को प्रोत्साहन देकर उसे इस पंक से निकलने का अवसर नही दिया। घटना-क्रम से अपनी छोटी बहिन जगदम्बा की भाँति वह भी आदर्शवादी हो गई, किन्तु तब तक शंकर के अपराधों की छाया दूर तक फैल चुकी थी। अन्ततः यह कहा जा सकता है कि लेखिका को घटना-नियोजन की भाँति चरित्र-चित्रण में भी पूर्ण सफलता प्राप्त हुई है, क्योंकि उनके पात्र प्रायः स्थिर न होकर गतिशील हैं और अन्तर्द्वन्द्व एव मनोविज्ञान का आश्रय लेकर उनके द्वारा जीवन की बहुमुखी प्रवृत्तियों का उद्‌घाटन किया गया है।

प्रस्तुत उपन्यास में समाज के विविध रूपों का उद्‌घाटन हुआ है, फलतः इसमें पात्रानुकूल कथोपकथन की ओर विशेष ध्यान दिया गया है। संवादों मे सरलता और व्यावहारिकता का समावेश इतने नैसर्गिक रूप में हुआ है कि कथा-विकास में उनके योग

दान की ओर सहज ही ध्यान आकृष्ट हो जाता है।[1] लेखिका ने कथोपकथन की योजना सायास नहीं की है, फलतः वे कथा-सौष्ठव में बाधक न होकर सर्वत्र साधक सिद्ध हुए है। इस सफलता का श्रेय लेखिका की अनुभव-प्रौढ़ि और विषय से उनके तादात्म्य को दिया जाना चाहिए।

आलोच्य उपन्यास मे समकालीन सामाजिक वातावरण के कतिपय पक्षो की सशक्त अभिव्यक्ति हुई है। लेखिका ने शकर, शुक्ल और इस्माइल के माध्यम से अपराधी मनोवृत्ति के व्यक्तियों की कार्यविधि का अच्छा परिचय दिया है। इस प्रसग मे पुलिस कर्मचारियो द्वारा निरपराध व्यक्ति को अपराधविशेष के लिए दोषी ठहराने और रिश्वत लेकर कैदी को छोड़ देने का उल्लेख करके लेखिका ने यथार्थ का व्यंग्यमूलक उद्घाटन किया है। स्पष्ट है कि उन्हे इन दोनों वर्गो में से किसी के प्रति भी सहानुभूति नही है। इसी प्रकार उन्होने धार्मिक रूढ़ियों पर भी सजीव प्रहार किया है। तुलसीराम पंडा द्वारा स्त्रियों के सतीत्व-नाश में सहायता देने, जेब काटने और यात्रियों को ठगने की चर्चा इसी उद्देश्य से की गई है।[2] इस प्रकार यह स्पष्ट है कि लेखिका ने यथार्थवादी दृष्टिकोण से समकालीन सामाजिक समस्याओं को उभारकर देशकाल का सजग निर्वाह किया है।

सुश्री पुष्पा भारती ने इस उपन्यास की रचना इस उद्देश्य से की है कि हम अपराधियों के प्रति दुराग्रही अथवा पूर्वाग्रही वृत्ति न अपनाकर उनके प्रति सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करने का संकल्प करे। अपराध करने पर भी व्यक्ति का हृदय-परिवर्तन सम्भव है: आवश्यकता केवल इस बात की है कि उसके मनोवेगों की धैर्यपूर्वक परीक्षा की जाये। यह सत्य है कि इस सिद्धान्त को सभी श्रेणियों के अपराधियों पर एक-जैसी सफलता के साथ लागू नही किया जा सकता, तथापि यदि पुलिस-कर्मचारियो द्वारा इसे ध्यान में रखा जाता तो शंकर के चरित्र का उत्तरोत्तर ह्रास कभी सम्भव न होता। हिन्दी-उपन्यास-लेखिकाओं में इस समस्या के निरूपण और सफल रूप मे निर्वहण की ओर सर्वप्रथम श्रीमती भारती ने ही ध्यान दिया है, जिसके लिए उन्हें साधुवाद दिया जाना चाहिये।

भाषा भाव-प्रेषण का साधन है, अतः उसमें विषयानुकूलता का होना अत्यन्त आवश्यक है। आलोच्य लेखिका ने कथानक के सूत्रो को जन-सामान्य के मध्य से चुना है, अतः उनकी भाषा भी तदनुकूल व्यावहारिकता से अलंकृत है। भाषा के स्तर का निर्धारण करते समय उन्होने कथा-प्रसंग के अतिरिक्त पात्रो की सामाजिक-मानसिक स्थिति को भी दृष्टि में रखा है। उनकी एक प्रमुख विशेषता यह है कि उन्होंने वाक्य-विन्यास में अनावश्यक विस्तार को नहीं अपनाया है। फलतः उनकी भाषा में जटिलता का अनिवार्य बहिष्कार तो है ही, उसमें चित्र-गुण का भी सहज समावेश हो गया है। सामाजिक पदावली के प्रति अभिरुचि न रखकर उन्होंने प्रायः सरल वाक्यों में कथा-वर्णन किया है,

---

१. देखिये 'किनारों के बीच', पृष्ठ १०४-१०६, १३७-१३८, १४७-१५०

२. देखिये 'किनारों के बीच', पृष्ठ ६०-६२, ६६, ७०-७१

जिससे उनके अभिव्यंजना-कौशल का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है।

२६. सुश्री उषा प्रियंवदा

सुश्री उषा प्रियंवदा ने 'पचपन खम्भे लाल दीवारें' शीर्षक मनोवैज्ञानिक सामाजिक उपन्यास की रचना की है, जिसमें १३८ पृष्ठ और २१ परिच्छेद हैं। प्रस्तुत उपन्यास की नायिका सुषमा निम्न-मध्य वर्ग के एक परिवार की सबसे बड़ी पुत्री है। उसके पिता ने उसे एम० ए० तक शिक्षा दिलाई, किन्तु निर्धन होने के कारण वे उसका विवाह न कर पाए। सुषमा ने एक कॉलिज में नौकरी करके परिवार का भार सँभाला, अपने भाई-बहिनों के सुख के लिए उसने अपने को मिटा डालने का निश्चय किया, किन्तु कई बार उसका मन अपने जीवन की नीरसता पर ऊब उठता था। संयोगवश उसका परिचय नील से हुआ और उसके प्रेम ने सुषमा के जीवन में सरसता का संचार किया। नील के अत्यधिक आग्रह पर भी सुषमा उससे विवाह न कर सकी, क्योंकि एक तो वह उससे पाँच वर्ष छोटा था, दूसरे वह अपने परिवार को मंझधार मे नही छोड़ना चाहती थी। सुषमा के मानसिक अन्तर्द्वन्द्व, कर्त्तव्य और भावना के संघर्ष, अशान्ति, अतृप्ति आदि मनोभावों के परिस्थिति-सापेक्ष मनोवैज्ञानिक चित्र अंकित करने में लेखिका विशेष सफल रही हैं।

सुषमा के माता-पिता, उसके कॉलिज की सहशिक्षिकाओं, छात्राओं आदि की प्रवृत्तियों का यथाप्रसंग उल्लेख करके लेखिका ने प्रस्तुत कृति में स्वाभाविकता लाने का प्रयास किया है। मिस शास्त्री की ईर्ष्यालु एवं निन्दक प्रवृत्ति का मनोवैज्ञानिक चित्रण करने में वे विशेष सफल रही हैं। क्योंकि मिस शास्त्री अपने यौवन-काल में किसी युवक को आकृष्ट करने में सफल नही हुई, अतः अपनी अधेड़ावस्था में उन्हें किसी भी युवक-युवती का रोमांस फूटी आँखों न सुहाता था। अपनी पालतू बिल्ली 'डियरस्ट' पर ही वे अपना सारा स्नेह उँडेलती थीं।

कथानक को नाटकीय सज्जा प्रदान करते हुए लेखिका ने संक्षिप्त एवं पात्रानुकूल कथोपकथन की योजना की है। प्रसंगानुकूल हास्य, व्यंग्य, दीनता, करुणा, अहं आदि भावों का पात्रानुरूप समावेश होने के कारण संवाद रोचक एवं सहज बन पड़े हैं। शिक्षित पात्रों की उक्तियों में फ्री, प्राइवेसी आदि अंग्रेज़ी शब्दों[1] का चित्रण उन्हें स्वाभाविक रूप देने मे समर्थ सिद्ध हुआ है। कथानक का मुख्य कार्यक्षेत्र कॉलिज का होस्टल है और छात्राओं की उपद्रवी हरकतों (शिक्षिकाओं के कमरों में झाँकना या उनके खाने के टिफिन में मेंढक भर देना), शिक्षिकाओ के आचरण और व्यक्तिगत जीवन की विविधताओं (किसी का प्रेम-विवाह, किसी का केवल प्रेमी से ही संतुष्ट रहकर विवाह न करना, किसी की परनिन्दा की प्रवृत्ति आदि) के चित्रण द्वारा लेखिका ने वातावरण

---

१. देखिये 'पचपन खम्भे लाल दीवारें', पृष्ठ ३

को सफलता से उभारा है। उनके द्वारा प्रस्तुत किया गया उक्त वातावरण इतना सजीव है कि समस्त दृश्य मूर्त हो उठते हैं और लेखिका के निजी अनुभव की ओर संकेत करते हैं। परिस्थिति-प्रताड़ित, विवाह-सुख से वंचित कुमारी के अन्तर्द्वन्द्व का चित्रण इस कृति का एकमात्र लक्ष्य है, जिसमें उषा जी को पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई है। नारी होने के नाते उन्होंने नायिका के मनोभावों को गहराई से परखा है और अत्यन्त कुशलता से उन्हें कथासूत्र में गूँथकर प्रस्तुत किया है।

आलोच्य कृति में विषय के अनुरूप सरल तथा व्यावहारिक शब्दावली को स्थान प्राप्त हुआ है। हिन्दी के तत्सम एवं तद्भव शब्दों में कुशन-कवर, टीचर्स क्वार्टर्स, स्टाफ़-रूम' आदि प्रचलित अंग्रेजी-शब्दों का मिश्रण करके भाषा को यथासम्भव व्यावहारिक रूप प्रदान किया गया है। "चारों ओर के प्रकाश में उसका बंगला एक नन्हे शिशु की तरह सो रहा था"[२] अथवा "घिरता अन्धेरा और संध्या की सहजता उसके शरीर में किन्ही गाँठों को खोलने लगी"[३] आदि अनेक वाक्यों में आलंकारिक भाषा-शैली का सौंदर्य द्रष्टव्य है। सुषमा के चिन्तन को व्यक्त करने के लिए अनेकशः लेखिका ने सूक्ति-वाक्यों का आश्रय लिया है। यथा — "अकेलेपन में हरेक के मन में एक मूर्ति उपज आती है, चाहे वह काल्पनिक हो या यथार्थ— उस क्षीण तन्तु के बल पर ही लम्बे, अकेले पल कट जाते हैं।"[४] सारांश यह है कि सुश्री प्रियंवदा ने कथानक और अभिव्यंजना दोनों में सहज चारुता को महत्त्व दिया है।

२७. सुश्री पुष्पा महाजन

सुश्री पुष्पा महाजन ने 'घूमते नक्षत्र' शीर्षक सामाजिक उपन्यास की रचना की है, जिसमें उन्होंने समाज के व्यक्तियों को गगनस्थ नक्षत्रों की संज्ञा दी है। जिस प्रकार नक्षत्र संयोगवश परस्पर संयुक्त तथा वियुक्त होते रहते है, उसी प्रकार व्यक्ति भी परिस्थितियों के प्रभाव से कभी मिलते हैं और कभी विलग हो जाते हैं। इसमें साधना, माधवी और श्रीकान्त की पारिवारिक कथाएँ साथ-साथ विकसित हुई हैं। जातीय भिन्नता के कारण साधना का विवाह श्रीकान्त से न होकर रंजीत से हुआ, किंतु उसकी विलासी प्रवृत्ति के कारण साधना सुखी न हो सकी। माधवी का जीवन भी इस दृष्टि से सुखी न था, क्योंकि उसके पिता के हठ और उसके अभिमान-मिश्रित क्रोध के कारण उसका एकनिष्ठ प्रेमी मकरन्द उन्मादग्रस्त हो गया। फलतः उसने अनुतप्त होकर आजन्म ब्रह्मचारिणी रहने का प्रण कर लिया। उसने विधवाओं और निराश्रिता स्त्रियों की सेवा के लिए 'नारी मंदिर' की स्थापना की, जिसमें साधना और श्रीकान्त भी तन-मन से योग देते थे। श्रीकान्त की छोटी बहिन रेखा और साधना की छोटी बहिन

---

१. देखिये 'पचपन खम्भे लाल दीवारें', पृष्ठ २२, २३, २७

२-३-४. पचपन खम्भे लाल दीवारें, पृष्ठ २२, २३, २५

सरिता के विवाह-सम्बन्ध (क्रमशः रमेश तथा हेमन्त से) सुखकर सिद्ध हुए, क्योंकि अभिभावकों ने जातीय भिन्नता की उपेक्षा करते हुए वर के गुणों को महत्त्व दिया। स्पष्ट है कि इस उपन्यास की कथा सोद्देश्य है, किन्तु कहीं-कहीं लेखिका ने विवरणात्मक शैली का आश्रय लेते हुए सामान्य प्रसंगों को भी विस्तार से वर्णित किया है। वातावरण के देशकालानुरूप चित्रण में तन्मय हो जाने के कारण कथानक में कहीं-कहीं शिथिलता आ गई है। ऐसे प्रसंगों मे मूर्ति-पूजा, सन्ध्या, उपासना आदि के उल्लेख द्वारा लेखिका ने अपने आस्तिक भावों को व्यक्त किया है। जैसे, कथागत घटनाएँ मन्द-मन्थर गति से विकसित हुई हैं और उनमें रोचकता का अभाव नहीं है।

'घूमते नक्षत्र' में साधना, माधवी और श्रीकान्त के पारिवारिक सदस्यों के रूप में अनेक पात्रों को स्थान प्राप्त हुआ है, किन्तु प्रमुख पात्र है—साधना, माधवी, श्रीकान्त और उसकी बहिन रेखा। समाज-सेवा, कर्मठता, परोपकार, स्नेह, सहनशीलता आदि सद्गुणों की दृष्टि से उक्त चारों पात्रों का चरित्र प्रायः एकरूप है। साधना के पति रंजीत के अतिरिक्त अन्य गौण पात्रों में भी प्रायः सद्वृत्तियों का विकास हुआ है। रंजीत के मन में भी परिस्थितिवश अन्त में अनुतापमयी भावनाएँ जाग्रत हुई, जिससे उसकी दुष्प्रवृत्तियों का पर्याप्त परिष्कार हो गया। लेखिका ने परिस्थिति-योजना तथा कथोपकथन के अतिरिक्त अनेकश- प्रत्यक्ष-कथन-प्रणाली में भी पात्रों की विशेषताओं को व्यक्त किया है। उदाहरणार्थ निम्नलिखित उक्ति में श्रीकान्त का चरित्र द्रष्टव्य है— 'श्रीकान्त और उसके मित्र सच्चे हृदय से जन-सेवा करना चाहते थे। यह बात श्रीकान्त के लिए नवीन न थी। वह अपने कॉलिज के दिनों से ही सेवा में रुचि रखता था। कॉलेज की रैडक्रास सोसायटी का वह प्रधान था। यों भी किसी को कष्ट होता, रोग होता वह सदैव तत्पर रहता था। अध्यापन के पश्चात् उसके विचार बहुत विकसित हो रहे थे।'[1] श्रीकान्त के हृदय मे साधना के प्रति जो अव्यक्त प्रेम था, उसकी अभिव्यक्ति लेखिका ने यत्र-तत्र बड़े मनोवैज्ञानिक ढंग से की है। उन्होंने रोचक और संक्षिप्त कथोपकथन द्वारा पात्रों की भावनाओं, कथानक और देशकाल को यथाप्रसंग मुखरित किया है। कतिपय स्थलों पर तर्कपूर्ण संवादों को भी स्थान प्राप्त हुआ है। माधवी और सावित्री (साधना की माता) के समाज विषयक वार्त्तालाप एवं हेमन्त तथा स्वामी जी के आध्यात्मिक संवाद ऐसे ही हैं।[2] लेखिका ने संवादों में नाटकीयता के समावेश अथवा भाव-मुद्राओं की सूचना की ओर भी यथोचित ध्यान दिया है।

'घूमते नक्षत्र' में देशकाल के चित्रण की ओर विशेष ध्यान दिया गया है। इसके कथानक का सम्बन्ध मुख्यतः अमृतसर से रहा है, अतः वहाँ के स्थानादि की लेखिका ने प्रायः चर्चा की है। उदाहरणार्थ हास्पीटल रोड को समीपस्थ बाजार से मिलानेवाले

---

१. घूमते नक्षत्र, पृष्ठ ३५
२. देखिये 'घूमते नक्षत्र', पृष्ठ ८२, ८३, १३८

पुल के विषय में उन्होंने लिखा है—"१९५३ में इसे बिल्कुल नये सिरे से बनवाया और इसका नाम 'पदम भण्डारी पुल' रख दिया गया।"[1] पुल पर रहनेवाले भिक्षुकों की जीर्ण-शीर्ण दशा तथा उनकी भिक्षावृत्ति के विषय में भी विस्तार से उल्लेख किया गया है।[2] श्रीकान्त तथा सरिता के पति हेमन्त की यात्रा के प्रसंग में हरिद्वार, हर की पौड़ी, गंगा की उज्ज्वल धारा, दीपदान आदि दृश्यों का रोचक चित्रण हुआ है।[3] स्वतन्त्रता के उपरान्त भारत के विभिन्न क्षेत्रों में प्रगति की जो लहर व्याप्त हुई, उसका लेखिका ने यत्र-तत्र प्रासंगिक रूप में उल्लेख किया है। इसके अतिरिक्त अनेकश: देशकाल सम्बन्धी तथ्यो को सूक्ति-वाक्यों में भी व्यक्त किया गया है। यथा—"अधिक शिक्षित नारी वर्ग देश-सेवा के क्षेत्र में नाम का भूखा है, काम का नही।"[4]

सामाजिक कुरीतियों (जातीय भेदभाव, दहेज-प्रथा, विधवा की दुर्दशा आदि) का उल्लेख करके उनके निवारण की दिशा में आदर्श प्रस्तुत करना इस कृति का लक्ष्य है। साधना, रेखा, माधवी और श्रीकान्त अपनी-अपनी परिस्थितियो के अनुसार समय मिलने पर पीड़ितों एवं निराश्रितों की सेवा करते हैं। उनका मुख्य कार्यक्षेत्र माधवी द्वारा प्रतिष्ठित 'नारी मन्दिर' है, जहाँ पीड़ित नारियों को सम्मानपूर्वक जीविका प्राप्त करने का अवसर प्राप्त होता था। लेखिका के मत में पुरुषो की भाँति महिलाओं को भी देश-सेवा में योग देना चाहिए और यदि समाज के निन्दक इसमें बाधक हों तो उनकी उपेक्षा करनी चाहिए।[5] इसमे व्यक्त किया गया एक अन्य सन्देश यह है कि पत्नी पति की सहचरी है—पति के अत्याचारों के आगे झुकना उसका कर्त्तव्य नहीं, किन्तु पति को कष्ट में देखकर पूर्व-क्रोध का विस्मरण कर पति-सेवा उसका धर्म है।[6] इस प्रकार लेखिका ने अथ से इति तक उत्तम भावों की व्यंजना की है। प्रेम तथा विवाह के क्षेत्र मे जाति-बन्धन की अपेक्षा वे सुपात्र-चयन को अधिक महत्त्व देती है। इसी कारण साधना और रंजीत के विवाह को असफल और रेखा तथा रमेश एवं सरिता तथा हेमन्त के विवाह को सफल दिखाया गया है।

सुश्री महाजन ने कथानक की सुचारु अभिव्यक्ति के लिए भाषागत व्यावहारिकता की ओर विशेष ध्यान दिया है। उन्होने संस्कृत के सरल तत्सम शब्दों का प्रचुर प्रयोग किया है, किन्तु विदेशी शब्दों के प्रयोग की प्रवृत्ति उनकी रचना मे बहुत कम है। 'शीघ्रता' के अर्थ में 'त्वरा' के प्रयोग के फलस्वरूप कही-कहीं वाक्य-विन्यास में कृत्रिमता आ गई है। यथा—"त्वरा से सावित्री भीतर गई और लिफ़ाफा ले आई।"[7] भरा पूरा,

---

१. घूमते नक्षत्र, पृष्ठ २८
२–३. देखिये 'घूमते नक्षत्र,' पृष्ठ ९९-१००, १३३-१४४
४. घूमते नक्षत्र, पृष्ठ ९६
५-६. देखिये 'घूमते नक्षत्र', (अ) पृष्ठ ७८, ८२ (आ) पृष्ठ ३३८
७. घूमते नक्षत्र, पृष्ठ ९

वेश-भूषा, बहू-बेटियाँ, रुखी-सूखी, लल्लो-चप्पो जैसे शब्द-युग्मों के प्रयोग द्वारा उन्होंने भाषा में प्रवाह की योजना की है। पंजाबी भाषा के प्रभावस्वरूप उन्होंने एक ओर 'मोहणी'[१] जैसे शब्दों का प्रयोग किया है और दूसरी ओर वाक्य-विन्यास पर भी इस प्रभाव को लक्षित किया जा सकता है। यथा—"आगे ही मुझे तो विलम्ब हो गया।"[२] लेखिका ने मुहावरों के प्रसंगानुकूल सजीव प्रयोग के साथ ही सूक्ति-वाक्यों की भी स्वाभाविक योजना की है। यथा—"मैत्री के लिए स्वभाव कर्म के सामंजस्य की अपेक्षा नहीं होती। हृदय की कोमल अनुभूति ही यह ग्रन्थि जोड़ देती है।"[४] अतः यह कहा जा सकता है कि सुश्री महाजन ने इस उपन्यास में पारिवारिक मर्यादाओं और सामाजिक दायित्वों को सरल भाषा में सफलतापूर्वक प्रकट किया है।

२८. श्रीमती नारायणी कुशवाहा

श्रीमती नारायणी कुशवाहा ने १८७ पृष्ठों में 'पराये बस में' शीर्षक उपन्यास की रचना की है, जिसमें उन्होंने ग्राम्य जीवन के क्रोड में सामाजिक कथानक प्रस्तुत किया है। संक्षेप में कथानक इस प्रकार है—"संपत दिघ्घी ग्राम का निर्धन कृषक था। उसके जीवन का सबसे बड़ा दुःख यह था कि उसकी इकलौती पुत्री मुरली सुन्दरी होते हुए भी नेत्रहीन थी। अन्य कोई उपाय न देखकर पुत्री के नेत्र-दोष की बात गुप्त रखते हुए उसने तारापुर ग्राम के ज़मींदार के पुत्र से उसका विवाह निश्चित कर दिया। सात भाँवरें पड़ चुकी थीं और निकट ही था कि सब कुछ निर्विघ्न समाप्त हो जाता, कि ग्राम के खल कुम्हार जग्गू ने दुष्टतावश ज़मींदार को वास्तविकता से परिचित करा दिया। फलतः वे बिना वधु के बारात लौटा ले गये। मुरली पतिपरायणा भारतीय नारी थी। उसने अपने मुँहबोले भाई शम्भू की सहायता से अपने पति को अनेक कष्ट एवं अपमान सहकर अन्त में पा ही लिया। इस प्रयास में उसे शम्भू के साथ दर-दर भटकना पड़ा, जिसका शुभ परिणाम यह हुआ कि नगर के एक योग्य डॉक्टर श्रीनाथ की चिकित्सा से उसकी नेत्र-ज्योति लौट आई।" यद्यपि इस उपन्यास में घटनाओं का अन्तर्गुम्फन अथवा समस्याओं की मनोवैज्ञानिक गहराई सुलभ नहीं है, तथापि ग्राम्य जीवन की सरलता को लक्ष्य में रखते हुए लेखिका ने जो सहज-सरस कथानक प्रस्तुत किया है, वह निश्चय ही श्लाघनीय है।

लेखिका ने इस उपन्यास में पात्रों के चरित्र को विविधतापूर्ण रखा है। मुरली अपनी पति-निष्ठा के बल पर अन्त में अपने आराध्य को पा सकी, शम्भू आकृति से कुरूप होकर भी हृदय से उदार एवं परदुःखकातर युवक था, जग्गू कुम्हार किसी को फलते-फूलते नहीं देख सकता था और उसकी पत्नी अनूपा ज़बान की कड़वी होकर भी

१. घूमते नक्षत्र, पृष्ठ २०, २१, ७३, ६३, ६६
२-३-४. घूमते नक्षत्र, पृष्ठ २६, ७६, ८७

मन से उतनी बुरी नहीं थी। इनके अतिरिक्त जमीदार सजीवनलाल, उनके पुत्र रामदयाल आदि इस बात के प्रमाण हैं कि लेखिका ने मानवीय प्रकृति को उसकी विविधता में ग्रहण किया है। पात्रों की आकृति एव प्रकृति का इतना चित्रात्मक वर्णन हुआ है कि पाठक को कही भी कल्पना का आश्रय लेने की आवश्यकता नही रहती। उदाहरणार्थ जग्गू तथा अनूपा के विषय मे ये पक्तियाँ अवलोकनीय हैं—

(अ) "जग्गू नाटे कद का था। रग काला, आँखें भूरी, दाँत पीले और बड़े बालों पर गीली मिट्टी।"[1]

(आ) "चार बच्चों की माँ थी अनूपा मगर एक भी बच्चा जीवित न था। चार बच्चो के शोक मे पागल अनूपा का स्वभाव चिड़चिडा हो गया था। मुख पर एक दैन्य वीभत्सता थी, जिससे उसका कुछ-कुछ सुन्दर मुँह बोलते समय अजीव भयानक ढंग का हो जाता था।"[2]

आलोच्य पात्रों को सर्वाधिक साकार रूप देने का श्रेय उनके वार्त्तालापों को देना चाहिए। श्रीमती नारायणी पात्रानुकूल सजीव कथोपकथनों की योजना मे इतनी सिद्धहस्त है कि उपन्यास का प्रत्येक परिच्छेद रगमच पर खले जानेवाले नाटक के गुणों से युक्त है। ग्रामीण पात्रो के लिए सहज-सुलभ गाली-गलौज, व्यग्य-विद्रूप, हास-परिहास, मुहावरे, उक्ति-वैचित्र्य, सरलता, आत्मीयता आदि विशेषताएँ संवादों मे सर्वत्र अवलोकनीय हैं। जग्गू और उसकी पत्नी तथा संपत और उसकी पत्नी के वार्त्तालाप विशेष सजीव हैं। उदाहरणार्थ अनूपा के प्रति उसके पति की यह उक्ति देखिए—"तुम घबड़ाती क्यो हो? संपत तो अभी खुद ही मर रहा है, रुपया क्या देगा?······बेटा चले थे जमींदार के यहाँ शादी करने—ऐसी चाल चली कि बच्चा खून के आँसू रो पड़े। उस दिन बड़ी अकड़ दिखा रहे थे। अब सारी हेंकड़ी हवा हो गयी। अब कभी जग्गू कुम्हार के मुँह लगे तो कहना। बड़े-बड़ों को रास्ता दिखा दिया है, इस संपत की ऐसी-तैसी!"[3]

ग्रामीण जीवन का चित्रण करने के लिए लेखिका ने यथाप्रसंग ग्राम्य वातावरण के विविध दृश्य अंकित किये है। यथा—खेतों-खलिहानों में बारातियों का इकट्ठा होना, ढोलक-मजीरे आदि वाद्य-यन्त्र, भांडो का नृत्य[4], अपढ़ ग्रामीणों का बात बात पर झगड़ पड़ना, गाली-गलौज, मार-पीट पर उतर आना[5], अशिक्षित होने के कारण ग्राम्य नारियो का पराये मर्दों से उच्छृंखल-उद्दण्ड व्यवहार[6], गाँव की लुभावनी सन्ध्या के रोचक दृश्य[7] (पक्षियो का लौटना, पशुओं का प्रत्यागमन, भैंस की पीठ पर बैठे चरवाहों का मधुर गान, लौटती हुई युवतियों के पायलो की रुनझुन आदि), रात्रि में अधिकांश ग्राम-निवासियों का शीघ्र ही खा-पीकर सो जाना, कुछ लोगो का गप्पें मारना या दूसरो की शिकायत में जुट जाना[8] भी प्रसंगानुकूल चित्रित हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि लेखिका ने प्रस्तुत

१-२-३. पराये बस में, पृष्ठ २१, २१, २१-२२

४-५-६-७-८. देखिये 'पराये बस में', पृष्ठ ८, ३२, ५६, ८८, ८९

उपन्यास में देश और काल का यथोचित चित्रण किया है। अनेकशः व्यक्तिगत प्रसंगों को लेकर समाज की प्रवृत्तियों की ओर भी संकेत किये गए हैं। उदाहरणार्थ अन्धी मुरली का विवाह न हो पाने के प्रसंग में लेखिका की यह उक्ति द्रष्टव्य है – "नारी का एक ज़रा-सा अवगुण भी समाज की दृष्टि में असहनीय होता है। पग-पग पर पिसी जाती हुई नारी को कहीं त्राण नहीं। पुरुष चाहे कितना भी कुरूप, कितना भी मन्द बुद्धि, कितना भी चरित्रहीन हो, परन्तु नारी की तुलना में वह हमेशा उच्च है। आधुनिक पुरुष-समाज ने नारी की बड़ी दुर्गति कर डाली है।"[1]

ग्राम्य जीवन का सहज चित्रण आलोच्य उपन्यास का लक्ष्य है और इसमें कोई सन्देह नहीं कि लेखिका को इसमें सफलता प्राप्त हुई है। उन्होंने यथार्थ (जग्गू, अनूपा, संजीवन लाल, रामदयाल आदि) एवं आदर्श (शम्भू, मुरली, श्रीनाथ) दोनों का चित्रण किया है, किन्तु अस्वाभाविकता अथवा अतिवाद का दोषारोपण कहीं भी नहीं किया जा सकता। इस कृति की भाषा सरल, सरस एवं प्रभावपूर्ण है तथा शैली में सहज प्रवाह है, जो अनायास ही पाठक को आकृष्ट कर लेता है। अवसरानुकूल सरस मुहावरों के प्रयोग से रचना का सौन्दर्य बढ़ गया है। उदाहरणस्वरूप ये प्रयोग देखिए—(अ) "जान-बूझकर गले में फूटी ढोल कौन लटकाना चाहता"[2], (आ) "औरत में ज़रा भी खोट सुन ली तो बैल की तरह पगहा तुड़ाकर विगड़कर नौ-दो ग्यारह हो गए।"[3] लेखिका ने उपमेयों के अनरूप यथोचित उपमानों और भावानुरूप मार्मिक सूक्तियों द्वारा भी कथा का शृंगार किया है।[4] प्रस्तुत उपन्यास की विशेषता यह है कि इसमें ग्राम्य जीवन का अत्यन्त स्वाभाविक चित्रांकन हुआ है। प्रेमचन्द के उपरान्त उपन्यासकारों ने इस क्षेत्र में विशेष सफलता का परिचय नहीं दिया; और यदि महिला उपन्यासकारों की ओर दृष्टिपात करें तो कहना होगा कि किसी ने इस दिशा में विशेष प्रयास ही नहीं किया।[5] इसी कारण श्रीमती नारायणी कुशवाहा का 'पराए बस में' उपन्यास हिन्दी-साहित्य में महत्त्वपूर्ण स्थान का अधिकारी है। प्रेमचन्द की उपन्यास-परम्परा में यह एक सफल योगदान है। भाव एवं अभिव्यंजना दोनों की दृष्टि से इसका गौरव अप्रतिम है।

२९. सुश्री शिवानी

शिवानी हिन्दी-कथा-साहित्य की उदीयमान लेखिका हैं। उनकी अनेक कहानियाँ 'धर्मयुग', 'सारिका' आदि समकालीन पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं। आजकल उनका 'चौदह फेरे' शीर्षक उपन्यास 'धर्मयुग' में धारावाहिक रूप में प्रकाशित हो रहा

१-२-३. पराये बस में, पृष्ठ १४, १५, १७

४. देखिये 'पराये बस में', पृष्ठ १६, ३३, १४

५. यह उल्लेख अप्रासंगिक न होगा कि मेरा उपन्यास 'वंश-वल्लरी' भी ग्राम-जीवन से संबद्ध है।

है। इसके पूर्व 'मायापुरी' उपन्यास पुस्तक-रूप में प्रकाशित हो चुका है; उसी की समीक्षा यहाँ अभिप्रेत है। इसमे पहाड़ी कन्या शोभा के संघर्षपूर्ण जीवन की कथा अंकित है। शोभा सुन्दरी थी, शिक्षिता थी, किन्तु सुख उसके भाग्य मे न था। एम० ए० तक शिक्षा पूर्ण होते-न-होते वह पिता, तीन छोटे भाइयों और बाद मे माता से भी वंचित होकर पूर्णतया निराश्रिता रह गई। सतीश नामक युवक उससे प्रेम करता था, किन्तु वह इस लिए उससे विवाह न कर सका कि उसका सम्बन्ध पहले ही राजदूत तिवारी जी की कन्या सविता से निश्चित हो चुका था और सतीश मे इतनी दृढ़ता न थी कि वह माता-पिता का विरोध करके शोभा को अपना लेता। कुछ दिन कटुस्वभावा मामी के आश्रय में रहने के बाद शोभा को एक रानी की सेक्रेटरी का पद मिल गया और इस प्रकार एक स्थायी और सुखद आश्रय मिल जाने से उसके कष्टों का अन्त हो गया। वहीं रहकर उसे ज्ञात हुआ कि सतीश स्थूलांगी दुश्चरित्रा सविता के साथ रहकर प्रसन्न नहीं है। फिर एक दिन एक दुर्घटनावश सतीश के दोनो पैर कुचले गये और शीघ्र ही उसकी मृत्यु हो गई।

उक्त कथा के संदर्भ में यत्र-तत्र एक-आध लघु गौण कथाओं का भी समावेश हुआ है। लेखिका ने समाज के विभिन्न वर्गों से पात्रों का चयन किया है। नायिका शोभा अनुपम सौंदर्य एवं विविध गुणों से युक्त है। नायक सतीश सुन्दर तथा योग्य युवक है, किन्तु घर में माता के कठोर शासन के कारण वह अपना जीवन अनिश्चित दिशा में मोड़ लेने को विवश हो जाता है। सतीश के मित्र अविनाश के सरल एवं सरस व्यक्तित्व ने कथानक मे यत्र-तत्र सजीवता की सृष्टि की है। पूर्व-प्रेयसी उषा द्वारा धोखा दिए जाने के कारण अविनाश नारी मात्र को छलावा मानता था, किन्तु जब सतीश की एकमात्र बहिन मंजरी ने अविनाश से सोलह वर्ष छोटी होने पर भी उसे अपना आराध्य मान लिया तो अविनाश को भी विवाह की स्वीकृति देनी पड़ी। मंजरी सरल-हृदया युवती है और शोभा से उसका प्रगाढ़ स्नेह विशेषतः उल्लेखनीय है। सविता उपनायिका है और राजदूत की कन्या होने के कारण उसमें सिगरेट, मद्यपान, पर-पुरुष-प्रेम आदि वे सब दुर्गुण है जो वर्तमान उच्च वर्ग में सभ्यता के चिह्न समझे जाते हैं। तिवारी जी भी अपने वर्ग के सच्चे प्रतिनिधि हैं। अपने धन के बल पर वे सतीश-जैसे योग्य युवक को जामाता-रूप में क्रय कर ही लेते हैं। स्नेहिलहृदया एवं पतिप्राणा रानी, क्रूर एवं विलासी राजा, शोभा की कर्कशा मामी रुक्की, उसके मजनू भाई रामी, सविता के घर समाधि लगानेवाले ढोंगी महात्मा, मुँह में गाली, किन्तु मन में स्नेह रखनेवाली रानी की सेविका शिवकली आदि गौण पात्रों के चित्रण में लेखिका ने वर्गगत विशेषताओं के अतिरिक्त व्यक्ति-वैचित्र्य का भी समावेश किया है। 'जैसा देश वैसा भेष' के अनुसार लेखिका ने ग्रामवासियों को अत्यन्त सरल तथा एक-दूसरे के सुख-दुःख में सहायक दिखाया है। रसिया चाचा, पधान दादी, चूड़ीवाला आदि पात्र शोभा के साथ हार्दिक सहानुभूति का व्यवहार करते हैं। पधान दादी ने जिस सरलता से शोभा के कल्याण के लिए अपनी चिरसंचित पूंजी उसे अर्पित कर दी, वह भावना श्लाघ्य है।

पात्रों का चरित्र-चित्रण करते समय लेखिका ने परिस्थिति तथा पृष्ठभूमि को सदैव लक्ष्य में रखा है। शोभा सर्वगुणसम्पन्ना होने पर भी हीन भाव से युक्त है, क्योंकि उसकी परिस्थितियाँ ही ऐसी थी। पर-घर में पर-दया पर निर्भर रहकर (सतीश के घर में) यदि वह अपनी महत्ता सिद्ध भी करती तो यह उचित प्रतीत न होता। मुख्य रूप से परिस्थिति-चित्रण तथा संवाद-योजना द्वारा चरित्रांकन किया गया है, किन्तु यत्र-तत्र पात्रों के चिन्तन-प्रवाह में अन्य पात्रों की विशेषताओं का भी समावेश हुआ है। उदाहरणार्थ शोभा के विषय में सतीश की यह विचारधारा द्रष्टव्य है—"वह सामान्य लड़की नहीं थी, उसकी आँखों में अगाध गाम्भीर्य था, उसकी दुर्बल देह-लता में बुद्ध-जैसा तेज था।"[1]

आलोच्य उपन्यास में पात्रानुकूल संवाद-योजना की गई है। उदाहरणस्वरूप शोभा की मामी की उक्तियाँ उल्लेखनीय हैं : वह जब भी बोलती है, ताने से अथवा गाली देकर।[2] इसी प्रकार शिवकली के कथन उसके स्नेहमय मन एवं वर्गगत भाषा के प्रमाण हैं। सविता, मंजरी, अविनाश आदि पात्र बीच-बीच में एक-आध अंग्रेज़ी-शब्द अथवा वाक्य का प्रयोग भी करते हैं। कतिपय पहाड़ी पात्रों द्वारा यत्र-तत्र आंचलिक भाषा का भी प्रयोग कराया गया है। यथा—"नी खानी भ्रन खै ?—नहीं खाती तो मेरी बला से।"[3] किन्तु, पहाड़ी शब्दावली के तुरन्त बाद लेखिका ने उसका हिन्दी-अर्थ दे दिया है, जिससे पाठकों को असुविधा न हो।

आलोच्य उपन्यास में मुख्यतः लखनऊ, नैनीताल, दिल्ली और पहाड़ का एक गाँव (शोभा का ग्राम) कथानक के केन्द्र रहे हैं। इनमें पहाड़ के रीति-रिवाजों का यत्र-तत्र विस्तृत उल्लेख हुआ है। यथा—

(अ) "पहाड़ी स्कूलों में बच्चे यदि बिना टोपी के जाएँ तो उन्हें कठोर दण्ड मिलता था।"[4]

(आ) "जनेऊ होने तक लड़कों के बाल नहीं काटते और वे लड़कियों की भाँति चोटी बाँधते हैं।"[5]

(इ) "उसके गाँव में पारिजात का एक पेड़ उसी के घर से सटकर लगा है। भोर होते ही गाँव की औरतें आँचलों में भर-भरकर 'लाख' चढ़ाने ले जाती हैं। कहते हैं कि एक लाख पारिजात पुष्प चढ़ाने से विष्णु प्रसन्न हो निःसन्तान को सन्तान एवं कुमारियों को कार्तिकेय-सा सुन्दर वर देते हैं।"[6]

'मायापुरी' के अनेक प्रसंगों में आंचलिक उपन्यास की विशेषताओं का समावेश हुआ है। ग्राम्य वातावरण के अत्यन्त सहज चित्र लेखिका ने अंकित किये हैं। यथा—छतों पर कपड़े सूखना, गाय-भैंसों की घंटियों का स्वर, चूड़ीवाले के आने पर सबका घेर

---

१. मायापुरी, पृष्ठ २०३

२. देखिये 'मायापुरी', पृष्ठ १३४, १४२

३-४-५-६. मायापुरी, पृष्ठ ११०,१,६,२२

कर खड़े हो जाना और भिन्न-भिन्न प्रकार से जिज्ञासा व्यक्त करना आदि ।[1] प्रसंगानुकूल नागरिक जीवन के चित्रण में भी लेखिका सफल रही है । यथा—राजदूत तिवारी जी के व्यस्त राजनीतिक एवं पारिवारिक जीवन की झलक, आधुनिक सभ्यता की प्रतीक सविता की मद्यपान आदि प्रवृत्तियाँ, ढोंगी साधुओं के प्रतीक-रूप 'पीले बाबा' का व्यंग्य-पूर्ण उल्लेख आदि । नेपाल की रानी के राजभवन के दृश्य, उनके रीति-रिवाज़ आदि का चित्रण करके लेखिका ने विगत सामन्तवादी जीवन का चित्रांकन किया है । राजा जी की विलासप्रियता, रानी के प्रति कटु व्यवहार,[2] राजा के मित्र कर्मचन्द का कलुषित जीवन[3] आदि इस प्रसंग मे विशेषतः उल्लेखनीय है । लेखिका का प्रतिपाद्य यह है कि वर्तमान भौतिक युग में अर्थ की शक्ति सबसे बड़ी है, किन्तु मानसिक शांति अर्थ द्वारा क्रय नहीं की जा सकती । धन के कारण शोभा को सतीश से विलग होना पड़ा, किन्तु सतीश तथा उसके माता-पिता भी सविता को पाकर मानसिक दृष्टि से शांत न हो सके । यों संसार की दृष्टि में वे सर्वाधिक प्रसन्न थे, कर्ज़ा सब चुक गया था, विलास के सब साधन प्रस्तुत थे ।

'मायापुरी' की रचना सजीव एवं प्रवाहपूर्ण भाषा में हुई है । चपेटाघात, कर्णमर्दन, देहवल्लरी, इंजनारूढ़, स्कन्ध-स्पर्श[4] आदि क्लिष्ट समस्त-शब्दों ने यत्र-तत्र कृत्रिमता अवश्य उत्पन्न की है, किन्तु कुल मिलाकर भाषा प्रभावपूर्ण बन पड़ी है । प्रसंगानुकूल देशज शब्दों (घुटकने लगते, भूजने को डाल दिये, थुल्मा)[5] और अवसरोचित रोचक मुहावरों ने भाषा में सजीवता का विशेषतः संचार किया है। अनेक प्रसगो मे आलंकारिक शब्दावली का भी सुन्दर प्रयोग हुआ है । यथा—

(अ) "शोभा की बड़ी-बड़ी तश्तरी-सी आँखों में आँसू डबडबा आये ।"[6]

(आ) "पेड़ों के बीच से झाँकती गोल गोलाकार सर्पिणी-सी पगडंडियाँ लोगों के चलने से मुखर हो उठीं ।"[7]

पहाड़ी पात्रों के संवादों की योजना मे लेखिका ने कुछ स्थानीय शब्दो एवं वाक्यों का भी यत्र-तत्र प्रयोग किया है । यथा—बेटियों के लिये चेलियों, चूड़ीवाले के लिये मोला, मुसलमान भाई के लिये मुसली दाज्यू आदि ।[8] निष्कर्ष-रूप में श्री चन्द्रगुप्त विद्या-लंकार का मन्तव्य देखिए—"उपन्यास की शैली पुराने ढग की है, कुछ-कुछ पिछले बंगाली सामाजिक उपन्यासों के ढंग की । पर न सिर्फ़ उपन्यास में खूब अच्छी पकड़ है,

---

१. देखिये 'मायापुरी', पृष्ठ १२०-१२१

२-३-४. देखिये 'मायापुरी', (अ) पृष्ठ १३७, (आ) पृष्ठ १५८, (इ) पृष्ठ १, १,८८, १३९, १५९

५. देखिये 'मायापुरी', पृष्ठ १, २, ५

६-७. 'मायापुरी', पृष्ठ ८३, १

८. देखिये 'मायापुरी', पृष्ठ १२१, १२१, १२१

अपितु लेखिका कुछ सजीव पात्रों का निर्माण करने में भी सफल हुई है। चित्रण और कथानक में कुछ अनावश्यक रूप से गहरे शेड देने का प्रयास लेखिका ने अवश्य किया है।"[1]

३०. सुश्री मालती परूलकर

सुश्री मालती परूलकर ने जहाँ अनेक सामाजिक कहानियों की रचना की है, वहाँ १३ परिच्छेदों और १२८ पृष्ठों में 'वाली' शीर्षक सामाजिक उपन्यास भी लिखा है। इसमें नायक-नायिका के मिलन और विरह विषयक घटनाओं का स्थूल अंकन हुआ है। वाली और शिरीष बम्बई की एक कालोनी में रहते थे। वाली डॉक्टरी पढ़ रही थी और शिरीष इंजीनियर था। नित्य-दर्शन एवं सम्भाषण के फलस्वरूप दोनों में प्रेम-भाव का उत्तरोत्तर विकास होता गया। एक दिन नित्य के सांकेतिक मिलन-स्थल पर शिरीष को अनुपस्थित पाकर वाली बहुत चिन्तित हुई। बाद में उसकी रुग्णावस्था का बोध होने पर वह शिरीष के मित्र पटवर्धन की सहायता से उसके घर पहुँची और उसकी सेवाशुश्रूपा से उसकी दशा सुधरने लगी। मुख्य कथानक केवल इतना ही है—वाली और शिरीष के माता, पिता, भाई, भाभी आदि अन्य पारिवारिक सदस्यों के परिचय, जीवन-इतिहास आदि को लेखिका ने पृष्ठभूमि में रखा है, जो कहीं नायक अथवा नायिका के चिन्तन-प्रवाह में[2] और कहीं उनके कथोपकथन में प्रसंगानुकूल व्यक्त हुआ है।[3] मुख्य एवं गौण घटनाओं के समुचित सुगुम्फन में तो लेखिका सफल रही हैं, किन्तु घटनायें इतनी शिथिल एवं मन्थर गति से विकसित हुई हैं कि कथानक में वांछित वेग एवं रोचकता का प्रायः अभाव रहा है।

कथानक की भाँति चरित्र-चित्रण में भी लेखिका ने केवल स्थूल प्रवृत्तियों का उल्लेख किया है—पात्रों के अंतराल में पैठकर उनके सूक्ष्म मनोविज्ञान की व्याख्या उनका लक्ष्य नहीं है। वाली के स्नेहपूर्ण, सरल, मर्यादापूर्ण एवं उदार व्यक्तित्व के चित्रण मे लेखिका को विशेष सफलता मिली है। पात्रानुकूल संवादों के प्रमाण-रूप में सप्तम परिच्छेद के प्रारम्भ में शिरीष के ताऊ की उक्तियाँ उल्लेखनीय है।[4] गाली, व्यंग्य, आत्मप्रशंसा और मुहावरों से युक्त लच्छेदार कथन मानो उनके रोचक व्यक्तित्व के स्पष्ट प्रतिबिम्ब हैं। आलोच्य कथानक का केन्द्र-स्थल बम्बई नगर है। अतः वहाँ के दर्शनीय स्थानों की यत्र-तत्र प्रासंगिक चर्चा की गई है। यथा—गजानन का प्रसिद्ध आलय, मुंबापुरी का मन्दिर[5] आदि। महालक्ष्मी में समुद्र के ऊपर बँधे पुल तथा नीचे बने मंदिर के विषय में प्रचलित किंवदन्ती का उल्लेख करके लेखिका ने भारतीयों में

---

१. आजकल, अक्तूबर १९६१, पृष्ठ ४९-५०

२-३-४. देखिये 'वाली', पृष्ठ ४०-५१, ८६-८७, ७४-७६

५. देखिये वाली, पृष्ठ ५४

प्रचलित धार्मिक अन्धविश्वासों का उदाहरण प्रस्तुत किया है। कहते हैं कि पहले वहाँ पर जो पुल बनाया जाता था, वह टूट जाता था। बाद में एक बार एक इंजीनियर को देवता ने दर्शन देकर कहा कि यदि नीचे उसका मंदिर बन जाएगा, तभी ऊपर का पुल बन सकेगा और फिर वैसा ही हुआ।[1]

स्पष्ट एवं प्रवाहपूर्ण भाषा-शैली में एक सरल प्रेम-कथा का वर्णन आलोच्य कृति का एकमात्र लक्ष्य है। भाषा-शुद्धि की अपेक्षा लेखिका ने उसे व्यावहारिक बनाने की ओर अधिक ध्यान दिया है; फलतः उसमें तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशी—चारों प्रकार के शब्दों का प्रसंगानुकूल मिश्रण हुआ है। प्रकृति-चित्रण के समय अथवा किसी मार्मिक प्रसंग का वर्णन करते समय लेखिका की शैली प्रायः भाव-प्रवण हो उठी है। यथा—"बस की ऊपरी मंज़िल की खिड़की से बाली की नज़र अथाह फैली जल-राशि पर गई। ज्वार अपने पूरे ज़ोर पर था। लहरें बाँध से टकरा-टकराकर, उछलकर राह पर पानी फेंक रही थीं, दूधिया चाँदनी में, वेगवती नागिन-जैसी दौड़कर आनेवाली फुटकर फुहार फेंकनेवाली लहरों में एक अजीब उन्माद था।"[2] यह बड़े आश्चर्य की बात है कि लेखिका ने 'ताई' शब्द का प्रयोग बहन के लिये किया है[3], जबकि 'ताऊ' शब्द पिता के बड़े भाई के लिये ही प्रयुक्त हुआ है[4]; जैसा कि होना भी चाहिये। निष्कर्ष-रूप में ज्ञातव्य है कि 'बाली' आकार एवं प्रकार दोनों की दृष्टि से अत्यन्त लघु उपन्यास है। इसमें कथानक इतना नगण्य है कि यदि इसमें से परिच्छेदों का बन्धन हटा दिया जाए तो निश्चय ही यह उपन्यास एक दीर्घ कहानी मात्र रह जाएगा। वस्तुतः मालती परूलकर कहानी-लेखिका के रूप में जितनी सफल हुई हैं, उपन्यास-लेखन मे उतनी सफल नही हो सकी। यों भविष्य में तो सम्भावनाएँ हैं ही !

३१. श्रीमती बिन्दु अग्रवाल

श्रीमती बिन्दु अग्रवाल ने १५२ पृष्ठों और २६ परिच्छेदो में 'मोहल्ले की बुआ' शीर्षक पारिवारिक उपन्यास में एक मध्यवर्गीय हिन्दू-परिवार की वृद्धा नारी का सजीव चित्र प्रस्तुत किया है। बाल्यकाल में पति की मृत्यु हो जाने के कारण वह नारी मुख्य रूप से अपने मैके में रही और अपने अनाथ भतीजे मोहन और भतीजी मालती को पाल-पोसकर बड़ा किया। घरवालों के अतिरिक्त मुहल्लेवाले भी बुआ कहकर पुकारते थे। यों वह घर और बाहर सर्वत्र सबके साथ सहानुभूति रखती थी, सबकी सहायता करती थी, किन्तु ज्यो ही अपने संस्कारों एवं अनुभवों के विरुद्ध किसी को (नई पीढ़ी के व्यक्तियों को) कुछ करते देखती, त्यो ही उसे वह असह्य हो उठता और उसे जी भरकर खरी-

१. देखिये 'बाली', पृष्ठ ५५
२. बाली, पृष्ठ २०
३. देखिये 'बाली', पृष्ठ ७८, ७६, ८०, ८३
४. देखिये 'बाली', पृष्ठ ७४, ७५, ७६

खोटी सुनाती अथवा तर्क द्वारा अपने विचारों को उस पर थोपना चाहती और वश न चलने पर दुःखी अथवा क्रुद्ध हो उठती। अपनी भतीजी मालती के एक बंगाली प्रोफेसर से प्रेम-विवाह कर लेने के कारण बुआ को इतना सदमा पहुँचा कि उसकी मृत्यु हो गई, किन्तु मरने के पूर्व वह मालती को क्षमा करती गई।

विवेच्य कृति में लेखिका ने किसी क्रमबद्ध कथानक की सृष्टि न करके 'बुआ' के चरित्र के प्रत्येक पक्ष को स्पष्ट करते हुए उसके संवादों एवं क्रियाकलापों को ही घटनाओं के रूप में अंकित किया है। कहना न होगा कि इससे कथानक विशृंखल होकर बिखर-सा गया है। सम्पूर्ण उपन्यास बुआ के संवादों से ओतप्रोत है, जो प्रायः मुहावरेदार, तीव्र, अनेकशः व्यंग्यात्मक तथा विभिन्न प्रसंगों मे तर्कपूर्ण हैं। वे निश्चय ही सहज एवं रोचक है, बुआ का संस्कारग्रस्त तेजस्वी व्यक्तित्व उनके द्वारा मूर्त हो गया है। बुआ की तुतली देवरानी की तुतली उक्तियो मे हास्य रस का सुन्दर परिपाक हुआ है।[1]

प्राचीन एव नवीन संस्कारो का संघर्ष दिखाकर लेखिका ने हिन्दू परिवारों में अब तक प्रचलित (किन्तु अब शनैः शनैः शिथिल होती हुई) एक महत्त्वपूर्ण समस्या का चित्रण किया है। प्रस्तुत कृति का उद्देश्य यह सिद्ध करना है कि व्यक्ति अपने संस्कारो में इतना जकड़ जाता है कि चाहने पर भी उनसे मुक्त नहीं हो पाता। उद्देश्य के प्रति लेखिका का आग्रह इतना प्रबल है कि इस कृति में उपन्यासोचित अनेकरूपता का गुण नहीं आ पाया; और इसी का परिणाम है कि 'बुआ' का चरित्र समग्र कथानक को आच्छादित करता प्रतीत होता है। आलोच्य कृति में सर्वत्र व्यावहारिक, मुहावरेदार एवं नाटकीय भाषा-शैली को स्थान प्राप्त हुआ है। यह सराहनीय है कि लेखिका ने संवादों को अत्यन्त स्वाभाविक स्तर पर आयोजित किया है। बुआ की उक्तियाँ उनके अशिक्षित व्यक्तित्व के अनुरूप व्यावहारिक शब्दावली तथा मुहावरों से युक्त हैं। मध्य वर्ग की अशिक्षित वृद्धा नारी का जितना अनुभवपूर्ण एवं सजीव चित्र सुश्री बिन्दु अग्रवाल ने अंकित किया है, उसके लिए वे बधाई की पात्रा हैं। पुरुष लेखकों द्वारा नारी-हृदय की ऐसी स्वाभाविक प्रस्तुति सम्भव ही कहाँ थी ! यदि उन्होने उक्त गुणो को सुरक्षित रखते हुए कथानक के क्रमबद्ध विकास की ओर भी ध्यान दिया होता, तो यह उपन्यास निश्चय ही एक श्रेष्ठ कलाकृति के रूप में प्रतिष्ठित हो सकता था।

३२. सुश्री कमला टंडन 'कमल'

सुश्री कमला टंडन ने 'बिखरते स्वप्न' शीर्षक पारिवारिक उपन्यास की रचना की है, जो २४६ पृष्ठों तथा २२ परिच्छेदों में सम्पूर्ण हुआ है। इसमें एक निम्न-मध्यम वर्ग के अभावग्रस्त परिवार का करुण चित्र अंकित किया गया है। गृहस्वामी ओमप्रकाश, उनकी तृतीय पत्नी भुवनेश्वरी, माता जानकी, द्वितीय पत्नी से उत्पन्न पुत्र गिरीश,

---

१. देखिये 'मोहल्ले की बुआ', पृष्ठ २७

तृतीय पत्नी की चार कन्यायें (विनीता, सरिता, गुड्डी तथा नन्ही) और एक नन्हा पुत्र दीपक इस परिवार के सदस्य हे। परिवार का जीवन सघर्ष एवं वेदना में ही व्यतीत होता है, सुख के झोंके यहाँ अत्यन्त विरल हैं। उपन्यास के मध्य से लेकर अन्त तक तो परिस्थितियों का ऐसा कठोर चक्र घूमता है कि एक-एक करके सभी व्यक्ति रुग्ण होकर मृत्यु का ग्रास बन जाते हैं—शेप रहते है केवल गृहस्वामी और उनकी दो छोटी पुत्रियाँ (गुड्डी और नन्हीं)। लेखिका ने साधारण सामाजिक स्थिति के इस परिवार के प्रत्येक पहलू पर विस्तार से दृष्टिपात किया है।

'बिखरते स्वप्न' में समर्थ एवं शक्तिशाली पात्रों की सृष्टि की गई है। इसमें तीन पात्राएँ है—भुवनेश्वरी, विनीता और सरिता। तीनों ही कष्टों एवं संघर्षो में मुस्कराने-वाली, आत्म-निर्भर एवं कर्मठ नारियाँ है। विनीता अरविन्द से प्रेम करती है, किन्तु माता-पिता द्वारा दुहाजू मगनलाल से विवाह निश्चित कर देने पर वह अपनी वेदना को मन में ही दबा लेती है और किसी को इसका आभास तक नही होने देती। सरिता इस उपन्यास की नायिका है—वह विनीता से भी अधिक दृढ़ एवं समर्थ है। पकज से अभिन्न प्रेम करके भी उसे परिस्थितिवश प्रकाश नामक धनी युवक की पत्नी बनना पड़ता है, किन्तु वह भारतीय नारी के आदर्श को क्षीण नहीं करती, चाहे विवाह के बाद वह पंकज के विरह मे घुल-घुलकर प्राण त्याग देती है। पुरुप पात्रों में ओमप्रकाश, अरविन्द और पंकज उल्लेखनीय हैं। इन तीनों का चरित्र आदर्श रूप में अंकित किया गया है, क्योंकि ये विपम परिस्थितियों में भी दृढ़ रहकर कर्त्तव्य का निर्वाह करते हैं। लेखिका को सास-बहू, पति-पत्नी, प्रेमी-प्रेमिका, माता-सन्तान आदि के परिस्थिति-प्रेरित संवादों की योजना में भी सफलता मिली है। बाल-सुलभ क्रियाओं की भाँति उन्होने बालोचित सम्भापणों की भी सहज योजना की है। इस प्रसंग मे सरिता और विनीता के संवाद द्रष्टव्य है।[1]

प्रस्तुत उपन्यास में एक निर्धन मध्यवर्गीय परिवार की दैनिक कठिनाइयों का चित्रण हुआ है, समाज अथवा देश की किसी समस्या का विस्तीर्ण उल्लेख करने की ओर लेखिका की प्रवृत्ति नही रही। उन्होने भारतीय नारी के संयम, त्याग, सहनशीलता, कर्मठता आदि गुणों को विशेप रूप से निखारा है। कही-कहीं उन्होंने नारी-मनोविज्ञान सम्बन्धी सुन्दर सूक्तियाँ भी प्रस्तुत की है। यथा—"नारी के हृदय में वेदना का अथाह समुद्र समा सकता है किन्तु सुख एवं प्रसन्नता को वह अपने अन्दर सीमित नही रख सकती, उसके अंग-प्रत्यंग से उसके अन्तर की प्रसन्नता प्रकट हो ही जाती है।"[2] वस्तुतः लेखिका का उद्देश्य निर्धन मध्यमवर्गीय परिवार के सुख-दु:खमय जीवन का सहज चित्रण तो है ही, उन्होंने पाठकों की विपम परिस्थितियो को धैर्यपूर्वक सहन करने की प्रेरणा भी दी है।

'बिखरते स्वप्न' में व्यावहारिक भापा का प्रयोग हुआ है। लेखिका की वर्णन-

१. देखिये 'बिखरते स्वप्न', पृष्ठ १८-२०, ३३-३७, ४६-५१
२. बिखरते स्वप्न, पृष्ठ १०२

शैली सर्वत्र भावानुकूल एवं प्रवाहमयी है। भाषा की दृष्टि से पर्याप्त स्वच्छ होने पर भी इस उपन्यास को सामान्य कोटि की रचना माना जाएगा। मृत्यु के करुण दृश्यों का बार-बार चित्रण होने के कारण कथानक में किंचित् अरोचकता आ गई है—ऐसा प्रतीत होता है मानो कथानक को बलपूर्वक वेदनापूर्ण अन्त की ओर ले जाया गया है। मुख्य पात्रों के चरित्रों में वैविध्य की अपेक्षा एकरूपता के दर्शन अधिक होते हैं, किन्तु संवाद-योजना पर्याप्त सहज एवं रोचक है। पारिवारिक समस्याओं तक ही सीमित होने के कारण लेखिका का देशकाल सम्बन्धी दृष्टिकोण भी व्यापक नहीं है, जिससे रचना में प्रौढ़ता नही आ पाई है।

३२. सुश्री वीरा

सुश्री वीरा ने ११६ पृष्ठों और ३३ परिच्छेदों में 'मौत का फूल' शीर्षक मनोवैज्ञानिक सामाजिक उपन्यास की रचना की है। इसका कथानक इस प्रकार है—"उपन्यास का नायक रग्घू रायसाहब कुलवन्त किशोर के घरेलू सेवक रामू का पुत्र था। रामू स्वामी के इकलौते पुत्र यशवन्त की सेवा-शुश्रूषा में व्यस्त रहता, फलतः रग्घू अपने को सदैव उपेक्षित एवं तिरस्कृत अनुभव करता था। बाल्यकाल की कुंठा एव हीन-भावना किशोरावस्था में विद्रोह-भावना में रूपान्तरित हो गई और परिस्थितियो के बहाव में बहकर रग्घू ने मद्यपान आदि कुव्यसनों का आश्रय लिया। उसकी नवपरिणीता पत्नी लच्छमी का निश्छल प्रेम भी उसे सुराह पर न ला सका और एक दिन मद्यपान के लिये पैसे न देने पर उसने आसन्नप्रसवा पत्नी को जलती लकड़ी से मारा, फलतः वह पुत्र को जन्म देकर उसी रात कालकवलित हो गई। पत्नी के शोक से पीड़ित एवं पिता के कर्त्तव्य की गुरुता से प्रेरित रग्घू ने अपनी कुप्रवृत्तियों को एकबारगी त्याग दिया। उसने एक पान की दुकान खोली, जो उसके परिश्रम से विकसित होते-होते एक रेस्ट्रा बन गई। शीघ्र ही वह एक सभ्य नागरिक बन गया, पिता की नौकरी छुड़ा दी और अपने पुत्र अशोक के लिये उत्तम शिक्षा की व्यवस्था की।"

उक्त कथानक में अथ से इति तक समस्त घटनाएँ रग्घू की चारित्रिक प्रवृत्तियों के विकास के हेतु अथवा परिणाम के रूप मे प्रस्तुत की गई है। रग्घू के चरित्र और घटनाओं मे मनोवैज्ञानिक तारतम्य स्थापित करने में लेखिका विशेष सफल रही हैं। रग्घू का पिता रामू अशिक्षित एवं परम्परागत दासत्व के संस्कारों से ग्रस्त होने के कारण रायसाहब के परिवार के लिये अर्पित अपनी सेवाओं और त्याग को भी तुच्छ दृष्टि से देखता है और अपनी और अपने परिवार की सामान्य दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति करनेवाले रायसाहब और उनकी पत्नी के प्रति अत्यधिक कृतज्ञ रहता है, किन्तु रग्घू मे निम्न वर्ग की क्रान्तिकारी आत्मा की प्रतिध्वनि है। वह अपने को यशवन्त से कम नही समझना चाहता और जब उसके पिता उसकी भावनाओ की उपेक्षा करते हैं तो वह विद्रोही हो उठता है। उसमें अशिक्षा, कुसंस्कार और दासता से मुक्ति पाने की सहज इच्छा है और

समय आने पर वह अपनी भावनाओं को क्रियान्वित करता है। अपने पिता के कारण वह स्वयं यशवन्त की भाँति विद्वान् न बन सका, किन्तु अपने पुत्र को उसने प्रत्येक सुविधा प्रदान की।

रायसाहब, उनकी पत्नी, उनका पुत्र यशवन्त आदि अभिजात वर्ग के पात्रों को लेखिका ने नम्र, दयालु एवं निर्दम्भ रूप में प्रस्तुत किया है। रायसाहब को अपने गौरव का गर्व तो है, किन्तु दोप की सीमा तक नहीं। रायसाहब की पत्नी, रामू की पत्नी रधिया, रग्घू की पत्नी लच्छमी आदि पात्राओं में नारी-सुलभ ममत्व, दया, स्नेह, माधुर्य आदि उत्कृष्ट गुणों का विकास हुआ है। उपन्यास के सभी पात्र सजीव एवं प्रभावपूर्ण हैं। प्रत्येक पात्र की परिस्थितियो एवं विशेषताओं के मध्य मनोवैज्ञानिक सम्बन्ध इतना प्रत्यक्ष है कि पाठक का उसके प्रति सहज अपनत्व हो जाता है। उक्त पात्रों का व्यक्तित्व अत्यन्त स्वाभाविक है, क्योकि मानवोचित गुण एव दुर्बलतायें दोनोंही उनमे परिलक्षित होती हैं।

सुश्री वीरा ने प्रसंगानुकूल एवं पात्रानुकूल कथोपकथन का विधान किया है। उदाहरणस्वरूप रामू की उक्तियों में सर्वत्र उसकी स्वामी-भक्ति, सेवा, त्याग, कृतज्ञता आदि भावनाओं का प्रकाशन हुआ है और रग्घू के कथनों में प्रायः उसके अन्तर का विद्रोह प्रतिबिम्बित रहा है। वैसे, इस कृति में संवाद सर्वत्र लघु, सजीव एवं सारगर्भित सिद्ध हुए हैं—कथानक को गति देने और व्यक्तित्व को मुखरित करने में उनका योगदान उल्लेखनीय है।

'मौत का फूल' में लेखिका ने रायसाहब और रामू के घरेलू वातावरण के विविध चित्र अंकित करके अभिजात वर्ग और निम्न वर्ग की विपमता को स्पष्ट किया है। रायसाहब और उनके पारिवारिक सदस्यो को जीवन की प्रत्येक सुविधा एवं सुख सहज उपलब्ध थे—कुलीन संस्कार, बढ़िया शिक्षा, सुसंस्कृत वातावरण,[1] अच्छा भोजन आदि, किन्तु रामू की कोठड़ी भी रायसाहब की कृपा का परिणाम थी। उसका भोजन, आराम, वस्त्र, समय आदि सब रायसाहब के परिवार पर आश्रित था। रायसाहब के आगे दारोगा भी झुकते थे, उधर रामू को स्वामी की सुख-सुविधा के आगे अपने मान-सम्मान के विषय में सोचने तक का भी अवकाश न था।[2] रग्घू को कुमार्ग की ओर उन्मुख करनेवाले रूपा के जीवन एवं चरित्र द्वारा लेखिका ने निम्न वर्ग की दुर्बलताओं को—नशा करना, जेब कतरना, अशिक्षा, अन्धविश्वास आदि—कथात्मक अभिव्यक्ति दी है।

प्रस्तुत उपन्यास में मुहावरेदार रोचक भापा का प्रयोग हुआ है। साहित्यिक मुहावरों के अतिरिक्त अशिक्षित पात्रों की उक्तियो में 'ससुरे आसमान में थेगड़ा लगाये',[3] 'कुत्ता तो गू सूंघेगा'[4] जैसे गँवारू मुहावरो को भी स्थान प्राप्त हुआ है। शैली प्रवाहमयी है, समस्त कृति मे अथ से इति तक वर्णनात्मक एवं नाटकीय शैली का सफल मिश्रण हुआ

१-२-३-४. देखिये 'मौत का फूल', पृष्ठ ६४, ४५-४६, ५०, ६५

है। निष्कर्ष-रूप में 'मौत का फूल' एक उत्कृष्ट उपन्यास है। रघू के परिस्थिति-प्रेरित मनःविकास को प्रस्तुत करने में लेखिका विशेष सफल रही हैं। प्रथम उपन्यास होने पर भी उनकी सफलता आशातीत है।

३४. सुश्री सन्तोष बाला 'प्रेमी'

सुश्री सन्तोष बाला ने 'स्नेह और स्वप्न' शीर्षक सुधारवादी सामाजिक उपन्यास की रचना की है, जिसमें २४ परिच्छेद और १३२ पृष्ठ हैं। इसमें आधिकारिक कथा शिरीष और निशा की है, किन्तु श्रीकान्त और राधा की मुख्य गौण कथा तथा मधु, तरला, अशोक, मोहिनी, प्रभाकर आदि की अन्य गौण कथाओं के फलस्वरूप कथानक में पर्याप्त अव्यवस्था आ गई है। इन कथाओं के परस्पर संयोजन के लिए निशा के व्यक्तित्व को आधारस्वरूप रखा गया है। शिरीष उसका पति है, श्रीकान्त उसका प्रेमी है, अशोक उसका धर्म-भाई है, प्रभाकर शिरीष का मित्र है और मधु, तरला आदि श्रीकान्त की धर्म-बहनें हैं। इस प्रकार पात्रों में परस्पर सम्बन्ध स्थापित कर लेखिका ने मुख्य कथा को गौण कथा से सम्बद्ध करने का प्रयास किया है, किन्तु इन कथाओं में जैसा घनिष्ठ सहयोग होना चाहिए था, उसमें उन्हें सफलता नहीं मिल पाई। ऐसा प्रतीत होता है मानो कुछ स्वतन्त्र कथाओं को कुछ दुर्बल तन्तुओं के द्वारा परस्पर संयुक्त कर दिया गया है। लेखिका ने शिरीष और निशा तथा श्रीकान्त और राधा के दाम्पत्य जीवन के मधुर-सरस चित्र अंकित करने के अतिरिक्त सामाजिक समस्याओं का भी चित्रण किया है। इन समस्याओं के समाधान के लिए निशा द्वारा किये गये प्रयत्नों (आदर्श विद्यालय की स्थापना, भिक्षुओं के लिये सेवाश्रम की स्थापना, ग्रामों में कृषि-विद्यालय खोलना आदि) और योजनाओं को मनोविश्लेषणात्मक संवादों अथवा दार्शनिक कथोपकथन द्वारा सफल अभिव्यक्ति दी गई है। तथापि घटनाओं के सुव्यवस्थित विकास की आवश्यकता को अस्वीकार नहीं किया जा सकता।

'स्नेह और स्वप्न' में पात्रों की संख्या अपेक्षाकृत अधिक है, फलतः लेखिका सभी पात्रों के साथ न्याय नहीं कर सकी है। उपन्यास की नायिका निशा के चरित्र में आदर्श गृहिणी और कर्मठ लोक-सुधारिका के गुणों का विकास हुआ है। शिरीष का आत्मजयी सुख-दुःखातीत व्यक्तित्व भी उल्लेखनीय है। इसी प्रकार लेखिका ने श्रीकान्त की भावुक प्रकृति, राधा के आदर्श पति-प्रेम, अशोक के दृढ़ संकल्प आदि का भी सजीव चित्रण किया है। उन्होंने चरित्र-चित्रण के लिए संवादों के अतिरिक्त प्रत्यक्ष कथन की प्रणाली का भी आधार लिया है। उदाहरणार्थ शिरीष के विषय में ये पंक्तियाँ देखिए—"शिरीष शान्त प्रकृति का युवक था। उसकी कोई महत्त्वाकांक्षा न थी, न ही वह किसी प्रकार की आकांक्षा रखता था। उसका जीवन अत्यन्त सरल एवं सादगीपूर्ण था।"[1] कथानक में

---

१. स्नेह और स्वप्न, पृष्ठ ३३

नाटकीय गति लाने के लिये लेखिका ने जिन संवादों की योजना की है, उनमें पात्रों की भावुकतापूर्ण मन:स्थितियों के अतिरिक्त समकालीन समस्याओं का सुधारवादी अथवा दार्शनिक दृष्टि से उल्लेख हुआ है। इनमें से द्वितीय वर्ग के संवादों का उदाहरण सत्रहवें परिच्छेद में निशा और शिरीष का वह वार्त्तालाप है, जिसमें उन्होंने जीव, जगत् और आत्मा के विषय में विचार व्यक्त किए हैं।[१] ऐसे संवादों में कहीं-कहीं वैचारिक गम्भीरता और शैलीगत जटिलता का समावेश हो गया है, जिससे कला की रोचकता को क्षति पहुँची है।

'स्नेह और स्वप्न' में वातावरण की साभिप्राय योजना द्वारा उद्देश्य को प्राय: मुखरित रखा गया है। समकालीन भारत की सामाजिक और राजनीतिक समस्याओं का उल्लेख करते हुए उनके सुधार के लिए आदर्श योजनाओं का निर्देश इसी हेतु किया गया है। इस दृष्टि से लेखिका ने निम्नलिखित समस्याओं की चर्चा की है—बेकारी, महँगाई, पूँजीपतियों द्वारा निर्धनों का शोषण, शिक्षा की दूषित प्रणाली, साम्प्रदायिक वैमनस्य, भिक्षावृत्ति आदि। वस्तुत: लेखिका ने समकालीन भारत की आर्थिक, सामाजिक, शैक्षिक और राजनीतिक समस्याओं को विविधतापूर्वक लक्ष्य में रखा है। निशा ने आदर्श महा-विद्यालय, सेवाश्रम, कृषि-विद्यालय, शिल्प-केन्द्र आदि विभिन्न संस्थाओं की प्रतिष्ठा करके तथा इनमें आदर्श कार्यक्रम अथवा पाठ्यक्रम की स्थापना द्वारा समस्याओं के आदर्शवादी निदान प्रस्तुत किये हैं। इसी प्रकार लेखिका ने शिरीष के तप-भोगमय, सुख-दु:खातीत, ईर्ष्या-द्वेष-मुक्त इन्द्रियजित व्यक्तित्व को भी आदर्श रूप में प्रस्तुत किया है और समन्वयवाद को शान्ति का मूल मन्त्र माना है।[२]

'स्नेह और स्वप्न' की भाषा तत्समबहुला है, तथापि लेखिका ने सूक्तियों (यज्ञ करते समय कभी-कभी हाथ भी जलने का भय रहता है)[३] और मुहावरों (जल में ईंट-डालने पर छींट आती ही है)[४] के प्रयोग द्वारा भाषा को सजीव एवं प्रांजल रखने की ओर भी ध्यान दिया है। फिर भी, कहीं-कहीं भावावेग के फलस्वरूप शब्दाडम्बर की प्रधानता हो गई है। चौबीसवें प्रकरण के आरम्भ में प्रकृति का आलंकारिक तथा रहस्यपूर्ण चित्रण इसी प्रकार का है।[५]

लेखिका की प्रथम कृति होने के कारण इस उपन्यास में कथा-संगठन के लिए अपेक्षित तत्त्वों का सुनियोजन नहीं हो सका है। समस्या-चित्रण और सुधारवादी दृष्टि-कोण पर आवश्यकता से अधिक बल देने के फलस्वरूप कथानक, चरित्र-चित्रण और देशकाल के प्रति वे उचित न्याय नहीं कर पाई हैं। फिर भी यह स्वीकार करना होगा कि उनके द्वारा समस्याओं के लिए प्रस्तुत किए गए कतिपय सुझाव महत्त्वपूर्ण हैं और

१-२. देखिये 'स्नेह और स्वप्न', पृष्ठ ८६-६४, १००-१०३
३-४. स्नेह और स्वप्न, पृष्ठ ३३, ८७
५. देखिये 'स्नेह और स्वप्न', पृष्ठ १३०-१३१

उनकी अभिव्यंजना-शैली प्रवाहपूर्ण है।

३५. श्रीमती कान्ता सिन्हा

सुश्री कान्ता सिन्हा ने १३६ पृष्ठों और १५ परिच्छेदों में 'अतृप्ता' शीर्षक पारिवारिक उपन्यास की रचना की है, जिसमें एक कुमारी कन्या की उत्पीड़न-जनित घुटन, कुंठा, व्यथा एवं विवशता की कथा अंकित है। मातृ पितृहीना सुनीता जब तक अपने भाइयों की सुख-सुविधा के लिए अपने को मिटाती रही तब तक वे उसके अभिभावक बने रहे और जब उसने अपने जीवन को सुखी बनाने के लिए एक पग बढ़ाया तो उन्होंने उसे दूध की मक्खी की भाँति निकाल फेंका। इस अपकर्म में मुख्य हाथ उसके बड़े भाई का था, जो स्वर्गीय पिता द्वारा उसके लिये छोड़ी गई तीस हजार की नगद सम्पत्ति को अपने लिये हथियाना चाहता था। बड़े दादा के कठोर नियन्त्रण में सुनीता की कुंठित भावनाओं एवं विवशताओं के मनोवैज्ञानिक चित्र लेखिका ने अंकित किये हैं। इसके अतिरिक्त सुनीता, कामिनी, शोभा (सुनीता की भाभियाँ), कुसुम (सुनीता की भतीजी), शान्ता (उसकी सखी) आदि पात्राओं का चरित्रांकन करते समय उन्होंने उनमें नारी-सुलभ कोमल भावनाओं के समावेश का ध्यान रखा है। सुनीता की चाची उपन्यास की खल पात्रा है, जो अपने वृद्ध पति की आड़ लेकर सुनीता के बड़े दादा को अपनी तृष्णा का शिकार बनाती है और अपने स्वार्थ के लिये सुनीता को भाँति-भाँति के कष्ट देती है।

पुरुष पात्रों में सुनीता के बड़े दादा रंगे सियार हैं, जो अपने स्वार्थ के समक्ष किसी के सगे नहीं हैं—न बहिन के और न पत्नी के। छिपे छिपे वे घोर दुष्कर्म करते हैं, किन्तु प्रत्यक्ष में पावन ही बने रहते हैं। जितेन्द्र के मित्र श्री मेहता आदर्श पुरुष हैं, जिन्होंने व्यथिता सुनीता को प्रेमपूर्वक ग्रहण कर उसके जीवन को सुख से भर दिया। सुनीता की भाँति वे भी निर्लोभ, दीनों के प्रति दुःखकातर एवं परोपकारी प्रवृत्ति के पात्र हैं। शेष पुरुष पात्रों के चरित्र सामान्य तथा अवसरानुकूल है। अन्य अनेक साधनों के अतिरिक्त लेखिका ने विश्लेषणात्मक, तुलनात्मक एवं वर्णनात्मक शैली में भी चरित्र-चित्रण किया है। यथा—

"बड़ी भाभी, शोभा, आयु में मुझसे बड़ी हैं। उनमें इतना बचपन नहीं है जितना कामनी भाभी में। शोभा भाभी बहुत गम्भीर हैं, बहुत शान्त हैं। हँसती भी हैं तो धीमे से, बोलती भी है तो धीमे से। जहाँ बड़े दादा उग्र स्वभाव के है, वहाँ भगवान् ने उन्हें शान्त करने के लिए पत्नी भी गम्भीर दी है। परन्तु मेरे मन में कभी-कभी आशंका उठती है कि शोभा भाभी इतनी नम्र हैं, इतनी सभ्य हैं, कही बड़े दादा का अभिमान और उद्दण्ड स्वभाव इनको कुचल न दे।"[1]

पात्रों की चारित्रिक प्रवृत्तियों को मुखरित करने में कथोपकथन विशेष

---

१. अतृप्ता, पृष्ठ ७०

सारगर्भित सिद्ध हुए हैं। उदाहरणार्थ सुनीता के निस्स्वार्थ एवं त्यागमय चरित्र के विषय में उसकी शोभा भाभी की उक्ति उद्धरणीय है—"कैसी ज्ञानभरी बातें करने लगी हो सुन्नी। निरन्तर दुःखों की अग्नि में तपते रहने से तुम्हारी आत्मा कंचन-सी पवित्र हो गई है रानी। इतनी आयु और इतनी दूर की सूझ, जिसमें स्वार्थ की बू भी नहीं। भगवान् तुम्हें बहुत सुख देंगे रानी, तुम राजरानी बनोगी।"[1] संवादों की भाषा प्रायः पात्रानुकूल है। सेवक रामभक्त की उक्तियों में 'गईल हा', 'लागत बा', 'उनकर देह'[2] आदि शब्दों का प्रयोग उक्त कथन का प्रमाण है।

सुनीता ने समाज से कोई दुराव न रखकर विवाहित दिनेश से पावन प्रेम किया या बाद में मेहता से प्रेम-विवाह किया तो समाज ने उस पर लांछन लगाए। उधर उसके बड़े दादा ने अपनी चाची, भतीजी (कुसुम) एवं धोबिन से छिपे-छिपे व्यभिचार करके समाज की आँखों मे धूल झोंकी तो भी वे पावन रहे एवं देवता-रूप में मान्य हुए। इन घटनाओं का चित्रण करके लेखिका ने समाज की संकीर्णता एवं अन्याय के प्रति व्यंग्यपूर्ण संकेत किये हैं। सुनीता की चाची वृद्ध पति की आड़ में भतीजे से तृष्णा शान्त करती रही, यह घटना भी सामाजिक कुप्रथा (वृद्ध-विवाह) के दुष्परिणाम की ओर इंगित करती है।

आलोच्य कृति का लक्ष्य एक मातृपितृहीना, स्नेह न मिल पाने से अतृप्त कुमारी की कुंठित भावनाओं, अभावों, पीड़ाओं एवं विवश कामनाओं का मनोवैज्ञानिक अंकन करना है और यह निर्विवाद है कि लेखिका अपने उद्दिष्ट में पर्याप्त सीमा तक सफल रही हैं। उपन्यास की भाषा सरल, सरस एवं मुहावरेदार है तथा शैली प्रवाहपूर्ण है। अनेकश. प्रयुक्त सूक्ति-वाक्यों ने उसमें अवसरानुकूल गाम्भीर्य का समावेश किया है। यथा—"प्राणी जब गौण रूप से कोई पाप या अपराध करता है तो भीतर ही भीतर उसका मन बेचैन रहता है। तब वह ऐसे अवसर की खोज में रहता है कि कहीं उसे कोई साधन मिल जाए जिससे वह अपने मन के भीतर का रोष, जो उसे अपनी आत्मा के प्रति रहता है, प्रकट कर सके।"[3] यद्यपि उपन्यास में कहीं-कहीं भाषा-प्रयोग में असावधानी भी लक्षित होती है तथापि लेखिका की वर्णन-शैली की सजीवता ने किसी सीमा तक उक्त दोष का परिहार कर दिया है। आलोच्य कृति की उल्लेखनीय विशेषता यही है कि लेखिका ने नारी होने के नाते एक व्यथित नारी की मनोवेदना का करुण एवं हृदयस्पर्शी चित्र अंकित किया है और समाज के प्रतिष्ठित कहलानेवाले पापियों की अच्छी पोल खोली है।

---

१. अतृप्ता, पृष्ठ ७७
२. देखिये 'अतृप्ता', पृष्ठ ४५
३. अतृप्ता, पृष्ठ ७२

३६. श्रीमती प्रकाशवती

श्रीमती प्रकाशवती ने १५४ पृष्ठों में 'चार परतें' शीर्षक मनोवैज्ञानिक उपन्यास की रचना की है, जिसमें नायिका वांछा की मनोवेदना का अत्यन्त करुण-मार्मिक चित्र अंकित किया गया है। यह उपन्यास एक नूतन शैली में प्रस्तुत हुआ है, क्योंकि इसमें परिच्छेदों की अपेक्षा चार परतें हैं, जिनमें उपन्यास के चार प्रमुख पात्र—क्रमशः वांछा, चिन्मय, पुरुषोत्तम और श्रीकान्त—आत्मकथन की शैली में अपनी आन्तरिक भावनाओं की क्रमिक झाँकी प्रस्तुत करते हैं। वांछा उपन्यास की मुख्य धुरी है, समस्त पात्र एवं घटनायें उसी से चतुर्दिक् सम्बद्ध हैं। उपन्यास का कथानक इस प्रकार है—"वांछा ग्राम की एक भोली कन्या थी। बारह वर्ष की अल्पायु में उसने एक चौबीसवर्षीय युवक पुरुषोत्तम को देखा और उसके प्रति मन-प्राण से अनुरक्त हो गई। क्रमशः बाधाओं के दूर हो जाने पर दोनों के विवाह की पूर्ण सम्भावना हो गई थी, किन्तु श्रीकान्त ने, जिसे वांछा के माता-पिता ने पुत्रवत् पाला था, ईर्ष्यावश बना-बनाया खेल बिगाड़ दिया। वांछा के पिता ने श्रीकान्त की बहिन सरला का विवाह अपने एक धनी वृद्ध सम्बन्धी से न होने देकर एक निर्धन युवक से कर दिया था, जहाँ वह पूर्ण सुखी थी। किन्तु, श्रीकान्त के पिता को धनी वर के हाथ से निकल जाने का क्षोभ अन्त तक रहा और मरते समय उन्होंने श्रीकान्त से प्रतिज्ञा ले ली थी कि वह वांछा के पिता से इसका बदला अवश्य लेकर रहेगा। इसी पृष्ठभूमि में श्रीकान्त के कपटपूर्ण प्रयत्नों से वांछा का विवाह चिन्मय कवि से हुआ, जो लम्पट, दुराचारी एवं दम्भी युवक था। चिन्मय-जैसे क्रूर पति से वांछा अपना तन तो अस्पृष्ट न रख पाई, किन्तु मन से वह केवल पुरुषोत्तम की ही माला जपती रही, जिसका परिणाम यह हुआ कि चिन्मय से उत्पन्न होनेवाले उसके बच्चों पर भी पुरुषोत्तम की आकृति की छाप रहती थी। इन सब घटनाओं से चिन्मय का रोष एवं अत्याचार बढ़ते गये और एक दिन उसने क्रोध के अतिरेक में वांछा के पेट में छुरी भोंक दी। अभियोग पुरुषोत्तम के न्यायालय में पहुँचा, चिन्मय को प्राणदण्ड मिला। वांछा जब न्यायालय में अपना बयान देने लगी तो पुरुषोत्तम के प्रति अपने एकनिष्ठ प्रेम की अभिव्यक्ति करते समय वह ठीक उसी प्रकार मृत्यु की गोद में समा गई जैसे सती सीता अपनी पावनता की साक्षी देते हुए पृथ्वी के अन्तराल में समा गई थी।"

वांछा की विषम परिस्थितियों, मानसिक पीड़ा, उत्पीड़नजनित मूक वेदना एवं कष्ट-सहिष्णुता का इतना मार्मिक चित्र लेखिका ने अंकित किया है कि अनायास ही पाठकों की बरौनियाँ सजल हो जाती हैं। प्रेम की एकनिष्ठता में उसने सती पार्वती एवं सीता के ही आदर्श की पुनरावृत्ति की है। पुरुषोत्तम को भी लेखिका ने आदर्श गुणों से विभूषित किया है। राम की भाँति वे भी एकप्रियाव्रत का आदर्श ग्रहण कर सकते थे, किन्तु वांछा की ओर से निराश होकर उन्होंने छवि को अपनी जीवन-सहचरी चुन लिया, जो निश्चय ही एक योग्य नारी थी। ज्यों-ज्यों श्रीकान्त की कपट-योजनाओं का रहस्य खुलता गया त्यों-त्यों पुरुषोत्तम वांछा के दुर्भाग्य को सोचकर अनुतप्त होते रहे, किन्तु

सहृदया छवि ने उन्हे सदैव सहारा दिया। चिन्मय ने जो किया, उसका भी एक मनोवैज्ञानिक कारण था। बाल्यकाल में मातृहीन हो जाने से उसका मन स्नेह पाने के लिये विकल रहा। पिता का इकलौता पुत्र, अपार सम्पत्ति का स्वामी एवं कवि होने का दम्भ होने से वह कुमार्गगामी होकर घाट-घाट का पानी पीता रहा, किन्तु स्नेह कहीं नहीं मिला। यदि वाछ्या उसे सच्चा अनुराग दे पाती तो वह भी सन्मार्ग की ओर उन्मुख हो सकता था, किन्तु उसके दुर्भाग्य से वह विवाह के पूर्व ही पुरुषोत्तम की हो चुकी थी। श्रीकान्त की ईर्ष्या का कारण भी मनोवैज्ञानिक ही था। पिता की मरण-शय्या पर की गई प्रतिज्ञा को विस्मृत न करने की अपनी प्रकृति से वह विवश था। उसने पिता का प्रतिकार पुत्री से लेना चाहा और पुच्छल तारे की भाँति उसके भाग्याकाश को आवृत्त कर मानो उसकी ईर्ष्या तुष्ट हो गई। उक्त चारों पात्रो की आन्तरिक भावधारा को लेखिका ने अत्यन्त सहज एवं मनोवैज्ञानिक प्रवाह मे प्रस्तुत किया है। इस प्रकार कथानक एवं चरित्र-चित्रण अन्योन्याश्रित रूप में विकसित हुए है।

जैसा कि पहले प्रतिपादित किया जा चुका है, इस उपन्यास में कथानक पात्रों के चिन्तन-प्रवाह द्वारा गतिशील हुआ है। ऐसे में कथोपकथन के लिये विशेप अवकाश न होने पर भी लेखिका ने उसके लिये अवसर सुलभ बनाए हैं और लघु एवं सजीव संवादों की योजना द्वारा पात्रों के मनोभावो को मुखरित किया है। उन्होंने ग्राम्य वातावरण के बहुविध चित्र अंकित किए है। बंजारिन का नाच,[१] नित्य रामायण-पाठ की धार्मिक प्रवृत्ति[२], जन्त्र-तन्त्र,जादू-टोने आदि पर अन्धविश्वास,[३] स्त्री-शिक्षा के प्रति अनास्था,[४] विवाहादि कार्यो मे जन्मपत्री मिलाने के प्रति अत्यधिक आग्रह[५] आदि से लेखिका की इसी प्रवृत्ति का बोध होता है। यत्र-तत्र प्रत्यक्ष कथन की शैली में भी समाज के गुण-दोपों की चर्चा की गई है। यथा—(अ) "परम्परागत झूठीमर्यादा और दिखावटी पाखंडों की आड़ में किस प्रकार खिलती कलियों को मसल दिया जाता है"[६], (आ) "मध्यवर्ग की खोखली मर्यादा, झूठी शान और अभिजात भावना की हठधर्मी जाने कितनी वांछाओं को खा गई।"[७] फिर भी, यह उल्लेखनीय है कि इस कृति का लक्ष्य वाह्य वातावरण की अपेक्षा पात्रो के आन्तरिक भाव-विकास का मनोवैज्ञानिक विश्लेपण करना है और लेखिका ने आद्यन्त इसके निर्वाह का सफल प्रयास किया है।

आलोच्य कृति मे प्रौढ, परिपक्व एवं मुहावरेदार भापा का प्रयोग हुआ है। शैली प्रवाहपूर्ण है और उसमें विश्लेपण की प्रधानता है। अन्तराल की गहराइयों की व्याख्या करने के लिये जैसी सजीव-सशक्त अभिव्यंजना की अपेक्षा होती है, ठीक वैसी ही भापा-शैली को उपन्यास में स्थान मिला है। प्रकाशवती जी की अभिव्यंजना की एक प्रमुख विशेपता यह है कि उन्होंने उसमें विस्मयादिबोधक एवं प्रश्नसूचक वाक्यो का प्रचुर

१-२-३-४-५. देखिये 'चार परतें', पृष्ठ १०, ११, १६-१७, १८, ५२

६-७. चार परतें, पृष्ठ ११८, १४८

प्रयोग किया है। सबसे बढ़कर बात यह है कि उनकी भाषा-शैली सर्वत्र भावानुरूप है। करुण-मार्मिक प्रसंगों का चित्रण करते समय उन्होंने ऐसी भावपूर्ण हृदयस्पर्शी शब्दावली का प्रयोग किया है जो पाठकों के नेत्रों को अश्रुपूरित किये बिना नहीं रहती। परिच्छेदों के स्थान पर 'परतों' का विधान करके लेखिका ने नूतन शैली को अपनाया है, जिसका प्रयोग कहानियों में पहले भी हुआ है, किन्तु उपन्यासों में नहीं। निष्कर्ष-रूप में यह कथितव्य है कि यह उपन्यास मनोवैज्ञानिक उपन्यासों की दिशा में एक सफल प्रयोग है। अनुभूति-जन्य गाम्भीर्य एवं अभिव्यंजना की मार्मिकता इसके सहज गुण हैं।

३७. श्रीमती कृष्णा रविकमल

श्रीमती कृष्णा रविकमल ने 'भटकते राही' शीर्षक सामाजिक उपन्यास की रचना की है, जिसमें यह चित्रित किया गया है कि आर्थिक विवशताओं एवं सामाजिक समस्याओं (बेकारी, आबादी की वृद्धि, फ़ैशनपरस्ती, महँगाई) ने मध्यवर्गीय परम्पराओं को खोखला बना दिया है। नायिका निम्मो ऐसे ही परिवार से सम्बन्ध रखती है। उसके अग्रज रामेश्वर और मुक्तेश्वर तथा वृद्धा माता सिद्धान्ततः कुल-मर्यादा तथा उच्च आदर्शों की दुहाई देते हैं, किन्तु दहेज से बचने के लिए बहन को धनवान् कैलाश से मेल-जोल बढ़ाने की प्रेरणा देते हैं। कैलाश के पिता के विरोध के फलस्वरूप यह विवाह संभव न हो सका, जिससे निर्मला (निम्मो) के अग्रजादि एक-दूसरे को दोष देने के अतिरिक्त निम्मो को भी लांछित करने लगे। निम्मो के छोटे भाई व्रजेश के विवाह में भी ऐसा ही हुआ। धनिक-पुत्री लता से विवाह होने पर दहेज में अत्यधिक धन पाने की लालसा से मुक्तेश्वर, रामेश्वर और वृद्धा माता प्रगतिशील बन गए, किन्तु आशानुकूल दहेज न मिलने पर क्षुब्ध हो उठे। निम्मो का विवाह उसके बाल-सहचर और पूर्व-प्रेमी सुबोध से हो गया और इस प्रकार उपन्यास दुःखान्त होने से बच गया। निम्मो और सुबोध की प्रणय-कथा इस उपन्यास की प्रमुख कथा है। उपन्यास का प्रारम्भ एवं विकास इसी को लेकर हुआ है, किन्तु मध्य तक पहुँचते-पहुँचते निम्मो फ़ैशन के चक्कर में पड़कर सुबोध से विमुख हो कैलाश की ओर उन्मुख हो गई। व्रजेश एवं लता की प्रणय-कथा मुख्य कथा के साथ सुगुम्फित है। सुबोध की सहपाठिनी रेखा तथा विश्वासघाती दिनेश की प्रणय-लीला द्वितीय गौण कथा है, किन्तु उक्त दोनों कथाओं के विपरीत रेखा सम्बन्धी कथा दुःखान्त है।

आलोच्य उपन्यास का केन्द्र मध्यवर्गीय समाज है, जिसका सहज चित्र प्रस्तुत करने के लिए लेखिका ने विभिन्न मनोवृत्तियोंवाले पात्रों को चित्रित किया है। उपन्यास के नायक सुबोध में नायकोचित गरिमा का उज्ज्वल समावेश हुआ है। बाल्यकाल से ही निम्मो के प्रति प्रेम और सद्भाव होने पर भी जब निम्मो ने कैलाश को पाने की लालसा में उसका अपमान किया तब वह उसके सुख के लिये उसके मार्ग से हट गया। बाद में कैलाश द्वारा ठुकराई हुई निम्मो को अपनाकर उसने उसे आत्मघात से बचाया। निम्मो उपन्यास

की नायिका है, किन्तु नायक की अपेक्षा उसका चरित्र दुर्बल है। नायक के सच्चे प्रेम की उपेक्षा करके वह धन के लोभ में बह जाती है, किन्तु दुर्भाग्य की ठोकर उसे समय पर सचेत कर देती है। रामेश्वर और मुक्तेश्वर इतने पत्नी-भक्त हैं कि पत्नियों (क्रमशः राधा और सरोज) के वस्त्राभूषण-प्रेम, सिनेमादि पर धन व्यय करते रहते हैं तथा बहिन और पुत्रियों के प्रति अपने उत्तरदायित्व को समझकर भी नहीं समझना चाहते। ब्रजेश, कैलाश, दिनेश, सरोज, राधा, रेखा आदि पात्र मध्यवर्गीय समाज के प्रतिरूप हैं। लेखिका ने उनके माध्यम से चरित्रगत वैविध्य की सराहनीय योजना की है। निम्मो की फ़ैशनेबुल सखी प्रीति भाटिया तथा शरीर का विक्रय करनेवाली मेरी के चरित्र-चित्रण मे लेखिका ने तनिक शिष्टता का उल्लंघन किया है, किन्तु आधुनिक दृश्यो को देखते हुए उनके आचरण को अस्वाभाविक नहीं कहा जा सकता। कथानक में नाटकीय सौन्दर्य लाने के लिए लेखिका ने परिस्थिति के अनुकूल रुचिर संवादों की योजना की है। इस दृष्टि से सुबोध एवं निम्मो के वार्त्तालाप विशेष उल्लेखनीय हैं—उनमें हास-परिहास, रूठना, मान-मनौवल, व्यंग्य, छींटाकशी आदि प्रेम की सम्भावित स्थितियों का सुन्दर समावेश हुआ है।[1]

श्रीमती कृष्णा ने उपन्यास की भूमिका में यह प्रतिपादित किया है कि स्पूतनिक युग में विभिन्न देशों में रहन-सहन के स्तर को उन्नत करने की परस्पर होड़-सी लगी है। भारत इस स्पर्धा में सन्तोषजनक उन्नति नही कर पाया है। अभी तक केवल आबादी, फ़ैशन तथा बेकारी में ही भारत ने प्रगति की है। वस्तुतः लेखिका ने समकालीन देश-दशा के चित्रण के प्रति जागरूक रहकर मध्य वर्ग को केन्द्र बनाकर युग-दर्शन की सराहनीय चेष्टा की है। हमारे कथाकारो की दृष्टि प्रायः उच्च वर्ग एवं निम्न वर्ग की ओर रहती है, जब कि मध्य वर्ग की समस्यायें अपेक्षाकृत महत्त्वपूर्ण हैं। इस वर्ग की आर्थिक विषमताओं ने लोगों के आदर्शों को कितना झुठला दिया है और इस वर्ग की प्रगतिशीलता के नीचे लोभ के कितने कीट बिलबिला रहे हैं, इसका पर्दाफ़ाश करते समय लेखिका ने कुशाग्र-बुद्धि का परिचय दिया है। तत्सम्बन्धी चित्रण में देशकाल एवं कृति का उद्देश्य, दोनों मुखर रहे हैं। मध्य वर्ग के जीवन का यथातथ्य चित्रण करने के प्रयत्न मे उन्होंने कतिपय स्थलों पर अश्लील प्रसंगों का भी वर्णन किया है[2], किन्तु उन्हें न रखकर वे अपने अभीष्ट की सिद्धि में अधिक सफल हो सकती थीं।

'भटकते राही' की रचना व्यावहारिक भाषा में हुई है। इसमे मुख्यतः तद्भव शब्दों तथा प्रचलित उर्दू-शब्दों का प्रयोग हुआ है। शिक्षित पात्रों की उक्तियों मे फ्रेंड, क्लासफेलो, स्वीट कम्पेनियन आदि अंग्रेजी-शब्दों[3] को भी प्रचुर मात्रा में स्थान मिला

---

१. देखिये 'भटकते राही,' पृष्ठ १६, २५, २७-३०

२. देखिये 'भटकते राही', पृष्ठ ७२, १६४-१६६

३. देखिये 'भटकते राही,' पृष्ठ १६४-१६५

है। लेखिका ने सामान्यतः वर्णनात्मक शैली एवं नाटकीय शैली में कथा-विकास किया है, किन्तु मनोभावों का विश्लेषण करते समय मनोविश्लेषणात्मक शैली का भी आश्रय लिया गया है। निष्कर्ष-रूप में यह कथितव्य है कि इस उपन्यास में आधुनिक मध्यवर्गीय समाज की प्रवृत्तियों एवं समस्याओं पर सर्वांगीण दृष्टि से विचार किया गया है। पात्रों के चयन मे लेखिका ने विविधता का विशेष ध्यान रखा है, किन्तु उपन्यास में चरित्र-चित्रण की प्रमुखता नहीं है। भाषा-शैली भी साहित्यिक न होकर व्यावहारिक रूप में अधिक स्पष्ट एवं सजीव है। यद्यपि इसका कथानक सामान्य है, किन्तु उसमें जो उद्देश्य निहित है वह पर्याप्त गम्भीर एवं विचार-प्रेरक है।

३८. सुश्री महेन्द्र बावा

सुश्री महेन्द्र बावा ने 'उलझे प्रश्न : अधूरे उत्तर' शीर्षक संवादात्मक सामाजिक उपन्यास की रचना की है, जिसमें २६४ पृष्ठ और ४२ परिच्छेद हैं। इसका कथानक इस प्रकार है—"मातृपितृहीना नीरा अपने भाई-भाभी के पास रहती है, जहाँ उसे पूर्ण स्नेह प्राप्त नहीं होता। उसकी भतीजी मुन्नी उसके दुःख-सुख की सहयोगिनी है। वह नीरा को दीदी कहती है और अपने मन मे उठनेवाले विविधि प्रश्नों के समाधान उससे चाहती है। यथा—मानव-जीवन क्या है, दैनिक व्यवहार कैसा होना चाहिए, प्रेम और वासना किसे कहते हैं, दीदी और अरुण का प्रेम किस श्रेणी में आता है आदि। इसी प्रकार के प्रश्नोत्तरों द्वारा नीरा और मुन्नी की जीवन-घटनाओं को व्यक्त किया गया है। नीरा के जीवन में अरुण, कान्त, सुधीर आदि अनेक युवक आये—कोई प्रेम लेकर और कोई वासना लेकर—अन्त में नीरा का विवाह जिस नवयुवक से हुआ वह उसके मनोनुकूल न था, अतः एक कन्या का जन्म होने के उपरान्त उसने पति को त्यागकर उनके मित्र कैप्टेन वर्मा को अपना लिया।"

यह उपन्यास अन्य उपन्यासों से इस अर्थ में भिन्न है कि इसमें प्रत्यक्षतः केवल दो पात्र (दीदी और मुन्नी) हैं और उन्हीं के कथोपकथन द्वारा कथानक का विकास हुआ है। बीच-बीच में आत्मकथन की शैली मे नीरा के आत्मचिन्तन द्वारा शैली-परिवर्तन किया गया है, किन्तु ऐसे स्थल बहुत कम हैं।[1] संवादों में नीरा और मुन्नी के चरित्रों की केवल आंशिक प्रवृत्तियाँ स्पष्ट हो सकी हैं। नीरा की उक्तियों में कान्त, अरुण, मुन्नी के मामा, सुधीर, कैप्टेन वर्मा आदि पुरुष-पात्रों की प्रेममूलक अथवा वासनात्मक प्रवृत्तियों का जो स्वरूप वर्णित है, उससे पुरुष-समाज के रुचि-वैविध्य का बोध होता है। इस कृति के संवाद प्रायः संक्षिप्त और सारगर्भित हैं और उन्हें मुख्य रूप से प्रश्नोत्तर के रूप में आयोजित किया गया है, किन्तु उनमें औपन्यासिक सरसता का प्रायः अभाव है।

---

१. देखिये 'उलझे प्रश्न : अधूरे उत्तर,' पृष्ठ ८५-९०

देशकाल की दृष्टि से नीरा की वे उक्तियाँ उल्लेखनीय हैं जिनमें नारी और पुरुष के मनोविज्ञान का समाज-सापेक्ष उल्लेख हुआ है।[1] एक उदाहरण अवलोकनीय है—"नहीं, नारी ऐसा नहीं कर पाती। वह इच्छाएँ रखते हुए भी उसे कोई निश्चित रूप नहीं दे पाती क्योंकि समाज उसे निर्बल जानते हुए किसी भी ओर बढ़ने नहीं देता। पुरुष तो यह सोच भी नहीं सकता कि नारी भी कुछ करने की शक्ति रखती है।[2] इस कृति में मुख्य रूप से बाल-मनोविज्ञान की अभिव्यक्ति मिलती है, जिससे कथानक में सहजता के अतिरिक्त कहीं-कहीं विचार-सूत्रों की जटिलता भी आ गई है। वस्तुतः यह ध्यान रखना आवश्यक है कि इस उपन्यास का लक्ष्य कहानी कहना नहीं, अपितु "वह उत्सुकता प्रकट करना है जो एक बच्चे तथा युवा के मन मे उठ सकती है।"[3] फिर भी लेखिका को इस तथ्य की स्थापना में सफलता मिली है कि माता-पिता के आतंक से भयभीत बच्चे बाल-सुलभ उत्सुकताओं को शान्त करने के लिए घर अथवा बाहर के परिचित व्यक्तियों का आश्रय लेते हैं, किन्तु उनका ज्ञान अपूर्ण होता है, अतः उन्हें अधूरे उत्तर प्राप्त होते है। सही उत्तर माता-पिता ही दे सकते है. अतः उन्हें बच्चों की उत्सुकता शान्त करनी चाहिए, अन्यथा कुंठाएँ जाग्रत होने की सम्भावना रहती है।

प्रस्तुतः उपन्यास की भाषा सरल एवं व्यावहारिक है, किन्तु इसमें वाक्य-विन्यास सम्बन्धी भूलों को प्राय· लक्षित किया जा सकता है। इसमें वर्णनात्मक प्रसंगों का एकान्त अभाव है। नाटकीय शैली को अत्यधिक महत्त्व देने के कारण इस उपन्यास के अन्य तत्त्वों का सहज विकास नहीं हो पाया। समन्वित रूप में कहा जा सकता है कि यह उपन्यास सुगठित नहीं बन पाया— इसका कथानक विशृंखल है, पात्रों के व्यक्तित्व को उभरने का विशेष अवसर नहीं दिया गया, संवादों में एकरूपता है और भाषा-शैली में समृद्धि का अभाव है।

३९. सुश्री प्रिया राजन

सुश्री प्रिया राजन ने ८९ पृष्ठो एव ११ परिच्छेदो में 'नंदा' शीर्षक लघु सामाजिक उपन्यास की रचना की है। इसमें रायबहादुर शमशेरजंग की इकलौती पुत्री नंदा का अपने पिता के निर्धन सेक्रेट्री से प्रेम, प्रारम्भ में नन्दा के पिता की ओर से कठोर नियंत्रण एव बाधाएँ, अनन्त को नौकरी से हटाकर गृह-निष्कासन, नंदा द्वारा पुनः अनन्त को खोजकर सम्पर्क स्थापित करना, पुत्री का हठ देखकर पिता की स्वीकृति आदि घटना-क्रम से एक सुखान्त प्रेम-कथा का संयोजन किया गया है। उपन्यास में कथा-त रोचकता तो है, किन्तु घटनाएँ अत्यन्त स्थूल रूप में वर्णित है, सूक्ष्म अथवा मनो-

---

[1] देखिये 'उलझे प्रश्न : अधूरे उत्तर', पृष्ठ ४६, ४७, ५३, ९५
[2] उलझे प्रश्न : अधूरे उत्तर, पृष्ठ ५३
[3] उलझे प्रश्न : अधूरे उत्तर, भूमिका, पृष्ठ ६

वैज्ञानिक चित्रण की ओर लेखिका ने ध्यान नहीं दिया। उपन्यास में अनेक पात्र हैं—अनन्त, उसकी माता तथा बहिन, नंदा, उसके माता-पिता और मझो, डॉक्टर देव (जिनसे बाद में अनन्त की बहिन शीला का विवाह हुआ) तथा निर्मलकुमार (नन्दा के माता-पिता द्वारा उनके लिए मनोनीत वर, जो बाद में उसे बहिन की भाँति मानने लगा था)। उक्त पात्रों की चारित्रिक प्रवृत्तियों का यथायोग्य प्रकाशन हुआ है। नंदा की माता यशोदा का स्नेहपूर्ण व्यक्तित्व, नंदा का भावुक हृदय, अनन्त की चारित्रिक दृढ़ता, शीला का स्नेह, डॉक्टर देव की परोपकार-वृत्ति आदि भावनाएँ विशेष रूप से उल्लेखनीय है। लेखिका ने परोक्ष वर्णन की अपेक्षा प्रत्यक्ष कथन द्वारा पात्रों का चरित्रांकन अधिक मनोयोग से किया है। उदाहरणस्वरूप निम्नलिखित पंक्तियों में नंदा के पिता का चरित्र देखिए—"उनसे सभी भयभीत रहते थे। डर के मारे उनके किसी नौकर-चाकर को जाने की हिम्मत नहीं पड़ती थी। वे बहुत ही गम्भीर आदमी थे। कम बोलते थे, ज्यादा बकझक करने की आदत नहीं थी। जिससे एक बार जो कह दिया उसमें किन्तु-परन्तु की गुंजाइश नहीं रहती थी। उनकी बातों को कोई टोक सके, ऐसा साहस घर के किसी प्राणी में न था।"[1]

श्रीमती राजन ने पात्रों के चरित्र की स्पष्ट अभिव्यक्ति के लिए प्रायः संक्षिप्त और प्रसंगानुकूल कथोपकथन का विधान किया है। ये वार्तालाप कथानक को नाटकीय गति देने मे सफल रहे हैं। अनन्त एवं नन्दा के प्रेमपूर्ण संवाद अत्यन्त भावमय एवं मार्मिक बन पड़े हैं।[2] देशकालादि की दृष्टि से उपन्यास में सच्चे प्रेम की अजेयता को प्रकट किया गया है। प्रेम की सात्विकता एवं धन-वैभवजन्य अहं के मध्य संघर्ष का चित्रण करके लेखिका ने एक चिरपरिचित सामाजिक समस्या को स्थान दिया है। उनकी भाषा बोधगम्य, रोचक एवं सरल है। तत्सम एवं तद्भव शब्दों के अतिरिक्त 'शोर-शराबा,' 'मचलती-इठलाती' आदि शब्द-युग्मों[3] एवं 'स्टडी रूम', 'शौकीन-मिजाज' आदि प्रचलित विदेशी शब्दों[4] के मिश्रित प्रयोग ने भाषा को अतिरिक्त व्यावहारिकता प्रदान की है। इनके अतिरिक्त 'कहीं मखमल में टाट का पैबन्द लगता है', 'बेटी के पैर में कुल्हाड़ी मार दे' आदि मुहावरों[5] के प्रसंगानुकूल प्रयोग ने भी सजीवता का संचार किया है। लेखिका की शैली वर्णनात्मक एवं प्रवाहमयी है। समाहार-रूप में यह बोद्धव्य है कि श्रीमती प्रिया राजन का यह उपन्यास उनकी प्रथम कृति होने पर भी भाव एवं शैली दोनों की दृष्टि से सरल तथा रोचक है।

---

१. नंदा, पृष्ठ २३-२४
२. देखिये 'नंदा', पृष्ठ ५८-६०, ७०, ७६-७७
३-४. नंदा (अ) पृष्ठ ११, १८ (आ) पृष्ठ १२, ३७
५. नंदा, पृष्ठ ४०, ८६

४०. श्रीमती मन्नू भंडारी

श्रीमती मन्नू भंडारी ने मुख्य रूप से कहानियों की रचना की है, किन्तु अपने पति श्री राजेन्द्र यादव के साथ सम्मिलित रूप से 'एक इंच मुस्कान' शीर्षक मनोवैज्ञानिक उपन्यास की भी रचना की है, जिसमें ३०२ पृष्ठ हैं। अन्त में २५ पृष्ठों में (३०३-३२७ तक) क्रमशः राजेन्द्र यादव और मन्नू भंडारी ने अपना-अपना वक्तव्य लिखा है, जिनसे निम्नलिखित तथ्यों का बोध होता है—(अ) आलोच्य उपन्यास की रचना अत्यन्त संघर्षशील परिस्थितियों में हुई है, (आ) इसका कथानक मुख्य रूप से श्रीमती मन्नू भंडारी का था, (इ) जब यह उपन्यास धारावाहिक रूप से 'ज्ञानोदय' में प्रकाशित हुआ था तब लेखिका द्वारा लिखित परिच्छेद पाठकों ने अपेक्षाकृत अधिक पसन्द किये थे। इस उपन्यास में चौदह परिच्छेद हैं, जिनमें विषमसंख्यक (अर्थात् पहला, तीसरा, पाँचवाँ आदि) परिच्छेद राजेन्द्र यादव द्वारा लिखित है और समसंख्यक परिच्छेदों की रचना लेखिका ने की है।

'एक इंच मुस्कान' में मुख्य रूप से तीन पात्र हैं—अमर, रंजना और अमला। समस्त कथानक में उक्त तीन पात्रों की परिस्थितियों, मनःस्थितियों, क्रियाओं एवं प्रतिक्रियाओं का ही आलेखन हुआ है। अमर के मनोविज्ञान को राजेन्द्र यादव ने प्रस्तुत किया है और रंजना और अमला की ओरसे मन्नू भंडारी ने लिखा है। अमर एक लेखक है, वह बाह्य परिस्थितियों की अपेक्षा अपनी मानसिक प्रतिक्रियाओं मे अधिक जीता है। रंजना उसकी प्रेयसी थी, जो उसके व्यक्तित्व को उसकी सम्पूर्ण दुर्बलताओं एवं सबलताओं के साथ चाहती थी। अमर ने भी पहले उसे अपना पूरक माना था, उसे लेकर विवाह तथा अन्य सुख-सुविधाओं के स्वप्न सँजोये थे। उसी की प्रसन्नता के लिये रंजना अपने माता-पिता से लड़-झगड़कर दिल्ली चली आई थी और एक कॉलेज में अध्यापन कर स्वतन्त्र जीवन-यापन कर रही थी। विवाह के पूर्व अमर अपने उपन्यासों की पाठिका एवं पत्र-मित्र अमला से मिला, जो उच्च वर्ग की विडम्बना से प्रताड़ित, पति द्वारा त्यक्ता अहम्मन्या नारी थी। उसने अमर को परामर्श दिया कि वह विवाह न करके स्वतन्त्र जीवन-यापन करे तो उसका स्रष्टा व्यक्तित्व अधिक ऊँचा उठ सकेगा। उसकी यह बात अमर के अन्तःकरण पर इतनी छा गई कि फिर उसने चाहे अपने घनिष्ठ मित्र टंडन और उसकी पत्नी मंदा के आग्रह से रंजना से विवाह कर लिया, किन्तु उसका विवाहित जीवन सुखी न हो सका। उसका जीवन मानसिक अन्तर्द्वन्द्व का स्थान बन गया। एक ओर थी रंजना, उनका प्रेम, समाज-संस्कार और दूसरी ओर थी अमला की सायास मुस्कान, जो उसे दूसरी ओर से मुक्त हो जाने की भावना से भरती हुई सृजन की प्रेरणा देती थी। इस खींचातानी का परिणाम यह हुआ कि अन्त में उसकी पत्नी रंजना निराश होकर उसे त्यागकर चली गई। उधर रहस्यमयी अमला ने भी एक दिन जीवन से ऊबकर आत्मघात कर लिया।

अमर उपन्यास का नायक है, उसका 'व्यक्ति' खंडित, स्खलित एवं द्वन्द्वमय है।

अपने 'नैजत्व' व्यक्तित्व को सर्वोपरि रखने की चाह उसमें इतनी प्रबल है कि उसका 'व्यक्ति' अमर विशेष उभर ही नहीं पाता और अन्त तक उसका जीवन एक दुःखमयी विडम्बना बनकर रह जाता है। प्रेमी, पति, लेखक, मित्र किसी रूप में भी वह विशेष सफल नहीं है। अमला और रंजना भिन्न स्वभाव एवं भिन्न वर्गों की दो प्रताड़िता नारियाँ हैं— "अमला को उच्च वर्ग की विडम्बना ने मारा था और रंजना को एक सनकी की प्रवंचना ने।"[1] यों पाठकों की सहानुभूति दोनों के साथ है, किन्तु अमला का व्यक्तित्व एक कुंठित रहस्य-सा बनकर रह गया है। समाज तथा परम्परागत संस्कारों का उसके पास कोई मूल्य नहीं। वह अपने 'अहं' में जीती है और अपने सम्पर्क में आनेवाले प्रत्येक पुरुष को अपने से प्रभावित देखना चाहती है। उसकी वासनाप्रेरित मानसिक ग्रन्थियाँ उसके मन में अनेक अनैतिक भावनाओं को जन्म देती है और उनकी तुष्टि के लिये वह अपने सम्पर्क मे आनेवाले पुरुषों को साधन बनाती है। रंजना परम्परागत संस्कारों से प्रभावित एक सीधी एवं समर्पिता नारी है। वह अमर से प्रेम करती है तो उसके लिये माता-पिता, धन, सुख-ऐश्वर्य सब को ठुकरा देती है। अन्य पत्नियों की भाँति उसकी भी यह इच्छा है कि उसका पति केवल उसका होकर रहे, उनका सुन्दर और स्वच्छ घर हो, बच्चे हों, किन्तु 'अमर' की 'सनक' के रहते उसकी कोई कामना तृप्त नही हो पाती। नीरस जीवन का बोझ होने से ऊबकर अन्त में वह पति-गृह को त्याग देती है, जिससे अमर निर्द्वन्द्व होकर जीवन-यापन कर सके। इन दोनों नायिकाओं के मन की व्याख्या करने में मन्नू जी को सफलता मिली है।

अपने पात्रों के मनोविज्ञान को स्पष्ट करने के लिये जहाँ लेखिका ने उनकी चिन्तना को व्यक्त किया है, वहाँ उनके संवादों ने भी उक्त लक्ष्य की सिद्धि मे पर्याप्त योग दिया है। उनके कथोपकथनो में पर्याप्त अनेकरूपता है—कहीं वे सामान्य हैं (दैनिक जीवन के सामान्य प्रसंगों से सम्बद्ध), कही विशेष (किन्ही विशिष्ट प्रसंगों को लेकर साभिप्राय संवाद, जिनमें तर्क-वितर्क, उक्ति-वैचित्र्य आदि का यथाप्रसंग समावेश हुआ है)[2], कहीं लघु है और कही दीर्घ, किन्तु आवश्यकता से अधिक दीर्घ कही नही है। संवादों की प्रमुख विशेषता यह है कि वे सर्वत्र वक्ता के व्यक्तित्व को साकार करने में सहयोगी रहे हैं। संवादों की भाषा भी प्रायः पात्रानुरूप है। वार्त्तालाप करते हुए पात्रो की मुखाकृति, भाव-भंगिमा आदि का इतना सजीव उल्लेख हुआ है कि पाठक को सब-कुछ प्रत्यक्ष प्रतीत होने लगता है। एक उद्धरण द्रष्टव्य है—

"तुम्हारे जाने के कुछ देर बाद ही अचानक अमला आ गई।' अपनी ओर देखती रंजना की दृष्टि से बचने के लिए ही जैसे अमर ने कहा। 'आप तो कश्मीर गई थीं न? इतनी जल्दी लौट आई? फिर खबर सूचना कुछ भी नहीं?' रंजना ने कुछ इस ढंग से

१. देखिये 'एक इंच मुस्कान', पृष्ठ ३१४
२. देखिये 'एक इंच मुस्कान', पृष्ठ २५६-२६३

पूछा मानो अमर के 'अचानक' शब्द की सत्यता को अच्छी तरह जान लेना चाहती हो। 'मेरे प्रोग्राम तो मेरी सनक पर निर्भर करते हैं, और सनक हर क्षण बदलती रहती है।' फिर सोफे पर बैठती हुई बोली, 'खबर-सूचना तो मैं कभी देती नहीं—अचानक मिलकर सामनेवाले को स्तम्भित कर देने का भी एक आनन्द होता है, रजना।' और अमला मुस्करा दी।"[1]

लेखिका ने जहाँ मुख्य रूप से पात्रों की क्रियाओं, प्रतिक्रियाओं आदि का चित्रण किया है, वहाँ कतिपय प्रसंगों मे बाह्य वातावरण के दृश्यों की भी सुन्दर अभिव्यक्ति की है (वैसे ऐसे प्रसंग अत्यन्त विरल हैं)। उदाहरणार्थ पुरी मे सागर के चहुँ ओर का दृश्यांकन अवलोकनीय है—"ढलती रात, आसमान पर छिटके तारे और सामने गरजता-फुफकारता अनन्त समुद्र। आज समुद्र और दिनों की अपेक्षा अधिक अशान्त, अधिक उद्वेलित था। आसमान को छूने का दुस्साहस करनेवाली बड़ी-बडी लहरे जब दूर क्षितिज पर उठती और एक-दूसरी को ठेलती हुई बड़े वेग से आगे बढ़तीं, तो लगता कोई शक्ति इनके वेग को रोक नहीं सकेगी, आज ये सब-कुछ अपने भीतर समा लेगी, पर किनारे पर आते ही जाने क्या होता कि बड़े ही विवश भाव से चीत्कार करती हुई वे बिखरकर चूर-चूर हो जाती।"[2] वैसे, राजेन्द्र यादव की तुलना में मन्नू भंडारी ने अपने परिच्छेदों में देशकाल के चित्रण की ओर कम ध्यान दिया है, किन्तु केवल इस दृष्टि से उनके परिच्छेदों का महत्त्व कम नहीं हो सकता। वस्तुतः इस उपन्यास मे लेखक दम्पत्ति का उद्देश्य यही था कि दोनों के सम्मिलित प्रयास से नूतन प्रयोग का आश्रय लेते हुए एक मनोवैज्ञानिक कथा-कृति की सृष्टि की जाए। इसमें कोई सन्देह नहीं कि उनका यह प्रयोग अत्यन्त उच्च कोटि का सिद्ध हुआ है। कथानक की अन्विति, गठन, प्रवाह और अभिव्यंजना प्रत्येक दृष्टि से यह एक श्रेष्ठ उपन्यास है, इसके लिए लेखकद्वय बधाई के पात्र हैं।

आलोच्य उपन्यास की भाषा-शैली भावानुरूप सक्षम एवं प्रभावपूर्ण है। राजेन्द्र यादव की भाषा प्रायः प्रौढ़ एवं गम्भीर है, किन्तु मन्नू भंडारी ने सरस, रोचक एवं प्रवाहपूर्ण भाषा-शैली का प्रयोग किया है। शैली की दृष्टि से यह एक नूतन प्रयोग है कि एक ही उपन्यास में पुरुष लेखक ने पुरुष पात्रों के मनोविज्ञान को प्रस्तुत किया है और लेखिका ने पात्राओं के अन्तर्जगत् एवं बहिर्जगत् की क्रियाओं-प्रतिक्रियाओं का चित्रण किया है। लेखिका के अभिव्यंजना-शिल्प की विशेषता यह है कि वे पात्रों के साथ एकाकार होकर उनका जीवन अंकित करती है। इस प्रसग में राजेन्द्र यादव की उक्ति उद्धरणीय है—"मेरे और मन्नू के लेखन में यही मौलिक अन्तर भी है। वह कथा के पात्रों के साथ इतनी अधिक एकाकार हो जाती है कि उनका 'दुर्भाग्य' उसे अपना 'दुर्भाग्य' लगता है।"[3]

१. एक इंच मुस्कान, पृष्ठ १९४
२. एक इंच मुस्कान, पृष्ठ २७९
३. देखिये 'एक इंच मुस्कान', पृष्ठ ३१४

प्रस्तुत उपन्यास में मुख्य रूप से जिस समस्या को उठाया गया है वह यह है कि लेखक को गृहस्थ जीवन के पचड़े में पड़ना चाहिये अथवा नहीं? लेखिका ने अपने वक्तव्य मे यह स्पष्ट कर दिया है कि पात्रों का उनके अपने व्यक्तिगत जीवन से वैसा सम्बन्ध नही है जैसा कि अनेक पाठक सोचते हैं। लेखिका के कथन का सारांश यह है कि उनका व्यक्तिगत जीवन सुखी है, किन्तु आलोच्य उपन्यास में अमर के जीवन द्वारा तो लेखकद्वय ने यही सिद्ध किया है कि बुद्धिजीवी लेखक को प्रेम, विवाह, गृहस्थी आदि भावनात्मक सम्बन्धों से दूर ही रहना चाहिये, नहीं तो उसके 'अन्तर' का कलाकार मर जाता है। इसके अतिरिक्त कतिपय अन्य प्रासंगिक समस्याओ का भी यत्र-तत्र उल्लेख हुआ है। यथा—प्रेम-विवाह अधिक सफल हैं अथवा परम्परागत विवाह? क्या प्रत्येक नारी तथा प्रत्येक पुरुप के लिये विवाह का बन्धन अनिवार्य है? आदि। उक्त समस्याओं को लेकर उपन्यास के मुख्य एव गौण पात्रों में अनेक तर्क-वितर्क हुए है, किन्तु अन्तिम निर्णय कुछ भी नही दिया गया है। वस्तुतः उक्त प्रश्न व्यक्तिगत जीवन तथा दृष्टिकोण से सम्बद्ध हैं, अतः उनके जितने भी सम्भव उत्तर हो सकते है वे ही पात्रों ने अपने तर्क-वितर्क में प्रस्तुत किये हैं। उपन्यास का नायक अमर संक्रान्तिकालीन बुद्धिजीवी वर्ग के खंडित व्यक्तित्व का प्रतीक है। उसकी असफलता मानो उस समस्त वर्ग की असफलता है।

निष्कर्ष

इस युग की लेखिकाओं ने मुख्य रूप से समाज एवं परिवार को केन्द्र बनाकर प्रेममूलक उपन्यासों की रचना की है। कहीं घटना-संयोग अथवा चारित्रिक दृढ़ता का आधार लेकर प्रेम-सम्बन्धों को सफलता में परिणत कर दिया गया है और कही सामाजिक संकीर्णता, वर्ग-भेद, वर्ण-भेद आदि बाधाओ को सर्वजयी दिखाकर विरह एवं निराशा में उपसंहार किया गया है। इन उपन्यासो में मध्यवर्गीय परिवारों की सामयिक समस्याओं को विशेष रूप से उभारा गया है। विशेषता यह है कि जहाँ पूर्ववर्ती उपन्यास-लेखिकाओं ने समाज को केन्द्र मानकर व्यक्ति की अनुभूतियों का चित्रण किया था, वहाँ इस युग मे व्यक्ति को प्रमुख मानकर उसके परिवेश को गौण रूप मे चित्रित किया गया। हाँ, लेखिकाओ ने नारी होने के नाते नारी-हृदय की अभिव्यक्ति एवं नारी की समस्याओं के चित्रण पर अधिक बल दिया है। कुछ लेखिकाओं ने तो इस दिशा में रूढ़ि-प्राप्त प्रवृत्तियो को ही अपना लिया है, जैसे कि सत्यवती 'उषा' ने 'क्षितिज के पार' मे हिन्दू-विधवा की पारिवारिक एवं सामाजिक दुर्दशा का चित्रण किया है। इसी प्रकार नुपमा भाटी के 'गेट कीपर' तथा मधूलिका के 'प्राणों की प्यास' में वेश्या-जीवन की विभीषिकाओं का चित्रण प्रमुख विषय है। कतिपय अन्य लेखिकाओ ने नारी की वर्तमान समस्याओं की ओर ध्यान देकर युगानुरूप सजगता का परिचय दिया है। उदाहरणार्थ मीरा महादेवन ने 'सो क्या जाने पीर परायी' में अभावग्रस्त निम्नमध्यवर्गीय परिवार की कन्या को केन्द्र बनाकर नौकरी करनेवाली नारी के मार्ग में आनेवाले विभिन्न प्रलोभनों एवं बाधाओं का यथार्थ

चित्रांकन किया है। उषा प्रियंवदा ने भी 'पचपन खम्भे लाल दीवारें' में ऐसे ही अभावग्रस्त परिवार की कॉलेज में नौकरी करनेवाली कन्या की मानसिक शून्यता एवं हलचल का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है। इन सामाजिक उपन्यासों मे कुँवरानी तारादेवी का 'जीवन दान' एक श्रेष्ठ उपन्यास है। यद्यपि इसमें भी प्रेम-कथा को स्थान दिया गया है, किन्तु इसके प्रस्तुतीकरण में लेखिका ने व्यापक दृष्टिकोण का परिचय दिया है। भारत की सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक स्थितियो की चर्चा करते हुए उन्होंने मार्क्सवादी सिद्धान्तों की प्रशंसा की है और भारतीय सभ्यता के सुधार पर बल दिया है।

सामाजिक उपन्यासों के अतिरिक्त इस युग में श्रीमती सुदेश 'रश्मि' ने 'एक ही रास्ता' तथा उमादेवी ने 'आलिंगन' शीर्षक ऐतिहासिक उपन्यास भी लिखे है। इनमे सुदेश 'रश्मि' का उपन्यास शुद्ध रूप से ऐतिहासिक है, क्योंकि इसमें देश और काल के सन्दर्भ मे नवाब सरफराज अलीवर्दी, कासिम आदि पात्र ऐतिहासिक है। उमादेवी के उपन्यास में इब्राहीम लोदी, बाबर आदि गौण पात्रों एवं घटनाओं के अतिरिक्त प्रमुख पात्र एवं घटनायें काल्पनिक हैं। इस कृति को 'ऐतिहासिक प्रेमाख्यानक उपन्यास' की संज्ञा दी जा सकती है।

इस युग के पुरुष लेखकों की रचनाओं में नैतिक पूर्वाग्रह बहुत-कुछ शिथिल रहे है। यशपाल, मन्मथनाथ गुप्त, जैनेन्द्र प्रभृति लेखकों ने काम-प्रवृत्ति को मानव की अनिवार्य वृत्ति मानकर अश्लीलता एवं यौन-विकृतियों का चित्रण किया है। नारी जाति सामाजिक मर्यादाओं के प्रति उतने नग्न रूप में उच्छृंखल नही हो सकती। यही कारण है कि लेखिकाओं ने स्त्री-पुरुष-सम्बन्धों को प्रायः मानसिक सतह पर ही रखा है और सामाजिक व्याघातों से उत्पन्न वेदना एवं विवशताओं का ही चित्रण मुख्य रूप से किया है। नवूलिका मिश्र की 'तड़पत बीते रैन' शीर्षक कृति उक्त कथन की अपवाद है, क्योंकि इसमे लेखिका ने निर्लज्ज होकर आलिंगन, चुम्बन आदि का खुला चित्रण किया है।

वर्तमानयुगीन कथा-साहित्य की एक अन्य विशेषता है—पात्रों में वर्गगत प्रवृत्तियों के स्थान पर व्यक्ति-वैचित्र्य की स्थापना। अधिकांश लेखिकाओं ने युग के इस प्रभाव की उपेक्षा करते हुए स्थूल चरित्र-चित्रण किया है, किन्तु प्रकाशवती, मन्नू भंडारी आदि ने अपने उपन्यासों को व्यक्ति के धरातल से प्रस्तुत किया है। अन्य अनेक लेखिकाओं ने भी अपने पात्रों में मनोविज्ञान-सम्मत सूक्ष्मताओं के विश्लेपण का लक्ष्य रखा है। पात्रों का आत्म-विश्लेपण, चेतना-प्रवाह-वर्णन आदि इस युग के चरित्र-चित्रण की उल्लेखनीय विशेषतायें है।

देशकाल के चित्रण में आंचलिक स्पर्श एवं स्थानीय रग देने की प्रवृत्ति इस युग की नई देन है। किसी विशेप प्रदेश की भौगोलिक स्थिति, सामाजिक एव धार्मिक रीति-परम्परा, राजनीतिक उत्थान-पतन आदि का ब्यौरा देकर उस अंचलविशेष को प्रत्यक्ष कर देना आंचलिक उपन्यासों की विशेपता होती है। श्रीमती भारती विद्यार्थी का 'पाँच बेंत' शीर्षक उपन्यास इसी प्रकार का है, क्योंकि इसमें दक्षिण भारत के सामाजिक,

धार्मिक एवं राजनीतिक जीवन पर प्रकाश डाला गया है। इसी प्रकार भारती विद्यार्थी के 'हार या जीत' एवं शिवानी के 'मायापुरी' में भी कुछ-कुछ आंचलिक प्रभाव का स्पर्श है। 'हार या जीत' में केरल के रीति-रिवाजों की चर्चा प्रमुख विषय है और 'मायापुरी' में पर्वतीय समाज की रूढ़िगत परम्पराओं का यत्र-तत्र उल्लेख हुआ है।

शिल्प की दृष्टि से इस युग में अनेक नूतन प्रयोग हुए हैं, किन्तु लेखिकाओं के उपन्यासों में मुख्यतः प्राचीन घटनाप्रधान अथवा चरित्रप्रधान शैलियों का ही प्रयोग हुआ है। प्रकाशवती तथा मन्नू भंडारी ने अपनी कृतियों में नूतन शैली का प्रयोग किया है। इनमें मुख्य पात्रों ने अपने-अपने दृष्टिकोण से आत्म-चिन्तन की शैली में कथानक प्रस्तुत किये हैं। इस प्रकार पात्रों के आत्मविश्लेषण से उनका सूक्ष्मातिसूक्ष्म मनोविज्ञान उभरकर पाठकों के समक्ष प्रस्तुत हुआ है। वास्तविक कला-प्रेरणा से उद्‌भूत होने के कारण यह प्रयोग अपने में बड़ा सफल एवं मार्मिक सिद्ध हुआ है। इस काल के उपन्यासों में भाषा के प्रायः सरल एवं बोधगम्य रूप को अधिक स्थान प्राप्त हुआ है। देशज शब्दों, प्रसंगानुकूल मुहावरों एवं सूक्तिगर्भित वाक्यावली ने भाषा-शैली में पर्याप्त सजीवता की सृष्टि की है।

उपसंहार

स्वातंत्र्योत्तर कथा-लेखिकाओं के योगदान का मूल्यांकन करने पर इसमें सन्देह नही रह जाता कि इस युग की लेखिकाएँ अपने समकालीन लेखकों की तुलना मे कही भी कम नहीं ठहरतीं। प्रारम्भकालीन और विकासकालीन लेखिकाएँ उतनी जागरूक नही भी थीं, क्योंकि एक ओर पर्दा-प्रथा, अशिक्षा, अन्धविश्वास, धार्मिक रूढ़ियो आदि ने उनकी प्रतिभा को ग्रस रखा था, दूसरी ओर गृहिणी के उत्तरदायित्व के संकुचित दायरे से वाहर आकर कुछ करने की उनकी वैसी तीव्र आकांक्षा भी नही थी, जबकि पुरुष लेखक उक्त वाधाओं से मुक्त थे। फलतः स्वतंत्रता-पूर्व काल में पुरुषों और स्त्रियों द्वारा विरचित कथा-साहित्य में जो अन्तर लक्षित होता है, बाद के कथा साहित्य में वैसा नही है।

स्वतंत्रता-प्राप्ति के उपरान्त भारत में विभिन्न क्षेत्रों मे विविधि परिवर्तन हुए। राजनीतिक एवं सामाजिक नवोत्थान के परिणामस्वरूप साहित्य की अन्य विधाओं की भाँति कथा-क्षेत्र के बहुमुखी विकास की सम्भावनाएँ भी शनैः-शनैः व्यक्त होने लगीं। ज्यों-ज्यों शिक्षा और विज्ञान उन्नति करते गये, त्यों-त्यों नैतिक पूर्वाग्रहों में शिथिलता आने लगी। पुरुप लेखकों की रचनाओं में नवागत परिवर्तन त्वरित गति से लक्षित हुए, किन्तु लेखिकाएँ भी बहुत पीछे नही रही। पश्चिम के प्रभाव ने नारी पर भारतीय आदर्शों द्वारा आरोपित पूर्व-बन्धनों (पर्दा-प्रथा, पति का अनुचरत्व आदि) की निस्सारता को सिद्ध करके समानाधिकारों का समर्थन किया। फलत. नारी को आत्मोन्नति के अधिकाधिक अवसर सुलभ हुए। उक्त नवोद्‌बोधन का ही यह परिणाम है कि इस युग में कहानी और उपन्यास दोनो क्षेत्रो में महिलाओं ने पूर्ववर्ती युगों की अपेक्षा अधिक तत्परता एव जागरूकता का परिचय दिया है।

इस युग की कहानी-लेखिकाओं में सत्यवती मल्लिक, शिवरानी, रजनी पनिकर, कचनलता सब्बरवाल, सरूपकुमारी बख्शी, सोमा वीरा, मन्नू भंडारी और शान्ति मेहरोत्रा के नाम विशेप रूप से उल्लेखनीय है। शिवरानी विश्नोई, सोमा वीरा आदि कतिपय लेखिकाओं ने पुरुप द्वारा नारी पर अत्याचार, दहेज-प्रथा, वेश्या-जीवन की यन्त्रणा आदि परम्परागत विपयो को ही अपनी कहानियो में स्थान दिया है, किन्तु रजनी पनिकर, मन्नू भंडारी प्रभृति जागरूक लेखिकाओ ने उन नूतन समस्याओं एवं संघर्पो का चित्रण किया है जो वर्तमान युग मे व्याप्त कुंठा, असंतोप एवं विशृंखलता का परिणाम है। सामूहिक रूप से अनुशीलन करने पर उक्त लेखिकाओं के कहानी-साहित्य में निम्नलिखित प्रवृत्तियो

के दर्शन होते हैं—पूँजीवादी शोषण की निन्दा, पीड़ित वर्गों के प्रति संवेदना, वर्तमान सभ्यता में निहित छिद्रों का व्यंग्यपूर्ण अन्वेषण, समाज-सुधार की आकांक्षा से परम्परागत रूढ़ियों पर प्रहार, शोषित नारी वर्ग के उत्थान की अकुलाहट, प्राकृतिक एवं मानसिक वातावरण का सूक्ष्म चित्रण, व्यक्तिगत चरित्र-स्खलनों एवं यौन विकृतियों का यथार्थपरक विश्लेषण, शरणार्थी-समस्या, साम्प्रदायिक वैमनस्य, बेकारी, महँगाई-जैसी समसामयिक राजनीतिक समस्याओं का स्वतन्त्र निरूपण अथवा प्रासंगिक उल्लेख। पूर्ववर्ती कहानी-लेखिकाओं की भाँति इस युग की कतिपय लेखिकाओं ने भी कुछ विशिष्ट विषय-क्षेत्रों में अधिक रुचि दिखाई है। उदाहरणार्थ सत्यवती मल्लिक ने प्रकृति-चित्रण एवं बाल-मनोविज्ञान के चित्रण में विदग्धता का परिचय दिया है, मन्नू भंडारी ने अपने पात्रों में यौन विकृतियों एवं व्यक्ति-वैचित्र्य का समावेश किया है तथा शान्ति मेहरोत्रा ने व्यक्ति-वैचित्र्य एवं सामाजिक विकृतियों का आधार लेकर हास्य-व्यंग्यपरक कहानियाँ लिखी हैं।

इस युग की गौण कहानी-लेखिकाओं का योग भी कुछ कम उल्लेखनीय नहीं है। हीरादेवी चतुर्वेदी, विमला रैना, विपुला देवी, कृष्णा सोबती, नमिता लुम्बा प्रभृति अनेक उदीयमान लेखिकाओं ने सुन्दर एवं कलात्मक कहानियों की रचना की है। अभी इन लेखिकाओं की कहानी-कला विकासोन्मुख है और इस बात की पूर्ण सम्भावना है कि आज की अनेक गौण कहानी-लेखिकाएँ निकट भविष्य में मुख्य लेखिकाओं की श्रेणी में समाविष्ट हो सकेंगी। सामाजिक कहानियों के अतिरिक्त इस युग में ऐतिहासिक, वैज्ञानिक, दार्शनिक, भावपूर्ण, प्रतीकात्मक आदि विविधविषयक कहानियाँ लिखी गईं। कला के क्षेत्र में भी डायरी शैली, पत्र शैली, आत्मकथन शैली, चेतना-प्रवाह-पद्धति, अन्तर्विवाद शैली, एकालाप, लघुकथा, व्यंग्य-चित्र स्केच, एकपात्री कथा आदि विविधि शैलियों का विकास हुआ है।

उपन्यास-क्षेत्र में रजनी पनिकर, वसन्त प्रभा, कृष्णा सोबती, चन्द्रकिरण सौनरेक्सा, लीला अवस्थी तथा अन्नपूर्णा तांगड़ी के नाम विशेषत: उल्लेखनीय हैं। इस दिशा में रजनी पनिकर की प्रतिभा सर्वाधिक विकासशील रही है। नारी-जीवन के वर्तमान संघर्षों का चित्रण उनके उपन्यासों का प्रिय विषय है। कार्यशील महिलाओं की संघर्षपूर्ण जीवन-स्थिति के युगानुरूप चित्रण में उन्हें विशेष सफलता प्राप्त हुई है। चन्द्रकिरण सौनरेक्सा एवं वसन्त प्रभा पारिवारिक जीवन के चित्रण एवं नारी के कोमल भावों के मनोवैज्ञानिक अंकन में सफल रही हैं। कृष्णा सोबती की उपन्यास-कला का उल्लेखनीय महत्त्व यह है कि उन्होंने अपनी विशिष्ट कलात्मक शैली में आंचलिक उपन्यास की रचना करके हिन्दी-लेखिकाओं द्वारा प्रणीत कथा-साहित्य में एक खटकनेवाले अभाव की पूर्ति की है। देश-काल के चित्रण में स्थानीय रंग एवं आंचलिक स्पर्श देने की प्रवृत्ति इस युग की नई देन है। पुरुष लेखकों में नागार्जुन तथा 'रेणु' ने इस क्षेत्र में विशेष सफल प्रयोग किये हैं। इसी प्रकार लेखिकाओं में कृष्णा सोबती और शिवानी के नाम उल्लेखनीय हैं।

समष्टि की अपेक्षा व्यष्टि की समस्याओ को महत्त्व देना इस युग की प्रमुख प्रवृत्ति है। जैनेन्द्र, इलाचन्द्र जोशी और अज्ञेय ने अपने उपन्यासों मे पात्रों के अव्यक्त चरित्र को मनोवैज्ञानिक पद्धति से अनावृत्त करके जिस नवीन शैली को जन्म दिया था, लेखिकाओं में मन्नू भंडारी एवं रजनी पनिकर का कथा-साहित्य उसकी विशेषताओं को अपने में समेटे हुए है। अन्तर केवल यह है कि जहाँ अधिकांश पुरुष लेखकों ने यौन विकृतियों, काम-प्रवृत्तियों और चरित्र-स्खलनों को अश्लीलता की सीमा तक पहुँचा दिया है, वहाँ लेखिकाओं ने प्राय. उन्हें मानसिक सतह पर ही रखा है और तज्जन्य आत्मपीड़न को ही व्यक्त किया है। सुषमा भाटी, मधूलिका मिश्र आदि कतिपय अपवादस्वरूप लेखिकाओ ने वासना के नग्न चित्र भी अंकित किये है। मन्नू भंडारी की कुछ कहानियो में भी वैसे संकेत हैं, किन्तु अस्पष्ट होने के कारण वे उतने विकृत प्रतीत नही होते। इस युग की लेखिकाओं मे कहानी-कला और उपन्यास-कला का उन्नयन समान स्तर पर रहा है। सामाजिक उपन्यासों के अतिरिक्त कुछ ऐतिहासिक एवं मनोवैज्ञानिक उपन्यास भी लिखे गये, किन्तु प्रमुखता सामाजिक उपन्यासों की ही रही। इस काल की कुछ लेखिकाओं ने अपने पतियों के सहयोग से उपन्यासों की रचना की है। मन्नू भंडारी और भारती विद्यार्थी के उपन्यास इसी प्रकार के है।

स्वातंत्र्योत्तर कथा-साहित्य उत्तरोत्तर व्यक्त से अव्यक्त, आस्था से अनास्था, समाज मे व्यक्ति, आदर्श से यथार्थ एवं स्थूल से सूक्ष्म की ओर प्रवृत्त होता रहा है। इस परिवर्तन के परिणामस्वरूप शिल्प की दृष्टि से भी अनेक नूतन प्रयोग सम्मुख आये है। रजनी पनिकर, मन्नू भंडारी और प्रकाशवती ने अपने उपन्यास नूतन शैली में प्रस्तुत किये हैं, पात्रो के आत्मविश्लेषण को ही समस्त तत्त्वों का केन्द्र बनाया गया है। वस्तुतः लेखिकाओं ने हिन्दी-कथा-साहित्य को अपनी संवेदनशील भावनाओ एवं जागरूक प्रतिभा का आश्रय देकर पर्याप्त गौरवान्वित किया है। नारी-हृदय का जितना सफल चित्रण लेखिकाएँ कर सकी है, उतना लेखकों के कथा-साहित्य मे उपलब्ध नही है। इसके अतिरिक्त गार्हस्थ्य जीवन, बाल-मनोविज्ञान, सौतिया डाह आदि विषय ऐसे हैं, जिनमे पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं ने अधिक सजीव कहानियों की रचना की है। इसका यह तात्पर्य कदापि नही है कि प्रत्येक कोण से पुरुष लेखकों का कथा-साहित्य अपेक्षाकृत हीन ही है। ऐसे क्षेत्र अनेक है जहाँ लेखिकाओं का पक्ष अपेक्षाकृत दुर्बल है। उदाहरणार्थ लेखिकाएँ केवल सामाजिक कथा-क्षेत्र मे गतिशील रही, यह भी एक दोष है, क्योंकि अन्य क्षेत्रों का उन्होंने कहीं-कही स्पर्श मात्र ही किया है। जिस प्रकार वृन्दावनलाल वर्मा, राहुल सांकृत्यायन, हजारीप्रसाद द्विवेदी प्रभृति विद्वानो ने शोधपूर्ण ऐतिहासिक उपन्यास प्रस्तुत किये हैं, वैसा लेखिकाएँ नही कर सकी। उमादेवी, सुदेश 'रश्मि' आदि एक-आध अपवाद-स्वरूप नाम लिये भी जा सकते है तो भी हमें यह कहने में संकोच नही होना चाहिए कि उनके ऐतिहासिक उपन्यास उतने उच्च स्तर के नहीं है। इसी प्रकार मनोवैज्ञानिक कथा-साहित्य के क्षेत्र मे अज्ञेय, जैनेन्द्र और इलाचन्द्र जोशी की कला को लेखिकाओ ने

इस रूप में भले ही अपनाया हो, किन्तु यह असन्दिग्ध है कि नारी-मनोविज्ञान को वाणी देने में अनेक लेखिकाएँ पुरुषों से आगे रही हैं। आंचलिक उपन्यासों के क्षेत्र में केवल तीन नाम लिये जा सकते हैं—भारती विद्यार्थी, कृष्णा सोबती और शिवानी। ये अभाव क्यों हैं; इसका कारण स्पष्ट है—वह यह कि पुरुषों पर सामाजिक बन्धन उस रूप में हावी कभी नहीं रहे, जिस रूप में महिलाओं को उन्होंने बाधित किया है। प्रस्तुत तथ्य के समर्थन में श्री रघुवंशलाल के 'हिन्दी साहित्य और स्त्रियाँ' शीर्षक लेख से उद्धृत अधोलिखित पंक्तियाँ अवलोकनीय हैं—"स्त्री कवियों की तुलना पुरुषों से करना अनुचित ही नहीं, अविवेकपूर्ण भी है। कारण स्पष्ट है। पुरुषों को सदा से अपनी मानसिक शक्तियों के विकास का अवसर मिलता आया है, कम से कम स्त्रियों से अधिक। वे परदे के शिकार नहीं रहे। उन्हें पुस्तकें पढ़ने का और लिखने का अच्छा सुयोग मिलता रहा।"[1]

यहाँ जो कुछ कवियों के लिए कहा गया है वही कथा-लेखन के क्षेत्र में भी सत्य है। इसका एक अन्य प्रमाण यह है कि प्रेमचन्द युग के आरम्भ तक स्त्रियों पर नैतिक बन्धन बहुत हावी थे; अतः उन्होंने जो साहित्य लिखा वह परिमाण एवं कथा-शिल्प दोनों की दृष्टि से त्रुटिपूर्ण था। इसके बाद ज्यों-ज्यों नैतिक पूर्वाग्रह शिथिल होते गये, त्यों-त्यों लेखिकाएँ अपनी प्रतिभा को विकसित करती रहीं। महादेवी वर्मा, सुभद्राकुमारी चौहान, शिवरानी प्रेमचन्द, कमला चौधरी, चन्द्रकिरण सौनरेक्सा, कंचनलता सब्बरवाल, मन्नू भंडारी, शान्ति मेहरोत्रा, रजनी पनिकर प्रभृति अनेक लेखिकाएँ ऐसी हैं, जिन पर हिन्दी-कथा-साहित्य को गर्व हो सकता है। वर्तमान काल में नारी को स्वतन्त्र चिन्तन की परिस्थितियाँ सुलभ हुई हैं, तो निश्चय ही अभावों की पूर्ति होगी। आवश्यकता केवल इस बात की है कि लेखिकाएँ समाज, राजनीति आदि विषयों में रुचि बढ़ाएँ और गार्हस्थिक विषयों से बाहर जाकर विज्ञान, राजनीति, समाजशास्त्र आदि अन्य विषयों को भी कथा-साहित्य में व्यापकता से अपनाएँ। लेखिकाओं की वर्तमान प्रगतिशील चेतना को देखते हुए यह निस्संकोच कहा जा सकता है कि हिन्दी-कथा-साहित्य का भविष्य उज्ज्वल है।

---

१. कमला (बनारस), मई १९३९, पृष्ठ १५६

परिशिष्ट

सहायक ग्रंथों की सूची

लेखिकाओं के कहानी-संग्रह और उपन्यास

१. अणिमा सिंह : नारी, प्रथम सं०, सिंह प्रेस, कलकत्ता।

२-५. अन्नपूर्णा तांगड़ी : चिता की धूल, प्रथम सं०, सन् १९६१, ज्ञानालोक प्रकाशन, लखनऊ।

: निर्धनता का अभिशाप, सन् १९६१, भारतीय ग्रन्थ-माला, लखनऊ।

: मिलनाहुति, प्रथम सं०, संवत् २०१८, हिन्दी साहित्य भण्डार, लखनऊ।

: विजयिनी, प्रथम सं०, भारतीय ग्रन्थमाला, लखनऊ।

६-७. आदर्श कुमारी आनन्द : गरीब घर अमीर इरादे, प्रथम सं०, नवयुग पुस्तक भंडार, लखनऊ।

: प्रेम और बलिदान, प्रथम सं०, सन् १९६०, नवयुग पुस्तक भंडार, लखनऊ।

८. आशारानी 'अंशु' : काश लहरें बोल पातीं, अकेला प्रकाशन, इलाहाबाद।

९-११. इन्दिरा नूपुर : वह कौन थी, प्रथम सं०, सन् १९६०, चन्द्रलोक प्रकाशन, इलाहाबाद।

: शैव्या के आँसू, प्रथम सं०, सन् १९५८, चन्द्रलोक प्रकाशन, इलाहाबाद।

: सपने, मान और हठ; प्रथम सं०, चन्द्रलोक प्रकाशन, इलाहाबाद।

१२ इन्दुमती : उखड़े बिरवे, तृतीय सं०, सन् १९५६, सरस्वती प्रेस, बनारस।

१३. उमा देवी : आलिंगन, प्रथम सं०, सन् १९५६, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी।

१४. उर्मि : प्रतीक्षा, प्रथम सं०, प्रकाशक—राजेश, कानपुर।

१५. उषा : फिर वसन्त आया, प्रथम सं०, सन् १९६१, दिल्ली प्रेस, दिल्ली।

१६-१७. उषा प्रियम्वदा : ज़िन्दगी और गुलाब के फूल, प्रथम सं०, सन् १९६१, भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी।

: पचपन खंभे लाल दीवारें, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।

१८. उषा सक्सेना 'माधवी' : बहते बादल, प्रथम सं०, सन् १९५५, अग्रवाल बुक हाउस, इलाहाबाद।

१९-२०. कंचनलता सब्बरवाल : प्यासी धरती सूखे ताल, प्रथम सं०, सन् १९६२, माडल हाउस, लखनऊ।

: भूख, प्रथम सं०, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी।

२१. कमला टंडन 'कमल' : बिखरते स्वप्न, प्रथम सं०, सन् १९६१, नवयुग प्रकाशन, लखनऊ।

२२. कमलेश सक्सेना : शाप या वरदान, प्रथम सं०, आर्गस पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली।

२३-२४. कान्ता सिन्हा : अतृप्ता, प्रथम सं०, सन् १९६२, राजपाल ऐंड संस, दिल्ली।

: काँच का रास्ता, प्रथम सं०, सन् १९६०, प्रीमियर पब्लिशिंग हाउस, वाराणसी।

२५. किरणकुमारी गुप्ता : पुरस्कार, प्रथम सं०, सन् १९५५, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।

२६. कुँवरानी तारादेवी : जीवनदान, प्रथम सं०, राजपाल ऐंड संस, दिल्ली।

२७. कृष्णा रविकमल : भटकते राही, प्रथम सं०, पुष्पी कार्यालय, इलाहाबाद।

२८. कृष्णा सोबती : डार से बिछुड़ी, सन् १९६०, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।

२९. कौशल्या अश्क : दो धारा, द्वितीय सं०, सन् १९५४, नीलाभ प्रकाशन गृह, इलाहाबाद।

३०. चन्द्रकिरण सौनरेक्सा : चंदन चाँदनी, प्रथम सं०, सन् १९६२, मित्र प्रकाशन, इलाहाबाद।

३१. चारुशीला मित्रा : त्रिशूल, नवयुग प्रेस लिमिटेड, पटना।

३२. तारा पोतदार : रेखाएँ और बिन्दु, सन् १९५२, एजूकेशनल बुक डिपो, नागपुर।

३३. दर्शना : चाय का पानी, प्रथम सं०, सन् १९५५, मनोहर पुस्तकालय, कमला मार्केट, दिल्ली।

३४. नमिता लुम्बा : जिन्दगी के अनुभव, प्रथम स०, सन् १९५४, सेंट्रल बुक डिपो, इलाहाबाद।

३५. नारायणी कुशवाहा : पराये बस मे, चिनगारी प्रकाशन, बनारस।

३६. पदमावती पटरथ : नील के पत्थर, प्रथम संस्करण, सुषमा साहित्य मन्दिर, जबलपुर।

३७-३९. पुष्पा भारती : किनारों के बीच, प्रथम सं०, इंडिया पब्लिशर्स ऐंड एडवरटाइजर्स, कलकत्ता।

: मरियम, संवत् २०१३, भारती कुटीर, कलकत्ता।

: विधाता के निर्माता, प्रथम सं०, इंडिया पब्लिशर्स ऐंड एडवरटाइज़र्स, कलकत्ता।

४०-४१. पुष्पा महाजन : घूमते नक्षत्र, सन् १९६०, साहित्य संगम, लुधियाना।

: संघर्ष और शान्ति, प्रथम सं०, सन् १९५७, राजपाल ऐंड संस, दिल्ली।

४२. प्रकाशवती : चार परतें, प्रथम सं०, सन् १९६२, राजपाल ऐंड संस, दिल्ली।

४३. प्रकाशवती नारायण : टूटा क्रम, प्रथमावृत्ति, हरेन्द्र प्रकाशन, भागलपुर।

४४. प्रिया राजन : नन्दा, प्रथम स०, सन् १९६३, नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद।

४५. बिन्दु अग्रवाल : मोहल्ले की बुआ, प्रथम सं०, सन् १९६१, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।

४६-४७. भारती विद्यार्थी : पाँच बेंत, प्रथम सं०, सन् १९५७, आत्माराम ऐंड संस, दिल्ली।

: हार या जीत, प्रथम सं०, सन् १९५२, राजहंस प्रकाशन, दिल्ली।

४८. मधूलिका : प्राणों की प्यास, प्रथम सं०, सन् १९६०, राजहंस प्रकाशन, दिल्ली।

४९. मधूलिका मिश्र : तड़पत बीते रैन, प्रथम स०, सन् १९६०, अशोक पाकेट बुक्स, दिल्ली।

५०-५३ मन्नू भंडारी : एक इंच मुस्कान, प्रथम स०, सन् १९६३, राजपाल ऐंड संस, दिल्ली।

: एक पुरुष एक नारी, हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली।

: तीन निगाहों की एक तस्वीर।

: मैं हार गई।

५४. महेन्द्र बावा : उलझे प्रश्न : अधूरे उत्तर, प्रथम सं०, न
प्रकाशन, दिल्ली।

५५. माया मन्मथनाथ गुप्त : मंझधार, प्रथम सं०, विद्या मन्दिर, नई दिल्ली

५६-५७. मालती ढिडा : एकान्त साधना, प्रथम सं०, सन् १९५०,
प्रकाशन, हैदराबाद।
: संघर्ष, सन् १९५२, शारदा प्रकाशन, बनारस।

५८-५९. मालती परूलकर : तुम बड़ी पागल हो, प्रथम सं०, सन् १९५८,
कमल प्रकाशन, दिल्ली।
: वाली, प्रथम सं०, सन् १९६१, राजकमल प्रका-
शन, दिल्ली।

६०-६१. मीरा महादेवन : अपना घर, प्रथम सं०, सन् १९६१, राजकमल
प्रकाशन, दिल्ली।
: सो क्या जाने पीर पराई, प्रथम सं०, सन् १९६
राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।

६२-६९. रजनी पनिकर : एक लड़की दो रूप, हिन्द पाकेट बुक्स, दिल्ली।
: काली लड़की, प्रथम सं०, सन् १९५८, आत्माराम
ऐंड संस, दिल्ली।
: जाड़े की धूप, सन् १९५८, न्यू ऐज पब्लिशर्स प्रा-
वेट लि०, कलकत्ता।
: ठोकर, सन् १९४९, पुस्तक जगत्, पटना।
: पानी की दीवार, प्रथम सं०, सन् १९५४, राजहंस
प्रकाशन, दिल्ली।
: प्यासे बादल, सन् १९५५, मोतीलाल बनारसीदास,
दिल्ली।
: मोम के मोती, सन् १९५४, शारदा मन्दिर, दिल्ली।
: सिगरेट के टुकड़े, सन् १९५६, शारदा मन्दिर,
दिल्ली।

७०. रत्ना थापा : सुख-दुःख, प्रथम सं०, साहित्य सदन, देहरादून।

७१. राजकुमारी शिवपुरी : स्मृतियों की आँधी, प्रथम सं०, सन् १९५१, दी
स्टूडेंट्स बुक कम्पनी, जोधपुर।

७२. राधिका जौहरी : पलकें, प्रथम सं०, सन् १९५६, वन्दना प्रकाशन,
मथुरा।

७३. रीता : एक कली दो कांटे, प्रथम सं०, सन् १९५२,

नवभारतीय प्रकाशन, नई दिल्ली।

लावण्यप्रभा राय : रजनीगन्धा, द्वितीय सं०, सन् १९५४, आदर्श हिन्दी पुस्तकालय, प्रयाग।

लीला अवस्थी : दूब के फूल, सन् १९५५, हिन्दिया प्रकाशन, दिल्ली।

: दो राहें, प्रथम सं०, सन् १९५८, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी।

: बदरवा बरसन आए, प्रथम सं०, सन् १९६१, सन्ध्या प्रकाशन, दिल्ली।

: बिखरे काँटे, प्रथम सं०, सन् १९६०, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी।

वसन्त प्रभा : अधूरी तस्वीर, सन् १९५९, आत्माराम ऐंड संस, दिल्ली।

: साँझ के साथी, सन् १९५९, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।

राजलक्ष्मी गौर : आँधी और तिनके, प्रथम सं०, नटराज प्रकाशन, बम्बई।

मंजुला देवी : पूर्व का पंडित, प्रथम सं०, सन् १९६०, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

विमल वेद : अर्चना, प्रथम सं०, सन् १९६२, विश्वविजय प्राइवेट लि०, नई दिल्ली।

: असली हीरा नकली हीरा, प्रथम सं०, सन् १९६३, भारती साहित्य सदन, नई दिल्ली।

: ज्योति किरण, प्रथम सं०, सन् १९५७, राजहंस प्रकाशन, दिल्ली।

निर्मला रैना : बुझे दीप, प्रथम सं०, किताब महल, प्रयाग।

मीरा : मौत का फूल, प्रथम सं०, सन् १९६१, भारती साहित्य मन्दिर, दिल्ली।

शकुन्तला देवी : रूप और कला, प्रथम सं०, संवत् २०१४, नीलिमा प्रकाशन, छपरा।

शकुन्तला मिश्र : कच्ची मिट्टी, सन् १९५७, भारतीय पुस्तक भंडार, प्रयाग।

शकुन्तला शर्मा : चाँद खो गया, प्रथम सं०, सन् १९५८, त्रिवेणी प्रकाशन, इलाहाबाद।

९१-९२. शकुन्तला शुक्ल : अंधेरे उजाले के फूल, प्रथम सं०, सन् १९६० भारती साहित्य सदन, नई दिल्ली।
: पंथ का जल, सन् १९६१, भारती साहित्य सदन, नई दिल्ली।

९३. शान्ति जोशी : माटी की गंध, प्रथम सं०, सन् १९५८, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।

९४-९५. शान्ति मेहरोत्रा : खुला आकाश मेरे पंख, प्रथम सं०, सन् १९६२ भारतीय ज्ञानपीठ, काशी।
: सुरखाब के पर, इंडियन प्रेस, प्रयाग।

९६-९९. शिवरानी बिश्नोई : उपकार, सन् १९५०, नन्दकिशोर ऐंड संस, बनारस
: जीवन की अनुभूतियाँ, प्रथम सं०, सन् १९५२, सरस्वती मन्दिर, बनारस।
: दुर्भाग्य, सन् १९४७, नन्द किशोर ऐंड ब्रदर्स, काशी
: भीगी पलकें, सरस्वती मन्दिर, वाराणसी।

१००. शिवानी : मायापुरी, प्रथम सं०, सन् १९६१, न्यू ऐज पब्लिशर्स, कलकत्ता।

१०१. शीला रघुवंशी : अभागा, प्रथम सं०, सन् १९५८, भारत प्रेस, नैनीताल।

१०२-१०३. शीला शर्मा : एक था, प्रथम सं०, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।
: टूटी चूड़ियाँ, प्रथम सं०, सन् १९५०, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।

१०४-१०८ सत्यवती देवी 'उषा' : कमला कान्त, सन् १९५७, नवभारती प्रकाशन, दिल्ली।
: क्षितिज के पार, प्रथम सं०, नवभारती प्रकाशन, मेरठ।
: जीवन की पहेलियाँ।
: बिखरी आशा, नवभारती प्रकाशन, मेरठ।
: मृदुला, सन् १९५१, सौरभ प्रकाशन, दिल्ली।

१०९-११३ सत्यवती मल्लिक : अमिट रेखाएँ, द्वितीय सं०, सन् १९५५, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली।
: दिन रात, प्रथम सं०, सन् १९५५, अतरचन्द कपूर ऐंड संस, दिल्ली।
: दो फूल, द्वितीय सं०, सन् १९४८, नालन्दा प्रकाशन, बम्बई।

	: नारी हृदय की साध, प्रथम सं०, सन् १९६१, राजपाल ऐंड संस, दिल्ली ।
	: वैशाख की रात, प्रथम सं०, सन् १९५१, मोतीलाल बनारसीदास, बनारस ।
११४. सन्तोष बाला 'प्रेमी'	: स्नेह और स्वप्न, प्रथम सं०, सन् १९६२, चैतन्य प्रकाशन, कानपुर ।
११५. सन्तोष सचदेवा	: रूप और छाया, प्रथम सं०, सन् १९५६, नव साहित्य प्रकाशन, नई दिल्ली ।
११६. सरिता रानी	: नीला, सन् १९५२, हिन्दी बुक डिपो, कलकत्ता ।
११७-११९. सरूपकुमारी बख्शी	: कौड़ियों का नाच, प्रथम सं०, सन् १९५६, रंजना प्रकाशन, लखनऊ ।
	: निर्झर कन्या, प्रथम सं०, सन् १९६३, राष्ट्रीय प्रकाशन मन्दिर, लखनऊ ।
	: रेडियम के अक्षर, प्रथम सं०, सन् १९५८, रंजना प्रकाशन, लखनऊ ।
१२०. सावित्री सिंह 'किरण'	: सप्त किरण, प्रथम सं०, सन् १९४८, लेखिका द्वारा गाजीपुर से प्रकाशित ।
१२१. सुदेश 'रश्मि'	: एक ही रास्ता, प्रथम सं०, सन् १९५६, नवयुग प्रकाशन, दिल्ली ।
१२२. सुमन कारलकर	: अधूरे चित्र, प्रथम सं०, सन् १९६१, कृष्णा प्रिंटिंग वर्क्स, नागपुर ।
१२३. सुमित्रा गढ़होक	: पूनम का चाँद, सन् १९६०, रूपकमल प्रकाशन, दिल्ली ।
१२४-१२५. सुषमा भाटी	: गेट कीपर, प्रथम सं०, सन् १९५४, सुषमा प्रकाशन, देहरादून ।
	: ममता, प्रथम सं०, प्रतिभा प्रकाशन, देहरादून ।
१२६. सीता	: भारत की लोक-गाथाएँ, प्रथम सं०, सन् १९५९, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली ।
१२७. सीता देवी	: वारुणी, प्रथम सं०, सन् १९५२, सीता प्रकाशन, कानपुर ।
१२८. सोमा वीरा	: धरती की बेटी, प्रथम सं०, आत्माराम ऐंड संस, दिल्ली ।
१२९. हीरादेवी चतुर्वेदी	: उलझी लड़ियाँ, सन् १९४९, मनोरमा प्रकाशन, इलाहाबाद ।

अन्य लेखकों की कृतियाँ

१. अज्ञेय : त्रिशंकु, सरस्वती प्रेस, बनारस ।

२. आनन्दप्रकाश जैन : कथायन, प्रथम सं०, सन् १९५९, प्रकाशन प्रतिष्ठान, मेरठ ।

३. उपेन्द्रनाथ 'अश्क' : रेखाएँ और चित्र, प्रथम सं०, सन् १९५५, नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद ।

४. कैलाश कल्पित : साहित्य साधिकाएँ, लोक चेतना प्रकाशन, जबलपुर।

५. चन्द्रगुप्त विद्यालंकार : हिन्दी-कथा-साहित्य में पंजाब का अनुदान, भाषा-विभाग, पटियाला ।

६. त्रिभुवनसिंह : हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद, तृतीय सं०, संवत् २०१८, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी।

७. प्रतापनारायण टंडन : हिन्दी उपन्यास का उद्भव और विकास, प्रथम सं०, सन् १९६०, हिन्दी साहित्य भंडार, लखनऊ।

८. बनारसीदास चतुर्वेदी : रेखाचित्र, प्रथम सं०, सन् १९५२, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी ।

९. योगेन्द्रकुमार लल्ला : हिन्दी लेखिकाओं की प्रतिनिधि कहानियाँ, प्रथम सं०, सन् १९६४, आत्माराम ऐंड संस, दिल्ली ।

१०. लक्ष्मीचन्द्र जैन . ग्यारह सपनों का देश, प्रथम सं०, सन् १९६०, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी ।

पत्र-पत्रिकाएँ

१ अकोला . जुलाई १९४८

२. आजकल : जनवरी १९५८, अक्तूबर १९५८, मई १९६०, अक्तूबर १९६१

३. कमला : मई १९३९, नवम्बर १९३९, सितम्बर १९४०, जनवरी १९४१

४. कहानी : अक्तूबर १९४१

५. जीवन : अगस्त १९४८

६. प्रतिभा : अक्तूबर १९५३

७. रूपाभ — : नवम्बर १९३८

८. समिति वाणी (त्रैमासिक) : [illegible] अक्तूबर १९६३

९. सारिका : अगस्त १९६० (कहानी-अंक)